महाकवि बाणभट्टविरचितम्

कादम्बरी-कथामुखम्



संस्कृत-हिन्दी-व्याख्या-संवलित

सम्पादक एवं व्याख्याकार

डॉ० राजेन्द्र मिश्र
रीडर
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

डॉ० गिरिजाशङ्कर चतुर्वेदी
प्रवक्ता
संस्कृत विभाग
बी. एस. एस. डी. कालेज
कानपुर



इलाहाबाद

प्रकाशक :

अक्षयवट प्रकाशन

26, बलरामपुर हाउस

इलाहाबाद

★ प्रथम संस्करण १९८५

★ मूल्य :
- विद्यार्थी संस्करण—पन्द्रह रुपया
- पुस्तकालय संस्करण—बीस रुपया

★ मुद्रक :

दुर्गेश्वरी प्रिंटिंग प्रेस

341/4 के. शास्त्री नगर, सदियापुर

इलाहाबाद

वाचिकम्

महाकवि बाणभट्ट-रचित कादम्बरी संस्कृत गद्य-काव्य-जगत् की अद्भुत एवं अभूतपूर्व उपलब्धि है। उससे अपरिचित व्यक्ति अपने को संस्कृतज्ञ समझे या कहे तो यह उसकी धृष्टता ही होगी। ऐसी अभूतपूर्व कृति से साकल्येन न सही तो अंशत: तो अवश्यमेव प्रत्येक संस्कृतानुरागी एवं संस्कृतसेवी का परिचय होना ही चाहिए, इसी दृष्टि से प्रायेण समस्त विश्वविद्यालयों की बी० ए० तथा एम० ए० एवं शास्त्री कक्षाओं में इसका कुछ न कुछ अंश पाठ्यक्रम में निर्धारित रहता है। विशेषत: इसका 'कथामुख'-अंश किसी भी एक समय में आधे से अधिक विश्वविद्यालयों में निर्धारित रहता है। इसीलिए इसकी उपयोगिता को दृष्टि में रखकर अनेक विद्वानों ने इसकी व्याख्या प्रस्तुत की है। उनकी व्याख्याओं के रहते हुये भी नई व्याख्या की क्या आवश्यकता पडी, इस प्रश्न के उत्तर में इतना ही वक्तव्य है कि मूल के भावों को सुरक्षित रखने वाला सही भाषा में प्रतिपद अनुवाद दुर्लभ होने के कारण यह प्रयास किया गया है। यदि यह प्रयास सफल है तो यही साफल्य इसका वैशिष्ट्य भी है। साफल्य की कसौटी विशेषज्ञ जन हैं। उनके सुझावों का समादर होगा।

लेखकों के इस प्रयास से छात्रों का अनन्यत्र-लभ्य लाभ होगा, इस दृढ़ प्रतीति के साथ यह उन्हीं को समर्पित है।

मकर-संक्रान्ति 1985 लेखक द्वय

सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे ।
उत्पादका न बहवः कवयः शरभा इव ॥
नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ॥

—हर्षचरित

●

स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता—कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ॥

—कादम्बरी

●

हृदिलग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः ।
भवेत्कविकुरंगाणां चापलं तत्र कारणम् ॥

—तिलकमञ्जरी

●

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथाशिखण्डी तथावगच्छामि ।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूव ह ॥

—जयदेव (पीयूषवर्षी)

●

श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरेऽ
लङ्कारे कतिचित्तदर्थविषये चान्ये कथावर्णने ।
आ सर्वत्र गम्भीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी
संचारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः ॥

—गोवर्धनाचार्य

भूमिका

काव्य का स्वरूप एवं काव्य के भेद

महावैयाकरण भानुजिदीक्षित ने वर्णन करने वाले को कवि और कवि के कर्म को काव्य बतलाया है—'कवते श्लोकान् ग्रथते, वर्णयति वा कविः, 'कवेर्भावः काव्यम्' । कविराज विश्वनाथ—'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' अर्थात् रसात्मक वाक्य को 'काव्य' कहते हैं ।

दृश्य तथा श्रव्य के भेद से काव्य दो प्रकार का होता है—"दृश्यश्रव्यत्व-भेदेन पुनः काव्यं द्विधा मतम्" । दृश्य काव्य को ही 'रूपक' कहते हैं । यह नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अङ्क, वीथी और प्रहसन के भेद से दश प्रकार का होता है—

नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकारडिमाः ।
ईहामृगांकवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश ।।सा० द०।।

श्रव्यकाव्य के भी पद्य, गद्य, एवं उभय (पद्यगद्य) ये तीन भेद होते हैं । उनमें भी पद्य काव्य के सात भेद हैं–१. महाकाव्य, २. खण्डकाव्य, ३. कुलक, ४. कलापक, ५. सन्दानितक, ६. युग्मक और ७. मुक्तक ।

कविराज विश्वनाथ का कथन है कि वृत्त की गन्ध से रहित गद्य (वृत्त-गन्धोज्झितं गद्यम्) चार प्रकार का होता है–(१) मुक्तक, (२) वृत्तगन्धि, (३) उत्कलिकाप्राय तथा (४) चूर्णक । (१) मुक्तक गद्य समास रहित होता है । (२) वृत्तगन्धि, में पद्य के अंश पड़े रहते हैं । (३) उत्कलिकाप्राय में दीर्घ समास रहते हैं । (४) चूर्णक में छोटे-छोटे समास रहते हैं–

वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चतुर्विधम् ।।
आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम् ।
अन्यद्दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम् ।।

कथा एवं आख्यायिका—गद्य काव्य के दो भेद हैं---(१) आख्यायिका, (२) कथा । अमरकोषकार का कथन है कि "कथा" कल्पनाजन्य होती है और "आख्यायिका" ऐतिहासिक कथानक पर आधारित होती है—

"आख्यायिकोपलब्धार्था, प्रबन्धकल्पना कथा ।"

दण्डी के अनुसार इन दोनों गद्य भेदों में यह अन्तर है कि (१) आख्यायिका में सम्पूर्ण कहानी नायक स्वयं कहता है, जबकि कथा में कहानी कहने वाला नायक भी हो सकता है तथा कोई अन्य पात्र भी। (२) आख्यायिका की कहानी उच्छ्वासों में विभक्त रहती है जबकि कथा में ऐसा नहीं होता है। (३) आख्यायिका में वक्त्र तथा अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग होता है, कथा में इन छन्दों का प्रयोग नहीं होता है।

भामह ने कथा और आख्यायिका का लक्षण करते हुए दो नवीन बातें कही हैं--(१) कथा में कवि विशेष प्रयोजनवश विशेष शब्दों की योजना करता है परन्तु आख्यायिका में ऐसा नहीं है। (२) कथा में कन्याहरण, युद्ध, विरह, सूर्य-चन्द्र के उदय आदि का वर्णन होता है आख्यायिका में ये वर्णन नहीं होते हैं।

यदि देखा जाय तो कथा एवं आख्यायिका में कोई विशेष अन्तर नहीं है। अत: दण्डी ने जो कथा एवं आख्यायिका का अन्तर्भाव जाति के अन्तर्गत किया है, वह उचित ही है। भामह, दण्डी आदि के मतों का विवेचन करने से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आख्यायिका सत्व पर आधारित कहानी है जो ऐतिहासिकता से युक्त है तथा कथा कविकल्पनाप्रसूत होती है।

ये दोनों गद्य लेखन की केवल दो विभिन्न शैलियाँ हैं। एक ही स्थूल भेदक तत्त्व है कि कथा में इतिवृत्त का कलेवर कविकल्पित होता है और आख्यायिका में कथानक इतिहास की ठोस भूमिका पर प्रतिष्ठित होता है। कविराज विश्वनाथ कथा तथा आख्यायिका के लक्षण इस प्रकार करते हैं---

(१) कथा---

कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।
क्वचिदत्र भवेदार्या क्वचिद्वक्त्रापवक्त्रके॥
आदौ पद्यैर्नमस्कारः खलादेर्वृत्तकीर्त्तनम्।

अर्थात् कथा में सरस वस्तु गद्य के द्वारा ही बनायी जाती है। इसमें कहीं-कहीं आर्या छन्द तथा कहीं-कहीं वक्त्र और अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग होता है। प्रारम्भ में पद्यमय नमस्कार और खलादिकों का चरित्र निबद्ध होता है; जैसे—कादम्बरी।

(२) आख्यायिका—

आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशानुकीर्तनम् ।
अस्यामन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित्क्वचित् ।।
कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति बध्यते ।
आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित् ।।
अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनम् ।

अर्थात् आख्यायिका कथा के ही समान होती है । इसमें कविवंश वर्णित होता है । अन्य कवियों का वृत्तान्त तथा पद्य भी कहीं-कहीं रहते हैं । इसमें कथाभागों का नाम आश्वास रक्खा जाता है । आर्या, वक्त्र या अपवक्त्र छन्द के द्वारा अन्योक्ति से आश्वास के प्रारम्भ में अगली कथा की सूचना दी जाती है; जैसे—हर्षचरित ।

महाकवि बाणभट्ट

जीवन-परिचय

महाकवि बाणभट्ट के जीवन के विषय में हम निश्चित रूप से कुछ जानकारी दे सकते हैं । बाण ने 'हर्षचरित' के प्रारम्भ में अपने वंश और अपने सम्बन्ध के विषय में सुविस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है । कादम्बरी के प्रारम्भ में भी उन्होंने अपने वंशक्रम का वर्णन प्रस्तुत किया है ।

(१) **वंशक्रम**—महाकवि बाणभट्ट ने प्रख्यात वात्स्यायन वंश को अलंकृत किया था । इसी कुल में कुबेर नामक एक सुप्रसिद्ध पण्डित का जन्म हुआ । कादम्बरी में उल्लेख है कि अनेक गुप्त राजा इनकी पूजा किया करते थे । कुबेर के यहाँ रहने वाले तोता-मैना भी इतने पण्डित थे कि वेदमन्त्रों का अशुद्ध पाठ करने वाले विद्यार्थियों को बीच-बीच में टोक देते थे । इन्हीं कुबेर पण्डित के चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः थे—अच्युत, ईशान, हर और पाशुपत । इनमें से पाशुपत के अर्थपति नामक एक ही पुत्र हुआ ।

अर्थपति के ११ पुत्रों मे से चित्रभानु बाग के पिता थे ।[1]

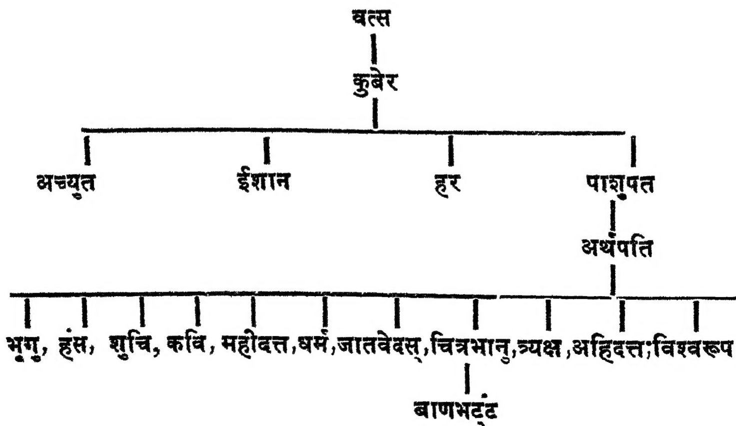
माता-पिता की मृत्यु हो जाने के उपरान्त अल्हड़पन में स्थित होते हुए भी बाण शैशव-सुलभ चपलताओं में फँस गये और देश-देशान्तरों के परिभ्रमण के लिए निकल पड़े । इस समय विभिन्न वर्गों के विभिन्न लोग उनके मित्र हो गये, जिनमें कवि, शिकारी, गायक, नर्तक ही नहीं जुआरी और जादूगर भी सम्मिलित थे । इस प्रकार बाण ने विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था ।

अपनी चंचलता के कारण बाण को उपहास का भाजन भी बनना पड़ा किन्तु यह परिभ्रमण बाण के व्यक्तित्व के विकास में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुआ । उन्होंने इसी बीच अनेक राजकुलों, गुरुकुलों, देवमन्दिरों, पवित्र नदियों, धर्मक्षेत्रों का अवलोकन किया । तत्पश्चात् अपने निवास-स्थान पर लौट आये ।

महाकवि बाणभट्ट के विषय में लोगों ने सम्राट् हर्षवर्धन से तरह-तरह की बातें कह रखी थीं । इस सन्दर्भ में बाणभट्ट को स्वयं ही राज-दरबार में उपस्थित होकर सम्राट् हर्षवर्धन के सामने अपनी स्थिति स्पष्ट करनी थी । अतः बाणभट्ट ने स्वयं उपस्थित होकर सम्राट् से अपनी बात कहनी चाही ।

---

१. **बाण का वंशक्रम इस प्रकार है—**



प्रारम्भ में तो बाणभट्ट को देखकर राजा ने उनको (महानयं भुजङ्ग=यह बड़ा ही दुष्ट है) कह दिया। परन्तु बाणभट्ट ने अत्यन्त नम्रतापूर्वक अपनी बात कह डाली तथा सम्राट हर्षवर्धन को इतना प्रसन्न कर डाला कि कुछ समय के पश्चात् तो बाणभट्ट राजा के अत्यधिक दयाभाजन बन गये। कुछ समयोपरान्त जब बाण अपने निवास स्थान प्रीतिकूट लौटे तो लोगों ने उनसे सम्राट हर्षवर्धन के विषय में जानना चाहा। अनन्तोगत्वा उन्होंने अपने चचेरे भाई श्यामल के अनुरोध पर सम्राट हर्षवर्धन के चरित्र को लेकर हर्षचरित नामक गद्य-ग्रंथ की रचना की।

महाकवि बाणभट्ट के शेष जीवनवृत्त के सम्बन्ध में प्रामाणिक सामग्री प्राप्त नहीं होती है। कारण यह है कि उन्होंने अपने जीवन के अवशिष्ट भाग के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि देशाटन के पश्चात् उनका उद्वाह संस्कार हो गया था क्योंकि उन्होंने सम्राट के साक्षात्कार के समय अपने को गृहस्थाश्रमी बतलाया है।

एक जनश्रुति के आधार पर बाणभट्ट के दो पुत्ररत्न माने जाते हैं। उनमें एक तो महावैयाकरण था तथा दूसरा साहित्यसरोवर-पंकज था। कादम्बरी के पूर्व भाग के लिखे जाने पर ही वे अस्वस्थ हो गये थे और मृत्युशय्या पर पड़े हुए उन्हें कादम्बरी के अपूर्ण रह जाने की चिन्ता थी। एतदर्थ उन्होंने अपने दोनों ही पुत्रों को बुलवाया तथा 'सामने सूखा पेड़ खड़ा है' की संस्कृत पूछी। उनके प्रथम पुत्र महावैयाकरण ने शुष्कपदविन्यास करते हुए 'शुष्को वृक्षस्तिष्ठत्यग्रे' कहा परन्तु दूसरे साहित्यशास्त्री ने ललित पद विन्यास करते हुए 'नीरसतरुरिह विलसति पुरतः' इस प्रकार सरस रचना की। बाणभट्ट ने कादम्बरी के शेष भाग को पूरा करने के लिए द्वितीय साहित्यशिरोमणि पुत्र से कहा। बाणभट्ट के पुत्र ने कादम्बरी के उत्तरार्द्ध के प्रारम्भ में स्वयमेव लिखा है कि पूज्य पिता के परलोकगमन करने के पश्चात् मैं अपूर्ण कादम्बरी को पूर्ण कर रहा हूँ।

"याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्द्धं विच्छेदमाप खलु यस्तु कथाप्रबन्धः।
दुःखं सतां तदसमाप्तिकृतं विलोक्य प्रारब्ध एव स मया न कवित्वदर्पात्।"

उत्तरकादम्बरी, प्रस्तावना, ४।

परन्तु त्यागी बाणतनय ने उत्तर कादम्बरी में अपने विषय में कुछ भी नहीं लिखा है । अतएव बाणपुत्र के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है । कोई लोग उत्तरकादम्बरी के प्रणेता बाण पुत्र को भूषणबाण तथा कतिपय पुलिन्द-भट्ट और कुछ पुलिनभट्ट मानते हैं । कवि शिरोमणि धनपाल ने अपनी तिलक-मञ्जरी में बाणतनय का नाम पुलिन्दभट्ट लिखा है ।

एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार महाकवि बाणभट्ट कविशिरोमणि मयूर के समकालीन सिद्ध होते हैं । इस जनश्रुति के अनुसार मयूर कवि बाण के ससुर बतलाए जाते हैं । ऐसा कहा जाता है कि एक समय मयूर प्रात.काल बाणभट्ट से मिलने गये । उधर बाण अपनी रूठी हुई प्रियतमा को मना रहे थे । प्रियतमा की मनौती में बाण ने इस प्रकार के श्लोक की रचना की—

"गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव
प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रुधमहो...."

इस प्रकार श्लोक के तीन चरण तो बाण ने बना डाले थे परन्तु उन्हें इसका चौथा चरण नहीं उठ रहा था, तभी महाकवि मयूर से नहीं रहा गया और उन्होंने उक्त श्लोक के चतुर्थ चरण को इस प्रकार बना डाला—

"कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि ! कठिनम् ।।"

इसे सुनकर बाण को बड़ी लज्जा आयी और उन्होंने कुपित होकर अपने ससुर मयूर को कोढ़ी हो जाने का शाप दे दिया । बाण के शाप से ग्रस्त होकर मयूर कुष्ठरोगाक्रान्त हो गये । मयूर ने भी बाण को शाप दे दिया । तत्प-श्चात् शाप के निवारण के लिए मयूर ने सूर्य की स्तुतिपरक 'सूर्यशतक' की रचना की तथा बाण ने चण्डी की आराधना के लिए चण्डीशतक की रचना की । सुभाषितावली तथा शार्ङ्गधरपद्धति के एक श्लोक से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि बाणभट्ट, मयूर तथा मातङ्ग दिवाकर—ये कविरत्न सम्राट हर्षवर्धन की सभा के प्रतिष्ठित एवं प्रमुख लोगों में से रहे हैं ।

महाकवि बाणभट्ट का स्थितिकाल

संस्कृत कविताकामिनी के पञ्चबाण महाकवि बाणभट्ट सम्राट हर्षवर्धन

के दरबारी कवि थे । अतएव महाकवि बाणभट्ट का स्थितिकाल निश्चित जैसा ही है । सम्राट हर्षवर्धन का जन्म ५९० ई० में हुआ था । ६०६ ई० से लेकर ६४० ई० तक वे समस्त उत्तर भारत के प्रमुख शासक रहे है । ६२९ ई० में आये हुए चीनी यात्री ने उनके शासन का वर्णन विस्तारपूर्वक किया है । अतएव बाणभट्ट का समय सप्तम शतक का पूर्वार्द्ध ही होना चाहिये ।

अन्य अनेक बाह्य प्रमाणों से भी बाणभट्ट का लगभग यही समय निश्चित होता है, वे प्रमाण इस प्रकार हैं—

(१) रुय्यक (११५० ई०) ने अपने 'अलंकारसर्वस्व' में हर्षचरित के उदाहरण दिये हैं । साथ ही 'हर्षचरितवार्तिक' नामक टीका भी लिखी है ।

(२) कश्मीर के राजा अनन्तराज (१०२८-१०६३ ई०) के समसामयिक महाकवि क्षेमेन्द्र ने अपने ग्रंथ 'कविकण्ठाभरण' में कादम्बरी के उद्धरण दिये हैं ।

(३) 'काव्यालंकार' के टीकाकार नमिसाधु (१०६९ ई०) ने हर्षचरित के आख्यायिका और कादम्बरी को कथा कहा है ।

(४) भोज (१०२५ ई०) ने "यादृग्गद्यविधौ बाण: पद्यबन्धे न तादृश:" कहकर बाण के गद्य को उनके पद्य की अपेक्षा उत्कृष्ट बतलाया है ।

(५) आनन्दवर्धनाचार्य (८५० ई०) ने बाण की दोनों गद्य-कृतियों का संकेत किया है ।

(६) धनञ्जय (१००० ई०) ने अपनी कृति 'दशरूपक' में 'यथा हि महाश्वेतावर्णनावसरे भट्टबाणस्य' लिखकर बाण का उल्लेख किया है ।

(७) वामन (८०० ई०) ने 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति' में कादम्बरी के कुछ पद्य उद्धृत किये हैं ।

अत: हम कह सकते हैं कि बाण की ख्याति ८०० ई० तक दूर-दूर तक फैल चुकी थी, अत: उनका समय हर्ष के समय में मानने में कोई असंगति नहीं है अपितु सप्तम शतक का पूर्वार्द्ध ही उनका सुनिश्चित समय है ।

बाणभट्ट की रचनाएँ

बाणभट्ट की कीर्तिकौमुदी को बिखेरने का श्रेय 'हर्षचरित' और 'कादम्बरी' नामक गद्य-ग्रन्थों को है, किन्तु इन दोनों के अतिरिक्त भी बाण की कुछ रचनाएँ बतलायी गई हैं; उनके नाम तथा परिचय इस प्रकार हैं—

(१) **चण्डीशतक**–जैसा कि इसके नाम से ही ज्ञात होता है कि इनमें चण्डीदेवी की स्तुति-परक श्लोक हैं। किंवदन्तियों के अनुसार बाणभट्ट ने शाप से मुक्ति पाने के लिए इसकी रचना की थी।

(२) **पार्वती-परिणय**–यह एक नाटक है, जो कि कालिदास के 'कुमारसम्भव' की कथा पर आधारित है। कीथ महोदय इस नाटक को बाणभट्ट की रचना नहीं मानते हैं। वे लिखते हैं कि "रचना और शैली दोनों की दृष्टि से पार्वती-परिणय की दुर्बलता के कारण आलोचक लोग उसे बाण की रचना नहीं मानते, और वास्तव में यह स्पष्ट है कि वामन बाणभट्ट ने पन्द्रहवीं शताब्दी में उसकी रचना की थी।"[१] म० म० काणे इसे बाणभट्ट की ही रचना मानते हैं।[२] डा० भोलाशंकर व्यास भी कीथ की ही भाँति बाण की रचना नहीं मानते हैं।[३]

(३) **मुकुटताडितक**–इस नाटक को भी बाणभट्ट की कृति कहा जाता है। यह कृति आज प्राप्त नहीं है। इस रचना का उल्लेख 'नलचम्पू' के टीकाकार चण्डपाल और गुणविनयमणि ने किया था। भोज भी शृङ्गार-प्रकाश में इसे बाण की रचना मानते हैं।

(४) **पद्य-कादम्बरी**–क्षेमेन्द्र ने 'औचित्य-विचार-चर्चा' में बाण-रचित एक पद्य उद्धृत किया है, जिसमें चन्द्रापीड की प्रिया कादम्बरी का विरह निवेदन है। इस श्लोक के आधार पर विद्वानों ने अनुमान

---

१. संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ० ३७३।

२. Introduction to कादम्बरी, पृ० २३–२४।

३. संस्कृत कवि-दर्शन, पृ० ४८५।

लगाया है कि सम्भवतः बाण ने पद्य में भी कादम्बरी कथा का प्रणयन किया है । पुष्ट प्रमाणों के अभाव में कुछ निर्णयात्मक रूप से कहना औचित्य नहीं रखता है ।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि बाणभट्ट की प्रसिद्धि के प्रमुख कारण 'हर्षचरित' तथा 'कादम्बरी' नामक ग्रंथ है; जो प्रामाणिक रूप से उन्हीं की रचनायें हैं ।

हर्षचरित—महाकवि बाणभट्ट ऐतिहासिक गद्य-काव्य के प्रथम प्रणेता हैं । उनका 'हर्षचरित' हर्ष का प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत करता है । यह ग्रन्थ सप्तमशतक के पूर्वार्द्ध में रचा गया है । यह बाणभट्ट की प्रथम रचना है । इसमें आठ उच्छ्वास हैं । कादम्बरी के समान ही यह भी अपूर्ण है। इस ग्रंथ से हर्ष के जीवन एवं परिवार से सम्बद्ध कुछ तथ्यों का ज्ञान होता है । कल्पनातिरेक के कारण कुछ ऐतिहासिक तथ्यों को भी छोड़ दिया है । ग्रंथ का आरम्भ पौराणिक शैली में हुआ है कवि अपने वंश की पौराणिक शैली में उत्पत्ति का वर्णन करता है । यही ग्रन्थ का आरम्भ भी है । लेखक ने प्रस्तावना में पूर्ववर्ती कुछ प्रसिद्ध कवियों का वर्णन किया है । उनके नाम इस प्रकार हैं—भट्टार; हरिश्चन्द्र, सातवाहन, प्रवरसेन, भास, कालिदास तथा बृहत्कथाकार ।

बाणभट्ट 'हर्षचरित' को आख्यायिका मानते हैं, जैसाकि स्वयं उन्होंने कहा है—

तथापि नृपतेर्भक्त्या भीतो—निर्वहणाकुलः ।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम् ।।

बाणभट्ट ने हर्षचरित प्रस्तावना—श्लोकों में श्रेष्ठ काव्य के गुणों का इस प्रकार उल्लेख किया है—

"उदीच्य लोगों का काव्य श्लेष-प्रधान होता है, पश्चिमी लोगों में केवल अर्थ पर ध्यान दिया जाता है, दाक्षिणात्यों में उत्प्रेक्षा को पसन्द किया जाता है और गौड़ देश में शब्दाडम्बर को महत्त्व दिया जाता है ।"[1] इन्हीं विशेष-

---

१. **हर्षचरित** १।८ श्लेषप्रायमुदीच्येषु प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् ।
उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु गौडेष्वक्षरडम्बरः ।।

ताओं की समष्टि ही श्रेष्ठ काव्य के लक्षण हैं । बाण के अनुसार "काव्य में नये अर्थ, अग्राम्य शैली, सरल श्लेष तथा स्फुट रस के साथ विकटाक्षरवन्ध भी होना चाहिए । एक काव्य में इन सभी गुणों का समावेश दुर्लभ है ।[1] किन्तु बाण की रचनाओं में इन्हीं आदर्शों का परिपालन किया गया है ।

हर्षचरित की कथा

हर्षचरित के प्रथम उच्छ्‌वास में कवि ने अपने वंश का भलीभाँति परिचय दिया है । इसके लिए विस्तृत काल्पनिक कथा दी गयी है । इसी में अपने जन्म और बचपन का भी उल्लेख किया है । द्वितीय उच्छ्‌वास में ग्रीष्म की प्रचण्डता तथा राजद्वार का वर्णन अलंकृत, कलात्मक और समासान्त पदावली में किया गया है । तृतीय उच्छ्‌वास में बाण राजा से मिलकर उसके विश्वासपात्र बनकर गाँव लौटते हैंऔर भाई के कहने पर वे हर्ष का चरित्रवर्णन करते हैं । इस उच्छ्‌वास में स्थाण्वीश्वर तथा उनके कुल के राजाओं का वर्णन करते हैं । इसी में अर्धैतिहासिक राजा पुष्यभूति तथा भैरवाचार्य नामक शैवयोगी का वर्णन आता है । चतुर्थ उच्छ्‌वास से हर्षचरित की वास्तविक कथा आरम्भ होती है । इसमें राजा प्रभाकरवर्धन तथा रानी यशोमती के स्वप्न का वर्णन है । यशोमती के प्रसव का वर्णन, राज्यवर्धन, हर्षवर्धन तथा राज्यश्री के जन्म का वर्णन है । राज श्री का विवाह मौखरी गृहवर्मा से होता है, इसका वर्णन भी इसमें है । पंचम उच्छ्‌वास में राज्यवर्धन का हूणविजय के लिए प्रस्थान, हर्ष की मृगया, पिता की बीमारी की सूचना और हर्ष का राजधानी लौटना, योशमती का सती तथा प्रभाकरवर्धन का दिवंगत होना आदि घटनाएँ पाँचवें उच्छ्‌वास की घटनाएँ हैं । षष्ठ उच्छ्‌वास में राज्यवर्धन की हूणविजय, वहाँ से लौटकर राज्यवर्धन का हर्ष का राज्याभिषेक करने के लिए उद्यत होना, किन्तु इसी मध्य समाचार मिलता है कि मालवराज ने गृहवर्मा को मारकर राज्यश्री को बन्दी बना लिया है । राज्यवर्धन सेनापति भण्डि को आदेश देकर मालव-राज पर चढ़ाई करता है । हर्ष घर पर ही रहता है । राज्यवर्धन मालव पर

---

१. **हर्षचरित** १।९ नवोऽर्थो जातिरग्राम्यः श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ।।

विजय प्राप्त कर लेता है किन्तु लौटते समय गौडाधिप धोखे से उसे मार देता है । हर्ष उसी समय युद्ध का विगुल बजाना चाहता है किन्तु सेनापति सिंहनाद के कहने पर वह रुक जाता है । सप्तम उच्छ्वास में सेना-प्रयाण का विस्तार से वर्णन है । इसी में प्राग्योतिष के राजा द्वारा उपहार रूप में प्रेषित दिव्य आतपत्र का वर्णन है । अष्टम उच्छ्वास में विन्ध्याटवी तथा दिवाकरमित्र के आश्रम का भव्य वर्णन है, इसका साम्य सहज ही कादम्बरी के जाबालि के आश्रम के वर्णन से किया जा सकता है । भिक्षु द्वारा राज्यश्री को सूचना, हर्ष का दौड़ते हुए वहाँ जाना और ठीक समय पर चिता में जलने से बचाना, राज्यश्री की निराशा, दिवाकरमित्र का उसे समझाना तथा राज्यश्री को लेकर हर्ष का लौटना आदि कथांश इस उच्छ्वास में वर्णित हैं ।

हर्षचरित मूलतः ऐतिहासिक काव्य न होकर एक गद्य-काव्य है । अतः इतिहास की घटनाओं को यथार्थ रूप में इसमें खोजना बाण के साथ अन्याय करना है । डॉ० भोलाशंकर व्यास ने ठीक ही लिखा है कि–"हर्षचरित की प्रकृति मूलतः गद्यकाव्य की है तथा केवल ऐतिहासिक कथावस्तु चुनने के ही कारण यह एतिहासिक इसलिए नहीं माना जा सकता कि हर्षचरित की शैली आत्मा तथा टेकनिक सभी एक रोमैंटिक कहानी का रूप लेकर आती हैं ।"[1]

'हर्षचरित' में बाणभट्ट की शैली, चरित्र-चित्रण सभी अनुपम हैं । हर्ष का व्यक्तित्व एक सम्राट् के अनुकूल है । वे निर्भीक, साहसी, कर्तव्यपरायण और स्नेही हैं । राज्यवर्धन शूरवीर, आज्ञाकारी पुत्र तथा स्नेही भाई है । सोड्ढल ने हर्षचरित की प्रशंसा में लिखा है कि–

"बाणस्य हर्षचरिते निशितामुदीक्ष्य,
शक्तिं न केऽत्र कवितास्त्रमदं त्यजन्ति ।"

कादम्बरी की कथा और समालोचना–"कादम्बरी की कथा एक जन्म से सम्बद्ध न होकर चन्द्रापीड तथा पुण्डरीक के तीन जन्मों से सम्बन्ध रखती है । आरम्भ में विदिशा के राजा शूद्रक के प्रभाव तथा वैभव का परिचायक वर्णन है । उसके दरबार में एक परम सुन्दरी चांडाल कन्या 'वैशम्पायन' नामक

१. संस्कृत कविदर्शन, पृ० ४९५

शुक को लेकर आती है जो मनुष्य की बोली में बोलता है और श्रोताओं के परम मनोरंजन का साधन प्रस्तुत करता है। यही कादम्बरी की कथा आरम्भ करता है जिसके साथ वह स्वयं सम्बद्ध रहता है। इसी के बीच में ऋषि जाबालि के द्वारा वर्णित राजा चन्द्रापीड और उसके मित्र वैशम्पायन की कथा आती है राजा चन्द्रापीड दिग्विजय के प्रसंग में हिमालय प्रदेश में जाता है। किन्नर मिथुन के पीछे वह बड़ी दौड़-धूप लगाता है। वह मिथुन तो अन्तर्हित हो जाता है और राजा अक्षोद नामक दिव्य जलाशय के पास पहुँचता है जहाँ वह अपने घोड़े को बाँधकर शिवालय में वीणा-वादिनी महाश्वेता के संगीत से आकृष्ट हो जाता है। उससे परिचय पाकर उसकी प्रियसखी कादम्बरी का दर्शन करता है। चन्द्रापीड और कादम्बरी के हृदय में दोनों के प्रति नैसर्गिक मधुर आकर्षण उपजता है, परन्तु प्रणय की पूर्ति के पहले ही राजा अपनी राजधानी उज्जयिनी लौट आता है। ताम्बूल-वाहिनी पत्र-लेखा कादम्बरी के वास्तव प्रेम का सन्देश लाती है और पूर्व कादम्बरी की समाप्ति होती है।''

उत्तर भाग में चन्द्रापीड महाश्वेता के पास लौटता है और अपने प्रिय मित्र वैशम्पायन की विपत्ति का हाल जान लेता है जो महाश्वेता से प्रणय स्थापित करने का उद्योग करता है, परन्तु उस तपस्वी का कोपभाजन बन तोता बन जाता है। चद्रापीड अपने सुहृद् की विपत्ति से शोकाक्रान्त होकर अपना शरीर त्याग करता है। समाचार पाकर कादम्बरी आती है और विलाप करती है। चन्द्रापीड के माता-पिता—विलासवती और तारापीड—इस दुःखद घटना से नितान्त उद्विग्न हो उठते हैं। (जाबालि कथा की समाप्ति)। कपिंजल अपने मित्र शुक (जो वास्तव में मन्त्री पुत्र वैशम्पायन है) को खोजने के लिए जाबालि के आश्रम में आता है और मित्र की दुरवस्था से दुःखित होता है। शुक उड़कर एक चाण्डाल के पास जाता है जो उसे अपनी कन्या को देता है। और वही चाण्डाल कन्या उसे शूद्रक के दरबार में लाती है। वह चाण्डाल-कन्या वस्तुतः पुण्डरीक की माता लक्ष्मी है तथा पुण्डरीक ही उस जन्म का वैशम्पायन तथा इस जन्म का शुक है। राजा शूद्रक स्वयं पूर्व जन्म का राजा

चन्द्रापीड है जो कभी स्वयं चन्द्रमा था परन्तु शापवश भूतल पर आया था। लक्ष्मी अंतर्हित हो जाती है तथा शूद्रक और शुक का भी शरीरपात हो जाता है जिससे चन्द्रापीड का पड़ा हुआ मृतक शरीर पुनर्जीवित हो जाता है और आकाश से उतर आता है। पुण्डरीक से महाश्वेता का तथा चन्द्रापीड से कादम्बरी का मिलन होता है और वे प्रणयीयुगल सुख से अपना जीवन बिताते हैं।"

इस प्रकार कादम्बरी में चन्द्रापीड और पुण्डरीक दोनों नायकों के तीन-तीन जन्म की कहानियाँ हैं तथा कीथ के कथनानुसार "वास्तव में यह एक विचित्र कहानी है" और उन लोगों के प्रति जिनको पूर्वजन्म में अथवा इस मर्त्यजीवन के अनन्तर पुनर्मिलन में भी विश्वास नहीं है। इसकी प्ररोचना गम्भीर रूप से अवश्य ही कम हो जानी चाहिए। उनको यह सारी कथा निकम्मी नहीं तो असंगत अद्भुत कथा के रूप में ही प्रतीत होती है, जिससे आकर्षण से हीन पात्र एक अवास्तविक वातावरण में ही रहते हैं। परन्तु भारतीय विश्वास की वस्तुस्थिति बिल्कुल भिन्न है। कथा को हम औचित्य के साथ मानवीय प्रेम की कोमलता, दैवी आश्वासन की कृपा, मृत्युजनित शोक और कारुण्य और प्रेम के प्रति अविचल सच्चाई के परिणामस्वरूप मृत्यु के पश्चात् पुनर्मिलन की स्थिर आशा से परिपूर्ण मान सकते हैं। कथा में अद्भुत घटनाओं का अंश भी भारतीय विचारधारा के लिए विशेष आकर्षण का विषय है। चन्द्रमा और पुण्डरीक आश्चर्य से पूर्ण इतिवृत्त में भी उस विचारधारा के लिए कोई ऐसी बात नहीं है जो आकर्षण न हो। पुण्डरीक का शुक के रूप में आ जाना भी कोई उपहास की बात नहीं है, जबकि यह विश्वास किया जाता है कि मनुष्य अवश्य ही एक योनि से दूसरी योनि में जाते हैं[1]।" इस प्रकार बाण ने जन्म-जन्मान्तर तक चलने वाली प्रेम-भावना ही प्रातिपादित की है, जो कि भारतीय आदर्शों के सर्वथा अनुकूल है।

सम्भवतः यही कारण है कि इस श्रृंगार-रस-प्रधान-कथा के सम्बन्ध में डॉ० पाण्डेय तथा व्यास ने लिखा है—"कादम्बरी जन्म-जन्मान्तर के संचित संस्कारों का, 'जननान्तरसौहृद' का सजीव चित्रण है; विस्तृत अतीत तथा

१. संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ० ३८३-३८४।

जीवित वर्तमान की स्मृति के सुकुमार तारों से संयुक्त करने वाली काव्य शृंखला है; मानव हृदय की मूक प्रणयवेदना की मर्मभरी कथा है । बाण ने जिस प्रेम का चित्रण किया है, वह सर्वथा उदात्त एवं परिष्कृत है । उसके द्वारा चित्रित प्रेम का उद्दाम वेग कुल और समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता । 'दशकुमारचरित' की भांति कादम्बरी के शृंगार-रस-चित्रण में कहीं अश्लीलता की गन्ध नहीं पायी जाती । सच तो यह है कि महाश्वेता के प्रेम में पागल पुण्डरीक की कपिजल द्वारा भर्त्सना कराकर कवि ने यह शिक्षा दी है कि असंयत प्रेम मानसिक और शारीरिक दुरवस्था का कारण होता है । सच्चा प्रणय सत्य की भाँति चिरन्तन है । काल की कराल छाया उसे आक्रान्त नहीं कर सकती, समय का प्रवाह उसे विस्मृति के गर्त में लीन नहीं करता । तपस्या की कठोरता अथवा राजसी जीवन की विलासिता उसके उद्दाम वेग को दबा नहीं सकती । प्रणय की ज्योति आशा और अटल विश्वास से नूतन जीवन धारण करती है तथा आदर्श स्नेह के सहारे मृत्यु के अन्धकार में भी अभिनव आलोक छिटकाती है ।''

कादम्बरी कथा का मूलस्रोत

लोकोत्कृष्ट गद्य ग्रन्थ कादम्बरी के कथानक का प्रमुख आधार गुणाढ्यकृत बृहत्कथा का मकरन्दिकोपाख्यान है । बृहत्कथा सम्प्रति अपने मूल रूप में उपलब्ध नहीं है। वह अपने दो रूपान्तरों–सोमदेव का कथासरित्सागर और क्षेमेन्द्र के बृहत्कथामंजरी के रूप में मिलती है । कथासरित्सागर के मकरन्दिकोपाख्यान में दी गई राजा सुमनस् की कथा और कादम्बरी की कथा में अत्यधिक समानता है । इस आधार पर कादम्बरी की कथा मूलस्रोत बृहत्कथा को माना जा सकता है । किन्तु यहाँ डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल की यह शंका सर्वथा औचित्य रखती है कि ''कथासरित्सागर कादम्बरी की रचना के बाद का ग्रन्थ है, अतएव यह कहना कठिन है कि उसका कितना अंश मूल बृहत्कथा से लिया गया और कितना स्वयं कादम्बरी के प्रभाव से पुनः उसमें आ गया ।''

कथासरित्सागर की सम्प्रति उपलब्ध कथा कुछ नाम बदल लेने रप सामा-

न्यतया कादम्बरी की ही कथा बन जायेगी। शूद्रक, चाण्डाल-कन्या, वैशम्पायन (शुक), हारीत, जाबालि, तारापीड, शुकनास, महाश्वेता, पुण्डरीक और कादम्बरी हमें कथासरित्सागर में क्रमशः सुमनस, मुक्तलता, शास्त्रगञ्ज (शुक), मारीचि, पौलस्त्य, ज्योतिष्प्रभ, हर्षवती, सोमप्रभ, प्रभाकर, मनोरथ प्रभा, रश्मिवान् और मकरन्दिका के अभिधान से प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार अन्य पात्रों तथा स्थानों के नामों में भेद हैं।

इतना होने पर भी बाण ने अपनी कल्पना-शक्ति एवं प्रतिभाशक्ति के द्वारा बृहत्कथा के प्राचीन कथानक में अनेक परिवर्तन किये हैं, जो इस प्रकार हैं—

(१) सबसे पहले तो बाण ने एक साधारण कथा को अपनी अनुपम कवित्व-शक्ति के द्वारा अनुपम कलात्मक परिधान पहनाया है। कादम्बरी में अलंकृत गद्य का लोकोत्कृष्ट सुन्दर रूप प्रस्तुत करना बाण की ही अपनी देन है।

(२) कथा के बीच-बीच में आने वाले स्थानों, प्राकृतिक दृश्यों तथा व्यक्तियों का सजीव चित्रण बाण की ही अपनी कला है।

(३) शुकनासोपदेश जैसा उत्कृष्ट एवं गम्भीर अंश बाण की ही देन है। नायक-नायिका की प्रेम-भावनाओं का मनोरम चित्रण तथा अन्य पात्रों का चरित्र का स्वाभाविक विकास बाण ने किया है।

(४) बृहत्कथा में राजकुमारी मकरन्दिका अपने माता-पिता के शापाक्रोश से निषाद-कन्या बन जाती है किन्तु 'कादम्बरी' में कादम्बरी के माता-पिता ऐसा नहीं करते हैं अपितु वे अपनी पुत्री के साथ सहानुभूति रखते हैं। 'कादम्बरी' में पुण्डरीक की माता लक्ष्मी चाण्डाल कन्या बनती है।

(५) बृहत्कथा में मकरन्दिका अपने शुक रूपधारी पिता को पिंजरे में लेकर आती है परन्तु कादम्बरी में पुण्डरीक की माता लक्ष्मी वैशम्पायन शुक को लाती है।

(६) राजा सुमनस् और शूद्रक के व्यक्तित्व में भी पर्याप्त भेद है। शूद्रक अन्त में चन्द्रापीड रूप में सिद्ध होता है किन्तु सुमनस् सोमप्रभ नहीं बल्कि रश्मिवान् के रूप में सिद्ध होता है।

(७) कादम्बरी में चन्द्रापीड की मृत्यु दिखलायी गई है परन्तु सुमनस्

की कथा में चन्द्रापीड का प्रतिरूप सोमप्रभ जीवित दिखलाया जाता है और कादम्बरी की कथा के बिल्कुल विपरीत अपनी प्रेमिका मकरन्दिका से पुनः वास्तविक रूप में आने की प्रतीक्षा करता है ।

(८) चन्द्रापीड के जन्म, बाल्यावस्था, शिक्षा तथा पुनः नगरप्रत्यावर्तन की घटनाओं को भी बाण ने पर्याप्त मौलिक रूप प्रदान किया है । पत्रलेखा की समता करने वाला कोई भी पात्र प्राचीन कथा में नहीं है ।

वस्तुस्थिति तो यह है कि जिस प्रकार संस्कृत के अनेक कवियों ने अपने काव्यों का आधार रामायण, महाभारत आदि को बनाकर अपनी उद्भावना एवं कल्पना शक्ति के द्वारा उन्हें सर्वथा नवीन एवं भव्य स्वरूप प्रदान किया है उसी प्रकार बाणभट्ट ने भी अपनी मौलिक प्रतिभा के द्वारा पुरातन कथा में सर्वथा नवीनता ला दी है ।

बाणभट्ट की काव्ययोजना पद्धति–

महाकवि बाणभट्ट की काव्य के सम्बन्ध में अपनी विशेष मान्यताएँ हैं, जिन आदर्शों की अभिव्यक्ति वे हर्षचरित तथा कादम्बरी की प्रस्तावना में स्वयं ही करते हैं ।

बाणभट्ट में मौलिकता की प्रधानता है । उनके गद्य-काव्य में एक से एक नवीन उपमान, अलंकार, उक्तियाँ तथा वर्णन विद्यमान हैं । शब्दों का ऐसा अक्षय-कोश है कि वह निरन्तर लिखते चले जाते हैं । उन्हें कभी रुकने की आवश्यकता नहीं पड़ती । इन्हीं विशेषताओं के कारण 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' की उक्ति जगत् प्रसिद्ध हुई है ।

बाण समन्वयवादी महाकवि हैं । इसीलिए वे तत्कालीन लेखकों की क्षेत्रीय प्रवृत्तियों का उल्लेख कर स्वयं अपना समन्वयात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं । बाण न तो श्लेष काव्य के प्रशंसक हैं और न केवल अर्थ-मात्र की विशेषता के और न ही उत्प्रेक्षा अथवा शब्दाडम्बर मात्र में से किसी एक से किसी एक को अपनी शैली में स्थान देना चाहते हैं अपितु नूतन एवं चमत्कारपूर्ण अर्थ, सुरुचि-पूर्ण स्वभावोक्ति, सरल श्लेष, स्पष्ट रूप से प्रतीत होने वाला रस तथा अक्षरों

की दृढ़-बन्धता—ये सब विशेषताएँ, किसी काव्य में इन सबका समन्वय कठिन है-

नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ।।[1]

स्पष्ट ही बाणभट्ट ने अपनी कृतियों में इस आदर्श का पूर्णतया निर्वाह किया है—इसीलिए उनका काव्य "रसप्रवणता, कलासौन्दर्य वक्रोक्तिमय अभिव्यंजना प्रणाली, सानुप्रासिक समासान्त पदावली, दीपक, उपमा और स्वभावोक्ति की रुचिर योजना--जिसके बीच-बीच में श्लेष, विरोधाभास और परिसंख्या"[2] से अलंकृत है । बाण की कथा इतनी रसवती है कि वह स्वयं पदशय्या से समन्वित हो जाती है और उसकी उक्तियाँ कलामय तथा कोमल हैं । भावपक्ष (रस) तथा कलापक्ष (कलालापविलास) का यह विचित्र समन्वय देखकर सहृदय ठीक इसी तरह चमत्कृत हो जाता है, जैसे कलापूर्ण उक्ति का प्रयोग करने वाली कोमल नवोढा के स्वयं ही रस से परिपूर्ण होकर शय्या की ओर आने पर नायक का हृदय इसलिए चमत्कृत हो जाता है कि अद्भुत रस का समावेश कर देती है ।"—

स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ।।[3]

बाण की यह काव्य-शैली किसके मन का हरण नहीं करती । यह शैली—"उस सुन्दर चम्पे की माला के समान है, जिसमें उज्ज्वल दीपक में चमकते फूल गुँथे गये हों जिसमें चम्पा के फूलों को घना अनुस्यूत किया गया हो, बीच-बीच में मालती की कलियाँ लगाई गयी हों ।" बाण ने भी अपनी कथा में उज्ज्वल दीपक तथा उपमा अलंकारों से युक्त कथा की योजना की है, बीच-बीच में श्लेष की सघन संघटना है और स्वभावोक्ति की रमणीयता से कथा में सरलता का संचार किया है । भला बताइये तो सही, ऐसी सुन्दर चम्पे की माला और बाण की इतनी कलामय शैली किसका मन न

---

१. हर्षचरित-प्रस्तावना १।८

२. संस्कृतकविदर्शन, पृ० ५१३ ।

३. कादम्बरी प्रस्तावना पूर्वार्ध, पद्य ८ ।

हरेगी ?–

हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः परार्थैरुपपादिताः कथाः ।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव ।।[1]

भाव यह है कि बाण का आदर्श सरस काव्य का सृजन है, जो सम्पूर्ण विशेषताओं से समन्वित है। अर्थ की नवीनता, उक्ति का वैचित्र्य, स्वभावोक्ति से पूर्ण रसप्रवण, सानुप्रास, समासान्त और अलंकारों से अभिमण्डित काव्य और काव्य की शैली बाण का आदर्श है। इन सम्पूर्ण विशेषताओं के साक्षी बाणभट्ट के दोनों ही गद्य-काव्य हैं जो कि अपनी अनुपम आभा संस्कृत जगत् में बिखेर रहे हैं।

बाणभट्ट की काव्य-कला–

गद्यकार बाणभट्ट अपनी अनुपम काव्य-शैली के लिए जगत् प्रख्यात हैं। कथानक, चरित्र-चित्रण और भाव की अपेक्षा रस-प्रवणता पर उनका विशेष आग्रह रहा है। कल्पना की सुन्दर और नवीन उड़ान, वक्रोक्तिमय अभिव्यंजना शिल्प, सानुप्रासिक समासान्त पदावली, दीपक, उपमा, परिसंख्या, श्लेष और स्वभावोक्ति की रुचिर योजना बाण की गद्य-शैली का श्रृंगार करती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। श्री भोलाशंकर व्यास ने बाण के काव्य का तुलनात्मक विवेचन करते हुए बड़ा ही यथार्थ निष्कर्ष प्रस्तुत किया है। पाठकों के लाभ के लिए उसे हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं–

'यद्यपि कालिदास जैसी उदात्त भावतरलता बाण में भी नहीं मिलती तथा सरल कोमल शैली के द्वारा उच्च-कोटि के प्रभाव की सृष्टि करने में कालिदास समस्त संस्कृत साहित्य में बेजोड़ हैं, तथापि माघ और भवभूति के समान सानुप्रासिक समासान्त पदावली का जितना सुन्दर निर्वाह बाण कर पाते हैं, उतना कोई अन्य गद्य-लेखक नहीं कर पाता। इस दृष्टि से बाण माघ और भवभूति से भी बढ़ जाते हैं, क्योंकि बाण के लम्बे-लम्बे वाक्यों के विस्तीर्ण फलक पर एक-सी रेखाएँ, एक-सा रंग, एक-सी कलादक्षता का परिचय देना

---

१. कादम्बरी प्रस्तावना पूर्वार्ध, पद्य ९।

और कठिन हो जाता है, जो पद्य के छोटे से 'केन्वस' पर मजे से निभाया जा सकता है । माघ तथा भवभूति की भाँति ही बाण में तीव्र पर्यवेक्षण शक्ति है प्रकृति का जो ब्योरेवार वर्णन हमें बाण में मिलता है, वैसा माघ तथा भवभूति में उसी पैमाने पर दिखाई नहीं देता, यह दूसरी बात है कि यह प्रकृति-वर्णन वहीं तक सुन्दरता का निर्वाह कर पाता है, जहाँ तक कवि प्राकृतिक दृश्यों का बिम्ब ग्रहण कराता है, ज्योंही वह श्लेष या विरोधाभास के चक्कर में फँस जाता है, वर्णन अपनी रमणीयता खो बैठता है । बाण की शैली में कविता की अतीव उदात्तभूमि के दर्शन होते हैं, पर दुःख यह है कि कहीं-कहीं गई-बीती शाब्दीक्रीड़ा वाली सुबन्धु की दयनीय परिणति भी दिखाई देती है, जो बाण की 'कादम्बरी' को कहीं-कहीं तीखा बना देती है और काव्य-चषक का पान करते रसिक का गला कुछ-कुछ जल उठता है, अन्यथा उसमें माधुर्य का अजस्र स्रोत है, जो भोक्ता को 'समद' कर देता है ।''

कथावस्तु की योजना

'हर्षचरित की ऐतिहासिक कथा में महाकवि बाणभट्ट ने अपनी कल्पना-शक्ति का प्रचुर प्रयोग किया है । हर्ष के वंश-वर्णन सन्दर्भ में पौराणिक कथा को जोड दिया गया है तथा विभिन्न वर्णनों से कथा को सजाया, सम्हाला गया है, जिससे कथा की स्वाभाविकता में बाधा उपस्थित हो जाती है । परन्तु संस्कृत गद्य काव्यों के रसिक पाठकों को बाण के काव्यों में मध्य-मध्य में आने वाले विशालकाय वर्णन भूषणस्वरूप ही लगेंगे । वे मानों कथा-कामिनी के कमनीय कलेवर को कान्त बना रहे हों ।

कादम्बरी के कथानक की मौलिकता के सम्बन्ध में हम ऊपर बतला चुके है कि बाण ने 'बृहत्कथा' को आधार बनाया है और पुरानी कथा में अपनी कल्पना-शक्ति से नवीनता का पुट दिया है ।

कादम्बरी के कथा-विन्यास की सर्वाधिक मनोरम विशेषता है उसकी सर-सता । कथा के प्रारम्भ में ही हमें एक विद्वान् शुक के दर्शन होते हैं, और वह भी चाण्डाल कन्या के समीप । शुक ने विद्याएँ कहाँ से सीखीं ? यह प्रश्न आना स्वाभाविक है । इस प्रश्न के समाधान के रूप में शुक आप बीती सुनाना प्रारम्भ

कर देता है । एक ही प्रकार से कथा कहने में रोचकता कम हो जाती है । अतः उत्तम पुरुष की सरस शैली में वर्णित शुक के कथन के बाद जाबालि ऋषि अन्य पुरुष की शैली में कथा के सूत्र को आगे बढ़ाते हैं । उसी बीच में महाश्वेता का वृत्तान्त अनायास ही जोड़ दिया गया है । अन्त में कथा राजा शूद्रक के दरबार में आ जाती है । नयी-नयी गतिविधियाँ आती हैं । चाण्डालकन्या को पुण्डरीक की माता लक्ष्मी तथा शूद्रक को स्वयं चन्द्रापीड के रूप में देखकर पाठक आश्चर्य करने लगता है । पुण्डरीक की मृत्यु होने पर भी किसी दिव्य पुरुष के द्वारा उसका शरीर आकाश में ले जाया जाना, कपिंजल का उसके पीछे उड़ना, शाप के द्वारा अश्व बन जाना, पुण्डरीक का शुक बन जाना, इन्द्रायुध का अच्छोद सरोवर में प्रवेश करते ही कपिंजल रूप में परिवर्तित हो जाना, आदि सभी घटनाएँ अत्यन्त रोचक तथा आश्चर्य से युक्त हैं जिनके कारण पाठक की उत्सुकता लगातार बनी रहती है । अनेक कथाएँ कवि ने कुशलतापूर्वक एक दूसरे में पिरो दी हैं जिससे कथा में अत्यन्त सरसता एवं रोचकता आ गई है ।

कादम्बरी में वस्तुविन्यास विधि सर्वथा निर्दोष नहीं कही जा सकती है । इसकी सर्वाधिक आलोचना तो इन विभिन्न अन्यान्य वर्णनों को लेकर की गई है जो कथा की वेगवती धारा के समक्ष एक विशाल पर्वत की तरह आकर अड़ जाते हैं । विभिन्न स्थलों, व्यक्तियों, प्राकृतिक दृश्यों आदि के प्रासङ्गिक चित्रणों में प्रायः कवि की चित्तवृत्ति इतनी उलझ जाती है कि वह उनका साङ्गोपाङ्ग वर्णन करने में अपनी कल्पना तथा प्रतिभा को लगा देता है, या शब्द जाल में फँस जाता है और इस प्रकार कथा की गति में अवरोध आ जाता है । उत्तर-कादम्बरी के रचयिता ने अपने को इस दोष से बचाने का प्रयास किया है परन्तु बाण की समालोचना करते हुए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पञ्चतन्त्र जैसे सरल, सुबोध, सरस एवं तीव्र कथा विकास से युक्त कहानी लिख देना भर उनका लक्ष्य न था । वे गद्य-महाकाव्य के रचयिता थे । तत्कालीन साहित्यिक परम्पराओं का पालन करना भी उनके लिए आवश्यक था । अतः कथा के मध्य में आने वाले लम्बे-लम्बे वर्णन आधुनिक समालोचकों को भले ही खटकें परन्तु संस्कृत काव्यों के रसज्ञप्र ाचीन आचार्यों को तो वे रस-कलश

सदृश ही प्रतीत होते थे। काव्यलक्षण निर्माताओं की मान्यता के अनुसार उनकी इस रूप में अवस्थिति सर्वथा स्पृहणीय है। क्योंकि तत्कालीन समाज के लिए मधुर रस विन्यास के साथ ही साथ कठोर (कटु) वैदुष्य रस की भी पूर्ण अपेक्षा थी। अन्यथा उनकी दृष्टि में काव्य नीरस रहता है।

कादम्बरी के कथानक में विचित्र अलौकिक घटनाओं के समावेश की भी पाश्चात्य विद्वानों ने समालोचना की है। जन्म-जन्मान्तरों की कथाएँ, मनुष्य का पशु-पक्षी बन जाना आदि आज के युग में आश्चर्यजनक-सा लगता है, किन्तु पुनर्जन्म तथा देवी-देवताओं की दशा पर श्रद्धा रखने वाले भारतीय मनीषियों को इस प्रकार की अलौकिक घटनाएँ विचित्र नहीं लगती हैं तथा वे उनके विश्वास व निष्ठा में वृद्धि करती हुई दिखलाती हैं।

पात्र और चरित्र-चित्रण

महाकवि बाणभट्ट को पात्रों के संचयन तथा उनके कुशल चरित्र-चित्रण में पूर्ण सफलता मिली है। उन्होंने विभिन्न प्रकार के पात्रों का सरस व सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। उन्होंने जहाँ राजकुमारों, राजकुमारियों, महारानियों, श्रेष्ठ ब्राह्मणों, बुधजनों को अपने काव्यों में पात्र के रूप में चित्रित किया है वहीं ऋषि, मुनि व अन्य असभ्य लोगों को भी पात्रत्वेन अङ्गीकार करने में झिझक नहीं खायी है। उन्होंने केवल लौकिक पात्रों का चित्रण नहीं किया है—अपितु उनके गद्य ग्रन्थों में दिव्य पात्रों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है; जिनका उन्होंने सफलतापूर्वक चित्रण किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि बाण ने अपने काव्यों में उत्तर, मध्यम तथा अधम सभी श्रेणी के पात्रों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। यदि एक ओर वे राजा शूद्रक का वर्णन करते हुए तृप्ति का अनुभव नहीं करते हैं तो दूसरी ओर वे चाण्डाल-कन्या का विस्तारपूर्वक वर्णन प्रस्तुत करते हैं। यहीं कवि की कसौटी है जो कि एक पक्ष विशेष की ओर नहीं मुड़ती है अपितु स्वाभाविक रूप से प्रत्येक पक्ष का रूप प्रस्तुत करतीहै। प्रभाकरवर्धन, हर्षवर्धन(हर्ष), राज्यवर्धन,राज्यश्री, यशोमती, दिवाकरमित्र आदि हर्षचरित आख्यायिका के प्रधान पात्र है जिनका बाणभट्ट ने विशद चित्रण प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत सन्दर्भ में हम कादम्बरी

से सम्बन्धित प्रमुख पात्रों की परिचर्चा करेंगे जो कि प्रकृत ग्रन्थ के अनुकूल है।

(१) **चन्द्रापीड**—कादम्बरी नामक लोकोत्कृष्ट कथाकाव्य का चन्द्रापीड नायक है। वह राजा तारापीड का तपस्यासुलभ इकलौता लाड़ला बेटा है। उसमें प्रारम्भ से ही राजकुमारोचित समस्त गुणों का प्रादुर्भाव हुआ है। उसने विशिष्ट विश्वविद्यालय में रह कर समस्त विद्याओं का अध्ययन उन-उन विद्याओं के विशेषज्ञ आचार्यों के द्वारा किया है। अतएव उसने समस्त विद्याओं में असाधारणा योग्यता प्राप्त कर ली है। जैसा कि कहा गया है—

"तथा हि पदे, वाक्ये, प्रमाणे, धर्मशास्त्रे राजनीतिषु, व्यायामविद्यासु, चापचक्र-चर्म-कृपाण-शक्ति-तोमर-परशु-गदाप्रभृतिषु सर्वेष्वायुधविशेषेषु, रथचर्यासु, गजपृष्ठेषु, तुरंगमेषु, वीणावेणुमुरजकांस्यतालदर्दुपुटप्रभृतिषु वाद्येषु, भरतादिप्रणीतेषु नृत्यशास्त्रेषु नारदीयप्रभृतिषु, गान्धर्ववेदविशेषेषु, हस्तिशिक्षायाम्, तुरगवयोज्ञाने, पुरुषलक्षणेषु, चित्रकर्मणि, यन्त्रच्छेद्ये, पुस्तकव्यापारे, लेख्यकर्मणि, सर्वासु द्यूतकलासु, गन्धशास्त्रेषु, शकुनिरुतज्ञाने, ग्रहगणिते, रत्नपरीक्षासु, दारुकर्मणि, दन्तव्यापारे वास्तुविद्यासु, आयुर्वेदे, मन्त्रप्रयोगे, विषापहरणे, सुरङ्गोपभेदे, तरणे, लङ्घने, प्लुतिषु, आरोहणे, रतितन्त्रेषु, इन्द्रजाले, कथासु, नाटकेषु, आख्यायिकासु, काव्येषु, महाभारतपुराणेतिहासरामायणेषु, सर्वलिपिषु, सर्वदेशभाषासु, सर्वसंज्ञासु, सर्वशिल्पेषु, छन्दःसु, अन्येष्वपि कलाविशेषेषु परं कौशलमवाप।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि चन्द्रापीड ने सभी विषयों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बाल्यावस्था में ही समस्त विषयों का सर्वाङ्गीण ज्ञान उसके भावी लोकनायक होने का संसूचक था। यही कारण है कि बाण ने प्रारम्भ में ही 'होनहार विरवान के होत चीकने पात' की सदुक्ति को चरितार्थ करते हुए उसे सर्वगुणोपेत बना दिया तथा आगे चलकर ज्ञानी विज्ञानी विप्रवर शुकनास से सदुपदेश दिलवा दिया है कि ताकि उसके चरित्रनिर्माण में किसी प्रकार का

व्याघात न आने पावे । यही महाकवि की काव्यसम्बन्धिनी प्रतिभा है जिसकी नींव पर वह चन्द्रापीड जैसी भव्यभित्ति को संस्थापित कर सका है ।

चन्द्रापीड में वे सभी गुण विद्यमान हैं जो कि एक महापुरुष में रहने चाहिये । उसमें शौर्य, धैर्य, दयालुता, नम्रता, शिष्टता आदि का एकत्र समावेश है । महाश्वेता के दुख:द वृत्तान्त को सुनकर वह धैर्य बँधाता है । वह अनायास ही पिता का उत्तराधिकारी बनने को नहीं सोचता है अपितु पहले दिग्विजय के लिए प्रस्थान करता है ।

चन्द्रापीड एक आदर्श प्रेमी है । वह कादम्बरी के दर्शनमात्र से ही प्रेम करने लग जाता है परन्तु ऐसी स्थिति में भी अपने को संयत रखता है । उसके प्रणय में मर्यादा तथा गाम्भीर्य रहता है । कादम्बरी को देखकर वह मन में कहने लगता है—

'तस्य तु दृष्टकादम्वरीवदनचन्द्रलेखालक्ष्मीकस्य सागरस्येवामृतमुल्लासहृदयम् । आसीच्चास्य मनसि-शेषेन्द्रियाण्यपि में वेधसा किमिति लोचनमयान्येव न कृतानि ।''

''अर्थात् उस चन्द्रपीड का हृदय जिस प्रकार चन्द्रमा को देखकर समुद्र का जल समुच्छ्वसित होने लगता है उसी प्रकार कादम्बरी मुखरूप रेखा की शोभा को देखते ही, उछलने लगता है । उस समय उसके मन में यह आता है कि– ब्रह्मा ने मेरी शेष इन्द्रियों को नयनमय ही क्यों नहीं बनाया ?''

इधर चन्द्रापीड के सौंदर्यसन्दोहसागर में डूबी हुई कादम्बरी की क्या दशा होती है—

''दृष्ट्वा च तं प्रथमं रोमोद्गमः, ततो भूषणरवः, तदनु कादम्बरी समुत्तस्थौ ।''

''अर्थात् चन्द्रापीड को देखकर पहले तो कादम्बरी को रोमाञ्च हुआ, ततश्च आभूषण का शब्द हुआ और उसके पश्चात् कादम्बरी स्वयं उठ खड़ी हुयी है ।''

इस प्रकार के लोकनायक के दर्शन से कादम्बरी जैसी लोकनायिका का रोमाञ्चित हो उठना स्वाभाविक है ।

जब वह उज्जयिनी लौट आता है और कादम्बरी की दशा सुनकर उससे मिलने जाना चाहता है तब भी वह अपने गुरुजनों की आज्ञा को चाहता है जो कि उसकी शालीनता एवं महत्ता को प्रकट करती है ।

चन्द्रापीड एक आदर्श मित्र है । वह अपने मित्र वैशम्पायन के दुःख से स्वयं दुःखित होता है । वह उसकी मृत्यु के विषय में सुनकर अचेत हो जाता है ।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि विनम्रता, शिष्टता, औदार्य, गाम्भीर्य सहृदयता, आदर्श प्रणयभावना एवं सच्ची मित्रता आदि समस्त सद्गुण हमें चन्द्रा पीड के चरित्र में मिलते हैं ।

(२) **कादम्बरी**—कादम्बरी नामक अलौकिक गद्य ग्रंथ की नायिका कादम्बरी है । इसकी उत्कृष्टता की जहाँ तक प्रशंसा की जाये वह थोड़ी ही होगी । इसका स्पष्ट प्रमाण यही है कि महाकवि बाणभट्ट ने अपने अनुपम ग्रंथरत्न को कादम्बरी संज्ञा से ही विभूषित किया है । कदाचित् बाणभट्ट की कादम्बरी कालिदास की शकुन्तला से भी अधिक उत्कर्ष प्राप्त कर लेती है क्योंकि वहाँ शकुन्तला तो ग्रन्थ के नामकरण में जाने पर कुछ विकृत हो जाती है जबकि कादम्बरी अपने उसी रूप में पाठकों के समक्ष आ खड़ी होती है । कादम्बरी एक अप्सरा और गन्धर्व की कन्या है । कारण यह है कि साधारण मानवी में तो इतना सौन्दर्यसन्दोह आ ही नहीं सकता है । महाकवि कालिदास भी लिखते हैं—"मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः । न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात् ।।"

कादम्बरी एक आदर्श सखी है । उसमें दया, दाक्षिण्य, लावण्य आदि गुणों का एकत्र समन्वय है । वह धीर, गम्भीर एवं संयत स्वभाव की एक आदर्श एवं अद्वितीय नायिका है । उसका वर्णन बाणभट्ट इस प्रकार करते हैं—

"शरदमिवोत्पादितमानसजन्मपक्षिरवापनीतनीलकण्ठमदाम्......

`` कल्पतरुलतामिव कामफलप्रदाम् ।''

''अर्थात् शरत्काल जिस प्रकार मानसरोवर में उत्पन्न पक्षियों (हंसों) के शब्द से नीलकण्ठ (मयूर) का अभियान नष्ट कर देता है उसी प्रकार कादम्बरी ने भी मानसजन्मा कामदेव को पुनर्जन्म देकर नीलकण्ठ (शिवजी) का अहङ्कार दूर कर दिया था। पार्वती के मस्तक का आभूषण जिस प्रकार शिवजी के मस्तक पर विराजित चन्द्रिका के प्रकाश से चमकता है, उसी प्रकार कादम्बरी के पहने हुए वस्त्र स्वच्छ थे तथा शिरोभूषण सुसज्जित था। समुद्र का तट जिस प्रकार भौंरो की तरह श्याम तमाल वृक्षों से युक्त रहता है उसी प्रकार कादम्बरी का केशकलाप भौंरों के समान श्यामवर्ण का था। चन्द्रमा ने जिस प्रकार काम के वेग के कारण गुरुदेव बृहस्पति की पत्नी (तारा) का अपहरण किया था उसी प्रकार कादम्बरी के मोटे (स्थूल) नितम्ब भी काम के वेग से नहीं बच पाये थे (अर्थात् उसके मोटे नितम्ब देखकर काम उद्दीप्त हो उठता था)। वनश्रेणी का भीतरी भाग जिस प्रकार श्याम और श्वेत वर्ण की लवलीलता से शोभित रहता है उसी प्रकार कादम्बरी के शरीर का मध्य-भाग भी श्वेत और श्यामवर्ण की त्रिवलियों से युक्त था। जिस प्रकार प्रातः-काल सूर्य की किरणों एवं खिले हुए कमल के फूलों के रंग से सुशोभित होता है उसी प्रकार कादम्बरी का भी अलंकार मोतियों की चमक से मिश्रित और पद्मरागमणिनिर्मित था। आकाशगङ्गा से उत्पन्न कमलिनी नाल का कोमल और विशाल मूल देश जिस प्रकार स्वच्छ आकाश में दिखाई देता है उसी प्रकार कादम्बरी का भी मृणाल के समान कोमल जंघाओं का मूलभाग निर्मल वस्त्र के भीतर दीख रहा था। जिस प्रकार मयूर की शोभा नितम्बचुम्बी पुच्छ प्रदेश स्थित चन्द्रकों से होती है उसी प्रकार कादम्बरी की सुन्दर आकृति चन्द्रमा के समान सुन्दर थी और उसका केशकलाप नितम्बों तक लटक रहा था। जिस प्रकार कल्पतरु की लता इच्छित फल प्रदान करती है उसी प्रकार कादम्बरी भी सबको कामफल देती है।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि कादम्बरी एक अनिन्द्य सुन्दरी है। वह अपने निसर्गसौन्दर्य से सहसा ही सहृदयों को आकृष्ट कर लेती है। चन्द्रापीड के

प्रथम दर्शन से ही उसे अनुराग उत्पन्न हो जाता है। अनुराग के उत्पन्न हो जाने पर भी वह नारी सुलभ शालीनता व लज्जा का परित्याग नहीं करती है। चन्द्रापीड के द्वारा जब उसके प्रति प्रणय निवेदित किया जाता है तब भी वह मौन रहती है। परन्तु चन्द्रापीड के प्रति उसका अनुपम, अटल, सहज अनुराग उत्पन्न हो जाता है। कादम्बरी का चरित्र उस समय उत्कृष्टता की सीमा का अतिक्रमण कर जाता है जब कि वह चन्द्रापीड की मृत्यु के उपरान्त स्वयं भी अपनी देह का परित्याग कर अपने प्रियतम के साथ परलोक सिधारने के लिए उद्यत हो जाती है। परन्तु अलौकिक आकाशवाणी के द्वारा वह धैर्य को प्राप्त करती है और पुनः पति समागम की प्रतीक्षा करने लग जाती है और अन्ततोगत्वा मानो उसकी सच्ची लगन के द्वारा उसे उसका प्रियतम मिलता है जिससे वह आनन्दित हो जाती है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कादम्बरी एक सच्ची प्रणयिनी, सहज, सरल स्वभाव से युक्त, अनिन्द्य सुन्दरी, दया दाक्षिण्यादि गुणगणों से अलंकृत, विनम्रता, शालीनता एवं शिष्टता की प्रतिमूर्ति एवं विलासवती नायिका के रूप में पाठकों के समक्ष समुपस्थित होती है। कादम्बरी ग्रन्थ में, गद्यकाव्यों में और सामान्यरूप में काव्य जगत् में वह आत्मा का कार्य तो करती ही है साथ ही साथ वह इन सबको अनुपम कान्ति एवं लावण्य प्रदान करती है जिसमें निमग्न होकर सभी सहृदय परम आनन्द की अनुभूति करते हैं।

(३) **पुण्डरीक**—पुण्डरीक कादम्बरी की द्वितीय कथा का नायक है। यह लक्ष्मी का मानस पुत्र है। पुण्डरीक प्रथम जन्म में पुण्डरीक के रूप में, दूसरे जन्म में वैशम्पायन के रूप में और तीसरे जन्म में शुक के रूप में आता है। उसका वर्णन कादम्बरी में इस प्रकार हुआ है—

"अलंकारमिव ब्रह्मचर्यस्य, यौवनमिव धर्म्मस्य, विलासमिव सरस्वत्याः, स्वयंवरपतिमिव सर्वविद्यानाम्, संकेतस्थानमिव सर्वश्रुतिनाम्, निदाघकालमिव साषाढम्, हिमसमयकाननमिव स्फूटितप्रियङ्गु-मञ्जरीगौरम्, मधुमासमिव कुसुमधवलतिलकभूतिभूषितमुखम्,

आत्मानुरूपेण सवयसा अवरेण देवतार्च्चनकुसुमान्युच्चिन्वता तापस-कुमारेणानुगतम्, अतिमनोहरम्, स्नानार्थमागतं मुनिकुमारकमपश्यम्।

पुण्डरीक का चरित्र अधिक वैशिष्ट्य नहीं प्राप्त कर पाता है। उसके चरित्र में कामपरायणता का बाहुल्य रहता है। उसके तीनों जन्मों में काम-परायणता रहती है। वह इसका परित्याग नही कर पाता है। उसकी काम-पीड़ित दशा को देखें—

"उत्सृष्टसकलव्यापारतया लिखितमिवोत्कीर्णमिव स्तम्भितमि-वोपरतमिव, प्रसुप्तमिव, योगसमाधिस्थमिव, निश्चलमपि स्ववृत्ताच्च-लितम्, एकाकिनमपि मन्मथाधिष्ठितम्, सानुरागमपि, पाण्डुतामा-वहन्तम्, शून्यान्तःकरणमपि हृदयनिवासिदयितम्, तूष्णीकमपि कथितमदनवेदनातिशयम्, शिलातलोपविष्टाटमपि मरणे व्यवस्थितम् ... ...।"

इसी कामासक्ति के कारण उसे पुनः २ मृत्यु का वरण करना पड़ा है और तरह २ से कष्ट उठाने पड़े हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि उसका चरित्र अत्यन्त विकसित नहीं दिखाई देता है। वह कामासक्ति के कारण दब सा जाता है। यही कारण है कि द्वितीय नायक के रूप में रहते हुए भी उसका चरित्र उतना विकसित नहीं हो पाता है जितना की होना चाहिए।

(४) **महाश्वेता**—महाश्वेता दूसरी कथा की नायिका है। वह अपने नाम के ही समान अत्यन्त गौरवर्ण की सुन्दरी है। उसका भी सम्बन्ध गन्धर्वलोक से है।

प्रथमतः तो महाश्वेता को हम एक व्रतधारिणी, अतिथिपरायणा कन्या के रूप में देखते हैं। महाश्वेता की प्रारम्भिक कथा से उसके नवयौवन-सुलभ चापल्य का ज्ञान होता है क्योंकि वह प्रथमदर्शन में ही पुण्डरीक से प्रेम कर बैठती है। उसका प्रारम्भिक प्रणय तो सामान्य कोटि का कहा जायेगा परन्तु जब उसे यह ज्ञात होता है कि उसके वियोग में तड़प कर उसके प्रियतम ने प्राण त्याग दिये हैं तो वह अपने को भी कोसती है। उसकी अन्तरात्मा

हाहाकार कर उठती है और वह अपना शरीर त्यागने का भी निश्चय कर लेती है किन्तु उसे भी कादम्बरी की भाँति ही प्राण त्याग न करने का सन्देश मिल जाता है । यहाँ उसका चरित्र अत्यन्त निखरे हुए रूप में हमारे समक्ष आता है ।

धीरता तथा गम्भीरता महाश्वेता के चरित्र की उल्लेखनीय विशेषता है । वह धैर्यपूर्वक अपने प्रिय से पुर्नमिलन की प्रतीक्षा करती है । हम देखते हैं कि विवाह न करने की प्रतिज्ञा करने वाली कादम्बरी का प्रण अनायास ही चन्द्रापीड की ओर आकर्षित होने के कारण भङ्ग हो जाता है किन्तु महाश्वेता एक चट्टान की तरह अपने निश्चय पर अडिग रहती है । वैशम्पायन को, जो कि जन्मान्तर को प्राप्त हुआ उसका प्रमी पुण्डरीक ही है, वह प्रणय याचना करने पर शाप दे बैठती है, यद्यपि ऐसा करके वह न केवल अपने प्राप्त हुए प्रेमी को खो देती है, बल्कि चन्द्रापीड की मृत्यु का कारण बनकर अपनी सखी कादम्बरी के लिए भी दुर्भाग्य उत्पन्न कर देती ।

महाश्वेता को अपनी सखी कादम्बरी से अत्यधिक अनुराग है। उसे कादम्बरी के विवाह न करने की प्रतिज्ञा पर बड़ा दुःख है । वह स्वयं अपनी सखी का विवाह कराकर उसे सुखी बनाने का प्रयत्न करती है । महाश्वेता व्यवहारकुशल युवती है । वह चन्द्रापीड को ताम्बूल देने की आज्ञा ताम्बूल-करङ्कवाहिनी को न देकर स्वयं कादम्बरी से ही उसे ताम्बूल देने के लिए कहती है ।

संक्षेप में हम कह सकते है कि स्थायी एवं अनन्य प्रेम, शिष्टता, कुशलता धीरता, गम्भीरता, अतिथिपरायणता, सुन्दरता आदि विशेषताओं से युक्त एक आदर्श नायिका के रूप में महाश्वेता का चित्रण हुआ है ।

इनके अतिरिक्त ब्राह्मण शिरोमणि विद्वान् मन्त्री शुकनास, बुद्धिमती देवी विलासवती, निर्दयी वृद्ध शबर, दयालु ऋषिकुमार हारीत, त्रिकालदर्शी महर्षि जाबालि, स्वामिभक्त ताम्बूलकरङ्कवाहिनी, पत्रलेखा आदि के चरित्रों का भी सफलतापूर्वक चित्रण किया गया है । इन सभी पात्रों में सजीवता एवं सरसता है ।

बाण के पात्र और उनका चरित्र-चित्रण परम्परागत होते हुये भी स्वाभाविकता से रहित नहीं है । कवि ने पात्रों के चरित्र की रेखाओं को अधिक गम्भीर बनाने के लिये वैषम्य-प्रदर्शन को आधार बनाया है । उदाहरण के लिये जहाँ हम अत्यधिक गम्भीर स्वभाव वाले राजकुमार चन्द्रापीड का सबल चरित्र पाते हैं वहाँ वैशम्पायन एक दुर्बल हृदय वाला सामान्य कोटि का ही प्रेमी प्रतीत होता है । एक ओर निरन्तर हिंसा करने वाले निर्दयी शवर का चित्रण किया है तो दूसरी ओर 'अकारणमित्र' ऋषिकुमार हारीत का दयालुतापूर्ण चरित्र चित्रित किया गया है ।

विभिन्न आलोचकों ने बाण के पात्रों के चरित्र-चित्रण में अस्वाभाविकता बतलायी है । "उनके पात्र ऐसे हैं जैसे कि निश्चित रूप से होने चाहिए, ऐसे नहीं जैसे कि वस्तुतः होते हैं । जो पात्र कवि की दृष्टि में महान् है उसमें सृष्टि के सभी गुण स्वभावत: समा जायेंगे । कवि उसका गुण-कीर्तन करते हुए तृप्त नहीं होगा । उदाहरण के लिए जाबालि का चरित्र देखा जा सकता है । दुष्ट प्रकृति पात्र में सद्गुण नहीं मिल सकते । अच्छे बुरे स्वभाव का मिश्रण, जैसा कि जीवन में वास्तव में हम पाते है, यहाँ प्राय: नहीं मिलेगा ।" एस. के. डे. के. शब्दों में "Those old romancers are not always good at assessing the fine shades of human conduct, they see life as an affair in which black is black and white is white. Black and white seldom merge in dubious grey......"

अन्त में हम कह सकते हैं कि महाकवि बाणभट्ट विभिन्न वर्णनों में लगते रहे हैं । परिणामतः सभी पात्रों का चरित्र सम्यक् विकसित रूप में समुपस्थित नहीं कर पाये हैं। साथ ही साथ कथा में अलौकिकता आ जाने से पात्रों की स्वाभाविकता में अन्तर आ गया है । इतना होते हुए भी महाकवि बाणभट्ट ने अपनी अनुपम विदग्धता, प्रतिभा एवं कलाकौशल से पात्रों के चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता लाने का गुरुतर प्रयास किया है और इस प्रकार इस क्षेत्र में कवि को पूर्ण सफलता प्राप्त हुयी है । 'वाणी बाणो बभूव ह' यह कथन बाण के सम्बन्ध में अक्षरशः सत्य उतरता है; क्योंकि उन्हें हर क्षेत्र में पूर्ण साफल्य

अधिगत हुआ है ।

रसाभिव्यक्ति–काव्य में आत्मा का कार्य रस ही करता है । अतएव कविराज विश्वनाथ तो स्पष्ट कहते हैं–'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' । अतएव बाणभट्ट ने भी कादम्बरी में उचित रस सन्निवेश किया है। कादम्बरी शृङ्गार-रस प्रधान रचना है । इसमें जन्म-जन्मान्तर के संचित संस्कारों का, 'जननान्तरसौहृद' का सजीव चित्रण किया गया है । इस सम्बन्ध में श्री एस० के० डे का कथन दर्शनीय है कि—"बाण के रोमांस का मुख्य मूल्य कथावर्णन, चरित्र-चित्रण एवं आलंकारिक योजना के उपस्थापन में नहीं है अपितु कवित्व और रस की अभिव्यंजना में है ।" वस्तुतः बाण की कथा के वर्णन में, अपनी समस्त अद्भुत आलंकारिक कला की प्रस्तावना का एक मात्र उद्देश्य यही है कि वह कथा अभिनववधू की तरह हासविलासादिक चेष्टाओं से अनुरक्त हो स्वयं शय्या पर आकर सहृदय पाठक-नायक को आनन्दातिरेक से आप्लावित कर दे । कवि ने इसका संकेत आरम्भ में ही कर दिया है–

स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ।।

(कादम्बरी प्रस्तावना ८) ।

यही कारण है कि कवि शुक की सर्वशास्त्रविशारदता, जाबालि का त्रिकालदर्शित्व, किन्नर, गन्धर्व और अप्सराओं की सत्ता, शाप के कारण आकृति परिवर्तन, पुनर्जन्म आदि अयथार्थ कथानक और शूद्रक, चाण्डालकन्या, चन्द्रापीड, वैशम्पायन, शुकनास, महाश्वेता, कादम्बरी, कपिञ्जल और पुण्डरीक जैसे अतिमानव चरित्रों के सृजन में जरा भी नहीं हिचकिचाता । उसे अच्छी तरह से ज्ञात है कि भारतीय संस्कृति में पले व्यक्ति के स्थायी भावों का उद्रेक जितना इनके द्वारा सम्भव है, उतना यथार्थ के नग्न चित्रण से नहीं । 'पुराणमित्येव न साधु सर्वम्' के वक्ता कालिदास का भी इस जन्मान्तर सौहृदभाव में कितना अधिक विश्वास है–

रम्याणि वीक्ष्य मधुराश्च निशम्य शब्दान्
पर्युत्सकीभवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः ।

तच्चेतसा स्मरति नूननबोधपूर्वं
भावस्थिराणि जननान्तरसौहृदानि ।।

डा० कीथ ने लिखा है कि बाण की कादम्बरी जन्मान्तरवाद में विश्वास न करने वालों को जब रसानुभूति कराने में सक्षम है तो उनका तो पूछना ही क्या ? जिनके मन, बुद्धि और रक्त में जन्मान्तरवाद की लहरें कल्लोल कर रही हैं ।

कादम्बरी शृंगार-रस-प्रधान रचना है । इसमें मानव हृदय की मूक प्रणय वेदना की मर्मभरी कथा है । "बाण ने जिस प्रेम का चित्रण किया है, वह सर्वथा उदात्त एवं परिष्कृत है । उनके द्वारा चित्रित प्रेम का उद्दाम वेग कुल और समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता । 'दशकुमारचरित' की भाँति 'कादम्बरी' के शृंगार-रस-चित्रण में कहीं अश्लीलता की गन्ध नहीं पाई जाती । सच तो यह है कि महाश्वेता के प्रेम में पागल पुण्डरीक की कपिंजल द्वारा भर्त्सना कराकर कवि ने यह शिक्षा दी है कि असंयत प्रेम मानसिक और शारीरिक दुरवस्था का कारण होता है । सच्चा प्रणय सत्य की भाँति चिरन्तन है ।"

कादम्बरी में शृंगार के संयोग एवं वियोग दोनों ही पक्ष विद्यमान हैं । कादम्बरी की दोनों ही प्रणय-कथाओं में क्रमशः संयोग एवं वियोग दोनों ही स्थितियाँ आती हैं । कादम्बरी और महाश्वेता के प्रेमियों की मृत्यु होने पर करुण विप्रलम्भ की स्थिति बन जाती है ।

बाण की कादम्बरी में उभयविधशृंगार का जो परिपाक हुआ है, वह उनकी शैली की महत्ता है जो प्रणय के चित्रों के अधिकतर उदात्त और रमणीय भाव में भी विद्यमान है ।

कादम्बरी और चन्द्रापीड के पूर्वराग का वर्णय कितना हृदयग्राही है । प्रथम दर्शन में ही कादम्बरी के हृदय का कामबाणों से नद्ध हो जाना अपने अंगों पर लक्षित तत्तद् सात्त्विक भावों के गोपन में मुग्धा के उपकरणों की सहायता निरूपण, क्या ही मनोरम व्यंजना करता है—देखिए—

"कुसुमायुध एव स्वदेमजनयत्, ससंभ्रमोत्थानश्रमो व्यपदेशोऽभवत् । उरुकम्प एव गतिं रुरोध, नूपुररवाकृष्टहंसमण्डलमयशो लेभे ।

निःश्वासप्रवृत्तिरिवांशुकं चलं चकार । चमरानिलो निमित्ततां ययौ । अन्तःप्रविष्टचन्द्रापीडस्पर्शलोभेनैव निपपात हृदये हस्तः, स एव करं स्तनावरणव्याजो बभूव । आनन्द एवाश्रुजल-मपातयत्, चलित-कर्णावतंसकुसुमरजो व्याजमासीत् । लज्जैव वक्तुं न ददौ, मुखकम-लपरिमलागतालिवृन्दं द्वारतामगात् । मदनशरप्रथमप्रहारवेदनैव सीत्कार—मकरोत्, कुसुमप्रकरकेतकीकण्टकक्षतिः साधारणतामगात् ।"

महाश्वेता के विलाप और कादम्बरी की विरहोत्कण्ठा विप्रलम्भ एवं करुण रस के मार्मिक पक्ष का सफल चित्रण है ।

कादम्बरी में चन्द्रापीड की दिग्विजय यात्रा जैसे प्रसंगों में वीर-रस की व्यंजना का आस्वादन किया जा सकता है । हर्षचरित में हर्ष के वीरतापूर्ण कार्यों में इसकी अच्छी व्यंजना हुई है ।

बाणभट्ट की कादम्बरी में हास्य-रस की सफल अभिव्यक्ति देखने को मिलती है । कादम्बरी के जरद्द्रविण का प्रसंग हास्य-रस का सुन्दर उदाहरण है ।"अम्बिका के पैरों में गिरने से उसके काले ललाट पर गूमड़ा पड़ गया था । किसी पाखण्डी ने सिद्धि पाने के लिए अंजन दे दिया था, उस सिद्धांजन के लगाने से उसकी एक आँख फूट गयी थी, इस कारण, हर समय वह दूसरी आँख में अंजन लगाने के लिए एक काठ की सलाई पतली किया करता था । बाहर निकले दाँतों की चिकित्सा के लिए वह प्रतिदिन कड़वी तूँबरी का पसेव लगाया करता था ···मनुष्यों ने थप्पड़ मार-मार कर उसके कान चपटे कर दिये थे । उसने अपने शैव होने का अभिमान नहीं छोड़ा था । उलटा-पुलटा पकड़ कर बजाये तमूरे का शब्द सुनकर उद्वेग पाते पथिक उसकेपास नहीं फटकते थे । दिन भर सिर हिला-हिलाकर वह मच्छर की तरह भिनभिनाहट के रूप में कुछ गाया करता था···अश्वब्रह्मचर्य ग्रहण करने का कारण अन्य देशों से आकर बसी हुई वृद्ध संन्यासिनियों पर बार-बार स्त्री वशीकरण चूर्ण डाला करता था"—

"अम्बिकापादपतनश्यामललाटवर्धमानार्बुदेन, कुवादिकदत्तासि-

द्धाञ्जनस्फुटितैकलोचनतया त्रिकालमितरलोचनाञ्जनदानादरश्लक्ष्णीकृतदारुशलाकेन, प्रत्यहं कटुकालाबुस्वेदप्रारब्धदन्तुरताप्रतीकारेण · · ·असकृदभिमन्त्रितसिद्धार्थकप्रहतिप्रधावितैः पिशाचगृहीतकैः करतलताडनचिपटीकृतश्रवणपुटेन, अविमुक्तशैवाभिमानेन, दुर्गृहीतालाबुवीणावादनोद्वेजितपथिकपरिहृतेन दिवसमेव मशकक्वणितानुकारी किमपि कम्पितोमागगायता · गृहीततुरगब्रह्मचर्यतयान्यदेशागतोषितासु जरत्प्रजितासु बहुकृत्वः संप्रयुक्तस्त्रीवशकरणचूर्णेन ।"

इतना ही नहीं, बन्दरों ने उसकी नाक खरोंच डाली थी, रीछों ने उसके कपोलों पर नाखूनों को चिकना किया था। होली पर प्रायः बुढ़िया नौकरानी से उसका विवाह कराया जाता था। इस वर्णन को पढ़कर हम कह सकते हैं कि हास्य-रस की अभिव्यञ्जना में बाणभट्ट पूर्णतः सफल हुए हैं।

कादम्बरी में अद्भुत-रस का भी सुन्दर परिपाक हुआ है। शुक के द्वारा कथा कहना, दिव्य पुरुष द्वारा पुण्डरीक को आकाश में ले जाना, कपिंजल का उसके पीछे उड़ना, जल स्नान से मानव शरीर धारण करना, शुक और शूद्रक के शरीर का काठ हो जाना, आदि स्थल अदभुत-रस की व्यञ्जना करने में समर्थ हैं।

इनके अतिरिक्त भयानक-रस, शान्त-रस, बीभत्स-रस का भी यत्र-तत्र प्रयोग कादम्बरी में उपलब्ध है। क्रमशः उदाहरण के लिए शबरवर्णन, जाबालि आश्रम वर्णन, द्रविण एवं शबर वर्णन में इन रसों का आस्वाद लिया जा सकता है। बाणभट्ट की रसाभिव्यक्ति के सम्बन्ध में यही संक्षेप में कहा जा सकता है कि जहाँ कालिदास की कविता-पार्वती रस भावभरित होने पर भी बाहर से इतनी सलज्ज है कि पास आने में झिझकती है और 'गन्तुमैच्छदवलम्बितांशुका' है; वहाँ बाण की कविता महाश्वेता की तरह स्वयं रसमग्न होकर अभिसरण के लिए उद्यत है।

प्रेम और सौन्दर्य का चित्रण

कादम्बरी की कथाओं में प्रेमतत्व की प्रधानता है। बाणभट्ट की नायि-

काएँ सर्वप्रथम नायकों के बाह्यसौन्दर्य पर मुग्ध होकर उनसे प्रेम करने लगती हैं किन्तु उनका वह प्रणय सफल नहीं होता है । लम्बी साधना, विरह-वेदना और प्रतीक्षा के बाद ही उन्हें प्रिय-मिलन प्राप्त होता है । कादम्बरी में बर-साती नदी के समान उमड़कर शीघ्र ही सूख जाने वाली प्रेम-सरिता नहीं प्रवाहित की गई है, अपितु उसमें प्रणय का वह अक्षय प्रस्रवण निकलता दिखाई देता है जिसकी धारा समय बीतने पर बढ़ती ही जाती है, कम नहीं होती । कपिञ्जल द्वारा पुण्डरीक के असंयत प्रणय की आलोचना का रहस्य भी यही है कि बाण भी अनियन्त्रित प्रणय के विरोधी हैं । कालिदास ने दुष्यन्त-शकुन्तला तथा शिव-पार्वती के पारस्परिक प्रणय की सार्थकता और चरम परिणति विवाह तथा सन्तानोत्पत्ति के रूप में प्रदर्शित की है । बाण भी अपनी दोनों नायिकाओं को कथा के अन्त में दोनों नायकों के साथ परिणीत कराकर यह बात प्रतिपा-दित करते हैं, कि वह प्रणय जिसका सामाजिक दृष्टि से कोई मूल्य न हो, वासनामात्र है, कोरा पाखण्ड है और वही प्रणय स्पृहणीय है, जो प्रेमी-प्रेमिका को विवाह के मधुर सम्बन्ध में बाँध देता है ।

प्रणय-भावना के सम्बन्ध में कालिदास ने जो विचार अपने काव्य-ग्रन्थों में व्यक्त किये हैं, बाण ने उन्हें कादम्बरी में प्रयोगात्मक रूप प्रदान किया है। कालिदास ने प्रेम-भावना को पूर्वजन्म के संस्कारों पर आधारित माना है । बाण ने प्रेमी नायकों को उनके कर्मानुसार विभिन्न योनियों में संक्रमित कराने के बाद भी नायिकाओं के साथ उनके प्रणय की निरन्तरता बनाए रक्खी है और अन्त में उनका परस्पर मिलन करा दिया है । बाण की दृष्टि में प्रेम भौतिक सम्बन्ध का नामान्तर नहीं है, प्रत्युत वह जन्मातर में समुद्भूत आध्यात्मिक सम्बन्ध का परिचायक है । कादम्बरी 'जननान्तरसौहृद' का सजीव चित्रण है । बाण प्रेम को इतनी उच्च भाव-भूमि पर प्रतिष्ठित कर देते हैं जिस पर न समय का प्रभाव पड़ता है और न मृत्यु का ।[1]

बाण एकाग्र प्रेम का चित्रण करते हैं । उनके प्रेमीपात्र चाहे वे पुरुष हों या स्त्री, सभी अपने प्रेम–भाजन से अनन्य प्रेम करते हैं । पुण्डरीक को अपना

---

१. बलदेव उपाध्याय : सं० सा० का इति० पृ० ३९९ ।

प्रणयी अङ्गीकार कर लेने वाली महाश्वेता युवक चन्द्रापीड के प्रति आकर्षित नहीं होती । इतना ही नहीं, वह अपने प्रेम की एकान्त साधना में बाधक समझ कर वैशम्पायन को भी कठोर शाप दे डालती है । इस विचार के प्रति बाण की महान् आस्था का सबसे अच्छा परिचय पत्रलेखा के चरित्र से मिलता है । हम जानते है कि वह एक रूपवती राजकुमारी थी और कुमार चन्द्रापीड के साथ बराबर छाया के समान रहती थी । यदि बाण चाहते तो प्रणय की कुछ परिस्थितियाँ योजना कथावस्तु में करके पत्रलेखा को चन्द्रापीड की सहचारिणीमात्र न दिखाकर कादम्बरी के समान एक अन्य प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत कर सकते थे । पत्रलेखा के चरित्र को बाण ने प्रायः उपेक्षित छोड़ दिया है । स्वभावतः प्रश्न उठता है, क्यों ? इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है कि बाण अपनी कथा में प्रतिनायिका रखने के पक्षपाती नहीं थे। स्पष्ट है कि कादम्बरी के प्रणय को अनन्यता प्रदान करने के लिए ही उन्होंने पत्रलेखा के व्यक्तित्व को प्रणयोचित घटनाओं से दूर रक्खा है ।

बाण ने कादम्बरी में प्रणय-भावना का विकास मनोवैज्ञानिक रीति से किया है । कोमल-स्वभाव के कारण नायिकाओं को ही पहले नायकों की ओर आकर्षित होते हुए प्रदर्शित किया गया । पुण्डरीक के प्रथम दर्शन पर महाश्वेता के हृदय में प्रणय के अंकुरण और उसके स्वाभाविक विकास का अत्यन्त सजीव चित्रण कवि ने किया है । नवयौवन प्राप्त करके भी महाश्वेता शैशवसुलभ तरलता और कौतुकपरवशता का सर्वथा परित्याग नहीं कर पाती । उसके स्वभाव की यह कौतुकपरवशता ही उसके अन्तस्तल में प्रेम के बीजारोपण का कारण बन जाती है । वह अलौकिक सुगन्ध वाली कुसुममञ्जरी से अलंकृत एक युवक को देखती है और उसके प्रति आकर्षित हो जाती है । प्रणय का प्रथम प्रादुर्भाव होने पर महाश्वेता की दशा का वर्णन स्वयं महाश्वेता के शब्दों में ही देखिए—

"अनन्तरं च मेऽन्तर्मदनेनाविकारामिव दातुमाहितसन्ताना निरीयुः श्वासमरुतः साभिलाषं हृदयमाख्यातुकामामिव स्फुरितमुखमभूत्कुव-

लशयुगलम्, स्वेदलवलेखाक्षालितेवागलल्लज्जा। मकरध्वनिशरनिपातत्र-स्तेवाकम्पत गात्रयष्टिः। तद्रूपातिशयं द्रष्टुमिव कुतूहलादालिङ्गनलाल-सेभ्योऽगंभ्यो निरगाद्रामाश्चजालकम्। अशेषतः स्वेदाम्भसा धौत-श्चरणयुगलादिव हृदमविशद्रागः।"

युवराज चन्द्रापीड के प्रथम दर्शन के बाद उसके प्रति आकर्षित हुई कादम्बरी के हृदयगतभावों और कुमारीजनोचित चेष्टाओं को बाण ने अकृत्रिम रूप में चित्रित किया है। चन्द्रापीड को देखकर प्रथम तो वह रोमांचित हो जाती है, फिर संभ्रमपूर्वक उठने से पूर्व उसके आभूषण बज उठते हैं, अन्त में वह स्वयं आगन्तुकों का स्वागत करने के लिए उठ खड़ी होती है। व्यभिचारी भावों और अनुभवों की योजना कादम्बरी की दशा का वर्णन करते हुए भी सुन्दर बन पड़ी है। अलंकारों का प्रयोग करके बाण अपने इस वर्णन को और भी अधिक प्रभावपूर्ण बना देते हैं, "कादम्बरी ने ही कादम्बरी के शरीर में स्वेद जल उत्पन्न किया, आगन्तुकों के स्वागत के लिए ससंभ्रम उठ खड़े होने का श्रम तो उसमें बहाना मात्र हो गया। चन्द्रापीड को देखकर रति-भाव का उदय होने के कारण प्रकम्पित होती हुई कादम्बरी की जंघाएँ ही उसकी गति में बाधक हुईं, किन्तु उसकी गति रोक देने का अपयश मिला नूपुरों की आवाज सुन कर मार्ग में आए हुए हंसमण्डल को। दीर्घ श्वास लेने के कारण उसके स्तनों पर ढका हुआ वस्त्र कम्पित हो उठा किन्तु हिलते हुए चमर की वायु उसका कारण समझ ली गई। हृदयस्थल में स्थित चन्द्रापीड का स्पर्श पाने के लोभ से ही उसका हाथ अपने वक्षःस्थल पर गिरा, वही स्तनों को ढकने का बहाना बन गया। आनन्द के कारण ही उसके नेत्रों से आँसू गिरने लगे, हिलते हुए कर्णाभूषणपुष्प की रेणु उसका बहाना बन गयी।"

उरुकम्प एव गतिं रुरोध, नूपुरवाकृष्टहंसमण्डलमयशो लेभे। निश्वासप्रवृत्तिरेव अंशुकं चलं चकार, चामरानिलो निमित्ततां ययौ। अन्तःप्रविष्टचन्द्रापीडस्पर्शलोभेनैव निपपात- हृदये हस्तः, स एव स्तनावरणव्याजो बभूव। (पूर्वकादम्बरी)

प्रेमियों की विरह दशा के भी कई सजीव चित्र कादम्बरी में प्रस्तुत किये गये हैं। स्त्रियों की विरह-दशा का कवि लोग वर्णन करते आये हैं। पूर्व कादम्बरी में पुण्डरीक और उत्तर कादम्बरी में बाण-तनय द्वारा नायक चन्द्रापीड के विरह का भी वर्णन किया गया है। इसमें प्रथम वर्णन बाण की उर्वर कल्पना-शक्ति का सुन्दर उदाहरण है। द्वितीय वर्णन अत्यधिक दुरूह कल्पनाओं से रहित है। यह वर्णन परम्परागत पद्धति पर होते हुए भी बड़ा स्वाभाविक बन पड़ा है—

"चन्द्रबिम्बेऽपि नास्य दृष्टिरमत। तदालापपूरितश्रोत्रेन्द्रिय इव न किंचिदपरमन्तः कर्णं कृतवान्। वीणाध्वनयोऽप्यस्य बहिरेवासन्। सुभाषितान्यपि न प्रवेशमलभन्त। सुहृद्वाचोऽपि परुषा इवाभवन्। बान्धवजनजल्पितान्यपि नासुखायन्त।

(उत्तरकादम्बरी)

"कादम्बरी के विरह के कारण चन्द्रापीड को शीतल चन्द्रबिम्ब भी अच्छा नहीं लगता था। कादम्बरी के प्रेमालाप से कर्णकुहर भर जाने के कारण, मानो वह कुछ भी सुनना पसन्द नहीं करता था। वीणा की ध्वनियों पर भी ध्यान नहीं देता था। सुभाषित कथन भी इसके कानों में प्रवेश नहीं पाते थे। मित्रों की बातें भी कठोर सी लगती थीं। बान्धवों की बात-चीत भी उसे सुख नहीं देती थी। अपने प्रणय का भेद खुल जाने के कारण भय से पहले की भाँति वह किसी को दर्शन नहीं देता था। निरन्तर प्रज्वलित होती हुई कामाग्नि से दग्ध हृदय होते हुए भी वह गुरुजन की लज्जा के कारण न तो कुछ ही देर पहले उखाड़े गये गीले कमलों की शय्या का सेवन ही करता था और न ही सरस मृणालवल्लियों को ही शरीर पर लगाता था।" इसी प्रकार केयूरक द्वारा कादम्बरी की विरह-दशा का बड़ा विशद वर्णन किया गया है।[1]

बाण मानवीय सौंदर्य के सफल चित्रकार है। पूर्व कादम्बरी में स्त्री और पुरुषों के रूप के विशद वर्णन संख्या में एक दर्जन से भी अधिक हैं। स्त्री पात्रों

---

१. देखिये, उत्तरकादम्बरी–पृ० ५१२–५२०।

में से चाण्डालकन्या, महाश्वेता और कादम्बरी के नख-शिख का वर्णन कवि ने विस्तार से किया है। कादम्बरी का रूप-चित्रण तो दो स्थलों पर किया गया है। पुरुषों में राजा शूद्रक, शबर सेनापति, ऋषिकुमार हारीत, महर्षि जाबालि, बालक चन्द्रापीड, तपस्वी युवक पुण्डरीक और जरद्रविड विभिन्न वर्गों और अवस्थाओं के पात्रों का बाण ने सफलतापूर्वक रूपांकन किया है।

रूप चित्रण करते हुए बाण अपनी कल्पना-शक्ति का प्रचुरता से उपयोग करते हैं। एक से एक नई कल्पना उनके वर्णनों में मिलती है। सांवले रूप वाली चाण्डाल कन्या लाल रंग के उत्तरीय का अवगुंठन डाले हुए बाण को ऐसी प्रतीत होती है जैसे नीलकमल के स्थल पर सन्ध्याकालीन धूप पड़ रही हो। उसके एक कान में लगे हुए हाथी दाँत के आभषण की प्रभा से उसका एक ओर का श्यामल कपोल ध्वनित हो रहा था जिससे वह पूर्वदिशा में उदय होते हुए चन्द्रमा से प्रकाशित रात्रि के समान प्रतीत होती थी। बाण उसके श्यामल वर्ण के सम्बन्ध में उत्प्रेक्षाएँ करते हुए विराम नहीं लेते। वे उसका वर्णन करते हुए अपने पौराणिक ज्ञान का भी कोष खोल कर सामने रख देते हैं। चाण्डालकन्या के सम्बन्ध में 'उन्मद बलराम के हल द्वारा खींचे जाने के भय से भागी हुई यमुना' जैसी कल्पनाएँ पाठक के लिए पौराणिक ज्ञान की अपेक्षा रखती है। इतना ही नहीं, उसे 'मूर्छा के समान मनोहारिणी' बताकर कवि मूर्त पदार्थ के लिए उपमान भी प्रस्तुत कर बैठता है।

स्त्रियों के नख-शिख का वर्णन बाण ने परम्परागत रूप में ही किया है किन्तु अपनी उर्वर कल्पना-शक्ति के द्वारा उस वर्णन को नवीनता प्रदान कर दी है। नायिका कादम्बरी के नख-शिख के कल्पना-रंजित चित्र का एक अंश देखिए—

प्रजापतिदृढनिष्पीडितमध्यभागगलितं जघनशिलातलप्रतिघाताल्लावण्यस्रोत इव द्विघातमूरुद्वयं दधानम्··· उन्नतकुचान्तरितमुखदर्शनदुःखेनेव क्षीयमाणमध्यभागम्, प्रजापतेः स्पृशतोऽतिसौकुमार्यादङ्गुलिमुद्रामिव निमग्नां नाभिमण्डलमावर्तिनीमुद्वहन्तीम्, त्रिभुवन-

विजयप्रशस्तिवर्णावलीमिव लिखितां मन्मथेन रोमराजिमञ्जरीं बिभ्राणम् ।।"

बाण मानवीय सौन्दर्य का चित्रण करते हुए अङ्ग-प्रत्यङ्गों का संश्लिष्ट विवरण प्रस्तुत करने में इतनी रुचि प्रदर्शित नहीं करते जितनी कि अपनी कल्पना-कुशलता प्रदर्शन करने में । फिर भी कवि ने जिन पात्रों के रूपचित्र प्रस्तुत किये हैं, उनसे उन पात्रों के न केवल रूप-रंग और आकार-प्रकार का ही परिचय मिलता है, बल्कि उनकी अन्तःप्रकृति की झाँकी भी साथ ही साथ मिल जाती है । शबर सेनापति के स्वभाव की कठोरता, हारीत की उदारता, महर्षि जाबालि की पवित्रता और धार्मिकता, महाश्वेता की धर्म परायणता तथा अन्य पात्रों की विशेषताएँ उन सम्बन्धित पात्रों के रूप-चित्रणों के साथ जोड़ दी गई हैं ।

बाणभट्ट का प्रकृति चित्रण

प्रकृति अनादि काल से मानवमात्र की सहचरी रही है । मानव के सुख में सुखी एवं दुःख में दुःखी प्रतीत होने वाली प्रकृति प्रारम्भ से ही पुरुष से तादात्म्य कर उसके संकेत से कार्य सम्पादन करती रही है ।

मनोरम प्राकृतिक सौन्दर्य भारत-भूमि की अनुपम विशेषता है । भारतीय प्राकृतिक सौन्दर्य आब्रह्म कीट-पतङ्ग समस्त प्राणियों को आकर्षित करता है । इसकी सुषमा का अवलोकन करने के लिए ही अनेकानेक विदेशी भारत आते हैं और भारतीय प्राकृतिक सौंदर्य का दर्शन कर अपने को धन्य मानते हैं । यहाँ कहीं हिमाच्छादित हिमालय के उत्तुङ्ग शृङ्ग हैं, कहीं कलकल की ध्वनि प्रपूरित सरिताओं की उत्ताल तरङ्गें हृदय को द्रवित करती हैं, कहीं रमणीय उपवनों में मधुरकलरव पूर्ण पक्षिगण शोभायमान हैं; कहीं शीतल मन्द सुगन्ध समीर घ्राण को तृप्त करती हैं, कहीं विकसित पुण्डरीक परिपूर्ण सरोवर नेत्र-निर्वाण प्रदान करते हैं; कहीं पूर्णचन्द्र की शीतल रश्मियाँ आह्लादित करती हैं; कहीं सूर्योदय सूर्यास्त के अवसर पर सूर्य की किरणें आनन्ददायिनी प्रतीत होती हैं; कहीं मधुमाधवमास की मधुरिमा है; कहीं मेघाच्छादित आकाश में परिस्फुरित होती

हुई विद्युत् एवं मन्द गिरती हुई जल की बूंदें मनोरम प्रतीत होती हैं । तात्पर्य यह कि भारतभूमि प्रकृति की विहारस्थली है । प्रकृति की समस्त विभूतियाँ भारतभूमि में ही दृष्टिगोचर होती हैं । विश्व के किसी भूभाग में इस प्रकार का प्राकृतिक सौंदर्य उपलब्ध नहीं होता है । किसी भूभाग में केवल शीतऋतु ही वर्षपर्यन्त रहती है; कहीं वर्षपर्यन्त केवल वर्षा ही होती है; कहीं वर्षपर्यन्त केवल ग्रीष्म ऋतु का ही अधिकार रहता है । भारत भूमि में ही षट् ऋतुएँ क्रमशः आकर इसे अलंकृत करती हैं । ऐसी स्थिति में यदि भारतीय मनीषी, विद्वान् कवि साहित्यकार प्रकृति के सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसका निःशेष वर्णन प्रस्तुत करते हैं तो कोई आश्चर्य नहीं ।

प्रकृति के इन विभिन्न रूपों का दर्शन कर कवियों एवं साहित्यकारों ने विभिन्न रूप से इसका वर्णन किया है । किसी कवि ने प्रकृति के मनोरम पक्ष का ही वर्णन किया है । किसी कवि ने भयावह एवं मनोरम दोनों स्वरूपों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है । किसी विद्वान् ने आलम्बन या उद्दीपन या दोनों रूप में प्रकृति को चित्रित किया है । किसी कवि ने केवल स्वतन्त्र रूप से प्रकृति का चित्रण किया है ।

बाणभट्ट का प्रकृति चित्रण विशद, सजीव, अलंकृत और उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचायक है । आपने प्रकृति वर्णन के साथ साथ अपना पौरिाणिक, शास्त्रीय तथा अनुभवजन्य ज्ञान भी प्रस्तुत किया है। बाणभट्ट का प्रकृति वर्णन अन्तःप्रकृति के अनुरूप होता है । तेजःपुञ्ज, तपःपूत महर्षि जाबालि के आश्रम में सूर्यास्त का वर्णन कैसे शान्त एवं पवित्र भावों का परिचायक है—

"अनेन च समयेन परिणतो दिवसः । स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्घविधिमपपादयता यः क्षितितले दत्ताहस्तमम्बरतलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुदवहत् । ऊर्ध्वमुखैरर्कबिम्बविनिहितदृष्टिभिरूष्मपैस्तपोधनैरिव परिपीयमानतजः प्रसरो विरलातपस्तनिमाननमभजत् । उद्यत्सप्तर्षिसार्थस्पर्शपरिजिहीर्षयेवसंहृतपादः पारावत-

पादपाटलरागेरविरम्बरतलादलम्बत् । आलोहितांशुजालं जलशयन-मध्यगतस्य मधुरिपो विगलन्मसधुधारमिव नाभिनलिनं प्रतिमागताप-हृतार्णवे सूर्यमण्डलमलक्ष्यत। विहाय अम्बरतलमुन्मुच्य च कमलिनी-वनानि शकुनय इव दिवसावसाने तरुशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वत।"

बाण की चित्तवृत्ति उनके सहज प्रकृति-प्रेम की परिचायिका है। जो कवि प्रकृति के केवल कमनीय स्वरूप पर ही मुग्ध होता है वह सच्चा सहृदय नहीं, विलासी मात्र है। इसके साथ ही, जो प्रकृति के नित्य नवीन तथा आश्चर्यजनक रूपों के प्रति ही आकृष्ट होता है वह भी तमाशबीन ही कहा जा सकता है। किन्तु जो प्रकृति के रूक्ष और मसृण, मङ्गलमय, एवं अमङ्गलमय, कोमल एवं कठोर, शुभ एवं अशुभ, हृदयाह्लादक एवं भयावह दोनों रूपों के प्रति अपनी सहज रुचि प्रदर्शित करता है, वही प्रकृति का सच्चा उपासक है। महाकवि बाण भट्ट ने प्रकृति के दोनों पक्षों का चित्रण करके अपनी यथार्थदृष्टि और प्रकृति के प्रति वास्तविक प्रेम को प्रदर्शित किया है। वे जहाँ एक ओर विन्ध्याटवी के भयावह रूप का वर्णन करते हैं वहाँ दूसरी ओर अच्छोद सरोवर की कमनीयता का भी चित्रांकन करते हैं। पूर्णोपमालङ्कार की सहायता से प्रस्तुत किया गया विन्ध्याटवी का निम्नांकित चित्र देखिये—

"क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणिमण्डला, क्वचिद्दशमुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुङ्गशालाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव हरितकुशसमित्कुसुमशमी पलाशशोभिता, क्वचिदुन्मत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता।"

यहाँ श्लिष्ट शब्दों की योजना द्वारा कवि पूर्णोपमा का सौन्दर्य प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के वर्णनों में विचित्रता अवश्य है किन्तु साथ ही इनके सम्बन्ध में हमें यह बात नहीं भुला देना चाहिये कि ऐसे स्थल पाठकों के मनोभावों को जाग्रत करने में इतने समर्थ नहीं होते हैं जितने कि उसकी बुद्धि को चमत्कृत करने में। कहीं-कहीं कवि शाब्दीक्रीडा के इतना पीछे

पड़ता है कि भाव उपेक्षित रह जाते हैं। बाण बहुत से वर्णनों में ऐसे श्लिष्ट शब्दों की दूर तक प्रयत्नपूर्वक योजना करते जाते हैं जिनके पर्यायवाची दूसरे शब्द उनके स्थान पर बदल दिये जायें तो सम्पूर्ण उक्ति में कोई सौन्दर्य नहीं रह जाता। वस्तुतः किसी भी उक्ति को अनेक प्रकार से कहने एवं चित्रित करने में बाण पूर्णरूपेण निपुण हैं, उनकी प्रतिभा इस रूप में अत्यन्त स्फुट रूप से दृष्टिगोचर होती है। श्री भोलाशंकर व्यास लिखते हैं—

"पर सुबन्धु की तरह बाण इन कलाबाजियों में सदा नहीं फँसते और पहले वे वर्ण्य विषय को पूरी ईमानदारी से वर्णित कर देते हैं तब श्लेष की जटिल पगडण्डी का आश्रय लेते हैं।"

प्रातः, सायं, सूर्योदय, चन्द्रोदय, सूर्यास्त आदि के वर्णन में बाणभट्ट ने अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा का परिचय दिया है। कल्पनाओं के माध्यम से वर्णनों को हृदयाह्लादक एवं रमणीय बना दिया गया है। प्रकृति वर्णन में सर्वत्र उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष, विरोधाभास आदि अलंकारों का चमत्कारपूर्ण प्रयोग पाठक को विशेष रस प्रदान करता है। कवि की उत्प्रेक्षाएँ काव्य सौन्दर्य के वर्णन में पूर्ण सफल हैं।

बाण के उन प्रकृति चित्रवों में, जहाँ कवि प्रकृति के रमणीय, कमनीय, मनोहर, हृदयाह्लादक स्वरूप को आधार बनाता है, एक अद्भुत सौन्दर्य दिखाई देता है। कवि की मनोरम कल्पना से उन चित्रों के रङ्गों में अधिक निखार आ गया है। प्रभातकाल, संध्याकाल आदि के चित्र अत्यधिक सुन्दर बन पड़े हैं। चन्द्रोदय के बाद सर्वत्र व्याप्त चाँदनी की शोभा देखिये—

"चन्द्राभरणभृतस्तारकाकपालशकलालंकृतादम्बरतलातयम्बकोत्त-माङ्गादिव गङ्गासागरानापूरयन्ती हंसधवला धरण्यामपतज्ज्योत्स्ना। हिमकरसरसि विकचपुण्डरीकसिते चन्द्रिका जलपानलोभादवतीर्णो निश्चलमूर्तिरमृतपङ्कलग्न इवादृश्यत हरिणः। तिमिरजलधरसमया-पगमानन्तरमभिनवसितसिन्दुवारकुसुमपाण्डुरैरर्णवागतैरवगाह्यन्त हंसैरिव कुमुदसरांसी चन्द्रपदैः।"

इस उद्धरण में जहाँ चन्द्रमा के कलङ्क-सरोवर में प्रतिबिम्बित चन्द्रमण्डल तथा उदयकालीन लालिमा से रहित उज्ज्वल चन्द्रमा के सम्बन्ध में अनेक मनोरम कल्पनाएँ की गई हैं, वहाँ साथ ही प्रथम वाक्य में शब्द चमत्कार को प्रदर्शित कर कवि ने उस वाक्यार्थ के सौरस्य में भी बाधा उत्पन्न कर दी है। इस वाक्य में आकाशमण्डल और शिव जी के मध्य समानता प्रतिपादित की गई है वह दोनों के समान गुण, रूप आदि पर आधारित नहीं है। उसमें शब्द-योजना ही विशेष महत्व रखती है। बाण यद्यपि प्रस्तुत के अनुरूप भावों के उद्भावक अप्रस्तुत का ही प्रायः चुनाव करते हैं किन्तु तारों के श्वेत वर्ण होने के कारण 'कपालशकल' के समान बनाए जाना कुछ अच्छा प्रतीत नहीं होता है। तारों की श्वेतता उनकी बाह्य विशेषता है। मांस और त्वचा से रहित खोपड़ी का रंग भी श्वेत होता है। लेकिन क्या श्वेतवर्ण तारे और खोपड़ी के टुकड़े पाठक के हृदय में समान भावों को ही जन्म देते हैं ? जगमगाते हुए तारागणों का अवलोकन कर हमारे हृदय में स्पृहणीय भावों की उत्पत्ति होती है जबकि श्वेत अस्थि पञ्जर को देखकर मन में घृणा की ही उत्पत्ति होगी। प्रस्तुत से विपरीत भावों को जन्म देने वाले इस प्रकार के अप्रस्तुत बाण के वर्णनों में विरलता से ही मिलते हैं। शाब्दीक्रीड़ा का परित्याग कर बाण ने जहाँ अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, उर्वर कल्पना कुशलता तथा मनोरम-अलङ्कार योजना की त्रिवेणी स्थापित की है वहाँ उनके प्रकृति वर्णन सजीव, मार्मिक, स्वाभाविक एवं हृदयाकर्षक हैं।

बाणभट्ट के प्रभात वर्णन से उनकी सूक्ष्मनिरीक्षण शक्ति एवं प्रखर प्रतिभा का परिचय प्राप्त होता है। ऐसे विश्लेषणात्मक वर्णन विद्वानों के हृदय एवं मस्तिष्क दोनों को तृप्त करते हैं। प्रातः वर्णन का विलक्षण ढंग देखिये—

"एकदा तु प्रभातसंध्यारागलोहिते गगनतले, कमलिनीमधुरक्त-पक्षपुटे वृद्धहंस इव मन्दाकिनीपुलिनादपरजलनिधितटमवतरति चन्द्र-मसिपरिणतरङ्कुरोमपाण्डुनि व्रजति विशालतामाशाचक्रवाले गज-रुधिररक्तहरिसटालोमलोहिनीभिः प्रतप्तप्रलाक्षिकतन्तुपाटलाभिरायामिनीभिरशिशिरकिरणदीधितिभिः, पद्मरागशलाकासंमार्जनीभिरिव

समुत्सार्यमाणे गगनकुट्टिमकुसुमप्रकरे तारागणे, संध्यामुपासितुमुत्तरा-शावलम्बिनि मानससरस्तीरमिवावतरति सप्तर्षिमण्डले, तटगतविघटित शुक्तिसम्पुटविप्रकीर्णमकरप्रेरणाधोगलितमुडुगणमिव मुक्ताफल-निकरमुद्वहति धवलितपुलनमुदन्वति पूर्वेतरे ।"

महाकवि बाणभट्ट ने आलम्बन एवं उद्दीपन दोनों रूपों में प्रकृति को चित्रित किया है। वातावरण समय एवं स्थान के भेद से प्रातः, सायं, सूर्योदय एवं चन्द्रोदय के वर्णन में अन्तर स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है । निखिलपाप-राशि के नाश में समर्थ तेजपुञ्ज, तपःपूत महर्षि जाबालि के आश्रम में उदी-यमान चन्द्र रमणीयता, पवित्रता एवं शिष्टता का परिचायक है । महाश्वेता की वियोगावस्था के अवसर पर किया गया चन्द्रोदय वर्णन उद्दीपन के रूप में हुआ है । पुण्डरीक के प्रेम में विह्वल महाश्वेता चन्द्रोदय का अवलोकन कर अधिक व्याकुलता का अनुभव करती है । उस समय उसे असह्य मानसिक व्यथा का अनुभव होता है। कादम्बरी एवं चन्द्रापीड के प्रेम को दृढीभूत करने के लिये भी प्रातः एवं सायं का वर्णन किया गया है । उस समम का चन्द्रोदय दोनों के हृदयों में विशेष अनुराग उत्पन्न करता है तथा स्वाभाविक स्नेह का सञ्चार करता है । चन्द्रोदय में महाश्वेता की अवस्था देखिये—

"एकत्र चायं पापकारी चन्द्रहतको न शक्यते सोढुम् । इदमति-दुर्विषहं मे हृदयम् । अस्य चोद्गमनमिदं सदाहज्वरग्रस्तस्याङ्गार-वर्षः शीतार्तस्य तुषारपातः, विषविस्फोटमूर्च्छितस्य कृष्णसर्पदंशः ।"

प्रस्तुत अवसर में उदीयमान चन्द्र महाश्वेता की दृष्टि में दुष्ट है वह उसे सहन करने में असमर्थ है । "चन्द्रोदय महाश्वेता के लिये उसी प्रकार है जैसे दाह ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के लिये अङ्गारों की वर्षा, शीतलता से कम्पायमान के लिए तुषारपात तथा विष के विस्फोट से मूर्च्छित व्यक्ति के लिए काले सर्प का काटा जाना ।"

यद्यपि बाणभट्ट के प्रकृतिचित्रण में व्यास, वाल्मीकि, कालिदास आदि प्राचीन कवियों के समान रमणीयता नहीं है तथापि चित्र अलंकृत शैली में प्रस्तुत किये जाने के कारण पाठक के लिये आकर्षक एवं हृदयाह्लादक हैं । यदि व्यास, वाल्मीकि, कालिदास आदि कवियों के प्राकृतिक चित्र वन में स्वयम्

उत्पन्न लताओं के रमणीय कुञ्ज हैं तो बाण के प्राकृतिक चित्र उपवन में माली से सिञ्चित एवं सुसज्जित तथा यथोचित परिमार्जित एवं परिवर्धित लताकुञ्ज हैं। साथ ही लताओं को भी आवश्यकतानुसार काट-छाँटकर समस्त लताओं को विकसित होने का उचित अवसर प्रदान किया है। अलंकृत प्रकृति वर्णन के इस प्रकार के दृश्य अन्यत्र दुर्लभ हैं।

बाण के विस्तृत प्रकृतिचित्रण उनकी कथा में बाधा उत्पन्न करते हैं तथापि उन चित्रणों की सशक्तता और नवीनता पाठक के लिये आकर्षण की वस्तु बन जाती है। उपर्युक्त निदर्शनों से सिद्ध होता है कि बाण ने प्रकृति के सभी रूपों का वर्णन किया है। उन वर्णनों में पूर्ण सफलता भी प्राप्त की है, हाँ, कहीं-कहीं कवि की शाब्दिक कलाबाजियाँ रसानुभूति में बाधा अवश्य उत्पन्न कर देती हैं।

बाणभट्ट की शैली

समन्वयात्मक एवं परिष्कृत गद्य शैली के प्रवर्तक बाणभट्ट ने पूर्व प्रचलित शैलियों एवं कवियों के प्रति हेयता प्रदर्शित करते हुए हर्षचरित के प्रारम्भ में लिखा है—

"सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे।
उत्पादका न बहवः कवयः शरभा इव॥"

चमत्कारविहीन, रसविवर्जित, वक्रोक्तिरहित रचनाएँ श्वान के समान सर्वत्र सुलभ हो सकती हैं। सरस, अलङ्कृत, नव-कल्पना परिपूर्ण रचनाओं का निर्माण करने वाले कवियों की संख्या शरभ के समान अत्यल्प होती है। बाण के समय में उत्कृष्ट, चमत्कृत, अलंकृत, समास बहुल गद्य साहित्य का समादर था; इसके विपरीत गद्य साहित्य हेय दृष्टि से देखा जाता था। अस्तु, सकल-शास्त्रनिष्णात, प्रखरप्रतिभासम्पन्न एवं अलौकिक विद्वान् बाणभट्ट ने हर्ष-चरित में आदर्श समन्वित एवं नवीन गद्य शैली का स्वरूप प्रतिपादित किया है—

"नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम्॥"

मौलिक कल्पना, सुरुचिपूर्ण स्वभावोक्ति, अक्लिष्ट श्लेष, स्फुट रूप से

प्रतीयमान रस तथा दृढ़बन्ध पदावली इन समस्त गुणों का एकत्र सन्निवेश दुर्लभ है । इस दुर्लभता को बाणभट्ट ने सुलभता में परिणत कर अपनी नव-नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का ही परिचय प्रदान किया है । अन्य स्थल में उत्कृष्ट गद्य शैली को प्रतिपादित करते हुए वे कहते हैं—

"अन्यचिन्तितस्वभावाभिप्रायवेदकम्" तथा "उत्कृष्टकविगद्यमिव विविधवर्णश्रेणीप्रतिपाद्यमानमभिनवार्थसञ्चयम् ।"

सम्प्रति विचारणीय विषय यह है कि संस्कृत गद्य-साहित्य गगन के सूर्य महाकवि बाणभट्ट ने जिस आदर्श गद्य शैली का स्वरूप प्रतिपादित किया है उस आदर्श का निर्वाह किस स्थिति तक किया है । विविध वर्ण श्रेणी प्रति-पादित अभिनवार्थ समन्वय का निर्वाह पूर्णरूपेण किया गया है । किसी स्थान का वर्णन हो या प्रकृति वर्णन हो अथवा अन्य किसी रस-भावादि की अभिव्यक्ति हो, बाण की सर्वतोमुखी प्रतिभा नवीन-नवीन अर्थों की उद्भावना में पूर्ण सक्षम है । वास्तविकता तो यह है कि बाणभट्ट ने उन समस्त कल्पनाओं, भावनाओं एवं विचारों को अपने काव्य में समाहित कर दिया है जो अन्यत्र दुर्लभ हैं । इस सम्बन्ध में महाभारतकार व्यास का वचन बाण के विषय में पूर्णतः चरितार्थ होता है—

"यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ।"

इसी विशेषता को लक्ष्य कर 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' कहा गया है । अभिनवार्थ सञ्चय के लिए एक निदर्शन देखिए सौंदर्यसारभूत निखिल-भूपाल समुदाय को आकृष्ट करने वाली चाण्डालकन्या की सुषमा का अवलोकन कीजिए—

"शरदमिव विकसितपुण्डरीकलोचनाम्, प्रावृषमिव घनकेश-जालाम्, मलयमेखलामिव चन्दनपल्लवावतंसाम्, नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणाभरणभूषिताम्, श्रियमिव हस्तस्थितकमलशोभाम्, मूर्च्छा-मिव मनोहारिणीम्, अरण्यभूमिमिव रूपसम्पन्नाम्, दिव्ययोषितमिवा-कुलीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणीम्, अरण्यकमलिनीमिव मातङ्ग-

कुलदूषिताम्, मधुमासकुसुमसमृद्धिमिवाजातिम्, अनङ्गकुसुमचाप-लेखामिव मुष्टिग्राह्यमध्याम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम्, अचिरोपारूढयौवनम्, अतिशयरूपाकृतिमनिमिषलोचनो ददर्श ।"

बाण की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचय पद-पद में प्राप्त होता है । प्रातः सायं के वर्णन में, महाश्वेता कादम्बरी आदि के सौन्दर्य चित्रण में, उज्ज-यिनी, विन्ध्याटवी, शिवसिद्धायतन आदि के वर्णन में बाण की इस सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का दर्शन किया जा सकता है । पुण्डरीक के वियोग में तपस्या करती हुई महाश्वेता का सत्त्व गुण विशिष्ट चित्र देखिए—

"अतिविस्तारिणा सर्वदिङ्मुखप्लावकेन प्रलयविप्लुतक्षीरपयोधि-पूरपाण्डुरेणातिदीर्घकालसंचितेन तपोराशिनेव सर्वतो विसर्पता पाद-पान्तरैस्त्रिस्रोतोजलनिभेन पिण्डीभूय वहतेव देहप्रभावितानेन सगिरि-काननं दमयन्तमिव तं प्रदेशं कुर्वतीम्, अन्यथैव धवलयन्तीं कैलास-गिरिम्, अन्तर्द्रष्टुरपि लोचनपथ प्रविष्टेन श्वेतिमानमिव मनो नयन्तीम् अतिधवलप्रभापरिगतदेहतया स्फटिकगृहगतामिव दुग्धसलिलमग्ना-मिव, विमलचेलांशुकान्तरितामिव, आदर्शतलसंक्रान्तामिव, शरदभ्रपट-लतिरस्कृतामिव, अपरिस्फुटविभाव्यामानावयवाम्·········कन्यकां ददर्श ।"

सुरुचिपूर्ण स्वभावोक्ति के प्रतिपादन में बाण सिद्धहस्त हैं । उनकी कृतियों में स्वभावोक्ति पाठक को रस प्रदान करने में पूर्णरूपेण समर्थ है । नगर, वन, पर्वत, इन्द्रायुद्ध, किन्नर-युग्म आदि के विश्लेषण में स्वभावोक्ति के दर्शन होते हैं । समस्त अश्व गुणों से अलङ्कृत इन्द्रायुध का वर्णन देखिये—

"···आपिवन्तमिव संमुखागतमखिलमाकाशम्, अतिनिष्ठुरेण मुहुर्मुहुः प्रकम्पितोदररन्ध्रेण हेषारवेण पूरितभुवनोदरविवरेण निर्भर्त्स-यन्तमिवालीकवेगदुर्विदग्धं गरुत्मन्तम्, अतिदूरमुन्नमता जवनिरोध-स्फीतरोषघुरघुरायमाणघोरघोणेन शिरोभागेन निजदर्पवशादुल्लङ्-

घनार्थमाकलयन्तमिव त्रिभुवनम्...., इन्द्रनीलमणिपादपीठानुकारिभि-रञ्जनशिलाघटितैरिवानवरतपतनोत्पतनजनितविषमस्वरमुखरवैः पृथभिः खरपुटैर्जर्जरितवसुन्धरैर्मुरजवाद्यमिवाभ्यस्यन्तम्, उत्कीर्णमिव-जङ्घासु, विस्तारितमिवोरसि, श्लक्ष्णीकृतमिव मुखे, प्रसारितमिव कन्धरायाम्, उल्लिखितमिव पार्श्वयोः, द्विगुणीकृतमिव जघनभागे.... इन्द्रायुधमद्राक्षीत् ।"

बाण की प्रतिभा अधिकांशतः श्लिष्ट वर्णनों की जन्मदात्री है । प्रमुख रूपेण उपमा एवं परिसंख्या अलंकार के नियोजन में यह प्रतिभा स्पष्ट रूप से उपस्थित होकर पाठक को ध्यानमग्न एवं रसाप्लावित करने में पूर्ण सक्षम है । जिस प्रकार नटी अपना रूप परिवर्तन कर अनेक पात्रों के रूप में अलङ्कृत होकर दर्शकों को आनन्दसिन्धु में निमग्न करती रहती है उसी प्रकार बाण की समस्त काव्य प्रभुत्व सम्पन्न प्रतिभा भी नवीन कल्पनाओं के आवरण से आवृत्त होकर सर्वथा नवीन चित्रों को जन्म देती है और पाठकों को ब्रह्मानन्द सहोदर काव्यानन्द क्षीरसागर में निमग्न कर देती है । मनोरम अच्छोदसरोवर का श्लिष्ट वर्णन प्रस्तुत है—

"यौवनमिवोत्कलिकाबहुलम्, उत्कण्ठितमिव मृणालवलयालङ्कृ-तम्, महापुरुषमिव मीनमकरकूर्मचक्र-प्रकटलक्षणम्, षण्मुखचरित-मिव श्रूयमाणक्रौञ्चवनिताप्रलापम्, भारतमिव पाण्डुधार्तराष्ट्रकुल-पक्षकृतशोभम्, अमृतमथनसमयमिव तीरकासारावस्थितशितिकण्ठपीय मानविषम्, कृष्णबालचरितमिव तटकदम्बशाखाधिरूढहरिकृतजलः प्रपातक्रीडम्, मदनध्वजमिव मकराधिष्ठितम्, दिव्यमिवानिमिषलोच-नरमणीयम्, अरण्यमिव विजृम्भमाणपुण्डरीकम्, उरगकुलमिवानन्त-शतपत्रपद्मोद्भासितम्, कंसबलमिव मधुकरकुलोपगीयमानकुवलया-पीडम्, कद्रूस्तनयुगलमिव नागसहस्रपीतपयोगण्डूषम्, मलयमिव चन्दन-शिशिरवनम्, असत्साधनमिवादृष्टान्तम्, अतिमनोहरमाह्लादनं दृष्टेर-च्छोदं नाम सरो दृष्टवान् ।"

काव्य के दो पक्ष होते हैं–कलापक्ष एवं भावपक्ष । वर्ण विन्यास, अलङ्कार-नियोजन तथा चमत्कृत वर्णन कलापक्ष के अन्तर्भूत हैं । रस, भाव आदि की अभिव्यक्ति भावपक्ष के अन्तर्गत है । काव्य में भावपक्ष ही प्रधान होता है । आचार्य विश्वनाथ के अनुसार रसात्मक वाक्य ही काव्य है–'वाक्यं रसात्मकं काव्यम् ।' रस ही काव्य की आत्मा है, अलङ्कार आभूषण हैं, माधुर्यादि गुण शौर्यादि गुणों के समान हैं । अस्तु, रसाभिव्यक्ति ही कविकर्म की कसौटी है । जो कवि रसाभिव्यक्ति में निपुण होता है, उसी का काव्य विद्वत्समाज में समादृत होता है । रससन्निवेश के सम्बन्ध में बाणभट्ट की स्वयं की उक्ति उनके काव्य के विषय में अक्षरशः चरितार्थ होती है । कवि की कादम्बरीकथा स्वेच्छा से पति की शय्या की ओर गमन करती हुई नवोढा वधू के समान पाठकों को रसास्वादन कराती है—

"स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ॥"

कादम्बरी में संभोग एवं विप्रलम्भ का पूर्ण परिपाक दृष्टिगोचर होता है। करुण एवं शान्त रस का भी यथास्थान समुचित सन्निवेश किया गया है । एक ओर जहाँ नगर, वन, पर्वत, ऋतु, सरोवर आदि के वर्णन में दीर्घकाय समास एवं दृढ़बन्ध का प्रयोग किया गया है वहीं दूसरी ओर हृदयस्पर्शी भावपूर्ण, रसमय विषय के वर्णन में समास रहित, लघुकाय छोटे-छोटे वाक्य प्रयुक्त हुए हैं जिससे रसास्वादन में किसी प्रकार बाधा उपस्थित नहीं होती है । मित्र पुण्डरीक के वियोग में आर्तनाद करते हुए कपिञ्जल की दशा देखिए—

"हा हतोऽस्मि । हा दग्धोऽस्मि । हा वञ्चितोऽस्मि । हा किमिदमापतितम् । किं वृत्तम् । उत्सन्नोऽस्मि । दुरात्मन् मदनपिशाच पाप निर्घृण, किमिदमकृत्यमनुष्ठितम् । आः पापे दुष्कृतकारिणि दुर्विनीते महाश्वेते, किमनेन तेऽपकृतम्····हा धर्म, निष्परिग्रहोऽसि । हा तपः निराश्रयमसि । हा सरस्वति, विधवासि । हा सत्य, अनाथमसि । हा सुरलोक, शून्योऽसि । सखे, प्रतिपालय माम् । अहमपि

भवन्तमनुयास्यामि ।"

विकटाक्षरबन्ध में कुशलता प्रदर्शित करने में बाण अद्वितीय हैं । शुष्क वर्णन भी विकटाक्षरबद्ध होकर नारिकेल फल के समान बाह्य कठोर अन्तः रसपूर्ण हो जाते हैं । सुबन्धु गद्य के समान ये वर्णन केवल शुष्कमात्र ही नहीं हैं अपितु पाठक के नीरस हृदय में भी रस का सञ्चार करते हैं । बाण के सभी वर्णन इस विशेषता से सम्पन्न हैं । प्रस्तुत है स्वर्गसदृश राजभवन का हृदयस्पर्शी एवं विश्लेषणात्मक वर्णन—

"अनेकसंयवनचन्द्रशालाविटङ्कवेदिकासंकटशिखरैरभ्रंकषैरपहसितसितकैलासशोभैरमलसुधावदातैः सप्रालेयशैलमिव महाप्रासादैरनेकवातायनविवरविनिर्गतयुवतिकिरणसहस्रतया कनकशृङ्खलाजालकेनेवोपरि विस्तीर्णेन विराजमानम्, अन्तर्गतायुधनिवहाभिराशीविषकुलसंकुलाभिः पातालगुहाभिरिवातिगम्भीरायुधशालाभिरुपेतम्....राजकुलं विवेश ।"

उपर्युक्त विश्लेषण से यह सिद्ध है कि बाणभट्ट ने अपनी प्रतिज्ञानुसार गद्य का प्रणयन किया है । स्वयं प्रतिपादित सिद्धान्त का पूर्णरूपेण निर्वाह किया है ।

महाकवि बाणभट्ट ने अपने काव्यों में पाञ्चाली रीति का प्रयोग किया है । पाञ्चाली रीति में अर्थानुकूल, भावानुकूल, रसानुकुल वर्णों, शब्दों एवं वाक्यों का विन्यास किया जाता है—

"शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चालीरीतिरिष्यते ।
शिलाभट्टारिका वाचि बाणोक्तिषु च सा यदि ।।"

(सरस्वतीकण्ठाभरण)

बाणभट्ट के ग्रन्थरत्नों में शब्द और अर्थ का, भाव और भाषा का समुचित समन्वय उपलब्ध होता है । जहाँ विषय भावप्रधान, गम्भीर, एवं हृदयस्पर्शी होता है वहाँ रसाभिव्यक्ति के अनुकूल समास रहित लघुकाय वाक्यों का नियोजन किया गया है । इसके प्रतिकूल नगर, वन, सरोवर आदि के वर्णन

में समास बहुल एवं वर्णनानुकूल, विषयानुकूल शब्दावली का प्रयोग किया गया है। उपदेशात्मक रसमय एवं भावपूर्ण स्थलों में प्रथम कोटि की शैली के दर्शन होते हैं। रम्य वर्णनों के अवसर पर रमणीय शब्दों, विकट विन्ध्याटवी आदि भयावह वर्णनों में कर्णकटु वर्णों का विन्यास किया गया है। भावात्मक शैली का उदाहरण देखिए--

"सखे ! पुण्डरीक, नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः।.....। क्व ते तद्धैर्यम्। क्वासाविन्द्रियजयः, क्व तद्वशित्वम्, चेतसः क्व सा प्रशान्तिः, क्व तत्कुलक्रमागतं ब्रह्मचर्यम् क्व सा सर्वविषयनिरुत्सुकता, क्व ते गुरुपदेशाः, क्व तानि श्रुतानि, क्व ताः वैराग्यबुद्धय, क्व तदुपभोगविद्वेषित्वम्, क्व सा सुखपराङ्-मुखता, क्वासौ तपस्यभिनिवेशः, क्व सा भोगानामुपर्यरुचिः, क्व तद्यौवनानुशासनम्, सर्वथा निष्फला प्रज्ञा, निर्गुणो धर्मशास्त्राभ्यासः, निरर्थकः संस्कारः, निरुपकारको गुरूपदेशविवेकः, निष्प्रयोजना प्रबुद्धता, निष्कारणं ज्ञानं यदत्र भवादृशा अपि रागाभिषङ्गैः कलुषी क्रियन्ते। प्रभावैश्चाभिभूयन्ते।"

विकट विन्ध्याटवी के वर्णन में कर्णकटु एवं विकट वर्णों के साथ-साथ समास बहुल शब्दावली का अवलोकन कीजिए—

"क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणिमण्डला, क्वचिद्दशमुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुङ्गशालाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव हरितकुशसमित्कुसुमशमीपलाश-शोभिता, क्वचिदुन्मत्तामृगपतिनादभीतेव कण्टकिता, क्वचिन्मत्तेव कोकिलकुलप्रलापिनी, क्वचिदुन्मत्तेव वायुवेगकृततालशब्दा, क्वचिद्वि-धवेवोन्मुक्ततालपत्रा, क्वचित्समरभूमिरिव शरशतनिचिता, क्वचि-त्पार्थरथपताकेव कप्याक्रान्ता, क्वचिदवनिपतिविहारभमिरिव वेत्र-

लताशतदुःप्रवेशा, क्वचिद्विराटनगरीव कीचकशताकुला, क्वचिदम्बर-श्रीरिव व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा, क्वचिद्ग्रहीतव्रतेव दर्भ-चीरजटावल्कलधारिणी····विन्ध्याटवी नाम ।"

सरस सरोवरवर्णन में कोमल कान्त एवं सरस पदावली दृष्टव्य है—

"अनवरतमज्जदुन्मदशबरकामिनी कुचकलशलुलितजलम्, उत्फुल्लकुमुदकुवलयकह्लारम्, सारसितसमदसारसम्, अम्बुरुहमधुपानमत्तकलहंसकामिनीकृतकोलाहलम्, अनेकजलचरपतङ्गशत-संचलनचलितवाचालवीचिमालम्········पम्पाभिधानं पद्मसरः ।"

संस्कृत गद्य साहित्य सरोवर के सौरभसुषमासम्पन्न सरसिज, कविता काननकेसरी, अद्भुत चमत्कार परिपूर्ण प्रतिभा सम्पन्न, निखिलालङ्कार नियोजन निपुण महाकवि बाणभट्ट ने अपने काव्यों में अनुप्रास, यमक, श्लेष, रूपकोपमोत्प्रेक्षा, परिसंख्या, विरोधाभास, अतिशयोक्ति आदि अलङ्कारों का समुचित प्रयोग किया है । उपर्युक्त सभी अलंकार काव्य में अपूर्व रमणीयता का सञ्चार करते हैं । दीर्घकाय समासों के मध्य में अलंकार सरसता प्रदान करते हैं । यदि काव्य में अलंकारों का सुनियोजन न किया गया होता तो काव्य समास प्रधान शैली नीरसता में परिणत हो जाता और पाठक शीघ्र ही परिश्रान्त हो जाता । किन्तु बाण ने अपनी प्रतिभा एवं कलाकुशलता के द्वारा यथास्थान सभी अलङ्कारों को महत्त्व प्रदान करते हुए उनका अलौकिक, मनोरम सामञ्जस्य स्थापित किया है । कवि ने परवर्ती साहित्यकारों के लिए अलंकार नियोजन की नवीन दिशा प्रदर्शित की है । यदि कहीं नीरस समास बहुल विस्तृत पदावली का प्रसार है तो कहीं सरस आलङ्कारिक छटा रस प्रवाहित करती है । कविप्रवर बाण के काव्याकाश में कहीं अनुप्रास की मधुरिम तारावली चमक रही है, कहीं उपमा का मञ्जुल मयङ्क सरस शीतल रश्मियों के द्वारा दिव्यानन्द प्रकाश विकीर्ण कर रहा है, कहीं उत्प्रेक्षाओं की मेघमाला हृदय को निर्वाण प्रदान कर रही है, कहीं अतिशयोक्ति विद्युत् परिस्फुरित हो रही है, कहीं यमक, श्लेष, रूपक, परिसंख्या, विरोधाभास आदि

का सप्तवर्णी इन्द्रधनुष रसाप्लावित कर रहा है।

कवि के काव्य में अनुप्रास स्वाभाविक रूप से विना प्रयत्न के ही आ गए हैं। यथा—

"जवनिरोधस्फीतरोषघुरघुरायमाणघोरघोणेन, आस्तीर्णविविधवर्णकम्बलमिव कुञ्जरकलभम्", "मधुकरकुलकलङ्ककालीकृतकालेयककुसुमकुड्मलेषु, उत्फुल्लपल्लवलवलीलीयमानमत्ताकोकिलोल्लासितमधुशीकरोद्दामदुर्दिनेषु" "भ्रमरभरभुग्नगर्भकेसरजर्जरकुसुमोपहाररम्योऽयं लतामण्डपः।"

अपनी प्रतिज्ञानुसार कवि ने अक्लिष्ट श्लेष का ही प्रयोग किया है। उपमा, परिसंख्या एवं विरोधाभास के साथ श्लेष का विशेष प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। श्लेषानुप्राणित परिसंख्या की शोभा पर दृष्टिपात कीजिये—

"यस्याञ्चानिवृत्तिर्मणिप्रदीपानाम्, अन्तस्तरलता हाराणाम्, अस्थितिः संगीतमुरजध्वनीनाम्, द्वन्द्ववियोगश्चक्रनाम्नाम्, वर्णपरीक्षा कनकानाम्, अस्थिरत्वं ध्वजानाम्, मित्रद्वेषः कुमुदानाम्, कोशगुप्तिरसीनाम्।"

परिसंख्या एवं श्लेष से परिपूर्ण होकर जावाल्याश्रम की शोभा पवित्रता द्विगुणित हो जाती है—

"यत्र मलिनता हविर्धूमेषु न चरितेषु, मुखरागः शुकेषु न कोपेषु, तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु, चञ्चलता कदलीदलेषु न मनःसु, चक्षूरागः कोकिलेषु न परकलत्रेषु, कण्ठग्रहः कमण्डलुषु न सुरतेषु, मेखलाबन्धो व्रतेषु नेर्ष्याकलहेषु, स्तनस्पर्शो होमधेनुषु न कामिनीषु, पक्षपातः कृकवाकुषु न विद्याविवादेषु, भ्रान्तिरनलप्रदक्षिणासु न शास्त्रेषु, वसुसंकीर्तनं दिव्यकथासु न तृष्णासु, गणना रुद्राक्षवलयेषु न शरीरेषु, मुनिबालनाशः क्रतुदीक्षया न मृत्युना, रामानुरागो रामायणेन न यौवनेन, मुखभङ्गविकारो जरया न धनाभिमानेन।"

बाणभट्ट के काव्य में उपमाओं की विविधता, दर्शनीय है । उपमाएँ सर्वत्र अनुपम, स्वाभाविक एवं गवेषणापूर्ण होती हैं । उनमें किसी प्रकार की दुरूहता एवं कृत्रिमता के दर्शन नहीं होते हैं । श्लेषगर्भित उपमा की सुषमा देखिये—

"अप्सरोगणमिव प्रकटमनोरमारम्भम् दिवसकरोदयमिवोल्लसत्पद्माकरकमलामोदम्, उष्णकिरणमिव निजलक्ष्मीकृतकमलोपकारकम्, नाटकमिव पताकाङ्कशोभितम्, शोणितपुरमिव बाणयोग्यावासोपेतम्, पुराणमिव विभागावस्थापितसकलभुवनकोशम्, सम्पूर्णचन्द्रोदयमिव मृदुकरसहस्रसंवर्धितरत्नालयम्, ब्रह्माण्डमिव सकलजीवलोकव्यवहारकारणोत्पन्नहिरण्यगर्भम्, ईशानबाहुवनमिव महाभोगिमण्डलसहस्राधिष्ठितप्रकोष्ठम्, व्याकरणमिव प्रथममध्यमोत्तमपुरुषविभक्तिस्थितानेकादेशकारकाख्यातसम्प्रदानक्रियाव्ययप्रपञ्चसुस्थितम्……… राजभवनं विवेश ।'

उपमालंकार के अनुपम उदाहरणों से काव्य परिपूर्ण है । रसनोपमा का एक निदर्शन देखिये—

"क्रमेण च कृतं मे वपुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुरकरेण, मधुकर इव मदेन नवयौवनेन पदम् ।"

शास्त्रीय उपमाएँ भी यत्र तत्र उपलब्ध होती हैं—

"बौद्धेनेव सर्वास्तिवादशूरेण, सांख्यागमेनेव प्रधानपुरुषोपेतेन, जिनधर्मेणेव जीवानुकम्पिना विलासिजनेनाधिष्ठिता……।

विरोधाभास के प्रयोग में कवि ने विशेष कुशलता प्रदर्शित की है । विरोधाभास के प्रयोग से वर्णन की रमणीयता में विशेष वृद्धि हो जाती है—

"अपरिमितबहलपत्रसञ्चयापि सप्तपर्णोपशोभिता, क्रूरसत्त्वापि मुनिजनसेविता, पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी ।"

"प्रकटाङ्गनोपभोगाप्यखण्डितचरित्रा, रक्तवर्णापि सुधाधवला,

अवलम्बितमुक्ताकलापापि विहारभूषणा, बहुप्रकृतिरपि स्थिरा, उज्जयिनी नाम नगरी ।"

बाणभट्ट की उत्प्रेक्षाएँ अत्यन्त मनोहारिणी होती हैं । वे कवि की बहुज्ञता एवं कल्पनाशक्ति की परिचायिका हैं । शबरसेनापति का वर्णन प्रस्तुत है—

"अपत्यमिव विन्ध्याचलस्य, अंशकावतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलिकालस्य,....शबरसेनापतिमपश्यम् ।"

इसी प्रकार पुण्डरीक के वर्णन में नवकल्पना दृष्टव्य है—

"अलंकारमिव ब्रह्मचर्यस्य, यौवनमिव धर्मस्य, विलासमिव सरस्वत्याः, स्वयंवरपतिमिव सर्वविधानां, संकेतस्थानमिव सर्वश्रुतीनां......मुनिकुमारकमपश्यम् ।"

अलंकारों के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि सरसता, सरलता, दिव्यता, मनोरमता, स्वाभाविकता, विद्वत्ता, अनुपमता, सुनियोजनरमणीयता आदि अलंकारों के समस्त गुण कवि के काव्य की शोभा में वृद्धि करते हैं ।

स्थान-स्थान पर सूक्तियों के समावेश से गद्यकाव्य में अपूर्व रमणीयता आ गई है । कवि की सूक्तियाँ उपदेशात्मक, सरस एवं तथ्यपूर्ण है । जीवन का यथार्थ अनुभव उनमें प्रतिबिम्बित दृष्टिगोचर होता है–यथा—

"किमिव दुष्करम् अकरुणानाम्, नास्ति जीवितात् अन्यत् अभिमततरमिह सर्वजन्तूनाम्, धर्मपरायणानां हि समीपसञ्चारिण्यः कल्याणसम्पदः भवन्ति, सत्योऽयं लोकप्रवादो यद् विपद् विपदमनुबध्नाति सम्पत् सम्पदं च, अहो दुर्निवारताव्यसनोपनिपातानाम्, अदूरकोपा हि मुनिजनप्रकृतिः, आशया हि किमिव न क्रियते, अतिकष्टासु दशास्वपि जीवितनिरपेक्षाः न भवन्ति खलु जगति प्राणिनां वृत्तयः, अमोघफला हि महामुनिसेवाः भवन्ति, बहुभाषिणो न श्रद्धधाति लोकः, बलवती द्वन्द्वानां प्रवृत्तिः, धैर्यधनाः हि साधवः, धीरा हि तरन्त्यापदम्, नहि शक्यं दैवमन्यथाकर्तुमभियुक्तेनापि, परं

हि दैवतम् ऋषयः, पुण्यानि हि नामग्रहणान्यपि महामुनीनां किं पुनर्दर्शनानि । सर्वथा कञ्चित् खलीकरोति-जीवितमृगतृष्णा ।

उपर्युक्त सूक्तियों से स्पष्ट है कि जहाँ बाण की गद्य रचना में प्राञ्जल विषयानुकूल शब्दयोजना, मनोरम पदलालित्य, भावपूर्णता एवं रसमयता, अलंकार रमणीयता आदि गुण प्राप्त होते हैं वहीं सूक्ति एवं सुभाषित का प्रयोग गद्यकाव्य में संगीतात्मकता एवं पद्यात्मक स्वरमाधुर्य का स्पष्ट अनुभव कराता है । ये सूक्तियाँ बाण के जीवन के यथार्थ अनुभव की प्रतीक हैं एवं बाण के जीवन की ओर भी संकेत करती हैं ।

बाण की वर्णनशक्ति अत्यन्त अद्भुत एवं आश्चर्यजनक है । वर्णन की विविधता एवं विशदता सर्वत्र दर्शनीय है । किसी भी विषय के वर्णन में समस्त सम्भाव्य कल्पनाओं एवं उद्भावनाओं के समाप्त होने के उपरान्त वर्णन की इतिश्री होती है । इसीलिए 'बाणोच्छिष्टम्' कहा गया है अर्थात् समस्त साहित्य जगत् बाण से उच्छिष्ट है ।

गद्य एवं पद्य साहित्य की समस्त विशेषतायें बाण के गद्य-साहित्य में उपलब्ध होती हैं । श्री चन्द्रदेव ने बाण की इस प्रतिभा को प्रकट करते हुए कहा है—

''श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद् रसे चापरेऽलंकारे कतिचित् सदर्थ विषये चान्ये कथावर्णने । आसर्वत्रगम्भीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरीसञ्चारी-कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः ।''

श्री गोवर्धनाचार्य ने तो बाण को सरस्वती का अवतार ही कहा है—

''जाता शिखण्डिनी प्राक् यथा शिखण्डी तथावगच्छामि ।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ।।''

इस प्रकार अनेकानेक विद्वानों, आलोचकों एवं पाश्चात्यमनीषियों के द्वारा बाण की प्रतिभा की कोटिशः प्रशंसा की गयी है ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

कादम्बरी-कथामुखम्

संस्कृत-हिन्दी-टीका-संवलितम्

मंगलाचरणम्

—:०:—

रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे ।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः ॥ १ ॥

प्रसंग—कविता-कामिनी के पञ्चबाण महाकवि बाणभट्ट कादम्बरी नामक गद्य-ग्रंथ की निर्विघ्न समाप्ति के लिए समस्त जगत् के कारण सगुण ब्रह्म को नमस्कार करते हुए मङ्गलाचरण कर रहे हैं ।

अन्वय—प्रजानां जन्मनि रजोजुषे, स्थितौ सत्त्ववृत्तये; प्रलये तमः स्पृशे, सर्गस्थितिनाशहेतवे, त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने अजाय नमः ॥ १ ॥

हिन्दी-अनुवाद–(जो) प्राणियों के प्रादुर्भाव काल में रजोगुणयुक्त (अर्थात् ब्रह्मा के रूप में), स्थिति-काल में सात्त्विक वृत्ति वाला (अर्थात् सत्त्वगुणयुक्त विष्णु के रूप में) तथा प्रलयकाल में तमोगुणस्पर्शी (अर्थात् तमोगुणयुक्त प्रलयङ्कर शिव के रूप में) होता है । (संसार की) सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय (विनाश) के कारण बनने वाले, वेदत्रयी में व्याप्त, त्रिगुणस्वरूप एवं अजन्मा (उस) परब्रह्म को नमस्कार है ॥ १ ॥

संस्कृत-व्याख्या—अत्रादौ महाकविर्बाणभट्टो ग्रन्थनिर्विघ्नसमाप्त्यर्थं परब्रह्मनमस्काररूपं मङ्गलमाचरति–**रजोजुषे** इति । **प्रजानाम्**=प्रकर्षेणजायन्त इति प्रजास्तेषां जीवानाम्, **जन्मनि**=उत्पत्तौ, **रजोजुषे**=रजोगुणं जुषते सेवत इति रजोजुट्, तस्मै रजोगुणयुक्ताय विरञ्चिरूपिणे, **स्थितौ**=स्थितिकाले, **सत्त्ववृत्तये**=सत्त्वं वृत्तिर्यस्य, तस्मै सत्त्वगुणयुक्ताय विष्णुरूपिणे, **प्रलये**=प्रलयकाले,

तमःस्पृशे=तमःस्पृशतीति तमः स्पृक्, तस्मै तमोगुणयुक्ताय शिवरूपिणे, **सर्गस्थितिनाशहेतवे**=सर्गः सृष्टिः स्थितिः पालनं नाशः संहारश्च तेषां हेतवे कारणीभूताय; **त्रयीमयाय**=वेदत्रयीरूपाय देवत्रयीरूपाय वा, **त्रिगुणात्मने**=सत्त्वरजस्तमोरूपत्रिगुणात्मकस्वरूपाय, **अजाय**=जन्मरहिताय स्वयम्भुवे, **नमः**=नमस्कारः। अत्र रजोजुषे सर्गहेतवे, सत्त्ववृत्तये स्थितिहेतवे तथा तमःस्पृशे नाशहेतवे इति यथासङ्ख्येन सम्बन्धसम्भवात् यथासंख्यमलङ्कारः। तल्लक्षणम्—'यथासंख्यमनुद्देश उद्दिष्टानां क्रमेण यत्'। वंशस्थ-वृत्तम्। तल्लक्षणन्तु वृत्तरत्नाकरे—'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' ।। १ ।।

टिप्पणी—प्रजानाम्—प्रकर्षेण जायन्ते इति प्रजास्तेषाम्। प्र+जन्+ड+टाप्=प्रजा। यहाँ प्रजा शब्द समस्त अनित्य पदर्थों का उपलक्षक है। **रजोजुषे**—रजोगुणं जुषते=सेवते इति रजोजुट्, तस्मै। रजस्+जुष् (जुषी प्रीतिसेवनयोः)+क्विप्, क्विप् का सर्वापहारी लोप (च० ए० व०)। **त्रयीमयाय**—त्रय+ङीप्+मयट्, च० ए० व०। यहाँ 'त्रयी' शब्द के दो अर्थ किये जा सकते हैं—ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश इन तीन देवताओं का समुदाय। ऋक्, यजुः एवं साम इन तीन वेदों का समुदाय। **त्रिगुणात्मने**—त्रिगुणं माया आत्मनि स्वस्मिन् यस्य तस्मै। रजस्, सत्त्व, तमस् ये तीन गुण हैं। इन तीनों गुणों के आधार पर परब्रह्म क्रमशः सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार करता है। 'आत्मा' शब्द के लिए अमरकोष में कहा गया है—'आत्मा यत्नो धृतिर्बुद्धिः स्वभावो ब्रह्म वर्ष्म च'। उपर्युक्त तीन गुणों का लक्षण सांख्य-कारिका में इस प्रकार बतलाया गया है—'सत्त्वं लघु प्रकाशकमिष्टमुपष्टम्भकं चलञ्च रजः। गुरुवरणकमेव तमः प्रदीपवच्चार्थतो वृत्तिः ।।' **नमः**—इस पद के योग में 'नमः स्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च' इस नियम से 'रजोजुषे' आदि पदों में चतुर्थी विभक्ति। इस श्लोक में परब्रह्म की स्तुति की गई है। जिस प्रकार से एक ही स्फटिकमणि को विभिन्न रंगों के आधार पर नीली-पीली आदि कह देते हैं उसी प्रकार एक ही परब्रह्म को सृष्टि के समय में रजोगुण से युक्त होने पर ब्रह्मा, स्थिति के समय में सत्त्वगुण से युक्त होने पर विष्णु और विनाश के समय में तमोगुण से युक्त होने पर रुद्र—इस प्रकार का व्यवहार किया जाता

है । इसी विषय में श्रुति का कथन है—'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म ।' स्मृति में भी कहा गया है—'ब्रह्मत्वे सृजते लोकान् विष्णुत्वे पालयत्यपि । रुद्रत्वे संहरत्येव तिस्रोऽवस्थाः स्वयम्भुवः ।।' इसका विशद विवेचन श्रीमद्भागवत में इस प्रकार किया गया है—

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा,
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ।।

'**रजोजुषे**, '**सत्त्ववृत्तये**' और '**तमःस्पृशे**' इन पदों का साभिप्राय प्रयोग है, अतः परिकर अलंकार है । रजोजुषे, सत्त्ववृत्तये और तमःस्पृशे इन पदों का 'सर्गस्थितिनाशहेतवे' में क्रमशः सम्बन्ध होने से यथासख्य अलकार है । 'रजोजुषे' आदि पदों में **अनुप्रास अलङ्कार** है । यहाँ **प्रसाद** गुण है; जिसका लक्षण इस प्रकार है—"**चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः । सः प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च** ।।" अर्थात् जो गुण चित्त में तत्काल उसी प्रकार व्याप्त हो जाता है, जिस प्रकार सूखे हुए ईंधन में झट से अग्नि व्याप्त हो जाती है, उसे प्रसाद कहते हैं । यह गुण समस्त रसों और रचनाओं में रह सकता है । **वैदर्भी** रीति है, जिसका लक्षण इस प्रकार है—**माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णै रचना ललितात्मिका । अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भीरीति-रिष्यते** ।' अर्थात् माधुर्य व्यञ्जक वर्णों से युक्त, समासरहित अथवा छोटे-छोटे समासों से युक्त, मनोहर रचना को वैदर्भी रीति कहते हैं । **वंशस्थ** छन्द है, लक्षण—"**जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ**" ।। १ ।।

जयन्ति बाणासुरमौलिलालिता दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः ।
सुरासुराधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदस्त्र्यम्बकपादपांशवः ।। २ ।।

प्रसंग—इस श्लोक में भगवान शङ्कर जी की स्तुति की गई है ।

अन्वय—बाणासुरमौलिलालिताः, दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः, सुरासुराधी-

शशिखान्तशायिनः, भवच्छिदः त्र्यम्बकपादपांशवः जयन्ति ।। २ ।।

हिन्दी-अनुवाद—असुरराज बाण द्वारा (आदरपूर्वक) सिरमाथे लगाई गई, लङ्कापति रावण के शिरोमणि-समूह को चूमने वाली, देवता तथा राक्षस-अधिपतियों के शिखाग्रभाग पर शयन करने वाली, भवबन्धन काटने वाली, त्रिनेत्रधारी भगवान् शिव की चरणधूलियाँ विजयिनी बनें ।। २ ।।

संस्कृत-व्याख्या—अस्मिन् श्लोके कविः भगवतः शङ्करस्य स्तुतिं करोति-जयन्तीति । **बाणासुरमौलिलालिताः**=बाणासुरस्य बाणाख्यस्य दैत्यस्य मौलिना मुकुटेन मूर्ध्ना वा लालिताः प्रणामावसरे सादरं स्वीकृताः, **दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः**=दशास्यो रावणस्तस्य चूडामणयः किरीटरत्नानि तेषां चक्रं समूहं चुम्बन्ति प्रणामकाले स्पृशन्ति इत्येवंशीलाः, **सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः**=सुराः देवा असुराः राक्षसाः, सुराश्च असुराश्च इति सुरासुराः, तेषां ये अधीशाः स्वामिनः तेषां शिखाः चूडास्तासाम् अन्तेषु अग्रभागेषु शयितुं नमनकाले स्थातु शीलं येषां ते, **भवच्छिदः**=भवं संसारं छिन्दन्तीति भवच्छिदस्ताः संसार-दुःखविच्छेदिनः, **त्र्यम्बकपादपांसवः**=त्रीणि अम्बकानि नयनानि यस्य सः तस्य शिवस्य 'अम्बकं नयनं दृष्टिः' इति हलायुधः, पादपांसवः=चरणरेणवः, **जयन्ति**=सर्वोत्कर्षेण वर्तन्ते । समुच्चयोऽलङ्कारः । वंशस्थं वृत्तम् ।। २ ।।

टिप्पणी—बाणासुरमौलिलालिताः—बाणासुरस्य मौलिना लालिताः । यहां पद 'त्र्यम्बकपादपांसवः' का विशेषण है । बाणासुर शिव के परमाराधक एक राक्षस का नाम है । **दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः**—दश आस्यानि मुखानि यस्य सः दशास्यः=रावणः (बहुव्रीहि), तस्य चूडामणयः =किरीटिरत्नानि तेष चक्रं समूहं चुम्बन्ति स्पृशन्ति ये तथोक्ताः । भाव यह है कि परमभक्त रावण जब शिव जी के चरणों में मस्तक झुकाता था तो उसके मस्तक-मणियों का स्पर्श भगवान् भूतभावन की चरणधूलि से हो जाता था । **सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः**—सुष्ठु परब्रह्मणि रमन्ते ये ते सुराः अथवा सुष्ठु राति ददात्यभीष्टमिति सुरस्ते सुराः । सु+रा+क । तद्भिन्नाः असुराः तेषामधीशाः=स्वामिनः तेषां शिखाः चूडास्तासाम् अन्तेषु अग्रभागेषु शयितुं शीलं येषां ते तथोक्ताः । इससे शिव की महत्ता अभिव्यक्त होती है । देवताओं तथा असुरों के स्वामी भीआ-

आकर शिव को नतमस्तक होते हैं । **भवच्छिदः**—सांसारिक दुःखों को दूर करने वाली । 'यह संसार परमतत्त्व की प्राप्ति में बाधक है' परन्तु शिव की चरण-धूलि उस संसार अर्थात् सांसारिक दुःखों को नाश करने वाली है । **त्र्यम्बक-पादपांसवः**—त्रीणि अम्बकानि नयनानि यस्य सः (बहुव्रीहि), तस्य=शिवस्य; 'अम्बकं नयनं दृष्टिः' इति हलायुधः अथवा त्रयाणां लोकानां अम्बकस्य पितुः पादपांसवः चरणरेणवः (ष० त०) । **जयन्ति**=जि जये लट् प्र० पु० ब० व० । यहाँ 'जयन्ति' पद से व्यञ्जना के द्वारा नमस्कार समझना चाहिए । इस प्रकार 'भगवान् शिव के चरणों की उस धूलि को नमस्कार है' यह अर्थ होगा । यहाँ ज्ञानप्राप्ति के लिए भगवान् शंकर की स्तुति की गयी है क्योंकि स्मृति में कहा गया है—'ज्ञानमिच्छेत्तु शङ्करात्' । इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत में भी कहा गया है—'विद्याकामस्तु गिरीशम्' अर्थात् विद्या को चाहने वाला शंकर की उपासना करे । यहाँ उत्कर्षकथन कार्य के प्रति 'बाणासुरमौलिलालिता' आदि चार हेतुओं को प्रस्तुत करने से **समुच्चयालंकार** है । '**समुच्चयोऽयमेकस्मिन् सति कार्यस्य साधके** ।' इसके अतिरिक्त प्रत्येक चरण में अनुप्रास का सौन्दर्य दर्शनीय है । ये दोनों अलंकार परस्पर निरपेक्षभाव से स्थित हैं, अतः **संसृष्टि** अलंकार है । **प्रसाद** गुण है । **पाञ्चाली** रीति है, जिसका लक्षण इस प्रकार है—"**वर्णैः शेषैः पुनर्द्वयोः । समस्तपञ्चषपदो बन्धः पाञ्चालिका मता** ।" अर्थात् जो वर्ण माधुर्य एवं ओज के व्यंजक नहीं होते हैं और जिसमें पाँच छः पदों तक का समास होता है उसे पाञ्चाली रीति कहते हैं । **वंशस्थ छन्द** ।।२।।

जयत्युपेन्द्रः स चकार दूरतो बिभित्सया यः क्षणलब्धलक्ष्यया ।
दृशैव कोपारुणया रिपोरुरः स्वयं भयाद्भिन्नमिवास्रपाटलम् ।।३।।

प्रसंग—इष्टदेवता के ध्यान से समस्त कामनायें सिद्ध होती हैं । अतएव ग्रन्थकार अपने इष्टदेव नरसिंहरूप भगवान् विष्णु का ध्यान कर रहा है ।

अन्वय—यः बिभित्सया क्षणलब्धलक्ष्यया कोपारुणया दृशा एव, भयात् स्वयं भिन्नम् इव, रिपोः उरः दूरतः अस्रपाटलं चकार—स उपेन्द्रः जयति ।।३।।

हिन्दी-अनुवाद—(नृसिंहरूपधारी, देवराज इन्द्र के अनुजकल्प) उन उपेन्द्र की जय हो जिन्होंने विदीर्ण कर देने की इच्छा से दूर से (ही) क्षणमात्र में लक्ष्य को प्राप्त कर लेने वाली (अतएव) क्रोध के कारण रक्तवर्णा दृष्टि से ही शत्रुकल्प हिरण्यकशिपु के वक्ष:स्थल को इस प्रकार अस्रपाटल अर्थात् रुधिर की भाँति श्वेतरक्त बना दिया था मानों विदारणभय से वह अपने आप फट गया हो ।।३।।

संस्कृत-व्याख्या–**यः**=नृसिंहरूपधारी विष्णुः, **बिभित्सया**=भेत्तुमिच्छया, **क्षणलब्धलक्ष्यया**=क्षणं क्षणकालं लब्धं प्राप्तं लक्ष्यं तदेव वक्ष:स्थलं यया तया, क्षणं तदुर:स्थलमवलोकयन्त्या, **कोपारुणया**=कोपेन क्रोधेन अरुणया रक्त-वर्णया, **दृशा**=दृष्टिमात्रेण, **एव**=अवधारणार्थे, **भयात्**=नृसिंहत्रासात्, **स्वयम्**=आत्मना, **भिन्नम्**=विदीर्णम्, **इव**=इवेत्युत्प्रेक्षायाम्, **रिपोः**=शत्रोः, **उरः**=वक्ष:स्थलम्, **दूरतः**=दूरात्, **अस्रपाटलम्**=अस्रं रक्तं तदवत् पाटलम् आरक्तम्, **चकार**=अकरोत्, **स उपेन्द्रः**=सः विष्णु, **जयति**= सर्वोत्कर्षेण वर्तते ।।३।।

टिप्पणी–**बिभित्सया**—भेत्तुमिच्छया । भिद्+सन्+अ+टाप् (तृ० ए० व०) । **क्षणलब्धलक्ष्यया**—क्षणं क्षणकालं लब्धं प्राप्तं लक्ष्यं वक्ष:स्थलं यया सा, तया । **कोपारुणया**=कोपेन अरुणया । **अस्रपाटलम्**—रक्त के समान पाटलवर्ण । 'पाटल' शब्द को पीलापन लिए हुए रक्तवर्ण तथा गुलाबी रंग अर्थ में प्रयुक्त करते हैं । 'श्वेतरक्तस्तु पाटलः' इत्यमरः । पट् (गतौ)+णिच् +कलच् । **चकार**+कृ+लिट्, प्र० पु० ए० व० । **उपेन्द्रः**—इन्द्रमुपगत उपेन्द्रः । इन्दतीति इन्द्रः, उप+इन्द्+रन् (इदि परमैश्वर्ये धातुः) । इन्द्र के छोटे भाई, विष्णु भगवान् । इस श्लोक से ज्ञात होता है कि ग्रन्थकार के इष्टदेव नृसिंह भग-वान् थे । इष्टदेव के ध्यान से कामना सिद्ध होती है, अतः ग्रन्थकार अपने इष्टदेव नरसिंहरूप भगवान् विष्णु का ध्यान करता है । यहाँ हिरण्यकशिपु का वक्ष:स्थल अपने श्यामवर्ण गुण को छोड़कर श्वेतरक्त वर्ण गुण को धारण करता है, अतः **तद्गुणालंकार** है । लक्षण--'**तद्गुणः स्वगुणत्यागात्** ।' 'अस्रपाटलम्' में

"**लुप्तोपमा** तथा 'भिन्नमिव' में **भावाभिमानिनी क्रियोत्प्रेक्षा** अलंकार है । इन अलंकारों के अङ्गाङ्गिभाव से स्थित होने के कारण **संकर** अलंकार है। **प्रसाद-गुण** तथा **वैदर्भीरीति । वंशस्थ छन्द** ॥

नमामि भर्वोश्चरणाम्बुजद्वयं सशेखरैः मौखरिभिः कृतार्चनम् ।
समस्तसामन्तकिरीटवेदिकाविटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गुलि ॥४॥

प्रसंग—सम्प्रति महाकवि बाणभट्ट अपने गुरुजी को नमस्कार करते है ।

अन्वय—सशेखरैः मौखरिभिः कृतार्चनं समस्तसामन्तकिरीटवेदिकाविटङ्क-पीठोल्लुठितारुणाङ्गुलि भर्वोः (भत्सोः वा) चरणाम्बुजद्वयं नमामि ॥४॥

हिन्दी-अनुवाद—मुकुट धारण करने वाले मौखरि क्षत्रियों द्वारा समर्पित तथा समस्त सामन्तों (अधीनस्थ प्रदेशाधिपतियों) की किरीटरूपी वेदिकाओं की मध्यवर्तिनी विटङ्कभूमि (अर्थात् उन्नत प्रदेश) पर रगड़ जाने के कारण लाल हो जाने वाली उँगलियों वाले (गुरुदेव) भर्वु (भत्सु) के चरणकमल युगल की मैं (बाणभट्ट) वन्दना करना चाहता हूँ ॥४॥

संस्कृत-व्याख्या—सम्प्रति गुरुनमस्कारं विदधाति—**नमामीति सशेखरैः**= शेखरैः मुकुटैः सह वर्तमानाः सशेखराः तैः, सशेखरैः समुकुटैः, **मौखरिभिः**= क्षत्रियविशेषैः, **कृतार्चनम्**=**कृतं** विहितम् अर्चनं पूजनं यस्य तत्, **समस्त-सामन्तकिरीटवेदिकाविटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गुलि**=समस्ताः सकला ये सामन्ता अधिकृता नृपतयः तेषां किरीटानि मुकुटान्येव वेदिकाः परिष्कृतभूमयः तासु यानि विटङ्कपीठानि कपोतपालिकाभूमयः तेषु उल्लुठिताः संलग्नाः, अतएव अरुणाः रक्तवर्णा अङ्गुलयः करशाखाः यस्य तत्, **भर्वोः**=एतन्नामगुरोः (भत्सोः वा) **चरणाम्बुजद्वयम्**=पादपद्मयुगलम्, **नमामि**=अभिवादये ॥४॥

टिप्पणी—सशेखरैः—शेखरैः सह वर्तमानाः सशेखराः, तैः=समुकुटैः । **मौख-रिभिः**—राजवंशभिः । 'मौखरी' बाणभट्ट के समय के एक राजवंश का नाम था । अथवा मुखरस्य भावः मौखरम् । मुखर+अण् । मौखरमेषामस्तीति 'अत इनिठनौ' से 'इनि' (तृ० ब० ७०) । वेदादिध्वनि करने वाले छात्रों के द्वारा । **कृतार्चनम्**=कृतम् अर्चनं यस्य तत् (बहुव्रीहि) । **समस्तसामन्त-**

किरीटवेदिकाविटङ्कपीठोल्लुठितारुणाङ्गुलि=समस्ताः ये सामन्ताः, तेषां किरीटानि एव वेदिकाः, तासु यानि विटङ्कपीठानि, तेषु उल्लुठिताः, अतएव अरुणा अङ्गुलयः यस्य तत् (बहुव्रीहि) । **भर्वोः**—(भत्सोः) भर्वु या भत्सु बाणभट्ट के गुरु जी का नाम है । **चरणाम्बुजद्वयम्**—चरणौ अम्बुजे इव तयोः द्वयं=चरणाम्बुजद्वयम् । इस पद्य में कवि अपने गुरुदेवजी को नमस्कार करता है । विद्यावृद्धि के लिए अभिवादन उचित ही है । मनुस्मृति में कहा गया है—"**अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः । चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ।।**" इनके गुरु भर्वु या भत्सु थे जिनका राजपरिवारों में भी अत्यन्त सम्मान होता था । 'विटङ्क' शब्द का अर्थ अमरकोश के अनुसार 'कपोतपालिकायान्तु विटङ्कं पुन्नपुंसकम्' 'कपोतपालिका' है । अतः यहाँ मुकुट का उन्नत-भाग-यह विटङ्क शब्द का लक्ष्यार्थ है । लक्षणा के कारण यहाँ नेयार्थ दोष नहीं है । यद्यपि स्मृति का कथन है-'आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च । श्रेयस्कामो न गृह्णीयाज्ज्येष्ठापत्यकलत्रयोः ।।' अतः बाण को अपने गुरुजी का नाम नहीं लेना चाहिए था, फिर नाम क्यों लिया ? यह आक्षेप हो सकता है । परन्तु यह राशिनाम के लिए ही उचित है । व्यावहारिक नाम व्यवहार एवं लेख में तो लिया ही जाता है-ऐसा न करने से हानि है । यहाँ गुरु के लिए एकवचन का प्रयोग किया गया है, जिससे ज्ञात होता है कि बाणभट्ट ने एक ही गुरु से समस्त विद्याओं को प्राप्त किया था । किरीटों पर वेदिका का आरोप होने से निरङ्ग केवल परम्परित रूपक अलङ्कार है जिसका लक्षण साहित्य-दर्पण में इस प्रकार है-"**निरङ्गं केवलस्यैव रूपणम्** ।" **प्रसादगुण**. **पाञ्चालीरीति । वंशस्थ छन्द ।।४।।**

अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात्कस्य भयं न जायते ।
विषं महाहेरिव यस्य दुर्वचः सुदुःसहं सन्निहितं सदा मुखे ।।५।।

प्रसंग—यहाँ दुर्जनों की निन्दा की गयी है ।

अन्वय—अकारणाविष्कृतवैरदारुणात् असज्जनात् कस्य भयं न जायते ? यस्य मुखे सुदुःसहं दुर्वचः महाहेः विषम् इव सदा सन्निहितं भवति ।।५।।

हिन्दी-अनुवाद—बिना किसी कारण के ही वैरभाव प्रकट करने वाले अतएव क्रूर दुष्टपुरुष से किसे भय नहीं उत्पन्न होता जिसके मुख में अत्यन्त दुस्सह दुर्वचन उसी प्रकार सदैव भरा रहता है जैसे महासर्प के मुख में सदैव भरा रहनेवाला अत्यन्त असह्य विष ॥५॥

संस्कृत व्याख्या— सम्प्रति दुर्जननिन्दां करोति-**अकारणाविष्कृतेति** । **अकारणाविष्कृतवैरदारुणात्** =अकारणम् अनिमित्तमेव आविष्कृतम् उद्भावितं यद्वैरं विरोधः तेन दारुणात् क्रूरात्, **असज्जनात्** = दुष्टपुरुषात्, **कस्य भयं**= भीतिः, **न जायते**=नोत्पद्यते अपितु सर्वस्यैवोत्पद्यते, **यस्य**=दुष्टपुरुषस्य, **मुखे** =आनने, **सुदुःसहं**= असहनीयम्, **दुर्वचः**= दुष्टवचनम्, **महाहेः**=महासर्पस्य, **विषमिव**=गरलमिव, **सदा** = सर्वदा, **सन्निहितं भवति** = सन्निकटं विद्यते ॥५॥

टिप्पणी—अकारणाविष्कृतवैरदारुणात्—अकारणम् एव आविष्कृतं यद्वैरं तेन दारुणं (तृ०त०) तस्मात्+कृ+णिच्+ल्युट्=कारणम्, 'हेतुर्ना कारणं बीजं निदानं त्वादिकारणम्' इत्यमरः। न कारणम्=अकारणम्(नञ् तत्पुरुष) । आविष्कृतम्-आविस्+कृ+क्त । वीरस्य भावः वैरम्, वैरं विरोधने विद्वेषः, इति कोषः। वीर+अण्=वैरम् । दृ+णिच्+उनन्=दारुणम्, 'दारुणं भीषणं भीष्मं घोरं भीमं भयानकम्' इत्यमरः । आशय यह है कि दुर्जन अकारण ही सज्जनों की निन्दा आदि करके उनके प्रति बैर रखते है । यह पद 'असज्जनात्' का विशेषण है। **असज्जनात्**—न सज्जनः असज्जनः(नञ् तत्पुरुष समास), तस्मात् । यहाँ 'भीत्रार्थानां भयहेतुः' से पञ्चमी विभक्ति । **भयम्**—बिभेत्यस्मात् इति भी +अच्=भयम् 'भीतिर्भीः साध्वसं भयम्' इत्यमरः। **जायते**—जनी (प्रादुर्भावे)जन्+श्यन्+त एवं एत्व, 'ज्ञाजनोर्जा' से 'जन' को जा आदेश । **महाहेः**— महांश्चासौ अहिश्च महाहिः (कर्मधारय) तस्य । 'सर्पः पृदाकुर्भुजगो भुजङ्गोऽहिर्भुजङ्गमः' इत्यमरः । **विषम्**—विष्+क । 'क्ष्वेडस्तु गरलं विषम्' इत्यमरः । **मुखे**—खन्यते विधात्रा इति मुखम् 'आननं लपनं मुखम् इति कोष । खन्+अच् तथा धातु के पूर्व मुट्

का आगम होकर '**मुख**' बनता है । इस श्लोक से यह ध्वनित होता है कि इस काव्य के निर्माण में कदाचित् कोई दुर्जन मेरे साथ भी (बाणभटट के साथ भी) द्रोह कर सकता है जिससे कि मुझे भी भय हो सकता है । यहाँ श्लोक के **पूर्वार्द्ध में** अर्थापत्ति अलंकार है । लक्षण–'**दण्डापूपिकयाऽन्यार्थागमोऽर्थापत्तिरिष्यते**' अर्थात जहाँ 'दण्डापूपिकान्याय' से अन्य अर्थ की आपत्ति अथवा प्रतीति हो वहाँ 'अर्थापत्ति' नामक अलंकार होता है । दण्डापूपिकान्याय-एक अर्थ से अनायास दूसरे अर्थ की प्रतीति का होना दण्डापूपिकान्याय कहलाता है । इसकी स्पष्ट व्याख्या यह है कि जैसे किसी ने कहा कि 'चूहा लकड़ी तक खा गया' तो इससे अनायास स्पष्ट हो जायेगा कि चूहा लकड़ी पर रखे हुए मालपुओं को अवश्य खा गया होगा । यहाँ अकारण शत्रुता करने वाले से अन्य अर्थभय की प्रतीति होने से 'अर्थापत्ति' अलंकार है । उत्तरार्ध में दुर्जन की महासर्प के साथ समानता प्रदर्शित की गयी है, अतः **उपमा** अलंकार है । लक्षण—"**साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः** ।" अर्थात एक वाक्य में दो पदार्थों के, वैधर्म्यरहित, वाच्य सादृश्य को उपमा कहते हैं । इन दोनों की परस्पर निरपेक्ष स्थिति होने से '**संसृष्टि**' अलंकार होगा । संसृष्टि का लक्षण—'**मिथोऽनपेक्षयैतेषां स्थितिः संसृष्टिरुच्यते**' अर्थात् जब शब्दालंकार और अर्थालंकार परस्पर निरपेक्ष होकर स्थित होते हैं तो '**संसृष्टि**' नामक अलंकार होता है । यहाँ **प्रसाद** गुण तथा **पाञ्चाली** रीति है । वंशस्थ वृत ।।५।।

> कटु क्वणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृंखला इव ।
> मनस्तु साधुध्वनिभिः पदे पदे हरन्ति सन्तो मणिनूपुरा इव ।।६।।

प्रसंग—यहाँ खलों की निन्दा तथा सज्जनों की प्रशंसा की गई है ।

अन्वय—कटु क्वणन्तः मलदायकाः खलाः बन्धन-शृंखला इव अलं तुदन्ति । सन्तः तु मणिनूपुरा इव साधुध्वनिभिः पदे-पदे मनः हरन्ति ।।६।।

हिन्दी-अनुवाद—जैसे बन्धनशृंखलाएँ (बांधने वाली लोहे की साकलें) कर्णकटु शब्द करती हुईं तथा (अपने सम्पर्क से) मल उत्पन्न करती हुईं

(मनुष्य को) व्यर्थ ही कष्ट देता है उसी प्रकार दुर्जन लोग दुर्वचन बोलते हुए तथा मिथ्याकलङ्क आरोपित करते हुए (साधु-पुरुषों को) अत्यधिक पीड़ित करते है किन्तु सुजन लोग तो शब्द-शब्द में व्याप्त मनोहर वचनों से मन को उसी प्रकार आकृष्ट कर लेते हैं जैसे मणिखचित नूपुर (कामिनियों के) प्रत्येक पदविक्षेप में व्याप्त मनोहर झङ्कार (लोगों के) मन को आकृष्ट कर लेते हैं ।।६।।

संस्कृत व्याख्या–अत्र कविः खलनिन्दया सह सत्पुरुषाणां प्रशंसां करोति-**कटुक्वणन्त इति** । **कटु**=अप्रियवचनम्, **क्वणन्तः**=रटन्तः, बन्धनश्रृङ्खलापक्षे कुत्सितं शब्दायमानाः, **मलदायकाः**=मलस्य मिथ्यादोषस्य दायका आरोपकारिणः श्रृङ्खलापक्षे–मालिन्यस्य लौह–श्रृङ्खलाजन्यकालिमायाः दायकाः कारकाः, **खलाः**=दुष्टाः, **बन्धनश्रृंखला इव**=बन्धनलोहनिगडा इव, **अलं तुदन्ति**=भृशं पीडयन्ति, **सन्तः**=सज्जनास्तु, **मणिनूपुराः**= रत्नखचितमञ्जीराणीव, **साधुध्वनिभिः** श्रेष्ठवचनैः, मणिनूपुरपक्षे-मनोहारिरणितैः **पदे-पदे**= शब्दे-शब्दे मणिनूपुरपक्षे प्रतिचरणान्यासे, **मनः**=चित्तम्, **हरन्ति**=आकर्षन्ति ।।६।।

टिप्पणी–**कटु**–कट्+उ । अरुचिकर, अप्रिय । **क्वणन्तः**–क्वण् (शब्दे) +शतृ (प्र० व० व०) **मलदायकाः**–मलं ददातीति मलदायकः, मलम्मृज्यते शोध्यते इति, मृज्+कल् (टि लोप), दायकः—दा+ण्वुल—अक तथा 'आतो युक्चिण्कृतोः' से युक् का आगम । **खलाः**=खल्+अच् । खल को सर्प से भी क्रूर बतलाया गया है–"सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः सर्पात् क्रूरतरः खलः । मन्त्रौषधिवशः सर्पः खलः केन निवार्यते ।। " **बन्धनश्रृङ्खलाः**—बन्धनाय श्रृंखलाः (चतुर्थी तत्पुरुष) बन्धनश्रृङ्खलाः । बन्धनम्—बन्ध+ल्युट् । श्रृंखला-श्रृङ्गात् प्राधान्यात् स्खल्यते अनेन इति श्रृंखला, इस शब्द की सिद्धि पृषोदरादीनि

यथोपदिष्टम् सूत्र से होती है। –'शृंखलापुंस्कटीवस्त्रबन्धं च निगडे त्रिषु' इति मेदिनी । **तुदन्ति**—तुद् (व्यथने) लट् प्र० पु० ब० व० । **मणिनूपुराः**—मणि-जटिताः नूपुराः (मध्यमपदलोपी) । मण्+इन् =मणिः । नूपुरः–नू+क्विप् = नूपु+र्+ क । **पदे-पदे**— (क) नायिका के पदविन्यास में नुपुर की ध्वनि होती है । अतः मणिनूपुर पक्ष में अर्थ होगा–प्रत्येक पग के रक्खे जाने पर । (ख) सज्जन पक्ष में—प्रत्येक शब्द पर । आशय यह है कि जिस प्रकार से मणिनूपुर की मधुर ध्वनि से संयुक्त नायिका का प्रत्येक पग मनोहर लगता है। उसी प्रकार से सज्जन पुरुष के द्वारा उच्चरित प्रत्येक शब्द मनोहर होता है। इस श्लोक के पूर्वभाग में दुर्जनों की समता लोहे की बाँधने की जंजीरों के साथ करके, उनकी निन्दा की गयी है । उत्तरभाग में सज्जनों की समता मणिनूपुरों के साथ करके उनकी प्रशंसा की गयी है । यहाँ पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध में **पूर्णोपमा** अलङ्कार है दोनों के परस्पर निरपेक्ष होने से **संसृष्टि** है । यहाँ **प्रसादगुण** तथा **वैदर्भी** रीति है । **वंशस्थ वृत्त** ।।६।।

सुभाषितं हारि विशत्यधो गलान्न दुर्जनस्यार्करिपोरिवामृतम् ।
तदेव धत्ते हृदयेन सज्जनो हरिर्महारत्नमिवातिनिर्मलम् ।।७।।

प्रसङ्ग –यहाँ भी दुर्जनों की निन्दा एवं सज्जनों की प्रशंसा की गई है ।

अन्वय—हारि सुभाषितम् अमृतम् अर्करिपोः इव दुर्जनस्य गलात् अधः न विशति, तदेव सज्जनः अतिनिर्मलं महारत्नं हरिरिव हृदयेन धत्ते ।।७।।

हिन्दी-अनुवाद—जैसे अमृत, अर्करिपु अर्थात् सूर्यशत्रु राहु के गले से नीचे नहीं उतर पाता उसी प्रकार हृदयावर्जक सुभाषित (शोभन-काव्य) दुर्जन के गले से नीचे नहीं प्रविष्ट होता है (अर्थात हृदयशून्य होने के कारण उन्हें रुचिकर नहीं प्रतीत होता) परन्तु सज्जन अत्यन्त शुद्ध वही सुभाषित हृदय में उसी प्रकार धारण करता है जैसे नारायण स्वच्छ कौस्तुभमणि वक्षःस्थल पर धारण करते हैं ।।७।।

संस्कृत-व्याख्या–**हारि**=मनोहरम्, **सुभाषितं**=सूक्तम्, **अमृतं**=सुधा, 'पीयूषममृतं सुधा' इत्यमरः, **अर्करिपोः**=अर्कः सूर्यः तस्य रिपोः राहोः, **इव**= यथा, **दुर्जनस्य**=असज्जनस्य, **गलात्**=कण्ठात्, अधःस्थाने, **न विशति**=न प्रविशति । **तदेव**=सुभाषितम्, **सज्जनः**=सत्पुरुषः, **अतिनिर्मलं**=अत्यन्त-स्वच्छम्, **महारत्नं**=महामणिम्, **हरिः**=विष्णुः, **इव**=यथा, **हृदयेन धत्ते**= अन्तःकरणेन धारयति ॥७॥

टिप्पणी–**हारि**=हृ+णिच्+इनि (इन्)=हारि=मनोहर । **सुभाषितम्** सुष्ठु भाषितं सुभाषितम्=सूक्ति, सुन्दर कथन । **अर्करिपोः**–अर्कस्य रिपुः (ष० त०) तस्य अर्करिपोः=सूर्य के शत्रु (राहु) का । देवताओं और दैत्यों के समुद्रमन्थन करने पर जब समुद्र से अमृत निकला, तो दोनों पक्षों में अमृत के लिए झगड़ा प्रारम्भ हो गया । ऐसी स्थिति में भगवान् विष्णु मोहिनी रूप धारणकर देवताओं तथा दैत्यों को भिन्न-भिन्न पंक्तियों में बैठाकर छल से देवताओं को अमृतपान कराने लगे, परन्तु चतुर राहु नामक दैत्य छल से देवताओं की पंक्ति में बैठ गया तथा अमृतपान करने लगा, जिसका सङ्केत सूर्य तथा चन्द्रमा ने भगवान् विष्णु को कर दिया । विष्णु ने तत्काल ही अपने चक्र के द्वारा राहु का शिर काट दिया परन्तु शिर के कट जाने पर भी राहु नहीं मरा; क्योंकि उसने अमृतपान कर लिया था, अपितु वह शिर से राहु तथा शेष शरीर से केतु कहलाने लगा । उसी पुराने बैर के कारण आज भी राहु सूर्य को तथा चन्द्रमा को ग्रसित करता है । इसी कारण 'राहु' को 'अर्करिपु' कहा जाता है । **विशति**–विश् लट् प्र० पु० ए० व० । **हरिः**–हृ+ इन्=हरिः=विष्णु, 'यमानिलेन्द्रचन्द्रार्कविष्णुसिंहांशुवाजिषु । शुकाहिकपि-भेकेषु हरिर्ना कपिले त्रिषु ॥' इत्यमरः । **अतिनिर्मलम्**-अतिशयेन निर्गतं मलं यस्मात् तत्=अत्यन्त स्वच्छ । **महारत्नम्**–महत् च तद् रत्नं च (कर्मधारय) । यद्यपि निम्नलिखित महारत्न हैं–"मुक्ताफलं हिरण्यं च वैदूर्यं पद्मरागकम् । पुष्प-रागं च गोमेदं नीलं गारुत्मतं तथा ॥ प्रवालयुक्तयुक्तानि महारत्नानि वै नव ॥"

अर्थात् मोती, सोना, वैदूर्यमणि (सूर्यकान्त), पद्मरागमणि (लाल), पुखराज, गोमेदमणि, नीलमणि, पन्ना और मूंगा ये नव महारत्न हैं। परन्तु यहाँ महारत्न से तात्पर्य कौस्तुभमणि से है जो कि समुद्र से मन्थन करके निकाले गये १४ रत्नों में से एक है। समुद्र से निकाले गये १४ रत्न निम्नलिखित हैं—

"लक्ष्मीःसुरा कौस्तुभशार्ङ्गशङ्खाः उच्चैःश्रवा कामदुघाथ रम्भा।
ऐरावतः कल्पतरुर्मृगाङ्को धन्वन्तरिश्चापि विषं सुधा च ॥"

इस कौस्तुभ नामक मणि को भगवान् विष्णु अपने वक्षःस्थल पर धारण करते हैं। **धत्ते**–धा धातु (आत्मनेपद) + लट् प्र० पु० ए० व०। अर्करिपोरिवामृतम्, महारत्नमिव यहाँ उभयत्र **पूर्णोपमा** अलंकार है। उभयत्र निरपेक्ष स्थिति होने से **संसृष्टि** अलंकार है।। इस श्लोक से यह अभिव्यञ्जित होता है कि जिस प्रकार राहु अमृत को कण्ठ से नीचे नहीं उतार पाया। उसी प्रकार मेरे काव्य को अज्ञानी दुर्जन ग्रहण नहीं कर सकेगा परन्तु जिस प्रकार से भगवान् विष्णु ने कौस्तुभमणि को वक्षःस्थल पर धारण कर रखा है उसी प्रकार साधुपुरुष मेरी रचना को हृदय में धारण करेगा। **प्रसाद** गुण तथा **वैदर्भीरीति**। **वंशस्थ** वृत्त ॥७॥

स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम्।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ॥८॥

प्रसङ्ग—प्रस्तुत पद्य में कथा की प्रशंसा की गई है।

अन्वय—स्फुरत्कलालापविलासकोमला स्वयं शय्याम् अभ्युपागता अभिनवा वधूरिव कथा जनस्य हृदि रसेन कौतुकाधिकं रागं करोति ॥८॥

हिन्दी-अनुवाद—प्रसरणशील, मधुरवचन व्यापार के कारण (अत्यधिक) सुन्दर तथा प्रेमपूर्वक स्वयं ही (प्रियतम की) शय्या तक आई हुई कोई नवोढा वधू जैसे प्रियतम के हृदय में अत्यधिक सम्पन्न कौतुक अनुराग उत्पन्न करती

है । उसी प्रकार परिस्फुट, रमणीय शब्दरचना की मधुरता के कारण कोमल तथा शृंगारादि रसों के द्वारा सहज भाव से ही शब्दगुम्फ प्राप्त करने वाली (गद्य-पद्यमयी) नूतन कथा सहृदय व्यक्ति के अन्तःकरण में कुतूहल बढ़ाने वाली अभिरुचि उत्पन्न कर देती है ॥८॥

संस्कृत-व्याख्या—सम्प्रति कथायाः प्रशंसामाचरति—**स्फुरत्कलालपेति** । **स्फुरत्कलालापविलासकोमला**=स्फुरन्तः प्रकाशमानाः ये कलालापा गीतवाद्यादि-वचनानि तेषां विलासेन विन्यासेन कोमला मृद्वी, (वधूपक्षे) स्फुरन्तौ द्योतयन्तौ कलालापविलासौ मधुरवचनव्यापारौ ताभ्यां कोमला हृदयाकर्षिणी, 'कोमलं मृदु सुन्दरे' इति विश्वः । **स्वयम्**=आत्मना, **शय्यां**=शब्दगुम्फम् (वधूपक्षे) पर्यङ्कम्, **अभ्युपागता**=समीपतां प्राप्ता, **अभिनवा**=नवीना, **वधूरिव**=युवती-भार्येव, **कथा**=प्रबन्धकल्पना, **जनस्य**=लोकस्य, **हृदि**=हृदये, **रसेन**=शृंगारादिकाव्यरसेन, वधूपक्षे आनन्देन, **कौतुकाधिकं**=कुतूहलाधिकम्, **रागम्**=अनुरागम्, **करोति**=जनयति ॥८॥

टिप्पणी—**स्फुरत्कलालापविलासकोमला**—स्फुरन्तः ये कलालापाः तेषां विलासेन कोमला । कथापक्ष में—स्पष्ट प्रतीत होते हुए सुमधुर वर्णनों अथवा शब्दगुम्फन के सौन्दर्य के कारण कोमल अथवा कोमलावृत्ति से युक्त (कथा) । वधूपक्ष में स्फुरन्तौ कलालापविलासौ ताभ्यां कोमला 'कोमलं मृदुसुन्दरे' इति विश्वः । **कल**—कल् (कड्)+घञ्, 'ध्वनौ तु मधुरास्फुटे कलः' इत्यमरः । **आलापः**—आ+लप्+घञ् । **विलासः**—वि+लस्+घञ्=विलासः (कथा-पक्ष में) सौन्दर्य, लावण्य, (वधूपक्ष में) रतिद्योतक सुन्दरियों के सुमनोहर हाव-भाव । विलास का लक्षण—

> **"यानस्थानासनादीनां मुखनेत्रादिकर्मणाम् ।**
> **विशेषस्तु विलासः स्यादिष्टसंदर्शनादिना ॥"**

अर्थात् प्रियवस्तु के दर्शनादि से गति, स्थिति, आसन आदि की तथा मुख नेत्रादि के व्यापारों की विशेषता को विलास कहते हैं। कोमला (कथा के साथ) मृदु, (वधू के साथ) सुन्दर। **कोमला**–कु+कलच्, मुट् का आगम एवं निपातन से गुण। **कथा**–कथ्+अङ्+टाप्+कथा=कल्पित कहानी 'प्रबन्धकल्पना कथा' अर्थात् काल्पनिक प्रबन्ध को कथा कहते है। कथा का लक्षण—

कथायां सरस वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।
क्वचिदत्र भवेदार्या कचिद्वक्त्रापवक्त्रके॥
आदौपद्यैर्नमस्कारः खलादेर्वृत्तकीर्तनम्।

अर्थात् कथा में सरस वस्तु गद्यों के द्वारा बनायी जाती है। इसमें कहीं-कहीं आर्या और कहीं-कहीं वक्त्र तथा अपवक्त्र छन्द होते हैं आदि में पद्यमय नमस्कार और खलादिकों का चरित निबद्ध होता है। कादम्बरी में उपर्युक्त समस्त गुण हैं, अतः वह कथा है।

शय्याम्–(कथापक्ष में) शब्दगुम्फन, (वधूपक्ष में) सेज तथा पलङ्ग पर 'शय्या तल्पशब्दगुम्फे' इत्यनेकार्थः। **अभ्युपागता** –अभि+उप+आ+गम्+क्त+टाप्, निकट आई हुई। **जनस्य**–(कथापक्ष में) मनुष्य को, (वधूपक्ष में) पति को। **कौतुकाधिकम्**–अधिकाधिकम् कौतुकं यस्मिन् तत् कौतुकाधिकम्, 'कौतूहलं कौतुकं च कुतुकं च कुतूहलम्' इत्यमरः। कुतुक+अण्=कौतुकम्। अधिकम्–आ+धा+कि, पृषोदर नियम से ह्रस्व=अधि+क=अधिकम् (विशेषण)=बहुत। रागम्–(कथापक्ष में) सुनने के अनुराग को (वधूपक्ष) मेंअङ्गना के अनुराग को। **करोति** –कृ लट् प्र० पु० एक व०। इस श्लोक में कवि ने अभिनव कथा की तुलना नव-वधू के साथ की है। जिस प्रकार से नवोढा वधू जनमानस में कौतूहल करती है उसी प्रकार से यह अभिनव कथा भी कौतूहल उत्पन्न करेगी। यहाँ **'रसेन'** शब्द का तात्पर्य कथापक्ष में शृङ्गार आदि काव्यरस से है तथा वधूपक्ष में प्रेम अथवा आनन्द से है। अतः रस

शब्द से, 'रसस्योक्तिः स्वशब्देन' अर्थात् जहाँ स्वयं रस शब्द को कहता है वहाँ काव्य में रसदोष होता है; जैसे 'तामुद्वीक्ष्य कुरङ्गाक्षीं रसो नः कोऽप्यजायत' में रसदोष है। यहाँ रसदोष की शङ्का नहीं करनी चाहिए, क्योंकि यहाँ रस शब्द स्वरूपतः उस रस का वाचक नहीं है। यहाँ कथा की उपमा वधू से दी गयी है। अतः इस श्लोक में **पूर्णोपमा** अलङ्कार है। **प्रसादगुण**, **पाञ्चाली** रीति। **वंशस्थ** छन्द ॥८॥

हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिताः कथाः।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव ॥९॥

प्रसंग—यहाँ भी कवि कथा की प्रशंसा कर रहा है।

अन्वय—उज्ज्वलदीपकोपमैः चम्पककुड्मलैः उपपादिताः निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयः महास्रज इव नवैः पदार्थैः कथाः कं न हरन्ति ॥९॥

हिन्दी-अनुवाद—ज्योतिधवल दीप के समान, पदार्थभूत अभिनव (अम्लान) चम्पककोरकों से निर्मित, निरवकाश संग्रथन के कारण घनीभूत तथा शोभन मालतीपुष्पों से युक्त महामाल्य के समान, परिस्फुट दीपक एवं उपमालङ्कार से संवलित, नूतन अर्थात् स्वबुद्धिजनित शब्दार्थों से विरचित, प्रतिपदप्रयुक्त श्लेषालङ्कार की बहुलता से युक्त तथा शोभनस्वरूपवाली कथाएँ किस हृदय को वशीभूत नहीं कर लेतीं ? ॥९॥

संस्कृत-व्याख्या—**उज्ज्वलदीपकोपमैः**=उज्ज्वलाः स्फुट प्रतीयमानाः दीपकालङ्कारविशेषा उपमालङ्कारविशेषाश्च येषु तैः, **चम्पककुड्मलैः**=चम्पककोरकैः, **उपपादिताः**=विनिर्मिताः, **निरन्तरश्लेषघनाः**=निरन्तरेण अव्यवधानेन सर्वत्रैव वर्तमानेन श्लेषेण तदाख्यालङ्कारेण घनाः बहुलतराः, **सुजातयः**=सुष्ठु शोभना जातिः छन्दो विशेषो यासु ताः, (कथाः) **उज्ज्वलदीपकोपमैः**=उज्ज्वलप्रदीपतुल्यैः, **चम्पककुड्मलैरुपपादिताः**, **निरन्तरश्लेषघनाः**=निरन्तरं यः श्लेषः संयोगः तेन घनाः, **सुजातयः**=सुष्ठु जातिः स्वरूपं यासां ताः, **महास्रजः**=महामालाः, **इव**=यथा, **नवैः**=नूतनैः, **पदार्थैः**=उपादेयपदार्थभूतैः, **कथाः**=प्रबन्धकल्पनाः, **कं न हरन्ति**=कं जनं न वशीकुर्वन्ति ॥९॥

टिप्पणी—उज्ज्वलदीपकोपमैः:—उज्ज्वलाः याः दीपकालङ्काराः उपमालङ्काराश्च येषु तैः (बहु०) । **उज्ज्वल**—उद् + ज्वल् + अच् । दी + णिच् + ण्वुल् = दीपकम् । उप + मा + अङ् + टाप् = उपमा । (पदार्थ पक्ष में)—स्पष्ट प्रतीत होने वाले दीपक तथा उपमा अलङ्कारों से, (चम्पककुड्मल पक्ष में) देदीप्यमान दीपक है उपमा जिनकी अर्थात् देदीप्यमान दीपक जैसे चम्पक कुड्मलों के द्वारा । उज्ज्वलाः दीपकाः उपमाः येषां तैः = उज्ज्वलदीपकोपमैः । **पदार्थैः**:—पदानाम् अर्थाः (ष० त०) पदार्थाः, तैः । पद् + अच् = पदम् । विभक्ति चिह्न से युक्त पूरा शब्द; जैसा कि पाणिनि ने कहा है 'सुप्तिङन्तं पदम्' । **उपपादिताः**—उप + पद् + णिच् + क्त + प्रथमा बहु० । **निरन्तरश्लेषघनाः**:—निरन्तरं यः श्लेषः तेन घनाः (तृ० त०) = निरन्तरश्लेषघनाः निर् + अन्तर निरन्तरम् । श्लिष् + घञ् = श्लेषः । हन् + अप्—'हन्' को घनादेश यह पद महास्रज और कथा दोनों का विशेषण है । (माला के पक्ष में) अविरल गुँथी हुयी होने के कारण सघन; (कथा के पक्ष में) श्लेष के सघन (बहुल) प्रयोग से युक्त । **सुजातयः**—(क) सुष्ठु जातयः = जातीपुष्पाणि यासु ताः (महास्रजः); (माला पक्ष में) सुन्दर जाती के पुष्पों से युक्त । (ख) सुष्ठु जातयः छन्दांसि यासु ताः (कथाः); (कथापक्ष में) सुन्दर छन्दों से युक्त । **महास्रजः**—महामालाः = (बड़ी माला) स्रजः—सृज् (विसर्ग) + क्विन् + प्र० ब० व० । महती चासौ स्रक् च इति महास्रक् ताः महास्रजः (कर्मधारय) । इस श्लोक में कवि ने नूतनपदार्थयोजना; जिसमें **श्लेष** अलंकार का वैचित्र्य एवं अच्छे छन्दों का प्रयोग हो, के विषय में प्रकाश डाला है । इस श्लोक में कथा उपमेय तथा महास्रजः उपमान है । कवि का तात्पर्य है कि जिस प्रकार सुन्दर माला लोक मनोरंजनविधायिनी होती है उसी प्रकार से मेरी कथा भी होगी । यहाँ **पूर्णोपमा** तथा **अर्थापत्ति** अलंकार हैं । अर्थापत्ति अलंकार का लक्षण—'**दण्डापूपिकयान्यार्थागमोऽर्थापत्तिरिष्यते**' । दोनों अलंकारों के अङ्गाङ्गिभाव से स्थित होने से **एकाश्रयानुप्रवेशरूप सङ्कर नामक** अलंकार हुआ । लक्षण—'**अङ्गाङ्गित्वेऽलंकृतीनां तद्वदेकाश्रयस्थितौ । संदिग्धत्वे च भवति संकरस्त्रिविधः**

पुनः ।। अर्थात् संकर तीन प्रकार का होता है—जहाँ कई अलङ्कारों में अङ्गाङ्गिभाव होता है, जहाँ एक ही आश्रय (शब्द और अर्थ) में अनेक अलङ्कारों कि स्थिति होती है और जहाँ कई अलंकारों का संदेह होता है । **प्रसादगुण** । **वैदर्भी रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।९।।

बभूव वात्स्यायनवंशसम्भवो द्विजो जगद्गीतगुणोऽग्रणीः सताम् ।
अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः कुबेरनामांश इव स्वयम्भुवः ।।१०।।

प्रसंग—सम्प्रति यहाँ से अन्त तक महाकवि बाणभट्ट अपने वंश का वर्णन प्रस्तुत कर रहे हैं ।

अन्वय—वात्स्यायनवंशसम्भवः जगद्गीतगुणः सताम् अग्रणीः अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः स्वयम्भुवः अंश इव कुबेरनामा द्विजः बभूव ।।१०।।

हिन्दी-अनुवाद—वात्स्यायन-वंश में समुत्पन्न (अर्थात् वत्सगोत्रीय) संसार मे (लोगों द्वारा) गुणगान किया गया, श्रेष्ठ पुरुषों में अग्रगण्य, असंख्य गुप्तवंशीय नरपतियों द्वारा समर्चित चरणकमलवाला तथा प्रजापति ब्रह्मा के अंशावतार सदृश कुबेर नामक (एक) ब्राह्मण हुआ ।।१०।।

संस्कृत-व्याख्या—**वात्स्यायनवंशसम्भवः**=वत्सस्यापत्यं पुमान् वात्स्यः स अयनम् आश्रयो यस्य सः तथोक्तो यो वंशः कुलं तत्र सम्भवः समुत्पन्नः **जगद्गीतगुणः**=जगति संसारे गीता गानविषयीकृताः गुणाः दयादाक्षिण्यादयो यस्य सः, **सतां**=सज्जनानाम्, **अग्रणीः**=अग्रेसरः, **अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः**=अनेके असंख्याः ये गुप्ताः गुप्तवंशीयाः राजानः यद्वा गुप्तनामधारिणो वैश्यशूद्रादयः तैः अर्चितं पूजितं पादपङ्कजं चरणकमलं यस्य सः, **स्वयम्भुवः**=स्वयं भवतीति स्वयम्भूः, ब्रह्मा, तस्य ब्रह्मणः, **अंशः**=अंशावतारः, **इव कुबेरनामा**=कुबेराभिधेयः, **द्विजः**=विप्रः, **बभूव**=आसीत् ।।१०।।

टिप्पणी—**वात्स्यायनवंशसम्भवः**—वत्सस्यापत्यं पुमान् वात्स्यः वत्स=यञ्=वात्स्यः । वात्स्यस्यापत्यं पुमान् वात्स्यायनः । वात्स्य से 'यञि-ओश्च' से 'फक्' प्रत्यय और 'फ' को आयन । वात्स्य + फक्—आयन=वात्स्या-

यनः । वात्स्यायनस्य वंशः (ष० त०) = वात्स्यायनवंशः, वात्स्यायनवंशे सम्भवः = उत्पत्तिः यस्य सः (बहु०) इति वात्स्यायनवंशसम्भवः **जगद्गीतगुणः**— जगति गीताः गुणाः यस्य सः (बहु०)। 'अथो जगती लोको विष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः 'गीतं गानमिमे समे' इति चामरः । जगत्—गच्छतीति जगत् । गम् + क्विप् निपातन से द्वित्व तथा तुगागम । गीताः—गै + क्त । **अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः**—अनेकैः गुप्तैः अर्चिते पादपङ्कजे यस्य सः (बहु०) पङ्क + जनि (प्रादुर्भावे) + ड = पङ्कजम् । अनेक गुप्तवंशी राजाओं ने जिनके चरण कमलों को पूजा था । अथवा गुप्त उपाधि को धारण करने वाले अनेक वैश्य जिनके चरण कमलों को पूजते थे । गुप्त उपाधि वैश्यों की है, जैसा कि कहा गया है—'शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तं क्षत्रियस्य तु । गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः ।।' अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के नाम के अन्त में क्रमशः शर्मा, वर्मा, गुप्त एव दास शब्द लगते हैं । ये ब्राह्मण आदि की उपाधियाँ हैं । **स्वयम्भुवः**—स्वयं भवतीति स्वयम्भूः, तस्य स्वयम्भुवः; 'हिरण्यगर्भो लोकेशः स्वयम्भूश्चतुराननः' इत्यमरः, स्वयम्भू = ब्रह्मा । अंश—अंशावतार, अंश् + अंच् = अंशः । **कुबेरनामा**—कुबेरः नाम यस्य सः (बहु०) कुबेरनामा = कुबेर है अभिधान जिनका; 'आख्याह्वे अभिधानं च नामधेयं च' इत्यमरः । **द्विजः**—द्वाभ्यां (जन्मसंस्काराभ्यां) जायते इति द्विजः; द्वि + जन् + ड = द्विजः । 'दन्तविप्राण्डजाः द्विजाः' इत्यमरः अर्थात् द्विज शब्द के दाँत, ब्राह्मण और पक्षी ये तीन अर्थ हैं । यहाँ पर द्विज शब्द से ब्राह्मण अर्थ लिया जायेगा । वैसे तो ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य सभी संस्कारों के पात्र होने के कारण द्विज कहलाते हैं । परन्तु द्विजों में ब्राह्मण अग्रगण्य है अतः यहाँ द्विज शब्द समस्त संस्कारों से युक्त श्रेष्ठ ब्राह्मण के लिए प्रयुक्त हुआ है । जैसा कि कहा गया है—'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारैर्द्विज उच्यते ।' अर्थात् जन्म से शूद्र रूप में उत्पन्न होता है तथा संस्कारों के द्वारा द्विज कहलाता है । यहाँ 'द्विज' शब्द से जिसके अच्छी तरह से हुए हैं समस्त संस्कार ऐसा प्रकृष्ट द्विजत्व से सम्पन्न 'द्विज'—यह ध्वनित है । जैसे सामान्य

हाथियों के दाँत होने पर भी किसी उत्कृष्टतम दाँतों वाले हाथी को 'दन्ती' कहते हैं उसी प्रकार से सामान्य ब्राह्मण जाति के दो जन्म सामान्य रहते हुए यहाँ 'द्विज' शब्द उत्कृष्ट द्विज का जो कि संस्कारों का वैशिष्ट्य रखता है, द्योतक है। **बभूव–भू+लिट्** प्र० पु० ए० व०। इस पद्य में 'कुवेरनामा द्विजो बभूव' मुख्य वाक्य है। शेष प्रथमान्त विशेषण पद हैं जो कि 'द्विज' की विशेषता बतला रहे है। यहाँ भावाभिमानिनी द्रव्योत्प्रेक्षा अलङ्कार है जो कि 'स्वयम्भुवोंऽश इव' (अर्थात् मानो ब्रह्मा के अंश की तरह) इस पद से वाच्य है। उत्प्रेक्षा अलंकार का लक्षण इस प्रकार है–"**भवेत्सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना। वाच्या प्रतीयमाना सा प्रथमं द्विविधा मता॥ वाच्येवादिप्रयोगे स्यादप्रयोगे परा पुनः। जातिर्गुणः क्रिया द्रव्यं यदुत्प्रेक्ष्यं द्वयोरपि॥ तदष्टधाऽपि प्रत्येकं भावाभावाभिमानतः। गुणक्रियास्वरूपत्वान्निमित्तस्य पुनश्च ताः। द्वात्रिंशद्विधतां यान्ति**'–अर्थात् जहाँ किसी प्रस्तुतवस्तु की अप्रस्तुत के रूप में सम्भावना की जाती है वहाँ उत्प्रेक्षा नामक अलंकार होता है। पहले तो उत्प्रेक्षा के दो भेद होते हैं–(१) वाच्योत्प्रेक्षा, (२) प्रतीयमानोत्प्रेक्षा। जहाँ 'इव' आदि शब्दों का प्रयोग होता है वहाँ वाच्योत्प्रेक्षा और जहाँ नहीं होता है वहाँ प्रतीयमानोत्प्रेक्षा। इन दोनों में कहीं जाति उत्प्रेक्ष्य रहती है, कही गुण, कहीं क्रिया और कहीं द्रव्य। इसी प्रकार दोनों के चार-चार भेद होकर आठ भेद होते हैं। इन आठों में कहीं भाव उत्प्रेक्ष्य रहता है। और कहीं अभाव, इस प्रकार सोलह भेद होते हैं। इन सोलह में भी उत्प्रेक्ष्य का निमित्त कहीं गुण होता है कहीं क्रिया, इस प्रकार उत्प्रेक्षा बत्तीस प्रकार की होती है। यहाँ **प्रसादगुण एवं वैदर्भी रीति है। वंशस्थ छन्द** ॥१०॥

उवास यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे सदा पुरोडाशपवित्रिताधरे।
सरस्वती सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबंधुरे मुखे॥११॥

अन्वय–यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे पुरोडाशपवित्रिताधरे सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे सरस्वती सदा उवास॥११॥

हिन्दी-अनुवाद—वेदाध्ययन से उपशमित पापवाले, पुरोडाश (अर्थात् देवताओं को देने से बचे हुए हविष्यान्न को ग्रहण करने) से पवित्रित होंठ वाले, सोमरसपान के कारण कटुकीभूत अर्थात् कसैले पड गये भीतरीभाग वाले तथा समस्त शास्त्रों एवं स्मृतियों (के ज्ञान) से मुखरित जिस कुबेर के मुख में वाग्देवी (सरस्वती) निवास करती थी ।।११।।

संस्कृत-व्याख्या–**यस्य**=कुबेराख्यस्य विप्रस्य, **श्रुतिशान्तकलमषे**=श्रुतिभि: वेदै: तदध्ययनैरित्याशय:, 'श्रुतिस्तु वेद आम्नाय:' इत्यमर:, शान्तं विलीनं कलमषं पापं यस्य, तस्मिन्, **पुरोडाशपवित्रिताधरे**=पुरोडाशेन हविषा पवित्रितौ पावनीकृतौ अधरौ ओष्ठौ यस्य, तस्मिन्, **सोमकषायितोदरे**=सोमेन सोमलतारसपानेन कषायितं पुष्टम् उदरम् अभ्यन्तरं यस्य तस्मिन्, **समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे**=समस्तानि सकलानि यानि शास्त्राणि ब्रह्मसूत्रादीनि स्मृतयश्च मन्वादिरचितप्रबन्धा:, तेषाम् अध्ययनै: बन्धुरं मनोहरं तस्मिन् **मुखे**=आनने, **सरस्वती**=वाग्देवता, **सदा**=सर्वदा, **उवास**=वसति स्म ।।११।।

टिप्पणी–**श्रुतिशान्तकलमषे**—श्रुतिभि: शान्तं कलमषं यस्य स: (बहु०) तस्मिन्=श्रुतिशान्तकलमषे । श्रु + क्तिन्=श्रुति:, 'श्रुतिस्तु वेद आम्नायस्त्रयी, इत्यमर: । शान्तम्–शम् + क्त । 'अस्त्री पंकं पुमान् पाप्मा पापं किल्बिषकल्मषम्' इत्यमर: । **पुरोडाशपवित्रिताधरे**–पुरोडाशेन पवित्रितौ अधरौ यस्य स: तस्मिन्=पुरोडाशपवित्रिताधरे-पुरोडाश के पान से पवित्र होंठ वाले, 'वेतालभल्लमल्लाश्च पुरोडाशोऽपि पट्टिश:' इस अमरोक्त वचन से 'पुरोडाश' शब्द पुँलिङ्ग है । **पुरोडाश**:–अग्निहोत्र आदि यज्ञ में देवताओं को हवन की गयी हवि के अवशिष्ट भाग को पुरोडाश कहते हैं । विश्वकोष में कहा गया है—"पुरोडाशो हविर्भेदे हुतशेषे च कीर्तित:" । **पवित्रित**:–पू+इत्र=पवित्र+इतच्=पवित्रित: । अधर–नञ्+धृ+अच् । **सोमकषायितोदरे**–सोमेने कषायितम् उदरं यस्य तस्मिन्=सोमकषायितोदरे=सोम पान से कषैले हुए मध्य भाग वाले; सोम: (सू+मन्) सोम नामक पौधे का रस, यह प्राचीन-

काल में यज्ञों में आहुति देने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण ओषधि रही है। इसका उल्लेख वैदिक वाङ्मय में प्रचुरता से मिलता है–'प्रति त्यं चारुमध्वरं गोपीथाय प्रहूयसे। मरुद्भिरग्न आगहि ।।' **समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे**– समस्तानि यानि शास्त्राणि स्मृतयश्च इति समस्तशास्त्रस्मृतयः तैः बन्धुरं यस्य तस्मिन् (मुखे); शास्त्रम्–शिष्यतेऽनेन इति; शास् + ष्ट्रन् । 'निदेशग्रन्थयोः शास्त्रम्' इत्यमरः । स्मृतिः–(स्मृ + क्तिन्), धर्मशास्त्र को स्मृति कहते हैं–'धर्मशास्त्रन्तु वै स्मृतिः ।' 'स्मृतिस्तु धर्मसंहिता' इत्यमरः, अभिधानचिन्तामणि में लिखा है—'धर्मशास्त्रं स्यात्स्मृतिः धर्मसंहिता' । महर्षि याज्ञवल्क्य ने स्मृतियों की संख्या २० कही है—"मन्वत्रिविष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनाऽङ्गिराः । यमापस्तम्बसंवर्ताः कात्यायनबृहस्पती ।। पराशरव्यासशंखलिखिता दक्षगौतमौ । शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः ।।" बन्धुर = (बन्ध + उरच्) मनोहर, सुन्दर । **सरस्वती**–सरस् + मतुप् = सरस्वत् + ङीप् = सरस्वती, वाणी और ज्ञान की अधिष्ठातृ देवता जिसका वर्णन ब्रह्मा की पत्नी के रूप में किया गया है। 'ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती' इत्यमरः । **उवास**—वस् + लिट् + प्र० पु० ए० व० । इस श्लोक में मुख्य वाक्य 'यस्य मुखे सरस्वती उवास' है। शेष चारों पद 'मुखे' के विशेषण है। इस श्लोक से बाण के पूर्वज कुबेर का वेदाध्ययन में निरत होना, नित्य अग्निहोत्र आदि यज्ञों का अनुष्ठान करना तथा समस्त शास्त्रो में पारङ्गत होना; ध्वनित होता है। यहाँ मुख की विशेषता के लिए चार हेतु दिये गये है, अतः **काव्यलिङ्ग अलङ्कार** होगा; लक्षण–**'हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गं निगद्यते'** । अर्थात् जहाँ वाक्यार्थ अथवा पदार्थ किसी का हेतु होता है, वहाँ काव्यलिङ्ग अलंकार होता है। **प्रसादगुण, वैदर्भी रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।११।।

जगुर्गृहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पञ्जरवर्तिभिः शुकैः ।
निगृह्यमाणा बटवः पदे पदे यजूंषि सामानि च यस्य शङ्किताः ।।१२।।

अन्वय—यस्य गृहे अभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पञ्जरवर्तिभिः शुकैः

पदे-पदे निगृह्यमाणाः शङ्किताः बटवः यजूंषि सामानि च जगुः ॥१२॥

हिन्दी-अनुवाद—सारिकाओं सहित पिंजरे में रहने वाले तथा (चतुर्दश-विद्यात्मक) समग्र वाङ्मय को जिह्वाग्रभाग पर रखने वाले शुकों द्वारा पद-पद पर संत्रस्त बनाये गए (अर्थात् टोके गये) ब्रह्मचारी शिष्यगण जिस कुबेर के घर में सशङ्क होकर यजुर्वेद एवं सामवेद पढ़ते थे ॥१२॥

संस्कृत-व्याख्या—**यस्य**=कुबेरविप्रस्य, **गृहे**=भवने, **अभ्यस्त-समस्त-वाङ्मयैः**=अभ्यस्तं=पौनः पुन्येन कण्ठस्थीकृतं समस्तं सकलं वाङ्मयं चतुर्दश-विद्यात्मकं शास्त्रं यैस्तैः, **ससारिकैः**=सारिकाभिः सहितैः, **पञ्जरवर्तिभिः**=लौहशलाकानिर्मितपक्षिगृहे विद्यमानैः, **शुकैः**=कीरैः, **पदे-पदे**=प्रतिपदोच्चारणे, **निगृह्यमाणाः**=निर्भर्त्स्यमानाः, **शंकिताः**=शङ्काकुलाः, **बटवः**=ब्रह्मचारिणः, **यजूंषि**=यजुर्वेदान्, **सामानि**=सामवेदांश्च, **जगुः**=गायन्ति स्म ॥१२॥

टिप्पणी—**गृहे**—गृह्णाति धान्यादिकमिति–ग्रह्+क=गृहम्, तस्मिन् गृहे, 'गृहं गेहोद्वसितं वेश्म सद्मनिकेतनम्' इत्यमरः। **अभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः**—अभ्यस्तं समस्तं वाङ्मयं यैस्तैः=अभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः=सम्पूर्ण शास्त्रों का अभ्यास किये हुये, अभ्यस्त—अभि+अस्+क्त। वाच्=मयट्=वाङ्मय। 'वाङ्मय' शब्द प्रायः साहित्य या अंग्रेजी शब्द (Literature) के अर्थ में प्रयुक्त होता है, परन्तु यहाँ सभी शास्त्रों के लिये प्रयुक्त हुआ है। यह 'शुकैः' पद का विशेषण है। **ससारिकैः**—सारिकाभिः सहितैः ससारिकैः=मैनाओं के सहित, सह सारिका (अव्ययी-भावसमास) सह को सादेश होता है। सरति गच्छति इति, सृ+ण्वुल्=टाप् और इत्व होकर सारिका शब्द बनता है। **पञ्जरवर्तिभिः**=पिंजरों में स्थित, पञ्जर+वृत्+क्तिन्+भिस्। **शुकैः**=शुकों के द्वारा, शुक्+क=शुकः तैः शुकैः, 'कीरशुकौ समौ' इत्यमरः। **निगृह्यमाणः**–नि+ग्रह्+यक्+शानच्। 'निग्रह' शब्द का अर्थ रोकथाम तथा डाँटफटकार है। कई आचार्यों ने यहाँ डाँटफटकार अर्थ किया है परन्तु शुक सारिकाओं द्वारा अशुद्ध मन्त्रपाठ करते हुए छात्रों को टोके जाने का अर्थ ही यहाँ अधिक उपयुक्त है। **बटवः**—

ब्रह्मचारीगण, वटति अल्पवस्त्रम् इति, वट्+उ=वटु: । **यजूंषि सामानि च**–यहाँ यजुर्वेद तथा सामवेद पद से चारों वेदों को समझना चाहिए । 'यजु:' पद से वैदिक गद्य तथा 'साम' पद से वैदिक गीतात्मक (पद्यबद्ध) साहित्य की ओर सङ्केत है । गीत और गद्य में उपनिबद्ध समस्त वैदिक वाङ्मय, यह अर्थ 'यजूषि–सामानि च' पद से निकलता है । इसीलिए उक्त पदों में बहुवचन का प्रयोग किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि वहाँ वटुजन गीत और गद्यमय वैदिक वाङ्मय का पाठ सशंकित होकर करते थे । इस प्रकार 'यजूंषि सामानि च' पद समस्त वैदिक वाङ्मय का उपलक्षक है । जगु:–गाते थे, गै+लिट्+प्र० पु० ब० व० । यहाँ कवि ने कुबेर पण्डित के विशिष्ट पाण्डित्य की व्यञ्जना की है–जिस पण्डित के पालतू तोते भी विद्यार्थियों की अशुद्धियाँ समझने का सामर्थ्य रखते हों–उस पण्डित की विद्वत्ता वास्तव में अद्वितीय होगी । इससे आचार्य कुबेर का पाण्डित्य ध्वनित होता है । इस प्रकार यह श्लोक काव्य की उत्तमकोटि में आता है । आचार्य मम्मट का कथन है–'इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधै: कथित: ।' अर्थात् वाच्य (अर्थ) की अपेक्षा व्यङ्ग्य (अर्थ) के अधिक चमत्कार युक्त होने पर उत्तम काव्य बनता है और उसे ही विद्वान् ध्वनिकाव्य कहते हैं । यहाँ शुकों के द्वारा उस प्रकार का पराभव असम्बन्ध होते हुए भी (अर्थात् शुकों से छात्रों का पराभव होना कोई सम्बन्ध नहीं रखता है) उनसे (शुकों से) छात्रों का पराभव रूप सम्बन्ध का प्रतिपादन किया गया है, अत: अतिशयोक्ति अलंकार है । लक्षण–'**सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते । भेदेऽप्यभेद: सम्बन्धेऽसम्बन्धस्तद्विपर्ययौ । पौर्वापर्यात्यय: कार्यहेत्वो: सा पञ्चधा तत:** ।। अर्थात् अध्यवसाय के सिद्ध होने पर अतिशयोक्ति अलङ्कार होता है । इसके पाँच भेद होते हैं–भेद के होने पर भी अभेद का वर्णन करना, सम्बन्ध होने पर भी असम्बन्ध का बखान करना तथा इन दोनों का विपर्यय अर्थात् अभेद में भेद, असम्बन्ध में सम्बन्ध का कथन और कार्य और कारणों के पौर्वापर्यनियम का व्यत्यय । यहाँ असम्बन्ध में सम्बन्ध दिखलाने से असम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्ति है । **प्रसाद गुण, वैदर्भी रीति । वंशस्थ छन्द** ।।१२।।

हिरण्यगर्भो भुवनाण्डकादिव क्षपाकरः क्षीरमहार्णवादिव ।
अभूत्सुपर्णो विनतोदरादिव द्विजन्मनामर्थपतिः पतिस्ततः ॥१३॥

अन्वय—भुवनाण्डकात् हिरण्यगर्भः इव क्षीरमहार्णवात् क्षपाकरः इव, विनतोदरात् सुपर्णः इव ततः द्विजन्मनां पतिः अर्थपतिरभूत् ॥१३॥

हिन्दी-अनुवाद—ब्रह्माण्ड से हिरण्यगर्भ अर्थात् स्वयम्भू ब्रह्मा की भाँति, क्षीरमहासागर से क्षपाकर अर्थात् चन्द्रमा की भाँति तथा विनता के गर्भ से सुपर्ण अर्थात् पक्षिराज गरुड़ की भाँति उन कुबेर से द्विजश्रेष्ठ अर्थपति उत्पन्न हुए ॥१३॥

संस्कृत-व्याख्या—**भुवनाण्डकात्**=भुवनस्य लोकस्य अण्डकः भुवनाण्डकः, तस्मात्, **हिरण्यगर्भः**=ब्रह्मा, **इव**=यथा, **क्षीरमहार्णवात्**=क्षीरमहासागरात्, **द्विजन्मनां पतिः**=द्विजराजः, **क्षपाकरः**=चन्द्र, **इव**=यथा, **विनतोदरात्**=विनता गरुड़जननी तस्याः उदरात् कुक्षेः, **सुपर्णः**=गरुड़ः, **इव**=यथा, **ततः**=तस्मात् कुबेरात्, **द्विजन्मनां**=ब्राह्मणानां, **पतिः**=स्वामी, **अर्थपतिः**=एतदाख्यः, **अभूत्**=बभूव ॥१३॥

टिप्पणी—**भुवनाण्डकात्**—भुवनस्य अण्डकः (ष० त०) भुवनाण्डकः, तस्मात्=भुवनाण्डकात् । भुवनम्—भवति अत्र इति; भू+क्युन् । 'त्रिष्वथो जगती लोको विष्टपं भवनं जगत्' इत्यमरः । अण्डकः—अम्+ड=अण्डः, अण्डः एव अण्डकः (अण्ड+कन्) । भुवनाण्डकात्—ब्रह्माण्ड से । भुवन या लोक चौदह होते है—इनमें सात ऊर्ध्वलोक—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्यलोक हैं । सात अधःलोक निम्नलिखित हैं—अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल । वेदान्तसार में कहा गया है—"एतेभ्यः पञ्चीकृतेभ्यो भूतेभ्यो भूर्भुवःस्वर्महर्जनस्तपः सत्यमित्येतन्नामकानामुपर्युपरिविद्यमानानामतलवितलसुतलरसातलतलातलमहातलपातालनामकानामधोऽधो विद्यमानानां लोकानां···चोत्पत्तिर्भवति ।" **हिरण्यगर्भः**-हिरण्य गर्भे यस्य सः=हिरण्यगर्भः (बहुव्रीहि), "हिरण्यगर्भो लोकेशः स्वयम्भूश्चतुराननः" इत्यमरः । हिरण्यगर्भ 'ब्रह्मा' को कहते हैं । ब्रह्मा की उत्पत्ति

सुवर्ण–अण्ड से मानी जाने के कारण, उन्हें यह नाम दिया गया है । मनुस्मृति में लिखा है—'**तदण्डमभवद्धैमं सहस्रांशुसमप्रभम् । तस्मिञ्जज्ञे स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः** ।।'' अर्थात् उस परमात्मा का वह बीज सहस्रो सूर्यों के समान प्रकाशवाला, सुवर्ण के समान शुद्ध अण्डा हो गया, उसमें सम्पूर्ण लोकों की सृष्टि करने वाले 'ब्रह्मा' उत्पन्न हुए । **क्षीरमहार्णवात्**–क्षारस्य महार्णवः (ष० त०), तस्मात्=क्षीरमहार्णवात्=क्षीरसागर से; क्षारम्—घस्यते अद्यते इति, घस् + ईरन्, उपधालोपः घस्य ककारः षत्वं चः, 'दुग्ध क्षीरं पयः समम्' इत्यमरः, 'क्षीरमप्सु च' इति सागरः । महार्णवः–महांश्चासौ अर्णवः महार्णवः (कर्म)=महासागर । अर्णांसि=जलानि सन्ति यस्मिन् इति अर्णवः, अर्णस् + व, सकारलोप; 'उदन्वानुदधिः सिन्धुः सरस्वान् सागरोऽर्णवः' इत्यमरः । **क्षपाकरः**–क्षपायाः करः=क्षपाकरः=चन्द्रमाः, क्षपयतीति क्षपा, (क्षप्+अच्+टाप्) करोतीति करः (कृ+अप्) । समुद्र मन्थन से चौदह रत्न निकले थे, जिनमें से चन्द्रमा भी एक था । यहाँ उसी का उल्लेख है । **विनतोदरात्**–विनताया उदरं विनतोदरं तस्मात्, विनतोदरात्=विनता की कोख से, उद् + ऋ+अप्=उदरम् । **सुपर्णः**–गरुड, 'नागान्तको विष्णुरथः सुपर्णः पन्नगाशनः' इत्यमरः । **द्विजन्मनां पतिः**–ब्राह्मणों का अधिपति, द्विजन्म =द्विज के विषय में १० वें श्लोक की टिप्पणी देखिए । **अर्थपतिः**–अर्थपति नामक पुत्र । यहाँ अर्थपति की तुलना ब्रह्मा, चन्द्रमा एवं पक्षिराज गरुड से की गई है जिससे यह ध्वनित होता है कि वह ब्रह्मा के समान वेद पारंगत, चन्द्र के समान सकलजनाह्लादक और गरुड के समान नारायण-परायण था । चतुर्दशभुवनों के विषय में अग्निपुराण में लिखा है—''**चतुर्दशविधं ह्येतद् भूतवृन्दं सुकीर्तितम् । भूर्भुवः स्वर्महश्चैव जनश्च तप एव च** ।।'' **सत्यलोकश्च सप्तैते लोकास्तु परिकीर्तिताः । अतलं वितलञ्चैव सुतलञ्च रसातलम्** ।।

महातलं रसातलं पातालं सप्तमं स्मृतम् ।।'

यहाँ भुवनाण्डकाद्, क्षीरमहार्णवात्, विनतोदरात् में 'भुवः प्रभवः' से अपादानसंज्ञा और 'अपादाने पञ्चमी' से 'पञ्चमी' । हिरण्यगर्भो भुवनाण्डकादिव, क्षपाकरः क्षीरमहार्णवादिव सुपर्णो विनतोदरादिव में तीन स्थानों पर उपमा अलङ्कार है । एक उपमेय (अर्थपति) के उपर्युक्त अनेक उपमान होने से **मालोपमा** अलङ्कार है । लक्षण—**'मालोपमा तदेकस्योपमानं बहु दृश्यते'** अर्थात् जहाँ एक उपमेय के अनेक उपमान होते है, वहाँ 'मालोपमा' होती है । **प्रसाद गुण, वैदर्भी रीति, वंशस्थ छन्द** ।।१३।।

विवृण्वतो यस्य विसारि वाङ्मयं दिने दिने शिष्यगणा नवा नवाः ।
उषस्सु लग्नाः श्रवणेऽधिकां श्रियं प्रचक्रिरे चन्दनपल्लवा इव ।।१४।।

अन्वय--दिने दिने उषःसु विसारि वाङ्मयं विवृण्वतः यस्य नवाः नवाः शिष्यगणाः चन्दनपल्लवाः इव श्रवणे लग्नाः अधिकां श्रियं प्रचक्रिरे ।।१४।।

हिन्दी-अनुवाद—प्रतिदिन प्रातर्वेला में सुविस्तृत (चतुर्दशविद्यात्मक) वाङ्मय का अध्यापन करने वाले जिस (आचार्य) अर्थपति का व्याख्यान सुनने में दत्तचित्त, नए-नए (अर्थात् उत्तरोत्तर प्रतिभाशाली) शिष्यगण उसी प्रकार उनकी अत्यधिक शोभा बढ़ाते थे जैसे प्रातर्वेला में रमणियों के कर्णप्रान्त में संलग्न चन्दन के नए-नए पत्रखण्ड उनकी शोभावृद्धि करते हैं ।।१४।।

संस्कृत-व्याख्या—**दिने दिने**=प्रतिदिनम्, **उषःसु**=प्रातःकालेषु, **विसारि**=विसरणशीलम्, **वाङ्मयं**=चतुर्दशविद्यात्मकं शास्त्रम्, **विवृण्वतः**=स्पष्टीकुर्वतः, **यस्य**=अर्थपतेः, **नवाः नवाः**=नवीनाः, **शिष्यगणाः**=शिष्यसमूहाः, **चन्दनपल्लवाः**=चन्दनस्य पल्लवाः किसलयानि, **इव**=यथा, **श्रवणे**=कर्णे, **लग्नाः**=तत्पराः, **अधिकां**=अत्यधिकां, **श्रियं**=शोभां, **प्रचक्रिरे**=वितेनिरे ।।१४।।

टिप्पणी—**उषःसु**--प्रातःकाल में, उष्+क=उषः, 'प्रत्यूषोऽहर्मुखं कल्यमुषः प्रत्युषसी अपि' इत्यमरः । **शिष्याणाम् गणाः** (ष० त०) शिष्यगणाः, शिष्यः शासितुं योग्यः शिष्यः, शास्+क्यप्, इत्व, षत्व, 'छात्रान्तेवासिनौ शिष्ये'

इत्यमरः । गणः–गण्+अच् । **श्रवणे लग्नाः**–इसके दो अर्थ हैं–(शिष्यगण के साथ) सुनने में लगे हुए; (चन्दनपल्लव के साथ) कान में धारण किये गये। श्रवणे-श्रूयते अनेन इति श्रवणम्–श्रु+ल्युट्; 'कर्णशब्दग्रहौ श्रोत्रं श्रुतिः स्त्री श्रवणं श्रवः' इत्यमरः । **चन्दनपल्लवाः**–चन्दस्य पल्लवाः =चन्दनपल्लवाः (ष० त०) । **प्रचक्रिरे**–प्र√कृ लिट्लकार प्र० पु० ब० व० । यहाँ 'शिष्यगणाः' इस उपमेय का साम्य 'चन्दनपल्लवाः' इस उपमान के साथ दिखलाया गया है, अतः '**उपमा**' अलङ्कार है । **प्रसाद गुण** तथा **वैदर्भी रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।१४।।

विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्त्तिभिः ।
मखैरसंख्यैरजयत्सुरालयं सुखेन यो यूपकरैर्गजैरिव ।।१५।।

अन्वय—यः विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्तिभिः असंख्यैः मखैः यूपकरैः गजैः इव सुखेन सुरालयम् अजयत् ।।१५।।

हिन्दी-अनुवाद—(मदोद्दीपन के लिए दिये जाने वाले) भक्ष्यविशेष के प्रभाववश समुत्थित मदजल से सुशोभित, पराक्रमशाली योद्धाओं से अधिष्ठित शरीरवाले तथा यज्ञस्तम्भ सदृश शुण्डादण्ड वाले असंख्य हाथियों के समान शास्त्रोपदिष्ट (स्वर्णादिक) दानकर्म से सुशोभित, समुज्ज्वलित, 'महावीर' संज्ञक श्रौताग्नियों से सनाथीकृत स्वरूपवाले तथा यज्ञस्तम्भरूपी हाथी वाले अगणित यज्ञों से जिस अर्थपति ने बिना प्रयास के ही स्वर्गलोक को जीत लिया ।।१५।।

संस्कृत-व्याख्या—यः =अर्थपतिः, **विधानसम्पादितदानशोभितैः**=(क) यज्ञपक्षे–विधानेन विधिना सम्पादितं सम्पन्नं यद् दानं तेन शोभितैः अलङ्कृतैः, (ख) गजपक्षे–विधानेन मदाविर्भावार्थं दीयमानभक्ष्यग्रासेन सम्पादितं सम्पन्नं यद्दानं मदजलं तेन शोभितैः, भूषितैः । **स्फुरन्महावीरसनाथमूर्तिभिः**=(क) यज्ञ **पक्षे**–स्फुरन्तः प्रकाशमानाः ये महावीराः यज्ञाग्नयः तैः सनाथाः सहिताः मूर्त्तयः स्वरूपाणि येषां तैः, (ख) गजपक्षे–स्फुरन्तः सक्रियाः ये महावीराः महाशूराः तैः सनाथाः अधिष्ठिताः मूर्त्तयः शरीराणि येषां तैः, **असंख्यैः**=संख्यातीतैः,

मखै: = यज्ञै:, **यूपकरै:** = (क) यूपा यज्ञे पशुबन्धनाय निर्मिता: स्तम्भविशेषा: एव करा: हस्ता: येषां ते, तथाभूतै:, **गजै:** = करिभि:, **इव** = यथा, **सुखेन** = सरलतया, **सुरालयम्** = स्वर्गम्, **अजयत्** = स्ववशं चकार ।।१५।।

टिप्पणी–विधानसम्पादितदानशोभितै:–यहाँ विधान तथा दान शब्द के दो अर्थ हैं । **विधान**–यज्ञपक्ष में वेदविहित विधि, गजपक्ष में–मदाविर्भाव के निमित्त हाथी को दिया जाने वाला खाद्य-पदार्थ विशेष । दान–यज्ञपक्ष में–किसी को धनादि देना, गज पक्ष में मदजल । **विधानसम्पादित०, स्फुरन्महावीर०** ये तृतीयान्त पद 'मखै:' एवं 'गजै:' दोनों के विशेषण हैं। **महावीर**--यज्ञपक्ष में यज्ञाग्नि, गजपक्ष में अत्यधिक वीर । **सुरालयम्**–सुराणां देवानाम् आलय: सुरालयस्तं (ष० त०)–**स्वर्ग** । **यूपकरै:**–यूपा एव करा: येषां तै:, तथाभूतै: (मखै:) यज्ञस्तम्भ ही है जिनके हाथ (यज्ञपक्ष में , यूपा इव करा: शुण्ड-दण्डा: येषां ते तथाविधै: (गजै:)–यज्ञस्तम्भों जैसे विशाल है सूँड जिनके (गजपक्ष में) । यहाँ **पूर्णोपमा** से अनुप्राणित समासोक्ति अलङ्कार है । **प्रसाद गुण** तथा **पाञ्चाली रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।१५।।

स चित्रभानुं तनयं महात्मनां सुतोत्तमानां श्रुतिशास्त्रशालिनाम् ।
अवाप मध्ये स्फटिकोपलामलं क्रमेण कैलासमिव क्षमाभृताम् ।।१६।।

अन्वय– स: क्रमेण क्षमाभृतां मध्ये स्फटिकोपलामलं, कैलासमिव क्षमाभृतां महात्मनां श्रुतिशास्त्रशालिनां सुतोत्तमानां मध्ये चित्रभानुं तनयम् अवाप ।।१६।।

हिन्दी-अनुवाद–उन अर्थपति ने पर्वतों के बीच स्फटिकमणि धवल कैलास की भाँति; जितेन्द्रिय, श्रुतियों एवं शास्त्रों के व्याख्याता तथा क्षमाशील श्रेष्ठ पुत्रों के बीच स्फटिकमणि के समान निष्कलङ्क चित्रभानु नामक पुत्र को वंशानुक्रम से प्राप्त किया ।।१६।।

संस्कृत-व्याख्या–स: = अर्थपति:, **क्रमेण** = कुलक्रमेण **क्षमाभृतां**=पर्वतानां, **मध्ये**, **स्फटिकोपलामलम्** = स्फटिकोपलै: स्फटिकमणिभि: अमलं स्वच्छं कलङ्क-रहितमित्यर्थ:, **कैलासमिव**=कैलासपर्वतमिव, **क्षमाभृतां**= क्षान्तिगुणयुक्तानां, **महात्मनां** = महामनीषिणां, **श्रुतिशास्त्रशालिनां**=वेदशास्त्रज्ञानां, **सुतोत्तमानां**

श्रेष्ठपुत्राणां, **मध्ये** **चित्रभानुं**= चित्रभानुसंज्ञकं, **तनयम्**=पुत्रम्, **अवाप**= लब्धवान् ।।१६।।

टिप्पणी–चित्रभानु—अर्थपति के ग्यारह पुत्र थे जिनमें एक चित्रभानु भी थे । अर्थपति के ग्यारहपुत्रों के विषय में महाकवि बाणभट्ट ने हर्षचरित में लिखा है–"सोऽजनयद् १. भृगुं, २. हंसं, ३. शुचिं, ४. कविं, ५. महीदत्तं, ६. धर्मं, ७. जातवेदसं, ८. चित्रभानुं, ९. लक्षं, १०. अहिदत्तं, ११. विश्वरूपञ्चेत्येकादशरुद्रानिव । सोमामृतरसशीकरच्छुरितमुखान् पवित्रान् पुत्रान् ।"
अवाप=प्राप्त किया । **स्फटिकोपलामलम्**—स्फटिकोपलैः अमलमिति स्फटिकोपलामलम् अर्थात् स्फटिक मणि के समान स्वच्छ । 'अमलम् के स्थान पर 'उपमम्' पाठान्तर होने पर अर्थ इस प्रकार होगा–स्फटिक मणि है उपमा जिसकी । **क्षमाभृताम्**–इसमें श्लेष है । इसके दो अर्थ है–(क) क्षमां पृथ्वी बिभ्रति धारयन्ति, तेषाम् अर्थात् पृथ्वी को धारण करने वाले–पर्वत, क्षमां क्षान्ति बिभ्रति तेषाम् अर्थात् क्षमा नामक गुण को धारण करने वाले । 'क्षितिक्षान्त्योः क्षमा' इत्यमरः । तनयः-तनोति विस्तारयति कुलमिति तनयः-तनु (विस्तारे)+कयन् । 'आत्मजस्तनयः सूनुः' इत्यमरः । **उपमालङ्कार** । **प्रसाद गुण**, **वैदर्भी रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।१६।।

महात्मनो यस्य सुदूरनिर्गताः कलङ्कमुक्तेन्दुकलामलत्विषः ।
द्विषन्मनःप्राविविशुः कृतान्तरा गुणा नृसिंहस्य नखाङ्कुरा इव ।।१७।।

अन्वय–यस्य महात्मनः सुदूरनिर्गताः कलङ्कमुक्तेन्दुकलामलत्विषः गुणः नृसिंहस्य नखाङ्कुराः इव कृतान्तरा द्विषन्मनः प्राविविशुः ।।१७।।

हिन्दी-अनुवाद--बहुत दूर तक निकले हुए अर्थात् अत्यधिक प्रवृद्ध, निष्कलङ्क चन्द्रकला के समान धवल कान्तिवाले तथा शत्रुकल्प हिरण्यकशिपु के हृदयतल में प्रविष्ट महात्मा (विराटस्वरूप) भगवान् नृसिंह के नखाग्रभागों की भाँति जिस महात्मा चित्रभानु के दिगन्तव्यापी, निष्कलङ्क चन्द्रकला के समान विशदच्छटावाले तथा अवकाश (निवास स्थान) बना लेने वाले गुण शत्रुओं के भी अन्तःकरण में प्रविष्ट हो गये थे ।।१७।।

संस्कृत-व्याख्या–यस्य महात्मनः=यस्य महापुरुषस्य, **सुदूरनिर्गताः**= दूरदेशपर्यन्तं गताः, नखाङ्कुरपक्षे तु अतिदीर्घत्वात् नखराग्राद्बहिर्भूताः, **कलङ्क-मुक्तेन्दुकलामलत्विषः**=कलङ्केन मृगलाञ्छनेन मुक्ता वर्जिता या इन्दुकला चन्द्रकला तद्वत् अमला स्वच्छा त्विट् छविर्येषां ते (गुणाः नखाङ्कुराश्च) **गुणाः**= दयादाक्षिण्यादयः, **नृसिंहस्य**= नृसिंहावतारस्य विष्णोः, **नखाङ्कुराः** =नखाग्रभागाः, **इव कृतान्तराः**= कृतं विहितम् अन्तरं प्रवेशावकाशः यैः ते (गुणाः) नखपक्षे तु कृतं विहितम् अन्तरं विदारणात् अन्तः प्रवेशमार्गः यैस्ते, **द्विषन्मनः**= द्विषतां शत्रूणां मनः अन्तकरणम्, नखपक्षे द्विषतः शत्रोः हिरण्यक-शिपोः मनः वक्षःस्थलम्, **प्राविविशुः**=-प्रवेशं विदधुः ।।१७।।

टिप्पणी–सुदूरनिर्गताः—इसके दो अर्थ हैं–(क) गुणपक्ष में–दूर-दूर स्थानों तक फैले हुए, (ख) नख पक्ष में–दूर तक बाहर निकले हुए । **त्विट्**= कान्ति । **द्विषत्**=शत्रु । **सुदूरनिर्गताः**, कलङ्कमुक्तेन्दुकलामलत्विषः, तथा कृता-न्तराः ये तीनों पद गुणाः तथा नखाङ्कुराः इन दोनों के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । **प्राविविशुः**=प्र + आङ् विश् धातु लिट् लकार प्र० पु० ए० व० । यहाँ उपमान, उपमेय, वाचक तथा साधारण धर्म इन चारों अङ्गों के होने से **पूर्णोपमा** नामक अलङ्कार है । **प्रसाद गुण, वैदर्भी रीति । वंशस्थ छन्द** ।।१७।।

दिशामलीकालकभङ्गतां गतस्त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः ।
चकार यस्याध्वरधूमसञ्चयो मलीमसः शुक्लतरं निजं यशः ।।१८।।

अन्वय—दिशामलीकालकभङ्गतां गतः, त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः यस्य मलीमसः अध्वरधूमसञ्चयः निजं यशः शुक्लतरं चकार ।।१८।।

हिन्दी-अनुवाद–दिग्वधुओं के ललाटप्रदेश पर घुँघराली अलकों की भङ्गिमा उत्पन्न करने वाले तथा वेदत्रयीरूपिणी वधू के कर्णप्रान्तों पर तमाल-पल्लव के समान जिस चित्रभानु के यज्ञों से उत्पन्न धूमसमूह ने (स्वरूपतः) मैला अर्थात् कृष्णवर्ण होते हुए भी उनके वैयक्तिक यश को और अधिक समु-

संस्कृत-व्याख्या–**दिशां**=पूर्वादीनां वधूस्वरूपाणाम्, **अलीकालकभंगतां**= अलीकेषु ललाटप्रदेशेषु 'अलीकमप्रिये भाले' इति हैम: ये अलकाश्चूर्णकुन्तला: तेषां भङ्गतां रचनाविशेषत्वम्, **गत**:=प्राप्त:, **त्रयीवधूकर्णतमालपल्लव**:=त्रयी वेदत्रयी **सैव** वधू: स्नुषा तस्या: कर्णे श्रवणे तमालपल्लव: तापिच्छवृक्षकिसलय-स्वरूप:, 'तापिच्छोऽपि तमाल: स्यात्' इत्यमर:, **मलीमस**:=प्राकृतिकमलिन:, **यस्य**=चित्रभानो:, **अध्वरधूमसञ्चय**:=अध्वराणां यज्ञानां यो धूम: तस्य सञ्चय: यज्ञधूमसमूह:, **शुक्लतरं**=अतिशयेनोज्ज्वलं, **निजं**=स्वीयं, **यश**:= कीर्तिं, **चकार**=विदधे ।।१८।।

टिप्पणी–**दिशाम्**–दिशारूपी वधूगण के । **अलक**–घुँघराले बाल, 'अलकाश्चूर्णकुन्तला:' इत्यमर: । **अलीक**–ललाट, भाल । अलीक शब्द के दो अर्थ लिखते हुए कहा गया है–'अलीकमप्रिये भाले' । **त्रयी**–तीन वेदों का समूह-ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद । **अध्वर**:=यज्ञ । अध्वानं सत्पथं राति ददाति–अध्वन्+रा+क अथवा न ध्वरति न कुटिलो भवति–नञ्+ध्वृ+ अच् । **चकार**–कृ धातु लिट् प्र० पु० ए० व० । यहाँ दिशा और वेदत्रयी में वधू का तथा यज्ञ-धूम में कर्णतमालपल्लव का समारोप होने से **रूपक** अलंकार है । मलिन धूम के सञ्चय के द्वारा शुक्लतर यश के उत्पन्न होने से अतएव कारण गुण के विपरीत कार्य गुण के उत्पन्न होने से **विषम** अलंकार है । इन दोनों के अङ्गाङ्गिभाव होने से **संकर** है । **प्रसाद गुण, वैदर्भी रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।१८।।

सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटप्रमृष्टहोमश्रमसीकराम्भस: ।
यशोंऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्तत: सुतो बाण इति व्यजायत ।।१९।।

अन्वय–सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटप्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भस: यशोंऽशु-शुक्लीकृतसप्तविष्टपात् तत: बाण इति सुत: व्यजायत ।।१९।।

हिन्दी-अनुवाद–होमादि कर्मों के सन्दर्भ में परिश्रमजन्य जिनका स्वेदजल (पसीना) सरस्वती के कमलसदृश करयुगल से स्वयमेव पोंछा जाता था तथा (जिनकी) यशोदीप्तियों से सातों भुवन शुभ्र बना दिये गये थे उन्हीं (चित्रभानु)

से बाण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ।।१९।।

संस्कृत-व्याख्या—**सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटप्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भसः**= सरस्वत्याः भारत्याः पाणिसरोजसम्पुटेन करकमलद्वयेन प्रमृष्टानि प्रमार्जितानि होमश्रमस्य यज्ञजन्य-परिश्रमस्य शीकराम्भसि प्रस्वेदजलानि यस्य तस्मात् (चित्रभानोः), तथा **यशोंऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्**=यशसः सुकीर्तेः अंशुभिः मयूखैः शुक्लीकृतानि शुभ्रीकृतानि सप्तविष्टपानि सप्तभुवनानि येन तस्मात् 'विष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः, **ततः**=चित्रभानोः, **बाण इति**=बाणनामधेयः, **सुतः**=पुत्रः, **व्यजायत**=अभवत् ।।१९।।

टिप्पणी—**सरस्वती**—सरस्+मतुप्=सरस्वत्+ङीप्=सरस्वती । **प्रमृष्टः**-प्रमृज्+क्त । **सरस्वती···अम्भसः**—इसके द्वारा बाणभट्ट ने अपने पिता चित्रभानु को वैदिक यज्ञों का परमानुष्ठाता तथा समस्त विद्याओं का ज्ञाता बतलाया है। **अंशु**=किरण । **विष्टप**—भुवन, 'विष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः । **व्यजायत**—वि उपसर्ग पूर्वक जन् धातु लङ् प्र० पु० ए० व० । यहाँ सरस्वती के करकमलों के द्वारा चित्रभानु के श्वेद जलकणों के प्रोञ्छण रूपी असम्बन्ध में सम्बन्ध प्रतिपादन करने से **अतिशयोक्ति** अलंकार है । इसी प्रकार शुभ्रीकरण असम्बन्ध में सम्बन्ध के प्रतिपादन से **अतिशयोक्ति** अलकार है । दोनों की निरपेक्ष स्थिति होने से **संसृष्टि** है । **प्रसाद गुण**, **पाञ्चाली रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।१९।।

द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठ्यया महामनोमोहमलीमसान्धया ।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा ।।२०।।

अन्वय—तेन द्विजेन अक्षतकण्ठकौण्ठ्यया महामनोमोहमलीमसान्धया अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया इयम् अतिद्वयी कथा निबद्धा ।।२०।।

हिन्दी-अनुवाद—अनुपहत कण्ठप्रदेश की जडतावाली, उत्कृष्ट चित्तवैकल्य के कारण मलिन एवं अन्धी तथा पाण्डित्यचातुरी को न प्राप्त करने के कारण अप्रगल्भ बुद्धि से उस ब्राह्मण (बाणभट्ट) ने इस अतिद्वयी (अर्थात् बृहत्कथा एवं वासवदत्ता का अतिक्रमण करने वाली) कथा (कादम्बरी) को निबद्ध किया है ।।२०।।

संस्कृत-व्याख्या—सम्प्रति महाकवि: बाणभट्ट: स्वाहंकारं परिहरति **द्विजेनेति** । **तेन द्विजेन**=ब्राह्मणेन बाणेन, **अक्षतकण्ठकौण्ठ्यया**=अक्षतम् अविनष्टं कण्ठकौण्ठ्यं गलस्य मान्द्यं यस्या: सा तया, **महामनोमोहमलीमसान्धया**=महान् उत्कृष्टो यो मनोमोह: चित्तवैकल्यं तेन मलीमसा मलिना अतएव अन्धा सदसत्प्रतिपादनासमर्था तया, **अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया**=अलब्ध: अप्राप्त: य: वैदग्ध्यविलास: वैदुष्यचातुर्यं तेन मुग्धा मूढा तया, 'मुग्ध: सुन्दरमूढयो:' इत्यमर:, **धिया**=प्रज्ञया, **इयं**=कादम्बरीरूपा, **अतिद्वयी**=द्वयीं बृहत्कथां वासवदत्तां च अतिक्रान्तेति अतिद्वयी, **कथा**=प्रवन्धकल्पना, **निबद्धा**=निर्मिता ।।२०।।

टिप्पणी—**"अक्षत···कौण्ठ्यया, महा···न्धया, अलब्ध···मुग्धया"** ये तीनों धिया के विशेषण हैं । **कौण्ठ्य**—कुण्ठाया भाव:—कुण्ठा+ष्यञ्=कौण्ठ्य—जड़ता । **अलब्ध:**-लभ+क्त=लब्ध:, न लब्ध: अलब्ध: । **वैदग्ध्य**—विदग्ध+ष्यञ्=चतुरता । **मुग्ध:**—मुह्+क्त=मूढ: । **अतिद्वयी**—कादम्बरी के संस्कृत टीकाकार भानुचन्द्र ने इस शब्द की व्याख्या की है—'द्वयी बृहत्कथां वासवदत्तां चातिक्रान्तेत्यर्थ: ।' अर्थात् कादम्बरी इस अर्थ में अतिद्वयी है कि इसने बृहत्कथा (गुणाढ्यकृत) तथा वासवदत्ता (सुबन्धुकृत) का अतिक्रमण कर दिया है। श्री पीटर्सन महोदय इस शब्द का सीधा अर्थ करते हैं 'अद्वितीय' । देखिए—'अतिद्वयीति···अतिक्रान्तेत्यर्थ: (भानुचन्द्र) This seems fas fetched अतिद्वयी is that which cannot be put along with anything else so that the two shall form a द्वयम् 'incomparable' यहाँ प्रथम चरण में **छेकानुप्रास**, शेप भाग में **वृत्त्यनुप्रास** तथा दोनों की निरपेक्ष स्थिति होने से **संसृष्टि** । **प्रसाद गुण**, **पाञ्चाली रीति** । **वंशस्थ छन्द** ।।२०।।

कथामुखम्

आसीदशेषनरपतिशिरःसमभ्यर्चितशासनः पाकशासन इवापरः, चतुरुदधिमालामेखलाया भुवो भर्ता, प्रतापानुरागावनतसमस्तसामन्त-चक्रः,चक्रवर्त्तिलक्षणोपेतः, चक्रधर इव करकमलोपलक्ष्यमाणशङ्ख-चक्रलाञ्छनः, हर इव जितमन्मथः, गुह इवाप्रतिहतशक्तिः, कमलयोनिरिव विमानीकृतराजहंसमण्डलः, जलधिरिव लक्ष्मीप्रसूतिः, गङ्गा-प्रवाह इव भगीरथपथप्रवृत्तः, रविरिव प्रतिदिवसोपजायमानोदयः, मेरुरिव सकलोपजीव्यमानपादच्छायः, दिग्गज इवानवरतप्रवृत्तदाना-र्द्रीकृतकरः, कर्त्ता महाश्चर्य्याणाम्, आहर्त्ता क्रतूनाम्, आदर्शः सर्वशा-स्त्राणाम्, उत्पत्तिः कलानाम्, कुलभवनं गुणानाम्, आगमः काव्यामृत-रसानाम्, उदयशैलो मित्रमण्डलस्य, उत्पातकेतुरहितजनस्य, प्रवर्त्तयित गोष्ठीबन्धानाम्, आश्रयो रसिकानाम्, प्रत्यादेशो धनुष्मताम् धौरेयः साहसिकानाम् अग्रणीर्विदग्धानाम् वैनतेय इव विनतानन्दजननः, वैन्य इव चापकोटिसमुत्सारितसकलारातिकुलाचलो राजा शूद्रको नाम।

हिन्दी अनुवाद–समस्त भूपतियों द्वारा जिनका आदेश शिरोधार्य होता था, जो दूसरे पाकशासन, (देवराज इन्द्र) के समान था, चारों समुद्रों की माला (समूह) ही है करधनी जिसकी–ऐसी पृथ्वी का जो स्वामी था, प्रताप (पराक्रम) एवं अनुराग (औदार्य गुणों) से जिसने समूचे सामन्त समुदाय को विनत (नम्र) कर दिया था, जो चक्रवर्ती (नरेश) के लक्षणों से युक्त था, करकमलो में उपलक्षित हो रहे हैं (पाञ्चजन्य नामक) शंख एवं (सुदर्शन नामक) चक्र जैसे लांछन अर्थात् आयुध विशेष जिसके–ऐसे चक्रधर विष्णु की भाँति जो करकमलों में दिखाई पड़ने वाले (रेखोपरेखात्मक) शंख चक्राकार चिह्नों से युक्त था, कामजयी शंकर की भाँति जो जितेन्द्रिय था, प्रतिहत (विनष्ट)

न होने वाली अर्थात् अमोघ शक्ति (अस्त्र विशेष) वाले कुमार कार्तिकेय की भाँति जो अकुण्ठित सामर्थ्य वाला था, राजहंसों (पक्षी विशेष) के मण्डल को विमान अर्थात् देवयान बनाने वाले कमलयोनि ब्रह्मा की भाँति जिसने श्रेष्ठ भूपतिवृन्द का दर्प (अहंकार) विगलित (नष्ट) कर दिया था, लक्ष्मी का उद्भवस्थान बनने वाले सागर की भाँति जो ऐश्वर्य अथवा सौन्दर्य का उत्पादक था, (महाराज) भगीरथ के (पितृगणों के उद्धाररूपी) मार्ग का अनुगमन करने वाले गङ्गाप्रवाह (धारा) की भाँति जो भगीरथ (सूर्यवंशीनरेश) के मार्ग (राजकीय आदर्शों) का अनुयायी था, प्रतिदिन (उदयगिरि पर) उत्पद्यमान उदय वाले सूर्य की भाँति जो प्रतिदिन वर्धनशील अभ्युदयवाला था समस्त (देवताओं द्वारा समाश्रित हो रही है जिसके प्रत्यन्तपर्वतों की छाया ऐसे (सुवर्णगिरि) सुमेरु की भाँति जो समस्त लोक (प्रजावर्ग) द्वारा संसेवित पादच्छाया (चरणाश्रय) वाला था, निरन्तर विगलित होते हुए मदजल से आर्द्रीभूत (गीले बने हुए) शुण्डादण्ड वाले दिग्गज की भाँति जो निरन्तर प्रवृत्त दान (दी जाने वाली दक्षिणा तथा संकल्पजल) के कारण भीगे हुए हाथ वाला था, जो महाविस्मयकारी अर्थात् अनन्यकृत युद्धादि कर्मों का निष्पादक था जो यज्ञों का अनुष्ठाता था, जो समस्त वाङ्मयों का दर्पणस्वरूप था, (शिल्पादि ७२ संख्यावली) कलाओं का जो उद्भवस्थान था, जो (गाम्भीर्यादि) गुणों का कुलभवन अर्थात् परम्परास्थान था, जो काव्यामृत रसों का आगम था, जो मित्र समूह का उदयाचल था, जो वैरी समूह के लिये धूमकेतु स्वरूप था, जो गोष्ठीबन्धों (वार्तागोष्ठियों) का संचालक था, जो रसिकों का आश्रय-स्थान था, जो धनुर्धरों का प्रत्यादेश अर्थात् उन्हें पराङ्मुख कर देने वाला था, जो सत्त्वशाली पुरुषों में अग्रगण्य था, जो पण्डितों में मुख्य था, (अपनी माता) विनता के आनन्द को उत्पन्न करने वाले वैनतेय गरुड की भाँति जो प्रणतिपरायणों के लिए आनन्ददायक था, धनुष के अग्रभाग से शत्रुओं तथा (महेन्द्रादि) कुलपर्वतों को उखाड़ फेंकने वाले वेनपुत्र (महाराज पृथु) की भाँति जिसने (सैनिकों द्वारा परिगृहीत) करोड़ों धनुषों के कुलपर्वत सरीखे शत्रुमण्डल को समुच्छिन्न कर दिया था (उखाड़ फेंका था) ऐसे शूद्रक नाम का (एक) राजा था।

संस्कृतव्याख्या—अथ तत्रभवान् महाकविः बाणभट्टः कादम्बरीकथा-

मारभते । तत्रादौ शूद्रकाख्यं राजानं वर्णयन्नाह यद् 'राजा शूद्रको नाम आसीत्' । 'सः राजा एवम् आसीत्' इति सम्प्रति कविस्तत्र राजानं विशिनष्टि-**अशेषनरपतिशिरःसमभ्यर्चितशासनः**=अशेषाः समस्ताः ये नरपतयः राजानः तेषां शिरोभिः उत्तमाङ्गैः समभ्यर्चितं सादरं स्वीकृतं शासनम् आदेशो यस्य सः तादृशः, समस्ताः नृपतयः तस्य आज्ञां सादरं पालयन्ति स्म इत्याशयः, अतएव **अपरः**=अन्यः, **पाकशासनः**=पुरन्दरः, 'मघवा विडौजाः पाकशासनः' इत्यमरः, **इव**=उत्प्रेक्षायाम्, **चतुरुदधिमालमेखलायाः**=चत्वारश्च त उदधयश्च समुद्राश्चेति चतुरुदधयस् तेषां माला श्रेणी एव मेखला काञ्ची अवधिर्वा यस्याः तथाविधायाः, **भुवः**=वसुधायाः, **भर्ता**=स्वामी, **प्रतापानुरागावनतसमस्तसामन्तचक्रः**=प्रतापेन कोशदण्डतेजसा अनुरागेण प्रेम्णा च अवनतं नम्रीभूतं समस्त सकलं सामन्तचक्रं सामन्तसमूहः यस्य स तादृशः, **चक्रवर्तिलक्षणोपेतः**=चक्रवर्ती सार्वभौमस्तस्य यानि लक्षणानि सामुद्रिकशास्त्रवर्णितानि चिह्नानि तैः उपेतः युक्तः, पुनः कथम्भूतः सः **चक्रधरः**=विष्णुः, **इव**=यथा, **करकमलोपलक्ष्यमाणशङ्खचक्रलाञ्छनः**=करकमले पाणिपद्मदले उपलक्ष्यमाणम् अवलोक्यमानं, शंखचक्रलाञ्छनं=शंखचक्रचिह्नं यस्य स तादृशः 'चिह्नं लक्ष्म च लक्षणम्' इत्यमरः **हर इव**=शिवो यथा इत्युपमा, **जितमन्मथः**=जितः वशीकृतः मन्मथः कामः येन सः, हरपक्षे–जितः पराजितः भस्मीकृतः कामदेवः येन सः, **गुह इव**=कार्तिकेयो यथा, **अप्रतिहतशक्तिः**=अप्रतिहता अकुण्ठिता शक्तिः प्रभावोत्साहमन्त्रजनितं सामर्थ्यं यस्य स तथोक्तः, **कमलयोनिः**=कमलं योनिः यस्य स कमलयोनिः विधाता, **इव**=यथा, **विमानीकृतराजहंसमण्डलः**=विगतः पराजयेन विनष्टः मानोऽहङ्कारो यस्य तद्विमानं. विमानीकृतं राजहंसानां नृपश्रेष्ठानां मंडलं समूहो येन स तादृशः, कमलयोनिपक्षे विमानीकृतं, देवयोनिकृतं राजहंसानां पक्षिविशेषाणां मण्डलं येन सः, **जलधिरिव**=समुद्र इव, जलानि धीयन्तेऽस्मिन्निति जलधिः, **लक्ष्मीप्रसूतिः**=लक्ष्म्याःपद्मायाः शोभायाः वा प्रसूतिरुत्पत्तिस्थानम् सागरमन्थनात् लक्ष्मीः समुत्पन्ना, राजापि शोभाशालित्वात् राजलक्ष्म्या आश्रयत्वात् च लक्ष्मीप्रसूतिः, **गङ्गाप्रवाह इव**=गङ्गायाः भगीरथ्याः प्रवाह ओघ इव, **भगीरथपथप्रवृत्तः**=भगीरथस्य एतदाख्यसूर्यवंशीयनृपतिविशेषस्य यः पन्थाः

मार्गः तस्मिन् प्रवृत्तः=तत्परः, गङ्गाप्रवाहपक्षे–स्वपितृणामुद्धराय कृतः यः स्वरथचक्रमार्गःतस्मिन् प्रवृत्तः, **रविरिव**=सूर्य इव, **प्रतिदिवसोपजायमानोदयः**= प्रतिदिवसं प्रतिदिनम् उपजायमान उत्पद्यमान उदयः सम्पत्तेरुन्नतिः यस्य सः, **मेरुरिव**=सुमेरुगिरिरिव, **सकलोपजीव्यमानपादच्छायः**=सकलैः समस्तैरर्थादि्दे-वैर्लोकैश्च उपजीव्यमाना संसेव्यमाना पादयोः चरणयोः छाया कान्तिः यस्य सः, सुमेरुपक्षे=पादानां प्रत्यन्तपर्वतानां छाया आतपाभावोः यस्यः सः 'पादाः प्रत्यन्त-पर्वताः', 'छाया सूर्यप्रिया कान्तिः प्रतिबिम्बमनातपः' इति चामरः, **दिग्गज इव**=दिङ्नागइव, ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः। 'पुष्पदन्तः सार्व-भौमःसुप्रतीकश्च दिग्गजाः'। इत्यमरः, **अनवरतप्रवृत्तदानार्द्रीकृतकरः**=अनवरतं सततं प्रवृत्तं जातं यद्दानं मदजलं जलसहितं धनादिदानश्च तेनार्द्रीकृतः क्लिन्नी-कृतः करः शुण्डो हस्तश्च यस्य सः, 'मदो दानं प्रवृत्तिश्च' इत्यमरः, **महाश्चर्या-णाम्**=अत्यन्तविस्मयोत्पादककार्याणाम्, **कर्ता**=कारकः, **क्रतूनाम**=यज्ञानाम् **आहर्ता**=अनुष्ठाता,**सर्वशास्त्राणाम्**=सकलवाङ्मयवेदादीनाम्,**आदर्शः**=दर्पणः 'दर्पणे मुकुरादर्शौ' इत्यमरः, यथा खलु मुकुरे संक्रान्ताः पदार्थाः समवलोक्यन्ते तथैव तस्मिन्नपि राजनि सर्वेषां शास्त्राणां छाया निरन्तराभ्यासवशाज्जनैः समव-लोक्यन्ते, **कलानाम्**=नृत्यगीतादिचतुष्षष्टिकलाविद्यानाम्, **उत्पत्तिः**=उत्पत्ति-स्थानम्, **गुणानाम्**=दयादाक्षिण्यादीनाम्, **कुलभवनं**=कुलक्रमागताश्रयस्थानम्, **काव्यामृतरसानाम्**=काव्यानां ये अमृतरसाः सुधातुल्यरसास्तेषाम्, **आगमः**= उद्भवस्थानम्, **मित्रमण्डलस्य**=सखासमूहस्य, **उदयशैलः**=समुन्नतेः स्थानम्, पक्षे मित्रमण्डलस्य सूर्यबिम्बस्य उदयशैलः, पूर्वाद्रिः, यथा दिवाकरः पूर्वाद्रौ उदयं प्राप्नोति तथा तस्य राज्ञो मित्र-गणस्तदाश्रितोऽभ्युन्नतिं प्रापेति भावः, **अहितजनस्य**=शत्रुलोकस्य, **उत्पादकेतुः**=धूमकेतुः, **गोष्ठीबन्धानाम्**=साहित्य-परिषत्संयोजनानां, **प्रवर्त्तयिता**=प्रवर्त्तकः, **रसिकानाम्**=रसज्ञानाम्, **आश्रयः**= अवलम्बनस्थानम् **धनुष्मताम्**=धनुर्धारिणाम्, **प्रत्यादेशः**=प्रत्याख्यानकर्ता, **साहसिकानाम्**=हठविधानियां मध्ये, **धौरेयः**=धुरन्धरः, **विदग्धनाम्**=पण्डिता-नां मध्ये, **अग्रणीः**=अग्रगण्यः, **वैनतेय इव**=गरुड इव, **विनतानन्दजननः**= विनतेभ्यः कृतप्रणामेभ्यः आनन्दस्य हर्षस्य जननः सम्पादकः, **गरुडपक्षे**=विन-

ताया: स्वजनन्या: आनन्दजनन:आनन्दोत्पादक:,**वैन्य इव**=पृथुराज इव, **चापकोटिसमुत्सारितसकलारातिकुलाचलः**=चाप: धनु: तस्य कोटिरग्रभाग: तेन समुत्सारिता: विनाशिता: ये अरातय: शत्रव: एव कुलाचला: कुलपर्वता: येन स:, कुलपर्वताश्च–महेन्द्रो मलय: सह्य: शुक्तिमानृक्षपर्वत: । विन्ध्यश्च पारियात्रश्च-सप्तैते कुलपर्वता:'।। **वैन्यपक्षे**=चापकोट्या समुत्सारिता अरातय इव कुलाचलः येन स: । पुरा किल राजा पृथुः स्वधनुरग्रभागेन पर्वतान् उत्पाट्य पृथिवीं समीकृतवानिति पौराणिकी वार्तानुसन्धेया ।

टिप्पणी–आसीत् राजा शूद्रको नाम–'शूद्रक नाम का राजा था । मङ्गलाचरणादि के पश्चात् यहाँ से कादम्बरी 'कथामुख' प्रारम्भ होता है । यहाँ राजा शूद्रक के विशेषण दिये गये हैं । **समभ्यर्चितः**=सम्+अभि+अर्च+क्त । **पाकशासन्**=इन्द्र । पाकशासन इन्द्र को इसलिए कहते हैं क्योंकि उन्होंने पाक नामक दैत्य का बध किया था । पाकं शासितवानिति पाकशासन: । 'शासन: पाकशासन' में शासन पद की आवृत्ति से **यमक** अलङ्कार है । **मेखला**=करधनी । '**चतुरुदधि···भर्ता**' यहाँ पृथ्वी तथा शूद्रक पर नायक और नायिका के व्यवहार का समारोप होने से **समासोक्ति** अलङ्कार है । **चक्रवर्तिलक्षणोपेतः**–राजा शूद्रक चक्रवर्ती के लक्षणों से युक्त था । चक्रवर्ती के लक्षणों के विषय में सामुद्रिकरहस्य में कहा गया है–"अतिरिक्तः करो यस्य ग्रथिताङ्गुलिको मृदुः । चापाङ्क शाङ्कितः सोऽपि चक्रवर्ती भवेद् ध्रुवम् ।।" **चक्रधरः**–विष्णु । हरः–शिव । हरति पापं य: स: हर: । यह कथा प्रसिद्ध है कि शिवजी ने अपने तीसरे नेत्र के द्वारा कामदेव को भस्म कर दिया था । **गुहः**–कार्तिकेय । इन्हें देवताओं का सेनापति कहा गया है । **कमलयोनिः**=कमलं योनिर्यस्य स: जिसका उत्पत्ति स्थान कमल है अर्थात् ब्रह्मा । ब्रह्मा की उत्पत्ति भगवान् विष्णु की नाभि में स्थित कमल से मानी गयी है । **गङ्गाप्रवृतः**–इस प्रकार की पौराणिक कथा है कि राजा सगर ने अश्वमेध यज्ञ के लिए अश्व को छोड़ा था जिसको चुराकर देवराज इन्द्र ने पाताल में कपिल के आश्रम में बाँध दिया । उस अश्व का अन्वेषण करते हुए जब सगर के पुत्र पाताल पहुँचे तथा वहाँ अश्व को देखकर कपिल मुनि की भर्त्सना करने लगे तो कपिल मुनि ने

उन्हें अपने क्रोध के द्वारा भस्म कर दिया । उनके प्रपौत्र भगीरथ ने उनके उद्धार के लिए गङ्गा को लाने के लिए तप किया । उनसे प्रसन्न होकर हिमालय से निकलकर पृथ्वी पर भगीरथ के रथचक्रविनिर्मित मार्ग पर चलती हुई गङ्गा ने पाताल में प्रवेश कर उनको तार दिया था । **उदयः**–(शूद्रक पक्ष में) उन्नति, (सूर्य पक्ष में) उगना । **पादः**–(राजा के पक्ष में) पैर, (सुमेरु के पक्ष में) प्रत्यन्त-पर्वत, पहाड़ी । **छाया**–(राजा के पक्ष में) आश्रय, (सुमेरु के पक्ष में) धूप का अभाव । सुमेरु पर्वत के समीपस्थ पर्वतों की छाया में देवता विचरण करते हैं–ऐसी पौराणिक कथा है । साम्बपुराण में कहा भी गया है–'एकविंशत्यमी स्वर्गा निर्मिता मेरुमूर्धनि' । **दिग्गजः**–दिशाओं के रक्षक आठ हाथी माने जाते हैं जिनका उल्लेख संस्कृत टीका में किया गया है । **करः**–(राजा के पक्ष में) हाथ (दिग्गज के पक्ष में) सूंड । **दान**–(राजा के पक्ष में) धनादि दान (दिग्गज के पक्ष मे) मद जल । **चक्रधर इव**–से लेकर **'दिग्गजकरः'** पर्यन्त **पूर्णोपमा** अलंकार है । **आहर्ता**–आ√हृ+तृच्, अनुष्ठान करने वाला । **आगमः**–आ√गम=घञ्, जन्मस्थान । **कर्ता···विदग्धानाम्** यहाँ एक राजा शूद्रक का विषयभेद से अनेक रूपों में उल्लेख किये जाने से **उल्लेख** अलंकार है । **मित्रमण्डलस्य**–में श्लेष अलंकार है । मित्र शब्द के दो अर्थ हैं (क) सुहृत् तथा (ख) सूर्य । **'उत्पातकेतुरहितजनस्य'** में राजा पर उत्पातकेतु का आरोप होने से **रूपक** अलंकार है । उत्पातकेतु पुच्छल तारा को कहते हैं जिसके उदय होने पर अत्य-धिक अनिष्ट की आशंका होती है । **प्रत्यादेश**–प्रति+आ√दिश्+घञ् । **धौरेयः**–धुरं वहति इति धुर+ढक्+एय । विशेष उत्तरदायित्व को संभालने वाला अग्रणी व्यक्ति 'धौरेय' कहलाता है । **वैनतेयः**–विनताया अपत्यं पुमान्-विनता+ढक्–एय । विनता की पुरुष सन्तान अर्थात् गरुड़ पक्षी **विनतान-न्दजननः**–(राजा के पक्ष में) विनम्र लोगो के लिए आनन्द उत्पन्न करने वाला, (गरुड़ के पक्ष मे) विनता नामक अपनी माता को आनन्द देने वाला । **वैन्य···कुलाचलः**–पौराणिक कथा है कि राजा पृथु ने पृथ्वी को समतल बनाने के लिए अपनी धनुष्कोटि से पर्वतो को उखाड़ डाला था । **'वैनतेय इव कुलाचलः'** यहाँ **पूर्णोपमा** अलंकार है ।

नाम्नैव यो निर्भिन्नारातिहृदयो विरचितनरसिंहरूपाडम्बरम्, एकविक्रमाक्रान्तसकलभुवनतलो विक्रमत्रयायासितं जहासेव वासुदेवम् । अतिचिरकाललग्नमतिक्रान्तकुनृपतिसहस्रसम्पर्ककलंकमिव क्षालयन्ती यस्य विमले कृपाणधाराजले चिरमुवास राजलक्ष्मीः ।

हिन्दी-अनुवाद—नाम (सुनने) मात्र से शत्रुओं का हृदय विदीर्ण कर देने वाला तथा अद्वितीय पराक्रम से समस्त पृथ्वीलोक को आक्रान्त कर देने वाला जो (शूद्रक शत्रुहृदय विदीर्ण करने के लिए) नृसिंहरूप स्वांग रचने-वाले तथा (पृथ्वीलोक को आक्रान्त करने के लिए) तीन पादविक्षेप [डग भरने] के कारण थक जाने वाले विष्णु का मानो उपहास करता था । अत्यन्त चिरकाल से उत्पन्न हो चुके, भूतपूर्व सहस्रों कायर राजाओं के सम्पर्कजन्य [अपने] कलंक को मानो धोती हुई साम्राज्यलक्ष्मी जिसकी निर्मल कृपाणधारा रूपी जल में प्रभूत काल [बहुत समय] तक बसी रही ।

संस्कृतव्याख्या—यः=शूद्रकः, **नाम्नैव**='शूद्रक' इति नामश्रवणमात्रेणैव, **निर्भिन्नारातिहृदयः**=निर्भिन्नानि विदारितानि अरातीनां शत्रूणां हृदयानि वक्षांसि येन सः, **विरचितनरसिंहस्वरूपाडम्बरम्**=विरचितः विनिर्मितः नरसिंहस्वरूपस्य आडम्बर आटोपो येन सः, तम्, **एकविक्रमाक्रान्तसकलभुवनतलः** =एकेन अद्वितीयेन एव विक्रमेण पराक्रमेण आक्रान्तम् अधीनं कृतं सकलं समस्तं भुवनतलं विष्टपतलं येन सः तादृशः **विक्रमत्रयायासितभुवनत्रयम्**—विक्रमः चरणन्यासः तस्य त्रयं त्रितयं तेन आयासितं खिन्नं कृतं भुवनत्रयं विष्टपं येन तं तथोक्तम्, **वासुदेवं**=विष्णुं, **जहासेव**=उपहसति स्मेव । 'विष्टपं भुवनत्रयम्' इत्यमरः । **अतिचिरकाललग्नम्**=अतिचिरकालो भूयान् समयः तेन लग्नं संयुक्तम्, **अतिक्रान्तकुनृपतिसहस्रसम्पर्ककलंकम्**=अतिक्रान्तं व्यतीतं यत् कुनृपतिसहस्रं-कुत्सित नृपतिसमूहः तस्य सम्पर्केण सम्बधेन यः कलंको दूषितलक्ष्म पापञ्च तं तथोक्तम् इवेत्युत्प्रेक्षायाम्, **क्षालयन्ती**=प्रक्षालयन्ती, **यस्य** =भूपतेः शूद्रकस्य, **विमले**=स्वच्छे, **कृपाणधाराजले**=खड्गधारारूपे जले, **चि** =बहुकालं यावत्, **राजलक्ष्मीः**=राजश्रीः, **उवास**=वसतिं चक्रे ।

टिप्पणी–नाम्नैव-वासुदेवम्––आशय यह है कि राजा शूद्रक के नाम श्रवणमात्र से ही शत्रुओं के हृदय विदीर्ण हो जाते थे जबकि भगवान् विष्णु को भी अपने शत्रु हिरण्यकशिपु के वक्ष:स्थल को विदीर्ण करने के लिए नृसिंह का रूप धारण करना पड़ा था। राजा शूद्रक ने अपने एक विक्रम (पराक्रम) से समस्त लोक को आक्रान्त कर दिया था परन्तु भगवान् विष्णु ने वामनावतार धारण करते हुए तीन विक्रम (पग) में भुवनों को नापा था अतएव मानो राजा शूद्रक विष्णु का भी उपहास करता था। **निर्भिन्न**-निर्√भिद्+क्त। **आक्रान्तम्**=आ√क्रम+क्त। **जहास**=हस् धातु लिट् प्र० पु० ए० व०। यहाँ उपमानभूत वासुदेव से उपमेयभूत शूद्रक के उत्कर्ष के वर्णन के कारण **व्यतिरेक** अलंकार है तथा 'जहासेव वासुदेवम्' में **क्रियोत्प्रेक्षालंकार** है। दोनों का अङ्गाङ्गिभाव संकर। **अतिक्रान्त**=अति√क्रम्+क्त। **क्षालयन्ती**= क्षाल्+णिच्+शतृ+ङीप्। **उवास**–वस् लिट् प्र० पु० ए० व०। राजलक्ष्मी:= राज्ञ: लक्ष्मी=राजलक्ष्मी: (षष्ठी तत्पुरुष) लक्ष्मी–लक्ष्+ई, मुट् च=लक्ष्मी:, लक्ष्मी शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है–'लक्षयति पश्यति नीतिज्ञम् इति लक्ष्मी:'। यहाँ 'क्षालयन्तीव' में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार**, कृपाणधाराजले में **रूपक**, दोनों का अङ्गाङ्गिभाव संकर।'

यश्च मनसि धर्मेण, कोपे यमेन, प्रसादे धनदेन, प्रतापे वह्निना, भुजे भुवा, दृशि श्रिया, वाचि सरस्वत्या, मुखे शशिना, बले मरुता, प्रज्ञायां सुरगुरुणा, रूपे मनसिजेन, तेजसि सवित्रा च वसता सर्वदेवमयस्य प्रकटितविश्वरूपाकृतेरनुकरोति स्म भगवतो नारायणस्य

हिन्दी-अनुवाद–जो शूद्रक-मन में (निवास करते हुए) धर्म से, क्रोध में (निवास करते हुए) कृतान्त यम से, प्रसन्नता में (निवास करते हुए) धनद कुबेर से, प्रताप में (निवास करते हुए) अग्नि से, बाहुदण्ड में [निवास करते हुए] पृथ्वी से, नेत्र में [निवास करते हुए] लक्ष्मी से, वाणी में [निवास करते हुए] सरस्वती से, मुख में [निवास करते हुए] चन्द्रमा, से पराक्रम में [निवास-करते हुए] पवन से, प्रतिभा में [निवास करते हुए] देवगुरु बृहस्पति से, सौंदर्य

में [निवास करते हुए] कामदेव से तथा तेजस्विता में निवास करते हुए सूर्य से सर्वदेवात्मक तथा 'विश्वरूप' [विराट्] आकृति को प्रकट करने वाले भगवान् नारायण का अनुकरण करता था।

संस्कृत-व्याख्या–**यः**=शूद्रकः, **च**=चकारोऽत्रकिञ्चेत्यर्थे, **मनसि**=मानसे, **धर्मेण**=पुण्येन, **वसता**=निवासं कुर्वता, **कोपे**=क्रोधे, **यमेन**=धर्मराजेन, **यम**-राजवदपराधिनां दण्डदानात, **प्रसादे**=अनुग्रहे, **धनदेन**=कुबेरेण, अनुग्रहे संजाते कुबेरवत् धनप्रदानात्, **प्रतापे**=कोशदण्डजे तेजसि **वह्निना**=अग्निना, समस्तारातिकुलसंतापकत्वात्, **भुजे**=बाहौ, **भुवा**=पृथिव्या, राजभारधारणसमर्थत्वात्, **दृशि**=लोचने, **श्रिया**=लक्ष्म्या विलोकनमात्रेण श्रियाः समुत्पत्तेः, **वाचि**=वचने **सरस्वत्या**=गीर्वाण्या, "ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती" इत्यमरः निरन्तरकाव्यनिर्माणात्, **मुखे**=आनने, **शशिना**=चन्द्रमसा, "आनन लपनं मुखम्" इत्यमरः चन्द्रवत्सकलजनानन्दकत्वात्, **बले**=शक्तौ, **मरुता**=वायुना अतिबलशालित्वात्, **प्रज्ञायां**=मतौ, **सुरगुरुणा**=बृहस्पतिना, 'धीःप्रज्ञा शेमुषी मतिः', बृहस्पतिः सुराचार्यः' इत्यमरः, अनुपमबुद्धिशालित्वात्, **रूपे**=सौन्दर्ये, **मनसिजेन**=कामदेवेन, मानिनीमानापहरणात्, **तेजसि**=प्रतापे, **सवित्रा**=सूर्येण, शत्रुभिर्दुर्निरीक्ष्यत्वात्, 'तपनः सविता रविः' इत्यमरः, एवं **सर्वदेवमयस्य** =सर्वे च देवाश्च सर्वदेवास्तत्स्वरूपः सर्वदेवमयस्तस्य तथोक्तस्य, अत्र 'प्राचुर्यविकारः प्राधान्यादिषु' इत्यनेनादिपदात्स्वरूपार्थेऽपि मयट् प्रत्ययो भवति, **च**=तथा, **प्रकटितविश्वरूपाकृतेः**=प्रकटिना प्रकाशिता विश्वरूपा त्रिजगत्स्वरूपा आकृतिः स्वरूपं येन सः तस्य, **भगवतो नारायणस्य**=महाविष्णोः, **अनुकरोति** =तत्समानतां भजते।

टिप्पणी–यश्च···नारायणस्य' में 'यः' पद कर्ता है तथा 'अनुकरोति' क्रिया है। 'धर्मेण आदि समस्त तृतीयान्त पदों का 'वसता' के साथ सम्बन्ध है। यहाँ शूद्रक को भगवान् बिष्णु के समान बतलाया गया है। भगवान् विष्णु के समान विशेषताएँ है। अतएव उसे 'सर्वदेवमय' तथा 'विश्वरूपाकृति' विष्णु से उपमित किया गया है। **धनदेन**=धनं ददाति–धन+दा+क=धनस्तेन।

श्रिया–श्रयति हरिं या सा श्रीः, तया; श्रि + क्विप् तथा दीर्घ । 'लक्ष्मी-सरस्वतीधात्रिवर्गसंपद्विभूतिशोभासु । उपकरणवेश–रचनाविधानेषु च श्रीरिति प्रथिता ॥' **मनसिजेन**=मनसि जातः–मनसि+जन्+ड=मनसिजस्तेन । शशी–'शशी चन्द्रो हिमद्युतिः' इति शब्दार्णवः । '**सर्वदेवमय तथा विश्वरूपाकृति**' का प्रतिपादन गीता तथा श्रीमद्भागवत में किया गया है–"पश्यामि देवांस्तव देव ! देहे" तथा 'सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किञ्चभूतं प्रणमेदन्यः' । **नारायणस्य**=नृणां समूहो नारं तस्य अयनं गतिः=नारायणस्तस्य, यहाँ 'कृञः प्रतियत्ने' सूत्र से कर्म में षष्ठी हुई है । 'नारायणस्तु केशवे' इति हैमः । **अनुकरोति**=अनु उप सर्ग पूर्वक कृ धातु लट् परस्मैपद प्र० पु० ए० व० । यहाँ अतीत के अर्थ में लट् लकार का प्रयोग हुआ है । यहाँ उपमावाचक पद के अभाव में आर्थी उपमा है ।

यस्य च मदकलकरिकुम्भपीठपाटनमाचरता, लग्नस्थूलमुक्ताफलेन, दृढमुष्टिनिष्पीडननिष्ठ्यूतधाराजलबिन्दुदन्तुरेणेव कृपाणेनाकृष्यमाणा, सुभटोरःकपाटविघटितकवचसहस्रान्धकारमध्यवर्तिनी करिकरटगलितमदजलासारदुर्दिनास्वाभिसारिकेव समरनिशासु समीपं सकृदाजगाम राजलक्ष्मीः ।

हिन्दी-अनुवाद—मद (मस्ती) के कारण मनोज्ञभूत (अर्थात् रमणीयता युक्त) हाथियों के कुम्भस्थल का विदारण करने वाले जिस (शूद्रक) के पास-(कुम्भविदारण के कारण) लगे हुए बड़े-बड़े गजमौक्तिकों वाले तथा सुदृढ़ मुट्ठी से निष्पीड़ित किये (दबाये) जाने के कारण निर्गलित (तलवार की) धारा रूपी जल बिन्दुओं से उच्चावच प्रतीत होने वाले कृपाण से खींची जाती हुई तथा योद्धाओं के वक्षःस्थल रूपी कपाटों से विच्छिन्न किये गये सहस्रों कवच रूपी अन्धार के बीच रहने वाली (शत्रुपक्ष की) साम्राज्य लक्ष्मी, हाथियों के कपोलमण्डल से झरने वाले मदजल की वेगमयी वर्षा के कारण उत्पन्न दुर्दिनों वाली संग्राम-रात्रियों में, अभिसारिका की भाँति एक बार ही आ गयी ।

संस्कृत-व्याख्या—यस्य=राज्ञः शूद्रकस्य, च इत्यस्य किञ्चेत्यर्थः, **समीपं**

=अन्तिकम् **राजलक्ष्मीः**, **सकृत्**=एकवारम्, आजगाम इति वाक्यस्य सारांशः। **मदकलकरिकुम्भपीठपाटनमाचरता**=मदेन-मदजलेन कलानि मनोहराणि करिणां हस्तिनां यानि कुम्भपीटानि कुम्भप्रदेशाः तेषां पाटनं विदारणम् आचरता कुर्वता अतएव **लग्नस्थूलमुक्ताफलेन**=लग्नानि स्थूलानि विपुलानि मुक्ताफलानि गज-मौक्तानि यस्मिन् तेन तथोक्तेन, **दृढमुष्टिनिष्पीडननिष्ठ्यूतधाराजलबिन्दुदन्तुरेण** =दृढमुष्टिना यन्निष्पीडनं धारणं तेन निष्ठ्यूताः निस्सारिताः याः धाराः निशित-भागाः एव जलबिन्दवः जलकणपंक्तयः ताभिः दन्तुरेण विषमेण, **कृपाणेन**= खड्गेन, **आकृष्यमाणेव**=समन्तात् गृह्यमाणेव, **सुभटोरःकपाटविघटितकवच-सहस्रान्धकारमध्यवर्तिनी**=सुभटाः योद्धारः तेषाम् उरांसि वक्षांसि एव कपा-टानि तेभ्यो विघटितानि भग्नानि यानि कवचसहस्रसंख्यानि लौहकवचानि तानि एव श्यामवर्णतुल्यत्वात् अन्धकाराः तमांसि तेषां मध्यवर्तिनी अन्तःपातिनी राज लक्ष्मीः अरि-राजश्रीः, **करिकरटगलितमदजलासारदुर्दिनासु**=करिणां हस्तिनां करटानि गण्डस्थलानि तेभ्यो गलितं च्युतं यत् मदजलं दानवारि तस्य य आसारः तेन दुर्दिनं मेघाच्छन्नेऽह्नि अन्धकारयुक्तं दिनं यासु तथोक्तासु, "मेघच्छन्नेऽह्नि दुर्दिनम्' इत्यमरः, **समरनिशासु**=समराः युद्धानि निशा रात्रयः इव तासु, **अभिसारिका**=गाढेऽन्धकारे दत्तसंकेता नायिका एव, समरनिशासु=युद्धरात्रिषु, समीपं सकृद्, **राजलक्ष्मीः**=राजश्रीः, आजगाम= आगतवती।

टिप्पणी—'**यस्य समीपं सकृदाजगाम राजलक्ष्मीः**'=जिस शूद्रक के पास लक्ष्मी एक ही बार आ गयी थी, यह मुख्यवाक्य है। **करिकुम्भः**=करिणः कुम्भः (प० त०)—हाथी का कुम्भस्थल। हाथी के सिर पर अवस्थित दो मांस-पिण्ड कुम्भ कहलाते है। पाटनम्=पट्+णिच्+ल्युट्। निष्पीडन=निस्√ +पीड्+ल्युट्=निचोड़ना। निष्ठ्यूतः=नि √ष्ठिव्+क्त, ऊट्=निकाला हुआ। दन्तुरः=दन्त+उरच्=ऊँचे दाँतों वाला। **अभिसारिका**—जो नायिका काम के वशीभूत हो नायक से अभिसार करने के लिए जाए अथवा संकेत स्थान पर नायक को बुलाये उसे अभिसारिका नायिका कहते हैं। साहित्यदर्पण में—"अभिसारयते कान्त या मन्मथवशंवदा। स्वयं वाऽभिसरत्येषा धीरैरुक्ताभिसारिका" ॥ "**आकृष्यमाणेव**" पद में

क्रियोत्प्रेक्षालंकार है। "**उरः–कपाट,कवच–सहस्र**" **में रूपक** और **अभिसारिकेव में उपमालङ्कार** है । इन सभी का परस्पर अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर है ।

यस्य च हृदयस्थितानपि पतीन् दिधक्षुरिव प्रतापानलो वियोगिनीनामपि रिपुसुन्दरीणामन्तर्जनितदाहो दिवानिशं जज्वाल ।

हिन्दी-अनुवाद—(पतिविनाश के कारण पहले से ही) विरहिणी शत्रु-वनिताओं के अन्तःकरण में दाह उत्पन्न करने वाली जिस (शूद्रक) की प्रतापाग्नि मानों हृदय में निवास करते हुए भी (अर्थात् न जला सकने योग्य) पतियों को भस्म कर देने की इच्छा से दिन-रात जलती रहती थी ।

संस्कृत-व्याख्या—**यस्य**=भूपतेः शूद्रकस्य, **प्रतापानलः**=प्रताप· कोषदण्डजं तेजः तदेव अनलो वह्निः, **वियोगिनामपि**=विरहणीनामपि, **रिपुसुन्दरीणाम्**=वैरिवनितानाम्,**अन्तर्जनितदाहः**=अन्तः=मनसि जनित उत्पादितः दाहो ज्वलनं येन सः तथोक्तः, **हृदयस्थितानपि**=अनवरतध्यानेन अन्तर्वर्तिनोऽपि, **पतीन्**=भर्तॄन्, **दिधक्षुः**=दग्धुमिच्छुः, **इव**, **दिवानिशं**=रात्रिन्दिवम्, **जज्वाल**=प्रदीप्तोऽभूत् ।

टिप्पणी—यहाँ चकार "किञ्च" इस अर्थ में है । राजा शूद्रक ने युद्ध में शत्रुओं को समाप्त कर डाला था । अब मानो उसका प्रतापानल इसीलिए अत्यधिक प्रदीप्त हो रहा था कि वह शत्रु-स्त्रियों के हृदय में विद्यमान शत्रुओं को भी जला डाले । **दिधक्षुः**=दह+सन्+उ,-दग्धुमिक्षुः 'सनाशंसभिक्ष उः' से 'उ' प्रत्यय । **दाहः**–दह+घञ् । **जज्वाल**=ज्वल्+ धातु लिट् प्र० पु० ए० व० । "**प्रतापानलः**" में केवल निरङ्ग **रूपक** अलङ्कार और "**दिधक्षुरिव**" में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** इन दोनों का परस्पर अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर है ।

यस्मिंश्च राजनि जितजगति परिपालयति महीं चित्रकर्मसु वर्णसङ्कराः, रतेषु केशग्रहाः, काव्येषु दृढबन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ताः, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु मदविकाराः, चापेषु गुणच्छेदा, गवाक्षेषु

जालमार्गाः, शशिकृपाणकवचेषु कलङ्काः, रतिकलहेषु दूतप्रेषणानि, सार्यक्षेषु शून्यगृहा न प्रजानामासन् ।

हिन्दी-अनुवाद–विश्वजयी जिस नरेश (शूद्रक) के पृथ्वीपालन करते समय अर्थात् आलेखन क्रियाओं में (रक्तपीतादि) वर्णों का सम्मिश्रण होता था, कामक्रीडाओं में केश खीचा जाता था, काव्यो में दृढ़बन्ध अर्थात् क्लिष्ट पदरचनाएँ होती थीं, सिद्धान्तों में चिन्तन होता था, स्वप्नदशाओं में वियोग होते थे, आतपत्रो (छत्रो) में सुवर्णघण्टियाँ होती थीं, पताकाओं में फरफराहट होती थी, गीतों में (बसन्त, धमाश्री प्रभृति शास्त्रीय एवं देशीय) रागों के प्रयोग होते थे, हाथियों में मदविकार होते थे, धनुषों में गुणच्छेद अर्थात् डोरियों का टूटना होता था, वातायनों में जालियाँ होती थीं, चन्द्रमा, कृपाण तथा कवचों में कलंक (दाग) होते थे, रतिक्रीडाघटित मनमुटावों में सन्देशहरों के गमन होते थे, खेलने में योग्य पाशों अर्थात् शतरञ्ज प्रभृति द्यूतक्रीडाओं में निर्जन स्थान होते थे (किन्तु) प्रजाओं में ये सब नहीं थे ।[1]

---

१. प्रस्तुत अनुच्छेद में प्रत्येक वाक्य का एक-एक निषेधपक्ष भी है और प्रत्येक का सम्बन्ध प्रजा से है । क्रमशः उन्हें इस प्रकार समझना चाहिए-प्रजाओ में 'वर्णसङ्कर' अर्थात् प्रतिलोमविधि (जैसे ब्राह्मण की कन्या का वैश्य शूद्र या क्षत्रिय के साथ विवाह होना) से सन्तानोत्पत्ति नहीं थीं, (प्रजाओं में) कलह आदि में केश नहीं खींचे जाते थे, (प्रजाओं में) चिन्ता विपत्ति नहीं थी, [प्रजाओं में] प्राणियों में असमय वियोग अर्थात् मृत्यु नहीं थी, [प्रजाओं में] दण्ड के रूप में स्वर्ण नहीं लिया जाता था, [प्रजाओं में] भयजनित कम्पन नहीं था, [प्रजाओं में] रागद्वेषादि का विस्तार नहीं था, [प्रजाओं में] गर्व की भावना नहीं थी, [प्रजाओं में] सद्गुणों का लोप नहीं था, [प्रजाओं में] षड्यन्त्र का भाव नहीं था, [प्रजाओं में] चारित्रिक पतन (कलङ्क) नहीं था, (प्रजाओं में] युद्धादि के निमित्त दूताचार नहीं था, [प्रजाओं में] निस्सन्ततिवश गृह शून्य नहीं थे ।

संस्कृत-व्याख्या-अत्र कविः शूद्रकस्य आदर्शशासनं वर्णयति-**यस्मिन् राजनि** =महीपतौ शूद्रके, **जितजगति**=जितं जगत् येन तस्मिन् निर्जितसंसारे, **महीं** =भुवम्, **पालयति**=पालनं कुर्वति सति, अधोविन्यस्ताः विषयाः एतेषु स्थलेषु विद्यमाना अभूव न तु पुनः प्रजानामासन् इत्येतेन सर्वत्र सम्बन्धः । **चित्रकर्मसु** =आलेख्यनिर्माणेषु, **वर्णानां**=नीलपीतादीनं **सङ्कराः**=परस्परसम्मिश्रणम्,न तु प्रजानां सङ्कराः ब्राह्मणक्षत्रियादीनां वर्णसङ्कराः आसन्,**रतेषु**=मैथुनेषु,**केशग्रहाः**=कचाकर्षणानि, न तु कलहेषु केशाकर्षणम् आसीत्, **काव्येषु**=कविकर्मसु, **दृढबन्धाः**=प्रगाढपदरचनाः, न तु कारागारेषु रज्ज्वादिना दृढबन्धा अपराधाभावात् । **शास्त्रेषु**=विविधशास्त्रविषयेषु, **चिन्ता**=चिन्तनम्, न तु सर्वसाधनानामभावात् प्रजासु कापि चिन्ता आसीत् । **स्वप्नेषु**=स्वप्नदशायाम्, **विप्रलम्भः**=दृष्टपदार्थानां झटिति तिरोधानात् वञ्चनाः, नु त अन्यकालेषु वियोगस्य अजायमानत्वात्, **छत्रेषु**=आतपत्रेषु, **कनकदण्डाः**=सुवर्णनिर्मिताः दण्डाः तदा आसन्, न तु जनेषु अपराधाभावात् दण्डरूपेण सुवर्णग्रहणम् आसीत् **ध्वजेषु**=पताकासु, **प्रकम्पाः**=प्रकर्षेण चाञ्चल्यानि, न तु जनचित्तेषु भयाभावात्,**गीतेषु**=गानेषु, **रागविलसितानि**=रागाः=वसन्तादिरागाःशास्त्रीया धनाश्रीप्रभृतयोः देशीयाश्च तेषां विलसितानि व्यवहाराः, न तु जनेषु रागाः मात्सर्यादयः तेषाँ विलसितानि चेष्टितानि हननादिरूपाणि तादृक्-रागद्वेषाभावात्,"रागः क्लेशादिके रक्ते मात्सर्ये लोहितादिषु" इति त्रिकाण्डकोषः, **करिषु** =हस्तिषु, **मदविकाराः**=मदजलोत्पन्नाः विकृतयः, न तु जनेषु मदविकाराः अहंकारजन्याः विकृतयः दोषाः आसन्, **चापेषु**=धनुषु, **गुणच्छेदाः**=गुणस्य मौर्वीरूपस्य रज्जोः कर्तनम्, न तु जनेषु गुणानां दयादाक्षिण्यादीनां छेदाः विलोपाः, **गवाक्षेषु**=वातायनेषु, **जालमार्गाः**=वायोः प्रवेशाय निर्मिताः जालिकाः, जलेषु जालमार्गः कूटकल्पनापद्धतयः न आसन्, **शशिकृपाणकवचेषु** =शशी चन्द्रमाः कृपाणम् असिः कवचं लौहवर्म च एतेषा द्वन्द्वः शशि-कृपाण-कवचाः तेषु **कलङ्काः**=लाञ्छनानि आसन् शशिनः कलङ्को मृगलाञ्छनरूपः स्वभाविकः, कृपाणकवचयोस्तु अधिकादिवसपर्यन्तं व्यवहारभावे मालिन्यरूपी

कलङ्कः, जनेषु कुलमालिन्यादिहेतवो दुराचरणादिदूषितव्यवहाराः न, सदाचार शीलत्वात्, **रतिकलहेषु**=कामकेलिविनोदेषु, **दूतप्रेषणानि**=सन्देशहरसम्प्रेषणानि, न तु युद्धव्यापारेषु तदभावात् कुत्रचिदपि दूतप्रेषणस्य निष्प्रयोजनत्वात्, **सार्यक्षेषु**=सारयः खेलिन्यः अक्षाः,पाशकाः,तेषु गुटिकाक्षेत्रेष्वित्यर्थः, **शून्यगृहाः** =गुटिकारहितकोष्ठकानि, न तु ग्रामेषु जनशून्याः गृहाः, सर्वविधोत्पीडनाभावात् ।

टिप्पणी-वर्णसङ्कराः=वर्णानां सङ्करः, सम्+कृ+अप्=सङ्करः; (क) (चित्र निर्माण में) विभिन्न रंगों का सम्मिश्रण । (ख) ब्राह्मणक्षत्रिय आदि चार वर्णों में से किसी का अन्य के साथ सम्मिश्रण । **दृढबन्धाः**= (क) समासयुक्त पदों की रचना (ख) दृढ़बन्ध (रस्सी आदि से) । **कनकदण्डाः**=(क) सोने का बेंत, (ख) दण्ड के रूप में सोना ग्रहण करना । **मदविकाराः**=(क) हाथी के पक्ष में-मदजल के कारण विकार आना । (ख) दूसरे पक्ष में–अहंकार से उत्पन्न होने वाले विकार । **गुणच्छेदाः**= (क) धनुष पक्ष में प्रत्यंचा की डोरी कट जाना, (ख) दूसरे पक्ष में-शौर्यादि गुणों का खंडन हो जाना । **सार्यक्षेषु** =सारि अर्थात् शतरञ्ज आदि में प्रयुक्त होने वाली गोट का स्थान । **शून्यगृहाः** =(क) गोट आदि के साथ रिक्त खाने, (ख) दूसरे पक्ष में–निर्जन भवन । यहाँ वर्णसङ्कराः से लेकर शून्यगृहाः तक **श्लेषानुप्राणित** आर्थीपरिसंख्या अलङ्कार है । दोनों के परस्पर निरपेक्ष होने से संसृष्टि हो जायेगी ।

यस्य च परलोकाद्भयम्, अन्तःपुरिकाकुन्तलेषु भङ्गः, नूपरेषु मुखरता, विवाहेषु करग्रहणम्, अनवरतमखाग्निधूमेनाश्रुपातस्तुरंगेषु कशाभिघातो मकरध्वजे चापध्वनिरभूत् ।

हिन्दी-अनुवाद-जिसे (राजा शूद्रक को) परलोक अर्थात् जन्मान्तर से भय था, अन्तःपुर रमणियों के केशपाशों में घुँघरालापन था, नूपुरों अर्थात् पायलों में मुखरता (अनुरणन या झङ्कार) थी, विवाहों में पाणिग्रहण होता था,

निरन्तर प्रवृत्त यज्ञाग्नि के धून से अश्रुपात होता था, अश्व पर कोड़े का प्रहार होता था तथा कामदेव (के सन्दर्भ) में धनुष की टंकार होती थी।

संस्कृत-व्याख्या-चकारोऽत्र=किञ्चार्थे, **यस्य**=महीपतेः शूद्रकस्य, **परलोकात्**=जन्मान्तरादेव, **भयं**=भीतिः न तु शत्रुजनात् भयम्, अभूत्, **अन्तः-पुरिकाकुन्तलेषु**=अन्तःपुरे भवः अन्तः पुरिकाः तासाम् अन्तःपुरवासिना कामिनीनां, **कुन्तलेषु**=अलकेषु, **भङ्गः**=कुटिलता, न तु युद्धेषु भङ्गः पराजयः, **नूपुरेषु**=हंसकेषु, **मुखरता**=शब्दायमानता, न तु लोकेषु मुखरता वाचालता, **विवाहेषु**=उपयमनेषु, **कर-ग्रहणं**= पाणिग्रहणं न तु प्रजानां करेण (टैक्सेन) दुःखदानम्, **अनवरतमखाग्निधूमेन**=अनवरतं निरन्तरं मखाग्निधूमेन क्रतुवह्निधूमेन, **अश्रुपातः**= नेत्रजलनिःसरणम्, न तु शोकादिनाऽश्रुपातः, **तुरंगेषु**= अश्वेषु, **कशाभिघातः**=दण्डप्रहारः नान्यत्राऽपराधाभावात्, **मकरध्वजे**=कामदेवे, **चापध्वनिः**=चापस्य धनुषो ध्वनिःटंकारः, न तु सैनिकेषु संग्रामाभावात् ।

टिप्पणी–"परलोकाद् भयम्" "भीत्रार्थानां भयहेतुः" से पञ्चमी । **कुन्तल**=बाल, 'चिकुरःकुन्तलो बालः कचः केशः शिरोरुहः' इत्यमरः । **भङ्ग**=(क) बालों का घुंघरालापन (ख) दूसरे पक्ष में (स्वभाव की) कुटिलता । मुखरता–मुखं मुखव्यापारं कथनं राति, मुख=रा+क=मुखर, मुखर+तल् । **करग्रहणम्**=(क) विवाह में कर ग्रहण करना (ख) कर अर्थात् टैक्स लेना, यहाँ भी पहले की ही तरह आर्थी परिसंख्या अलंकार है। "मकरध्वजे चापध्वनिः" इस अंश में असम्बन्ध में सम्बन्ध रूप अतिशयोक्ति अलंकार है। दोनों के परस्पर निरपेक्ष होने से संसृष्टि हो जायेगी।

तस्य राज्ञः कलिकालभयपुञ्जीभूतकृतयुगानुकारिणी त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा मज्जन्मालवविलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरितोर्मिमालया जलावगाहनावतारितजयकुञ्जरकुम्भसिन्दूरसन्ध्यायमानसलिलयोन्मदकलहंसकुलकोलाहलमुखरितकूलया वेत्रवत्या परिगता विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत् ।

हिन्दी-अनुवाद–कलिकालजनित सत्रास के कारण संकुचित हुए कृतयुग का अनुकरण करने वाली, आकाश-पाताल एवं पृथ्वी लोकत्रय की उत्पत्ति-स्थली विशाल प्रतीत होने वाली, स्नान करती हुई मालव प्रदेश अवन्ती जन-पद की रमणियों के पयोधरतटों के आघातवश छिन्न-भिन्न हुई तरङ्गमालाओं वाली, जलावगाहन [जलविहार अथवा स्नान] के लिए उतारे गये शत्रुजयी गजराजों के शिर:पिण्ड पर लगे हुए सिन्दूर के कारण सान्ध्यवेला के समान लाल जल वाली तथा मतवाले राजहंस मण्डल के कोलाहल से शब्दाय-मान पुलिन प्रदेशवाली वेत्रवती [नदी] से परिवेष्टित-विदिशा नाम वाली नगरी उस राजा (शूद्रक) की राजधानी थी ।

संस्कृत-व्याख्या-तस्य च=महीपते: शूद्रकस्य, **विदिशाभिधाना**=विदिशा अभिधानं नाम यस्या: सा विदिशाभिधाना राजधान्यासीदिति दूरपदेनान्वय:, तामेव विशेषयति–**कलिकालभयपुञ्जीभूतकृतयुगानुकारिणी**=कलिकालात् कलियुगात् यद्भयं भीति: तस्मात् पुञ्जीभूतं राशिभूतं यत् कृतयुग तद् अनुकर्तुं शीलं यस्या: सा तादृशी:, **त्रिभुवनप्रसवभूमि**:=त्रयाणां भुवनानां समाहार: त्रिभुवनम्, तस्य प्रसवभूमि: जन्मस्थलम्, **इव**= उत्प्रेक्षायाम्, **विस्तीर्णा**=विस्तृता, **मज्जन्मालवविलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरितोर्मिमा-लया**=मज्जन्त्या:स्नानं कुर्वन्त्य: मालवविलासिन्यो मालवदेशीयसुन्दर्य:तासां कुचतटानि स्तनस्थलानि तेषाम् आस्फालनेन आघातेन जर्जरिता: चूर्णीकृता ऊर्मिमाला: तरंगपङ्क्तयो यस्या: सा तया, "भङ्गस्तरङ्ग ऊर्मिर्वा स्त्रियां वीचि:" इत्यमर:, "माला तु पङ्क्तौ पुष्पादिदामनि" इति हैम:, एतेन कचानाम् अतिकर्कशत्वं व्यंजयति । **जलावगाहनावतारितजयकुञ्जरकुम्भ-सिन्दूरसन्ध्यायमानसलिलया**=जलं सलिलं तत्र अवगाहनाय अवलोडनाय अवतरिता: रक्षकै: प्रवेशिता: ये जयकुञ्जरा: शत्रुदलनसमर्थगजा: तेषां कुम्भा: शिर:पिण्डा: तेषु शोभार्थमर्पितं यत् सिन्दूरं नानासम्भवं तेन साध्यायमानं सन्ध्याकालवदाचरत् सलिलं जलं यस्या: तया, 'मतङ्गजो गजो नाग: कुञ्जरो वारण: करी" इत्यमर: "कुम्भौ तु पिण्डौ शिरस:" "सिन्दूरं नागसम्भवम्"–इति चामर: । "सिन्दूरं तद्भेदे स्यात् सिन्दूरं रक्तचूर्णके"इति

मेदिनी । सन्ध्यायमानम् इत्यत्र 'कर्तुः क्यङ् सलोपश्च' इत्यनेन 'क्यङ् प्रत्ययः' । **उन्मदकलहंसकुलकोलाहलमुखरितकूलया**=उन्मदाः प्रमत्ताः ये कलहंसाः कादम्बाः तेषां यानि कुलानि तेषां कोलाहलेन मुखरितं शब्दायमानीकृतं कूलं तटं यस्याः तया तथोक्तया, **वेत्रवत्या**=तदाख्यया नद्या, **परिगता**=परिवेष्टिता **विदिशाभिधाना नगरी**=राजधानी आसीत् ।

टिप्पणी-"**तस्य च राज्ञः विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत्**" अर्थात् उस राजा की विदिशा नाम की नगरी राजधानी थी, यह प्रमुख वाक्य है । यहाँ प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिङ्ग पद राजधानी के विशेषण हैं । मज्जन से लेकर कूलया तक ये तीनों पद तृतीयान्त स्त्रीलिङ्ग वेत्रवत्या के विशेषण हैं । **पुञ्जीभूत**=अभूततद्भाव में 'च्वि' प्रत्यय है । **त्रिभुवनम्**=त्रयाणां भुवनानां समाहारः (द्विगु समास) । '**कलि-अनुकारिणी**'-इससे यह अत्यधिक पुण्य स्थान है यह व्यञ्जित होता है, **विलासिनी**=सुन्दर रमणी । **मुखरीकृत**=गुञ्जायमान, । ध्वनियुक्त किया हुआ । **अभिधान**=नामवाली अभि + धा + ल्युट्=अभिधानम् । 'आख्याह्वेऽभिधानं च नामधेयं च नाम च' इत्यमरः । 'पुञ्जीभूतत्वं' में **उत्प्रेक्षा अलंकार** है । आर्थी **उपमालङ्कार** है त्रिभुवन आदि विशेषण में **द्रव्योत्प्रेक्षालङ्कार** है, कुचतट आस्फालन के द्वारा तरङ्गमाला का जर्जरितत्व के असम्बन्ध होने पर भी उसके सम्बन्ध के प्रतिपादन से **अतिशयोक्ति** अलंकार है और सन्ध्यायमान यहाँ **व्यंग्योपमा** अलंकार है । इन सभी की परस्पर निरपेक्षभाव से स्थिति होने के कारण तिलतण्डुल के समान **संसृष्टि** है ।

स तस्याञ्च त्रिजिताशेषभुवनमण्डलतया विगतराज्यचिन्ताभार निर्वृत्तः, द्वीपान्तरागतानेकभूमिपालमौलिमालालालितचरणयुगलो वलयमिव लीलया भुजेन भुवनभारमुद्वहन्, अमरगुरुमपि प्रज्ञयोपहसद्भिरनेकुलक्रमागतैरसकृदालोचितनीतिशास्त्रनिर्मलमनोभिरलुब्धैः स्निग्धैः प्रबुद्धैश्चामात्यैः परिवृतः समानवयोविद्यालङ्कारैरनेकमूर्धाभिषिक्तपार्थिवकुलोदगतैरखिलकलाकलापालोचनकठोरमतिभि-

रतिप्रगल्भैःकाल विद्भिःप्रेमानुरक्तहृदयैरग्राम्यपरिहासकुशलैरिङ्गिताकारवेदिभिः काव्य नाटकाख्यानकाख्यायिकालेख्यव्याख्यानादिक्रियानिपुणैरतिकठिनपीवरस्कन्धोरुबाहुभिरसकृदवदलितसमदरिपुगजघटा - पीठबन्धैः, केसरिकिशोरकैरिव विक्रमैकरसैरपि विनयव्यवहारिभिरात्मनः प्रतिबिम्बैरिव राजपुत्रैः सह रममाणः प्रथमे वयसि सुखमतिचिरमुवास ।

हिन्दी-अनुवाद—समस्त भूमण्डल को स्वायत्तीकृत (अधीन) कर लेने के कारण राज्यसम्बन्धी चिन्ताभार के दूर हो जाने से प्रसन्नचित्त अन्य द्वीपों से आये हुए अनेक नरपतियों के शिरोमाल्यों से दुलराये जाते हुए चरणयुगल वाला, स्वल्प प्रयासमात्र से कङ्कण की भांति पृथ्वी के भार को (वाम) भुजदण्ड से वहन करता हुआ (अपने) बुद्धिबल से देवगुरु बृहस्पति की भी हँसी उड़ाने वाले, वंशपरम्परया चले आये हुए, अनेक, बारम्बार नीति विद्या का परिशीलन करने के कारण विमल चित्तवृत्ति वाले, अलोलुप, वत्सल एवं पण्डित आमात्यों (मन्त्रियों) से परिवेष्टित, समान अवस्था, विद्या एवं आभूषणों वाले, सहस्र संख्यक अभिषिक्त (संस्थापित) किये हुए भूपतियों के वंश से उत्पन्न होने वाले, सम्पूर्ण कलानिकाय की मीमांसा करने के कारण परिणत (दृढ़) बुद्धिवाले, अत्यन्त प्रभावशाली, अवसर को जाननेवाले, प्रीति के कारण (शूद्रक में) आसक्त मनवाले, नागरजनोचित [शिष्ट] प्रमोदवार्ता में निपुण, सङ्केतों तथा आकृतियों को समझनेवाले, काव्य-नाटक-आख्यान-आख्यायिका-आलेख्य [चित्रकला] तथा व्याख्यान प्रभृति कार्यों में दक्ष, अत्यन्त कठोर एवं परिपुष्ट कन्धों जाँघों एवं भुजाओं वाले, मतवाले शत्रुपक्षीय गजसमूहों की अम्बारियों [आसनों] को अनेकशः मर्दित करनेवाले, (अल्पवय) सिंहशावकों की भाँति पराक्रममात्र में अद्वितीय (सर्वाधिक) आनन्द (प्राप्त करने) वाले होकर भी विनयपूर्वक व्यवहार करने वाले, अपने प्रतिबिम्ब सदृश राजकुमारों के साथ क्रीडा करता हुआ वह नरेश शूद्रक युवावस्था में बहुत दिनों तक सुखपूर्वक उस नगरी (विदिशा) में रहा।

संस्कृतव्याख्या-सः राजा शूद्रकः तस्यां—विदिशानगर्यां सुखम् अतिचिरम्

उवास इति दूरपदेनान्वयः । **विजिताशेषभुवनमण्डलतया**=विजितानि स्वाधीनीकृतानि अशेषाणि सकलानि भुवनमण्डलानि चतुर्दशभुवनानि येन तस्य भावः तत्ता तया, **विगतराज्यचिन्ताभारः** तेन निर्वृतः=सुनिश्चितः, **द्वीपान्तरागतानेकभूमिपालमौलिमालालालितचरणयुगलः**=अन्ये द्वीपा: द्वीपान्तराः, तेभ्य आगताः समायाताः ये अनेके भूमिपालाः राजानः तेषां मौलयो मुकुटानि शिरांसि वा तेषां मालाः स्रजः श्रेणयो वा ताभिर्लालितं सादरं संस्पृष्टं चरणयुगलं पादयुग्मं यस्य सः, **वलयमिव**=कटकमिव । **लीलया**=अनायासेन । **भुजेन**=बाहुना, **भुवनभारं**=भुवनस्य जगतः भारं विविधं, **उद्वहन्**=धारयन् **प्रज्ञया**=धिया । **अमरगुरुमपि**=बृहस्पतिमपि, **उपहसद्भिः**=उपहासं कुर्वद्भिः, **अनेककुलक्रमागतैः**=अनेकैः कुलपरम्परया प्राप्तैः, **असकृदालोचितनीतिशास्त्रनिर्मलमनोभिः**=असकृद् अनेकवारम् आलोचितैः अनुशीलितैः नीतिशास्त्रैः नृपोचिताचारबोधकैः ग्रन्थैः निर्मलानि स्वच्छीकृतानि मनांसि येषां तैः **अलुब्धैः** लोभरहितैः, **स्निग्धैः**=वत्सलैः, "स्निग्धस्तु वत्सलः" इत्यमरः, **प्रबुद्धैः**=विद्वद्भिः, **अमात्यैः**=मन्त्रिभिः अमा सह समीपे "अमा सह समीपे च" इत्यमरः वर्तन्ते इति अमात्याः तैः । **समानवयोविद्यालंकारैः**=समानानि सदृशानि वयोऽवस्थाविशेषः विद्याः चतुर्दशविद्याः अलंकाराः आभूषणानि च येषां तैः, **अनेकमूर्धाभिषिक्तपार्थिवकुलोद्गतैः**=अनेके बहवो च मूर्धाभिषिक्ताः कृतराज्याभिषेकाः पार्थिवाः राजनः तेषां कुलेभ्यः वंशेभ्यः उद्गतैः समुत्पन्नैः, **अखिलकलाकलापालोचनकठोरमतिभिः**=अखिलानां समग्राणां कलानां नृत्यगीतादीनां कलापस्य समुदायस्य आलोचनेन विमर्शेन कठोराः परिपक्वाः मतयो धियो येषां तैः, **अतिप्रगल्भैः**=अतिप्रतिभान्वितैः, "प्रगल्भः प्रतिभान्वितः" इत्यमरः,**कालविद्भिः**=अवसरज्ञैः,**प्रेमानुरक्तहृदयैः**=प्रेम्णा अनुरक्तम् आसक्तं हृदयं येषां तैः, **अग्राम्यपरिहासकुशलैः**=अग्राम्यो नागरिको यः परिहासो नर्मवचोविलासः तस्मिन् कुशलैः चतुरैः । **इंगिताकारवेदिभिः**=इंगितं चेष्टितम् आकारोऽवयवसंस्थान तौ विदन्ति जानन्ति इत्येवं शीलास्तैः,

काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकालेख्यव्याख्यानादिक्रियानिपुणैः=काव्यं रसात्मकं वाक्यं, नाटकं रूपकविशेषः अवस्थानुकृतिरिति यावत्, आख्यानकानि चूर्णकानि आख्यायिका गद्यकाव्यविशेषः, आलेख्यानि चित्रनिर्माणानि, व्याख्यानानि भाषणानि इत्यादिका याः क्रियाः कार्याणि तासु निपुणैः निष्णातैः, "निष्णातो निपुणो दक्षः" इत्यमरः। **अतिकठिनपीवरस्कन्धोरुबाहुभिः**=अतिकठिनाः अतिकठोराः पीवराः पुष्टाश्च स्कन्धा अंसाः उरव जानुपरिभागाः बाहवश्च येषां तथाविधैः **असकृदवदलितसमदरिपुगजघटापीठबन्धैः**=असकृद् मुहुर्मुहुः अवदलिताः विमर्दिताः समदाः मदयुक्ताः याः रिपुगजघटाः शत्रुकरिसमूहाः ता एव पीठबन्धाः पृष्ठबद्धानि आसनानि यैः तैः । **केसरिकिशोरकैः**=केसरिणां किशोरकैः शिशुभिः, **इव**=उपमायाम्, **विक्रमैकरसैरपि**=विक्रमे पराक्रमे एकःअनन्यः रसः येषा तैः, तथाविधैरपि, **विनयव्यवहारिभिः**=विनयेन सारल्येन व्यवहारो वृत्तिरस्ति, येषां तैः एतेन सामर्थ्ये सत्यपि विनयशीलता सूचिता । **आत्मनः**= स्वस्य, **प्रतिबिम्बैरिव**=प्रतिकृतिभिरिव, **राजपुत्रैः**=राजकुमारैः, **सह**= साकम्, **रममाणः**=रमणं कुर्वाणः, **प्रथमे वयसि**=यौवनारम्भे, **सुखमतिचिरमुवास**=सानन्दं बहुकालपर्य्यन्तं वासमकरोत् ।

टिप्पणी–'**स तस्यां सुखमतिचिरमुवास**' अर्थात वह राजा उस नगरी में बहुत दिनों तक सुखपूर्वक निवास करता रहा । यह मुख्य वाक्य है । **द्वीप**= द्वीप सात हैं–जम्बु, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौञ्च, शाक, पुष्कर । ये सातों द्वीप लवण, इक्ष, सुर, सर्पि, दधि दुग्ध एवं जल इन सात समुद्रों से व्याप्त हैं। **मौलि**–[क] शिर [ख] मुकुट । **माला**–[क] रत्नमालाएँ, [ख] पक्तियाँ । **वलय**=कंगन । **उद्वहन्**=उत्√वह+ शतृ=धारण करता हुआ । **उपहसद्भिः**=उप√हस+शतृ, तृ०ब०व० । **अमात्य**-"**देशकालप्रविज्ञाता ह्यमात्य इति कथ्यते**" । अर्थात् देश और काल के ज्ञाता को अमात्य कहते हैं। **काव्यं**-कवेर्भावः=काव्यम्, कवि+ष्यञ् । "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्"–साहित्यदर्पण **चूर्णक**–"अनाविद्धललितं पदं चूर्णकम्" आचार्य वामन । **स्निग्धैः**– स्निह्

+क्त, तृ० ब० व० । आलेख्यम्–आ+लिख्+ण्यत्, पदरचना । पीवरः–मोटा, पुष्ट । अवदलित–अव+दल्+क्त, मर्दित । राजपुत्रैः सह–'सहयुक्तेऽप्रधाने' से तृतीया । रममाणः–रम्+शानच्, रमण करता हुआ । उवास-वस् धातु लिट् प्र० पु०ए०व० ।' वलयमिव में उपमालंकार । 'अमरगुरुमपि प्रज्ञयोपहसद्भिः' में आर्थी उपमा । 'रिपुगजघटापीठबन्धैः' में रूपक 'केसरिकिशोरकैः' तथा प्रतिबिम्बेमें वाच्योपमालंकार । इनकी निरपेक्ष स्थिति होने से संसृष्टि है ।

तस्य चातिविजिगीषुतया महासत्त्वतया च तृणमिव लघुवृत्ति स्त्रैणमाकलयतः प्रथमे वयसि वर्तमानस्यापि रूपवतोऽपि सन्तानार्थिभिरमात्यैरपेक्षितस्यापि सुरतसुखस्योपरि द्वेष इवासीत् ।

हिन्दी अनुवाद–अतिशय विजय कामना तथा शौर्याधिक्य के कारण युवावस्था में विद्यमान होने पर भी, रूपवान् होने पर भी (उत्तराधिकारी) सन्तति चाहने वाले अमात्यों द्वारा वाञ्छित होने पर भी ओछी प्रकृति वाले स्त्रीसमूह को तिनके की भाँति गिनने वाले उस राजा (शूद्रक) का सौन्दर्य तथा हावभाव से (कामप्रिया) रति के विलासों का उपहास करने वाली, लावण्यमयी, विनम्रता से भरी, सद्वंशोत्पन्न एवं हृदय आकृष्ट कर लेने वाली अन्तःपुरनिवासिनी रमणियों के रहते हुए भी मैथुनजन्य सुख के प्रति मानो द्वेषभाव था ।

संस्कृत-व्याख्या-तस्य च= राज्ञः शूद्रकस्य, अतिविजिगीषुतया=अतिशयेन विजेतुमिच्छुः विजिगीषुः तस्य भावस्तत्ता तया अत्यधिकं विजयेच्छुकतया । महासत्त्वतया= महत्सत्त्वमतिशायिधैर्यं यस्य यः तस्य भावस्तत्ता तया च । तृणमिव=घासमिव, लघुवृत्ति=लघ्वी निःसारा वृत्तिः व्यवहारो यस्य तत्, स्त्रैणं=स्त्रीसमूहम्, आकलयतः=गणयतः, प्रथमे वयसि=युवावस्थायाम् वर्त्तमानस्यापि=स्थितस्यापि,रूपवतोऽपि=परमसौन्दर्यवतोऽपिसन्तानार्थिभिः =सन्तानमपत्यं तदेवार्थः प्रयोजनमस्ति येषां तैः, अमात्यैः=मन्त्रिभिः, अपेक्षितस्यापि=वाञ्छितस्यापि, सुरतसुखस्य=रतिक्रियानन्दस्य, उपरि द्वेषः,

= मत्सरः, इवासीत् ।

टिप्पणी-विजिगीषुः-विजेतुमिच्छुः–वि√जि+सन्+उ, विजय की इच्छा रखने वाला। 'सनाशंसभिक्ष उः' से 'उ' प्रत्यय। स्त्रैणम्=स्त्रीणां समूहः-स्त्री +नञ् स्त्रियों का समूह। "स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात्" से 'नञ्' प्रत्यय। आकलयतः–आ√कल् (गतौ संख्याने च) णिच्+शतृ, गिनते हुए, मानते हुए। राजा शूद्रक ने स्त्रीसमूह को तिनके के समान माना। कहा भी गया है– "आसमाप्तजिगीषस्य स्त्रीचिन्ता का मनस्विनः। अनाक्रम्य जगत्कृत्स्नं नो संध्यां भजते रविः।" यहाँ सुरतसुख के प्रति द्वेष के हेतु न होने पर भी उसकी उत्पत्ति से क्या यहाँ विभावना नामक अलङ्कार है। अथवा तारुण्य, कामिनी आदि सुरत के कारणों के रहते हुए भी सुरताऽभाव होने से क्या विशेषोक्ति नामक अलङ्कार है? इस प्रकार इन दोनों का सन्देहसङ्कर है। 'सोऽयं तृण-मिव' में उपमालङ्कार है।

सत्यपि रूपविलासोपहसितरतिविभ्रमे लावण्यवति विनयवत्य-न्वयवति हृदयहारिणि चावरोधजने, स कदाचिदनवरतदोलाय-मानरत्नवलयो घर्घरिकास्फालनप्रकम्पझणझणायमानमणिकर्णपूरः, स्वयमारब्धमृदंगवाद्यसङ्गीतकप्रसंगेन, कदाचिदविरलविमुक्तशरासार-शून्यीकृतकाननो मृगयाव्यापारेण, कदाचिदाबद्धविदग्धमण्डलः काव्य-प्रबन्धरचनेन, कदाचिच्छास्त्रालापेन, कदाचिदाख्यानकाख्यायिकेति-हासपुराणाकर्णनेन, कदाचिदालेख्यविनोदेन, कदाचिद्वीणया, कदाचि-द्दर्शनागतमुनिजनचरणशुश्रूषया, कदाचिदक्षरच्युतकमात्राच्युतकबिन्दु-मतीगूढचतुर्थपादप्रहेलिकाप्रदानादिभिः, वनितासम्भोगसुखपराङ्मुखः सुहृत्परिवृतो दिवसमनैषीत्। यथैव च दिवसमेवमारब्धविविध-

क्रीडा- परिहासचतुरैः सुहृद्भिरुपेतो निशामनैषीत् ।

हिन्दी-अनुवाद रूप और भावभङ्गी से रति के विलासों का उपहास करने वाली, लावण्यमयी, विनम्र कुलीन और मनोहर अन्तःपुर-वर्तिनी सुन्दरियों के रहते हुए भी वह (शूद्रक) कभी निरन्तर प्रकम्पित किए [हिलाये] जाते हुए रत्नजटित कंकण वाला, धर्धरिका (वाद्यविशेष) बजाने से समुत्पन्न शिरःकम्प के कारण 'झनझनाहट' जैसी ध्वनि करने वाले मणिखचित कर्णभूषण वाला तथा स्वयमेव मृदङ्गवादन का श्रीगणेश करके (गीत, नृत्य एवं वाद्यसमन्वित) 'संगीतक' व्यापार से, (दिन बिताया करता था जो) कभी निरन्तर बरसाए गए बाणों की वेगमयी वर्षा से वन को (हिंस्र जन्तुओं से) शून्य बनाकर 'मृगयाव्यापार' से (दिन बिताता था) जो कभी पण्डितजनों की गोष्ठी आयोजित करके काव्यों एवं कथाओं के 'रचनाव्यापार' से, (दिन बिताता था जो) कभी (न्यायादि) शास्त्रों की परिचर्चा से, कभी आख्यानक (व्यक्तकथा) आख्यायिका, इतिहास एवं पुराणों के 'आकर्णन (श्रवण) व्यापार' से [दिन बिताता था जो] कभी चित्रकर्मक्रीड़ा से, कभी वीणा वादन से, कभी दर्शनार्थ आए हुये साधुजनों की चरणपरिचर्या से और कभी अक्षरच्युतक, मात्राच्युतक, बिन्दुमती गूढचतुर्थपाद एवं पहेली बनाने या बुझाने से रमणियों के सम्भोगजन्य सुख से विमुख होकर, सुहृदों से घिरा हुआ दिन बिताता था। ......और जिस प्रकार दिन [बिताता था] उसी प्रकार [वह] विविध क्रीड़ाओं में प्रारम्भ किये गये आमोद-प्रमोद में निपुण मित्रों से परिवेष्टित होकर रात्रि [को भी] व्यतीत करता था।

संस्कृत व्याख्या-सुरतसुखविद्वेषमुपपादयितुमन्यविधकार्यासक्तिमुपपादयति-**रूपविलासोपहसितविभ्रमे**=रूपं सौन्दर्यं, विलासः स्त्रीणां भावविशेषः ताभ्याम् उपहसितः उपहासेन तिरस्कृतः रतेः कामदेवपत्न्याः विभ्रमो विलासो येन सः तस्मिन् । **लावण्यवति**=सौन्दर्यशालिनी, **विनयवति**=विनययुक्ते, **अन्वयवति**=अन्वयः कुलमस्यास्तीति तस्मिन् कुलीने **हृदयहारिणि**=मनोहारिणि च, **अवरोधजने**=अन्तःपुरयुवतिजने सत्यपि, 'स राजा शूद्रको

निशामनैषीत्' इति दूरेणान्वयः । **स**=राजा शूद्रकः, **कदाचित्**=जातु, **अनवरतदोलायमानरत्नवलयः**=अनवरतं निरन्तरं दोलायमाने स्पन्दमाने रत्नमयकङ्कणद्वयं यस्य सः, **घर्घरिकास्फालनप्रकम्पझणझणायमानमणिकर्णपूरः**=घर्घरिकायाःवाद्यविशेषस्य आस्फालनेन वादनेन यः प्रकम्पःकम्पन तेन झणझणायमानौ झणझणेति शब्दं कुर्वाणौ मणिकर्णपूरौ रत्नजटितकर्णभूषणे यस्य सः, **स्वयमारब्धमृदङ्गवाद्यः**=स्वयमात्मनै व आरब्धं कृतं मृदङ्गवद् वाद्यं वादित्रं येन सः, **सङ्गीतकप्रसङ्गेन**=सङ्गीतकं गीतनृत्यवाद्यत्रयं तस्य प्रसङ्गेन सम्बन्धेन, "गीतं नृत्यं च वाद्यं च त्रयं सङ्गीतमुच्यते"। इति सङ्गीतरत्नाकरे । **कदाचित् अविरलविमुक्तशरासारशून्यीकृतकाननः**=अविरलं सान्द्रं विमुक्ताः क्षिप्ताः ये शराः बाणा; तेषां आसारेण धारासम्पातेन शून्यीकृतं हिंस्रजन्तुरिक्तीकृतं काननं वनं येन सः, **मृगयाव्यापारेण**=आखेटक्रियया, **कदाचित्**=पुनः, **आबद्धविदग्धमण्डलः**=आबद्धम् अनुष्ठितं विदग्धानां पण्डितानां मण्डलं समूहो येन सः, **काव्यप्रबन्धरचनेन**=काव्यकथानिर्माणेन, **कदाचिच्छास्त्रालापेन**=शास्त्रसंलापेन, 'आपृच्छालापसंलापः' इत्यमरः । **कदाचित् आख्यानकाख्यायिकेतिहासपुराणाकर्णनेन**=आख्यानकं स्फुटकथा, आख्यायिका गद्यकाव्यविशेषः, इतिहासः पुरावृत्तं, पुराणं पञ्चलक्षणात्मकं भागवतादिः तेषाम् आकर्णनेन श्रवणेन, **कदाचित् आलेख्यविनोदेन**=आलेख्यं चित्रनिर्माणं तस्य विनोदेन, तद्दर्शनानन्देन **कदाचित्वीणया**=वीणावदनेन श्रवणेन वा, **कदाचित् दर्शनागतमुनिजनचरणशुश्रूषया**=दर्शनार्थं विलोकनार्थम् आगता आयाता ये मुनिजनाः साधुलोकास्तेषां चरणशुश्रूषया पादसेवनया, **कदाचित् अक्षरच्युतकमात्राच्युतकबिन्दुमतीगूढचतुर्थपादप्रहेलिकाप्रदानादिभिः**=अक्षरस्य अकारादिवर्णस्य च्युतिर्यत्र तदक्षर-च्युतकम्, मात्राच्युतं बिन्दुमती चित्रकाव्यभेदविशेषः, गूढचतुर्थपादं गूढो गुह्यः चतुर्थः पाद. चरणो यस्य तत् प्रहेलिका चित्रकाव्यभेदविशेषः 'पहेली' इति भाषायाम्, एतेषां प्रदानम् उत्तरप्राप्तये अन्येभ्यः समर्पणम् आदिपदात् प्रहेलिकादीनां स्वेन निर्माणैश्च, **वनितासम्भोगपराङ्मुखः**=वनितानां नारीणां यः सम्भोग उपभोगः तज्जन्यं यत्सुखं तस्मात् पराङ्मुखो विमुखः, **सुहृत्परिवृत**=सुहृद्भिः मित्रैः परिवृतः परिवेष्टितः, **दिवसं**=दिनम् **अनैषीत्**=निनाय, **यथैव**

—येन प्रकारेणैव,दिवसं—वासरम्, अनैषीत्, एवं—तथैव,आरब्धविविधक्रीडा परिहासचतुरैः—आरब्धाः प्रवर्तिताः, विविधाः नानाप्रकाराः क्रीडापरिहासाः खेलोपहासाः तेषु चतुरैःकुशलैः, सुहृद्भिः—मित्रैः, उपेतः—संयुक्तः, निशां—रात्रिम्, अनैषीत्—अगमयत् ।

टिप्पणी-विलास-स्त्रियों का हावभाव, जिसमें दृष्टि धीर, गति विचित्र तथा मुस्कान से युक्त वचन हों उसे विलास कहा जाता है । 'धीरा दृष्टि-र्गतिश्चित्रा विलासे सस्मितं वचः' **अन्वयवति**—अन्वयः कुलमस्यास्तीति तस्मिन्–'अन्वय' शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' से मतुप् प्रत्यय । **अवरोधः**–अव√रुध्+घञ्–रनिवास । 'स्त्र्यगारं भूभुजामन्तः पुरं स्याद-वरोधनम्' इत्यमरः । **दोलायमान**–दुल् (उत्क्षेपे)+णिच्+शानच्, हिलता हुआ । **घर्घरिका**–एक विशेष प्रकार का बाजा । **सङ्गीतक**–गीत, नृत्य एवं वाद्य ये तीनों सम्मिलितरूप में सङ्गीतक कहलाते हैं–'गीतं नृत्तं च वाद्यं च त्रयं सगीतमुच्यते' । **शरासारः**–बाणों की लगातार वर्षा । **विदग्ध**—पण्डितजन अथवा रसिक । **काव्यम्**–कवेर्भावः कर्म वा काव्यम्;'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'-साहित्यदर्पण । **आलापः**–आ√लप्+घञ्ः बातचीत । **आख्यायिका**–अलङ्कारशास्त्रियों ने गद्यकाव्य के दो भेद किए हैं–कथा तथा आख्यायिका आख्यायिका का लक्षण–''आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशादिकीर्तनम् । अस्यामन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित् क्वचित् ।। कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति कथ्यते । आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित् ।। अन्या पदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनम् । **पुराण**–पुराण की परिभाषा–''सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च । वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ।''

आलेख्यम्–आ√लिख्+ण्यत्, चित्ररचना या चित्र । **अक्षरच्युतकम्**–इसमें पद्य से एक अक्षर निकाल देने पर अर्थ बदल जाता है । जैसे–"**कुर्वन् दिवाकराश्लेषं दधच्चरणडम्बरम् । देव यौष्माकसेनायाः करेणुः प्रसरत्यसौ ।।** यहाँ 'करेणुः' पद का अर्थ हाथी है, 'क' अक्षर के छोड़ देने पर 'रेणुः' शेष रहेगा; जिसका अर्थ धूल हो जायगा । **मात्राच्युतकम्**–इसमें केवल मात्रा के निकाल देने पर दूसरा अर्थ निकल आता है । जैसे–"**मूलस्थितिमधः कुर्वन् पात्रैर्जुष्टो गताक्षरैः । विटः सेव्यः कुलीनस्य तिष्ठतः पथिकस्य च ।।**" यहाँ 'विट' शब्द से इकार को निकाल देने से 'वट' शेष रहेगा और तब इसका अर्थ 'बरगद' हो जाएगा । '**बिन्दुमती**–इसमें अक्षरों के स्थान पर बिन्दु का प्रयोग होता है तथा मात्राओं का प्रयोग यथावत् होता है । जैसे—

ि०. ० ० ० ०ॢ ०ा०. ० ि०. ०ि० ·०ाः ०ु ०ु ०. ०ा०. ०ुः ।
०००ु ० ० ि० ०ु०ृ ०ा०ु ० ० ० ०ी० ० ०ा ० ०ं. ०ृः ।।

यह श्लोक इस प्रकार पूर्ण होगा—

"त्रिनयनचूडारत्नं मित्रं सिन्धोः कुमुद्वतीबन्धुः ।
अयमुदयति घुसृणारुणरमणीवदनोपमश्चन्द्रः ।।"

गूढचतुर्थपाद–इसमें पद्य के चतुर्थ पाद के अक्षर तीन पादों में छिपे रहते हैं । जैसे **दयावान् प्रयतः शुद्धः प्रबुद्धकमलेक्षणः । पापापहस्त्रिभुवनं बुद्धः पायादपायतः ।।** **प्रहेलिका**–पहेली (बतौनिया) इसका लक्षण इस प्रकार है–"व्यक्तीकृत्य कमप्यर्थं स्वरूपार्थस्य गोपनात् । यत्र बाह्यान्तरावर्थौ कथ्येते सा प्रहेलिका ।।' जैसे–**तरुण्यालिंगितः कण्ठे नितम्बस्थलमाश्रितः । गुरूणां सन्निधानेऽपि कः कूजति मुहुर्मुहुः ।।**

यहाँ 'जलपूर्ण घट' यह उत्तर होगा न कि प्रियतम । **परिवृतः**–परि√वृ + क्त, घेरा हुआ । **अनैषीत्**–नीधातु लुङ् प्र० पु० ए० व० ।

एकदा तु नातिदूरोदिते नवनलिनदलसम्पुटभिदि किञ्चिन्मुक्तपाटलिम्नि भवगति सहस्रमरीचिमालिनि, राजानमास्थानमण्डपगतमंगनाजनविरुद्धेन वाममार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण, सन्निहितविषधरेव चन्दनलताभीषणरमणीयाकृतिः, अविरलचन्दनानुलेपनधवलितस्तनतटा,उन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डलेव मन्दाकिनी,चूडामणिसङ्क्रान्तप्रतिबिम्बच्छलेन राजाज्ञेव मूर्तिमती राजभिः शिरोभिरुह्यमाना, शरदिव कलहंसधवलाम्बरा, जामदग्न्यपरशुधारेव वशीकृतसकलराजमण्डला, विन्ध्यवनभूमिरिव वेत्रलतावती, राज्याधिदेवतेव विग्रहिणी, प्रतीहारी समुपसृत्य क्षितितलनिहितजानुकरकमला सविनयमब्रवीत्––"देव ! द्वारिस्थिता सुरलोकमारोहतस्त्रिशङ्कोरिव कुपितशतमखहुङ्कारनिपातिता राजलक्ष्मीर्दक्षिणापथादागता चाण्डालकन्यका पञ्जरस्थं शुकमादाय देवं विज्ञापयति–"सकलभुवनतलसर्वरत्नानाम् उदधिरिवैकभाजनं, विहङ्गमश्चायमाश्चर्यभूतो निखिलभुवनतलरत्नमिति कृत्वा देवपादमूलमेनमादायागताहमिच्छामि देवदर्शनसुखमनुभवितुम्' इति एतदाकर्ण्य "देवः प्रमाणम्" इत्युक्त्वा विरराम ।

हिन्दी-अनुवाद–एक बार तो नूतन कमलपत्रों के सम्पुट (सङ्कुचित आकार को) विस्तृत कर देने वाले, लालिमा का अंशतः परित्याग कर देने वाले भगवान् सहस्रकिरणमाली (सूर्य) के कुछ ही समय पूर्व उदित होने पर-(जो) कामिनीजन के विपरीत (शरीर के) वामपार्श्व में अवलम्बित कृपाण के कारण लिपटे हुए विषधरों वाली चन्दनलता की भाँति भयानक एवं मनोज्ञ आकृति वाली थी, जो चन्दन का सघन अनुलेपन करने से धवलीभूत उरोज-प्रदेश वाली (अतएव) स्नान करते हुए (श्वेतवर्णी) ऐरावत गज के कुम्भ-द्वय से युक्त मन्दाकिनी (गङ्गा) सरीखी थी, (जो सभामण्डप में बैठे हुए

राजाओं के) शिरोरत्नों में व्याप्त (अपनी) परछाई के बहाने, भूपतियों द्वारा शिरोधार्य मूर्तिमती राजाज्ञा सी प्रतीत होती थी, (जो) कलहंसों (की उड़ान) से धवलीभूत गगनमण्डल वाली शरद् ऋतु की भाँति कलहंसों के समान श्वेत परिधान से युक्त थी, (क्रूरता के कारण) समस्त क्षत्रियनरेशों को स्वायत्तीकृत (स्वाधीन) कर लेने वाली जामदग्न्य अर्थात् परशुराम की परशुधारा के समान जिसने (मोहवश) समस्त राजवर्ग को आकृष्ट कर लिया था, वेतसलतिकाओं से संकुल विन्ध्यवन की भूमि के समान जो (आचारार्थ) वेत्रयष्टि से युक्त थी, (जो) विग्रहणी अर्थात् शरीरधारिणी राज्याधिष्ठात्री देवता के समान प्रतीत होती थी– (ऐसी) प्रतिहारी ने सभामण्डप में समासीन राजा (शूद्रक के पास) पहुँचकर पृथ्वीतल पर घुटनों एवं करकमलों को टिकाकर विनयपूर्वक कहा–"देव ! क्रोधाभिभूत शतक्रतु (इन्द्र) द्वारा हुङ्कार (मात्र) से नीचे धकेली गयी स्वर्गारोहण करते हुए त्रिशङ्कु की साम्राज्यलक्ष्मी की भाँति, द्वार पर विद्यमान् दक्षिणापथ से आयी हुई (कोई) चाण्डालकन्या पिंजरे में विद्यमान (एक) शुक को लेकर महाराज से निवेदन करती है कि– 'निखिल भूतल में विद्यमान समस्त रत्नों के एकमात्र उत्पत्तिस्थान सागर की भाँति समस्त भुवन मण्डल की सम्पूर्ण रत्नावलियों के एकमात्र भाजन (गुणज्ञ) महाराज हैं और आश्चर्य स्वरूप यह विहङ्गम (सुआ) अशेष भुवनमण्डल का रत्न है–ऐसा मानकर मैं महाराज के चरणों में इसे लेकर उपस्थित हुई हूँ तथा महाराज के दर्शन का सुख अनुभव करना चाहती हूँ'। यह वृत्तान्त सुनकर-देव ! जैसी आज्ञा दें वैसा करूँ। यह कहकर (प्रतिहारी) चुप हो गयी।

संस्कृत-व्याख्या–एकदा तु=एकस्मिन् समये तु, **नवनलिनदलसम्पुटभिदि**=नवानि नवीनानि यानी नलिनानि कमलानि तेषां दलानि पर्णानि तेषां सम्पुटं मुकुलीभावं भिनत्ति दूरीकरोति इति सः तस्मिन्, **किञ्चिन्मुक्तपाटलिम्नि**=किञ्चिद् ईषद् मुक्तः परित्यक्तः पाटलिमा श्वेतरक्तत्वं येन सः त स्मिन्, **भगवति**=ऐश्वर्यशालिनी, **सहस्रमरीचिमालिनी**=सहस्राणां मरीचीनां माला यस्य स तस्मिन् अथवा सहस्रसंख्या-ये मरीचयो रश्मयस्तैर्मालते शोभते तान् धारयतीति

वा यः स तस्मिन् सूर्ये सतीत्यर्थः, **नातिदूरोदिते**=नातिदूरम् अल्पकालीनम् उदितं यस्य सः तस्मिन्, **अङ्गनाजनविरुद्धेन**=अङ्गनाजनः स्त्रीजनः तस्य विरुद्धेन व्यवहारप्रतिकूलेन, **वामपार्श्वावलम्बिना**=वामपार्श्वे सव्यभागेऽवलम्बते इत्येवंशीलेन, **कौक्षेयकेण**=असिना, **सन्निहित-विषधरा**=सन्निहितः समीपवर्ती विषधरः सर्पो यस्याः सा, चन्दनलता इव, **भीषणरमणीयाकृतिः**=भीषणा भयानका रमणीया मनोहरा च आकृतिः स्वरूपं यस्याः सा, यथा शीतला सुमनोहरा च चन्दनलता सर्पसंयुक्तत्वात् भीषणाकृतिर्भवति, तथैव रमणीया अपि प्रतिहारी पार्श्वावलम्बितखड्गेन भीषणाकृतिरासीत् । **अविरलचन्दनानुलेपनधवलितस्तनतटा**=अविरलं निबिडतरं यच्चन्दनस्य मलयजस्य अनुलेपनम् उद्वर्त्तनं तेन धवलितं श्वेतीकृतं स्तनतटं कुचप्रान्तं यस्याः सा, **उन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डला**=उन्मज्जन् स्नानं कुर्वन् य ऐरावत इन्द्रहस्ती तस्य कुम्भमण्डलं कुम्भस्थलं यस्यां सा, **मन्दाकिनी**=आकाशगङ्गा, इवेत्युपमायाम्, **चूडामणिसंक्रान्तप्रतिबिम्बच्छलेन**=चूडामणिषु राजमस्तककिरीटरत्नेषु संक्रान्तं पतितं यत् प्रतिबिम्बं प्रतिच्छाया तस्य छलेन व्याजेन, **राजभिः**=नृपतिभिः, **शिरोभिः**=मस्तकैः, **उह्यमाना**=धार्यमाणा, **मूर्तिमती**=विग्रहवती, **राजाज्ञेव**=राज्ञः शूद्रकस्य आज्ञेव आदेश इव, इत्युत्प्रेक्षायाम्, **शरदिव**=शरदृतुरिव, **कलहंसधवलाम्बरा**=कलहंसः कादम्बः इव धवलं स्वच्छमम्बरं वस्त्रं यस्याः सा, शरत्पक्षे कलहंसा एव धवलमम्बरम् आकाशो यस्याः सा, **जामदग्न्यपरशुधारेव**=जमदग्नेर्गोत्रापत्यं पुमान् जामदग्न्यः परशुरामः तस्य परशुः कुठारः तस्य धारा निशितांश इव, **वशीकृतसकलराजमण्डला**=वशीकृतं स्वायत्तीकृतं सकलराजमण्डलं समस्तनृपतिसमुदायो यया सा, परशुधारापक्षे वसीकृतं परशुबलेन स्वाधीनकृतं सकलराजमण्डलं यया सा, **विन्ध्यवनभूमिरिव**=विन्ध्यस्य वनं काननं तस्य भूमि पृथिवीव, **वेत्रलतावती**=वेत्रस्य लता यष्टिः हस्ते यस्याः सा, विन्ध्यवनभूमिपक्षे—वेत्राणां वेतसानां लताः वल्लयो यस्याः सा, **राज्याधिदेवतेव**=राज्यस्य अधिदेवतेव अधिष्ठात्रीदेवतेव, **विग्रहिणी**=मूर्तिमती, **क्षितितलनिहितजानुकरकमला**=क्षितितले भूतले निहितौ स्थापितौ जानू नलकीलौ अथ च करौ पाणी

तावेव पद्मे यया सा, **प्रतीहारी**=द्वारदेशे नियुक्ता सेविका, **आस्थानामण्डपगतं**=सभाभवनस्थितम्, **राजानं**=भूपतिं शूद्रकम्, **उपसृत्य**=समीपमागत्य, **सविनयं**=विनयपूर्वकम्, **अब्रवीत्**=अवोचत्, **देव** ! हे स्वामिन्, **द्वारिस्थिता**=द्वारे स्थिता, **सुरलोकं**=सुराणां देवानां लोकम्, **आरोहत:**=आरोहणं कुर्वत:, **त्रिशङ्को:**=सूर्यवंशीयराजविशेषस्य, **कुपितशतमुखहुङ्कारनिपातिता**=कुपित: क्रुद्धो य: शतमुखो देवराज इन्द्र: तस्य हुङ्कारेण निपातिता अध: पतिता, **राजलक्ष्मी:**=राजश्री: इव, **दक्षिणपथात्**=दक्षिणमार्गात्, **आगता**=समायाता, **चाण्डालकन्यका**=मातङ्गकुमारी, **पञ्जरस्थं**=पञ्जरे पक्षिणामाधारे तिष्ठतीति तम्, **शुकं**=कीरम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **देवं**=राजानम्, **विज्ञापयति**=निवेदयति, **देव:**=स्वामी, **उदधिरिव**=समुद्र: इव, **सकलभुवनतलसर्वरत्नानाम्**=सकलभुवनतलेषु यानि सर्वाणि रत्नानि तेषाम्, **एकभाजनम्**=एकमेव पात्रम्, **अयं**=एष: **विहङ्गम:**=पक्षी, **च आश्चर्यभूत:**=विस्मयकारक:, **निखिलभुवनतलरत्नं**=निखिलानि समग्राणि यानि भुवनतलानि तेषां रत्नमुत्कृष्टम्, **इति कृत्वा**=इत्थं विचार्य, **देवपादमूलं**=स्वामिचरणाश्रयम्, **एनं**=शुकम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **आगता**=आयाता, **अहं**=चाण्डालकन्यका, **देवदर्शनसुखम्**=महाराजावलोकनानन्दम्, **अनुभवितुं**=साक्षात्कर्तुम्, **इच्छामि**=अभिलषामि । **एतदाकर्ण्य**=एतच्छ्रुत्वा, **देव:प्रमाणं**=यो भवत आदेश: स एव मया कर्तव्य:, **इत्युक्त्वा**=एवं कथयित्वा, **विरराम**=मौनमाश्रितवती ।

टिप्पणी–'**एकदा प्रतीहारी राजानं समुपसृत्य सविनयमब्रवीत्**'–यह मुख्य वाक्य है। **पाटलिमा**–पाटल+इमनिच्–पीलापन लिए हुए लालरङ्ग। अमरकोषकार ने कहा है–'श्वेतरक्तस्तु पाटल:' । **आस्थानमण्डप:**–सभामण्डप, 'समज्या परिषद्गोष्ठी सभासमितिसंसद: । आस्थानी क्लीबमास्थानं स्त्रीनपुंसकयो: सद:' इत्यमर: । **अङ्गना**–प्रशस्तानि अङ्गानि सन्ति यस्या: सा–अङ्ग+न+टाप् 'अङ्गात्कल्याणे से न प्रत्यय । **कौक्षेयक:**–कुक्षौ बद्धोऽसि:, कुक्षि+ढकञ्–'कुलकुक्षिग्रीवाभ्य: श्वास्यलङ्कारेषु' से ढकञ् । 'खड्गे तु निस्त्रिंशचन्द्रहासासिरिष्टय: । कौक्षेयक: मण्ड–

लाग्रः करवालः कृपाणवत्' इत्यमरः । **'सन्निहित–आकृतिः'**–यहाँ **पूर्णोपमालङ्कार**। **'कुम्भमण्डलेव'** में **उपमालङ्कार** । **'राजाज्ञेव'** में **उत्प्रेक्षालंकार**। **उन्मज्जत्**+उत√मज्ज्+शतृ–स्नान करता हुआ। **उह्यमाना**–वह्+यत्+शानच्+टाप्–धारण की जाती हुई। **अम्बर**–(क) वस्त्र (ख) आकाश। **जामदग्न्यः**–जमदग्नि+यञ्–जमदग्नेरपत्यं पुमान्; परशुराम। **'शरदिव'**–से लेकर **'विन्ध्यभूमिरिव वेत्रलतावती'** तक **उपमालङ्कार है** । 'राज्याधिदेवतेव' में **द्रव्योत्प्रेक्षालङ्कार है**। त्रिशङ्कुः–त्रयः शङ्कवो (अपराधाः) यस्य सः त्रिशङ्कुः अर्थात् जिसके तीन अपराध हों उसे त्रिशङ्कु कहते हैं। जैसा कि रामायण में कहा गया है। **'पितुश्च परिरोषेण गुरोः दोग्ध्रीवधेन च। अपोक्षितोपयोगाच्च त्रिविधस्ते व्यतिक्रमः।। एवं त्रीण्यस्य शङ्कूनि तानि दृष्ट्वा महातपाः। त्रिशंकुरिति हो वाच त्रिशंकुरिति सः स्मृतः''**॥ अर्थात् पिता के क्रोध से, गुरु तथा गौ के वध से, अपवित्र वस्तुओं के उपयोग से तीन प्रकार के पाप होने के कारण तुम्हें लोग 'त्रिशङ्कु' कहेंगे। त्रिशङ्कु नामक कोई सूर्यवंशीय राजा था। वह अपने व्यक्तित्व को अधिक प्रेम करता था। उसने इसी शरीर से स्वर्ग जाने की इच्छा की। अतः उसने वसिष्ठ से यज्ञ करने की प्रार्थना की। जब वसिष्ठ ने मना कर दिया तो उसने उसके १०० पुत्रों से प्रार्थना की, परन्तु उन्होंने भी इसे अस्वीकार कर दिया। त्रिशङ्कु ने उन सबको कायर तथा नपुंसक कहा और इसके बदले उन्होंने उसे 'चाण्डाल बनने' का शाप दे दिया। ऐसी स्थिति में वह विश्वामित्र के पास गया तथा यज्ञ कराने को कहा। विश्वामित्र ने उसे यज्ञ कराकर मंत्रबल से सदेह स्वर्ग भेजना प्रारम्भ किया, परन्तु इन्द्र ने उसे बीच में ही रोक दिया। इस प्रकार वह पृथ्वी और स्वर्ग के बीच लटका हुआ है। **शतमखः**–जिसने १०० यज्ञ किये है। देवराज इन्द्र। **उदधिः**–समुद्र, उदकानि धीयन्तेऽस्मिन्–यहाँ कृदन्त प्रत्यय कि तथा उदक को 'उदन्' आदेश, नकार का लोप आदि कार्य होते हैं। **विहङ्गमः**–विहायसा आकाशेन गच्छतीति-विहङ्गमः–विहायस्√गम्+खच्+मुम् तथा विहायस् को विहादेश होता है। रत्नम्-उत्कृष्ट, 'जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्न

मभिधीयते' । आकर्ण्य–आङ्√कर्ण+क्त्वा–ल्यप् । **विरराम**–वि उपसर्ग पूर्वक रम् धातु लिट् प्र० पु० ए० व० । रम् धातु आत्मनेपदी है परन्तु 'व्याङ्परिभ्यो रमः' से परस्मैपदी हो जाती है । यहाँ **'त्रिशंकोरिव'** तथा **'उदधिरिव'** में **उपमालंकार** है ।

उपजातकुतूहलस्तु राजा समीपवर्तिनां राज्ञामवलोक्य मुखानि "को दोषः प्रवेश्यताम्" इत्यादिदेश । अथ प्रतीहारी नरपतिवचनानन्तरमुत्थाय तां मातङ्गकुमारीं प्रावेशयत् ।

हिन्दी-अनुवाद–समुत्पन्न कुतूहल (से युक्त) राजा शूद्रक ने निकटस्थ भूपतियों के मुखों को देखकर (अर्थात् उनके भी मनोभाव समझकर) दोष क्या है ? प्रवेश कराओ । इस प्रकार आदेश दिया । महाराज के आदेश के अनन्तर तब प्रतीहारी ने उठकर उस चाण्डाल कन्या को (सभामण्डप में) प्रविष्ट कराया ।

संस्कृत-व्याख्या–**राजा तु**=शूद्रकस्तु, **उपजातकुतूहलः**=उपजातम् उत्पन्नं कुतूहलं कौतुकं यस्य सः, **समीपवर्तिनाम्**=सन्निकटवर्तिनाम्, **राज्ञां**=भूपालानाम्, **मुखानि**=आननानि, **आलोक्य**=दृष्ट्वा, **को दोषः**=न काप्यापत्तिः, **'प्रवेश्यताम्' इति आदिदेश**=आज्ञापतिवान् । **अथ**=अनन्तरम, **नरपतिवचनानन्तरम्**=भूपतिवाक्यानन्तरम्, **उत्थाय**=उत्थानं कृत्वा, **प्रतीहारी**=द्वारपालिका, **तां मातंगकुमारीं**=चाण्डालकन्यकाम्, **प्रावेशयत्**=प्रवेशमकारयत् ।

टिप्पणी–**'राज्ञां मुखानि अवलोक्य'** का आशय यह है कि चाण्डाल होने के कारण इसके अन्दर प्रविष्ट होने में किसी को कोई आपत्ति तो नहीं है । अतएव राजाओं के मुखों को देखकर 'को दोषः, प्रवेश्यताम्, इस प्रकार कहा ।

अवलोक्य–अव+लोक्+क्त्वा-ल्यप् । **दोषः**–दुष्+घञ् । **आदिदेश**–आङ् √दिश्+लिट् प्र० पु० ए० व० । **प्रावेशयत्**-प्र√विश्+णिजन्त लङ् प्र० पु० ए० व० ।

प्रविश्य च सा नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनमशनिभयपुञ्जितकुलशैल-मध्यगतमिव कनकशिखरिणम्, अनेकरत्नाभरणकिरणजालकान्तरितावयवमिन्द्रायुधसहस्रसंच्छादिताष्टदिग्विभागमिव जलधरदिवसम्, अवलम्बितस्थूलमुक्ताकलापस्य कनकशृंखलानियमितमणिदण्डिका-चतुष्टयस्य गगनसिन्धुफेनपटलपाण्डुरस्य नातिमहतो दुकूलवितान-स्याधस्तादिन्दुकान्तमणिपर्यङ्किकानिषण्णम्, उद्धूयमानकनकदण्ड-चामरकलापम्, उन्मयूखमुखकान्तिनिचयपराभवप्रणते शशिनीव स्फटिकपादपीठे विन्यस्तवामपादम्, इन्द्रनीलमणिकुट्टिमप्रभासम्पर्क-श्यामायमानैः प्रणतरिपुनिःश्वासमलिनीकृतैरिव चरणनखमयूखजालै-रुपशोभमानम् आसनोल्लसितपद्मरागकिरणपाटलीकृतेनाचिरमृदित-मधुकैटभरुधिरारुणेन हरिमिवोरुयुगलेन विराजमानम्, अमृतफेन-धवले गोरोचनालिखितहंसमिथुनसनाथपर्य्यन्ते चामरपवनप्रर्णति-तान्तदेशे दुकूले वसानम् ।

हिन्दी-अनुवाद–प्रविष्ट होकर उस (मातङ्गकन्या) ने राजा शूद्रक को देखा (जो) वज्र के आतङ्कवश एकत्रित हुए कुलपर्वतों के बीच विद्यमान सुवर्णगिरि सुमेरु की भाँति सहस्रों भूपतियों के बीच सुशोभित, (था । जो) सहस्रों इन्द्रधनुषों से समाच्छन्न आठों दिक्प्रदेशों वाले वर्षाकालीन दिन की भाँति अनेक मणिखचित आभूषणों के प्रभापटल से आच्छादित अङ्गप्रत्यङ्गों वाला, (था । जो) लटकते हुए सुदीर्घ मौक्तिकसमूह से युक्त, सुनहरी जञ्जीरों से बँधी हुई चार रत्नखचित यष्टियों से युक्त, आकाशगङ्गा के फेनसमूह की

भाँति धवलवर्ण तथा अधिक विशाल नहीं अर्थात् स्थानोचित प्रमाण वाले (एक) रेशमी वितान (चँदोवे) के नीचे चन्द्रकान्तमणियों से निर्मित मञ्चिका (मचिया) पर समासीन, (था। जो) ऊर्ध्वगामिनी किरणों वाले मुखमण्डल के प्रभापटल से तिरस्कृत होने के कारण चरणावनत चन्द्रमा की भाँति प्रतीत होने वाले स्फटिकमणिमय पाद पीठ (पीढ़ा) पर बायाँ पैर रखे हुए, (था। जो) इन्द्रनील (नीलम) मणियों से खचित कुट्टिम अर्थात् फर्श की कान्ति के मिश्रण से सँवराए हुए (अतएव) मानों शरणागत शत्रुओं की निःश्वासवायु से मालिन्य युक्त पदनखों के किरणसमूह से उपशोभित, (था। जो) सद्यः मर्दित अर्थात् तत्काल मारे गये मधु और कैटभ (राक्षसों) के रक्त से अरुणायमान जङ्घाद्वय से सुशोभित नारायण की भाँति आसनस्थली में देदीप्यमान पद्मरागमणियों की दीप्तियों से रक्तवर्ण (लाल) बनाए गये जङ्घाद्वय से विराजित, (था। जो) अमृतफेन की भाँति धवल, गोरोचना से आलिखित (चित्रित) हंसों की जोड़ी से अलंकृत किनारों वाले तथा मनोहर चँवर की वायु से आन्दोलित छोरों वाले रेशमी वस्त्र पहने हुए (था ....)

संस्कृत-व्याख्या—प्रविश्य च=प्रवेशं कृत्वा, **सा**=चण्डालकन्यका, राजानमद्राक्षीदिति दूरेणान्वयः। सम्प्रति राजानं विशिनष्टि—**नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनम्**=नरपतीनां नृपाणां यत्सहस्रं तन्मध्यवर्तिनम् तदन्तः स्थितम्, अतएव **अशनिभयपुञ्जितकुलशैलमध्यगतं**=अशनेरिन्द्रायुधाद्वज्रात् यद्भयं भीतिः तेन पुञ्जिता एकत्रमिलिताः ये कुलशैलाः कुलपर्वताः तेषां मध्यगतं अन्तःस्थितम् **कनकशिखरिणमिव**=सुमेरुपर्वतमिव, **अनेकरत्नाभरणकिरणजालकान्तरितावयवम्**=अनेकानि नानाविधानि रत्नाभरणानि रत्नजटिताभूषणानि तेषां यानि किरणजालकानि रश्मिसमूहाः तैरन्तरिता आवृता अवयवा अङ्गानि यस्य तम्। **इन्द्रायुधसहस्रच्छादिताष्टदिग्विभागम्**=इन्द्रायुधसहस्रेण शक्रधनुःसमूहेन सञ्छादिता अन्तरिता अष्टौ दिग्विभागाः दिशां प्रदेशाः यस्मिन् तथाविधम्, **जलधरदिवसं**=मेघावृतदिनम्, **इव**=यथा, **अवलम्बितस्थूलमुक्ताकलापस्य**=अवलम्बिता आबद्धाः स्थूलाना स्थविष्ठानां मुक्तानां रसोद्भावनां कलपाः पङ्क्तयो यत्र तस्य, **कनकशृंखलानियमित**

मणिदंडिकाचतुष्टयस्य=कनकं सुवर्णं तस्य याः शृंखलाः बन्धनरज्जवः ताभिः नियमिताः बद्धा मणिदण्डिका रत्नखचिताः यष्टयः तासां चतुष्टयं यस्मिन् तस्य, **गगनसिन्धुफेनपटलपांडुरस्य**=गगनसिन्धोः मन्दाकिन्याः फेनपटलवत् अब्धिकफसमूहवत् 'डिण्डीरोऽब्धिकफः', इत्यमरः, पाण्डुरं शुभवर्णं तस्य, **नातिमहतः**=नातिविस्तृतस्य, **दुकूलवितानस्य**=क्षौमवस्त्रनिर्मितोल्लोचस्य, **अधस्ताद्**=निम्नप्रदेशे, **इन्दुकान्तमणिपर्यङ्किकानिषण्णम्**=इन्दुकान्तानां चन्द्रकान्तानां या पर्यङ्किका मञ्चिका तस्यां निषण्णम् उपविष्टम्, **उद्धूयमानकनकदण्डचामरकलापं**=उद्धूयमानः संवीज्यमानः कनक-दण्डः सुवर्णयष्टिः येषु तथाविधःचामरकलापः चामर-समूहो यस्य तम्, तादृशम्, **उन्मयूखमुखकान्तिनिचयपराभवप्रणते**=उत् ऊर्ध्वंगताः मयूखाः किरणाः यस्य एतादृशस्य मुखस्य आननस्य या कान्तिः द्युतिः तस्याः निचयः समूहः तेन यः पराभवः तेन प्रणते नम्रीभूते, **शशिनि**=चन्द्रे, **इव**=उत्प्रेक्षायां, **स्फटिकपादपीठे**=स्फटिकमणिविरचितं यत् पादपीठम् चरणस्थापनलघुपीठकं तस्मिन् **विन्यस्तवामपादम्**=संस्थापितवामचरणम्, **इन्द्रनीलमणिकुट्टिकमप्रभासम्पर्कश्यामायमानैः**=इन्द्रनीलमणीनां या कुट्टिमप्रभा वेदिकाकान्तिः तस्याः सम्पर्केण संसर्गेण श्यामायमानैःश्यामवदाचरद्भिः **प्रणतरिपुनिःश्वासमलिनीकृतैरिव**=प्रणताः विनताः ये रिपवः शत्रवः तेषां ये निश्वासाः निःश्वासवायवः तैः मलिनीकृतैः मालिन्यमुपगतैरिव, **चरणनखमयूखजालैः**=चरणयोः पादयोः नखानां मयूखजालैः किरण-समूहैः, **उपशोभमानम्**=विराजमानम्, **आसनोल्लसितपद्मरागकिरणपाटलीकृते**=आसने विष्टरे उल्लसिताः प्रकाशमानाः ये पद्मरागकिरणाः लोहितमणिरश्मयः तैः पाटलीकृतेन, श्वेतरक्तीकृतेन, **अचिरमृदितमधुकैटभरुधिरारुणेन**=अचिरं मृदितयोः तत्कालमर्दितयोः मधुकैटभयोः तन्नामकयोरसुरविशेषयोः रुधिरेण रक्तेन अरुणं रक्तवर्णं तेन तथाविधेन, **उरुयुगलेन**=जङ्घाद्वयेन, **विराजमानम्**=शोभमानम् **हरिं**=विष्णुमिव, **अमृतफेनधवले**=अमृतस्य पीयूषस्य यः फेनः तद्वत्धवले श्वेतवर्णे, **गोरोचनालिखितहंसमिथुनसनाथपर्यन्तदेशे**=गोरोचनया गोपित्तनामकपदार्थेन लिखितैः चित्रितैः हंसमिथुनैः

हंसयुगलैः सनाथाः संयुक्ताः पर्यन्ताः प्रान्तभागाः ययोः ते, **चामरपवनप्रर्णतितान्तदेशे** चामराणां मनोहरबालव्यजननानां पवनेन वायुना प्रर्णतिताः आन्दोलिताः अन्तदेशाः प्रान्तभागाः ययोस्ते, **दुकूले**=क्षौमवस्त्रयुगलम्, **वसानं**=दधानम् ।

टिप्पणी-प्रविश्य–प्र√विश्=क्त्वा—ल्यप् । 'स······राजानम् अद्राक्षीत्' यह इस वाक्य का प्रमुख भाग है इसमें आये हुये द्वितीया एकवचनान्त समस्त पद राजनं के विशेषण हैं । "**पुञ्जित-कुलशैलमध्यगतमिव कनकशिखरिणम्**" उपमा अलंकार है । "**अशनि·····शिखरिणम्**" इस सन्दर्भ में देवराज इन्द्र के द्वारा पर्वतों के पंख काटने की कथा का प्रसंग है । पुराणों में कहा गया है कि पहले पर्वतों के पंख होते थे और वे उन पंखों से एक देश से उडकर दूसरे देश में जाकर गिरते थे । वे जहाँ पर भी गिरते थे वहाँ बड़ी हिंसा होती थी क्योंकि पर्वत जिस प्रदेश में गिर जायेंगे वहीं सब नाश हो जायेगा । इस प्रकार से पर्वतों के आतक से त्रस्त होकर देवराज इन्द्र अपने वज्र के द्वारा उनके पंख काटने लगे । ऐसी स्थिति में पर्वत अपनी रक्षा के निमित्त विचारणा के लिये एकत्र मिले थे । **कनकशिखरी**–स्वर्ण के हैं शिखर जिसके अर्थात् सुमेरु पर्वत । **इन्द्रायुध**–इन्द्रधनुष अमरकोषकार ने लिखा है–"इन्द्रायुधं शक्रधनुः" । **जलधरदिवसमिव**–यहाँ भी उपमालंकार है **मुक्ताकलाप**=मोतियों का समूह । **नियमित**—बँधे हुए । मणिदण्डिका=रत्नजटितबाँस, जिसके सहारे वितान को ताना जाता है । गगनसिन्धु=आकाशगंगा । "फेनपटलपाण्डुर" इस अंश में लुप्तोपमालंकार है । दुकूलवितानं=रेशमी वस्त्र से निर्मित चँदोवा । पर्यङ्किका=छोटी चौकी । निषण्णं–नि√सत्+क्त प्रत्यय । उद्धूयमान–उत् √धू+णिच्+शानच्, डुलाये जाते हैं । "शशिनीव स्फटिकपादपीठे"–यहाँ द्रव्योत्प्रेक्षालंकार है । कुट्टिम=फर्श । श्यामायमानैः–'उपमानादाचारे' इस सूत्र के द्वारा क्यङ् प्रत्ययगत उपमालंकार है । मलिनीकृतैरिव–यहाँ क्रियोत्प्रेक्षालंकार है । मधुकैटभ–'मार्कण्डेय पुराण की कथा है कि मधु और कैटभ नामक दो राक्षस भगवान् विष्णु के कर्ण मल से उत्पन्न हुए । इन दोनों ने ब्रह्मा का वध करना चाहा । ऐसी स्थिति में आत्मरक्षा के लिये व्याकुल ब्रह्मा

ने भगवती जगज्जननी की उपासना की। ब्रह्मा जी से प्रसन्न होकर जगज्ज-ननी ने भगवान् विष्णु को उठा दिया और उठकर भगवान् विष्णु ने उन दोनों के साथ पांच सहस्र वर्ष युद्ध किया। तदनन्तर अपनी माया से मोहित हो वे दोनों भगवान् विष्णु को वर देने के इच्छुक हो गये। भगवान् विष्णु ने उन दोनों के वध रूप वरदान को माँगा। यह सुनकर जलमग्न पृथ्वी को देखकर उन दोनों ने भगवान् से कहा कि जहाँ पृथ्वी जल से रहित हो वहाँ हम दोनों का वध करो। ऐसा सुनकर भगवान् विष्णु ने पार्थिवांश संयुक्त अपने ऊरूओं पर बैठाकर उन दोनों के शिरों को चक्र से काट डाला था। **गोरोचना**–"यह एक सुगन्धित पदार्थ है" इसकी उत्पत्ति गाय के पित्त से मानी जाती है। **हरि-मिव**–यहां **उपमालंकार है**। **दुकूले**–रेशमी वस्त्रों का जोड़ा। **'अमृतफेनधवले'** में **लुप्तोपमालंकार** है।

अतिसुरभिचन्दनानुलेपनधवलितोरःस्थलम् उपरिविन्यस्तकुङ्कुमस्थासकम् अन्तरान्तरानिपतितबालातपच्छेदमिव कैलासशिखरिणम्, अपरशशिशङ्कया नक्षत्रमालयेव हारलतया कृतमुखपरिवेषम्, अतिचपलराजलक्ष्मीवन्धननिगडशङ्कामुपजनयतेन्द्रनीलकेयूरयुगलेन मलयजरसगन्धलुब्धेन भुजङ्गद्वयेनेव वेष्टितबाहुयुगलम्, ईषदालम्बिकर्णोत्पलम्, उन्नतघोणम्, उत्फुल्लपुण्डरीकलोचनम्, अमलकलधौतपट्टायतम् अष्टमीचन्द्रशकलाकारम्, अशेषभुवनराज्याभिषेकसलिलपूतम्, ऊर्णासनाथं ललाटदेशमुद्वहन्तम्, आमोदितमालतीकुसुमशेखरम्, उषसि शिखरपर्यस्ततारकापुञ्जमिव, पश्चिमाचलम्, आभरणप्रभापिशङ्गिताङ्गतया लग्नहरहुताशमिव मकरध्वजम्, आसन्नवर्तिनीभिः सर्वतः सेवार्थमागताभिरिव दिग्वधूभिर्वारविलासिनीभिः परिवृतम् अमल-मणिकुट्टिमसङ्क्रान्तसकलदेहप्रतिबिम्बतया पतिप्रेम्णा वसुन्धरया हृदयेनेवोह्यमानम्, अशेषजनभोग्यतामुपनीतयाप्यसाधारणया राजलक्ष्म्या समालिङ्गितम् अपरिमितपरिवारजनमप्यद्वितीयम्, अनन्त–

गजतुरगसाधनमपि खड्गमात्रसहायम् एकदेशस्थितमपि व्याप्तभुवन-मण्डलम्, आसने स्थितमपि धनुषि निषण्णम्, उत्सादिताशेषद्विष-दिन्धनमपि ज्वलत्प्रतापानलम्, अयतलोचनमपि सूक्ष्मदर्शनम् महादोषमपि सकलगुणाधिष्ठानम्, कुपतिमपि कलत्रव-ल्लभम्, अविरतप्रवृत्तदानमप्यमदम्, अतिशुद्धस्वभावमपि कृष्ण-चरितम्, अकरमपि हस्तस्थितसकलभुवनतलं राजानमद्राक्षीत् ।

हिन्दी-अनुवाद–(जो) अत्यन्त सुगन्धित चन्दन के अङ्गराग (अनुलेपन) के कारण शुभ्रीकृत वक्षःस्थल वाला तथा (वक्षःस्थल के) ऊपर कुङ्कुम से बने हुए हस्तबिम्बों (हाथ या उँगलियों की छाप) वाला अतएव बीच-बीच में पड़ने वाले (सूर्य के) नूतनप्रकाशखण्डों से युक्त रजतगिरि कैलास के समान प्रतीत होने वाला, (था । जो) दूसरे चन्द्रमा की भ्रान्तिवश, नक्षत्रमण्डल जैसी प्रतीत होने वाली (परितःस्थित) मुक्तामयी हारलता द्वारा परिवेष्टित मुख-मण्डल वाला,(था । जो)अत्यन्त चंचल साम्राज्यलक्ष्मी के नियमनार्थ(प्रयुक्त) शृङ्खला का भ्रम उत्पन्न करने वाले तथा चन्दनरस की सुगन्धि में समासक्त-सर्पयुगल प्रतीत होने वाले (ऐसे) इन्द्रनीलमणिखचित केयूरयुगल (दो बाजू-बन्दों) से समादृत दोनों भुजाओं वाला,(था । जो)कुछ लटकते हुए कर्णोत्पल (कमल के आकार वाले कर्णाभरण) वाला, (था । जो) उन्नतनासिका वाला, (था । जो) खिले हुए श्वेतकमल की भांति नेत्रोंवाला,(था । जो) निष्कलङ्क सुवर्णफलक की भांति विशाल, (था । जो) अष्टमीतिथि के चन्द्रांश की भाँति आकृति वाला, (था । जो) समग्र भुवनों के राज्याभिषेक के जल से पवित्र, (था । जो) ऊर्णा अर्थात् दोनों भौंहों की मध्यवर्तिनी रोमराजि से संवलित ललाटभाग को धारण करने वाला,(था । जो) परिमलयुक्त मालतीपुष्पों के शिरो-भूषण से युक्त अतएव प्रभातवेला में चोटियों में पर(इतस्ततः)छिटके हुए नक्षत्र मण्डल वाले अस्ताचल सा प्रतीत होने वाला,(था । जो)आभूषणों की चमक से लाल-पीले बनाये गये अङ्गों के कारण भगवान शङ्कर की(तृतीयनेत्रजनित)अग्नि द्वारा संग्रस्त अर्थात् जलते हुए कामदेव-सा प्रतीत होनेवाला,(था । जो)सेवा के

निमित्त चतुर्दिक् से आई हुई दिवाङ्गनाओं सी प्रतीत होने वाली निकटस्थायिनी वाराङ्गनाओं से घिरा हुआ, (था । जो) स्वच्छ (चन्द्रकान्तादि) मणियों से निर्मित बद्धभूमि (फर्श) में समूची शरीर की परछाई दिखाई पड़ने के कारण मानो प्रियतमानुरागवश (पत्नीकल्प) पृथ्वी द्वारा हृदय से धारण किया जा रहा, (था । जो) सम्पूर्ण लोक अर्थात् सर्वसाधारण द्वारा उपभुक्त की जाने पर भी अलोक्यसामान्य (सर्वोत्कृष्ट) साम्राज्यश्री द्वारा समालिङ्गित शरीरवाला, (था । जो) असंख्य परिजनसमूहवाला होकर भी एकाकी, (अर्थात् अतुलनीय, सर्वोत्कृष्ट था–विरोधपरिहार)अनन्त गजो तथा अश्वों रूपी सैन्योपकरणों वाला होकर भी एकमात्र सहायक खड्ग वाला, (अर्थात् युद्ध में तलवार का धनी था-वि० परि०) एक स्थान अर्थात् सभामण्डपादि अथवा जनपदादि में स्थित होता हुआ भी समस्त भुवनमण्डल में व्याप्त, (अर्थात् समस्त भूमण्डल में विख्यात था–वि० परि०) भद्रासन पर विराजमान होकर भी धनुष् पर समासीन, (अर्थात् नाम में स्थित था--वि० परि०) समस्त शत्रुवर्ग रूपी ईंधन को भस्म कर देने वाला होकर भी प्रज्वलित प्रतापाग्नि वाला, (अर्थात् सुशोभित प्रतापाग्निवाला था–वि० परि०) विशाल नेत्रोंवाला होता हुआ भी अविपुल (छोटे) नेत्रोंवाला (अर्थात् अध्यात्मविषयक ज्ञान से सम्पन्न था–वि० परि०) महान् दोषों वाला (अर्थात् विशाल भुजाओं वाला–वि० परि०) होता हुआ भी समग्र गुणो का भण्डार, (था । जो) कुपति अर्थात् दुष्टपति (कु=पृथ्वी का स्वामी–वि० परि०) होता हुआ भी रमणीजनों का प्रिय (था । जो) निरन्तर प्रवर्तमान दान अर्थात् मदजल) वाला होकर भी 'मदविहीन' (अर्थात् निरन्तर दान-पुण्य करता हुआ भी जो गर्वरहित था–वि० परि०) अत्यन्त पवित्र स्वभाव का होता हुआ भी कृष्ण अर्थात् अपवित्र आचरण वाला, अर्थात् भगवान कृष्ण की भाँति लोकोत्तर चरितवाला था–वि० परि०) कर (हाथ) से विहीन होता हुआ भी करस्थित समस्त भूमण्डल वाला (अर्थात् कर=दण्ड या राजकर न लेता हुआ भी समस्त भूमण्डल को करस्थित=अधिकृत किये हुए था—वि० परि०) ।

संस्कृत-व्याख्या—अतिसुरभिचन्दनानुलेपनधवलितोरःस्थलम् = अतिसुरभि-

चन्दनानुलेपनेन अतिसुगन्धिचन्दनाङ्गरागेण धवलितं शुभ्रीकृतम् उरःस्थल वक्षः-स्थलं यस्य तम्, **उपरिविन्यस्तकुङ्कुमस्थासकं**=उपरिविन्यस्ताः विहिताः कुङ्कुमस्य केशरस्य स्थासकाः हस्तबिम्बाः यस्य तं, "स्थासकं हस्तबिम्बम्" इत्यमरः, **अन्तरानिपतितबालातपच्छेदम्**=अन्तरा मध्ये मध्ये निपतिताः पर्यस्ताः बालातपच्छेदाः अभिनवोदितसूर्यकिरणखण्डाः यस्य तं, **कैलासशिखरिणं**=हिमाचलम्, **इव**=इत्युपमायाम्, **अपरशशिशंकया**=अपरः अन्यः यः शशी चन्द्रः तस्य शकया भ्रान्तया, **नक्षत्रमालया**=तारापङ्क्त्या, **इव**= उत्प्रेक्षायाम्, **हारलतया**=मुक्तास्रजा, **कृतमुखपरिवेषम्**=कृतः विहितः मुखस्य आननस्य परिवेषः परिधिः यस्य सः तम्, **अतिचलराजलक्ष्मीबन्धननिगडशङ्कां** =अतिचपला अत्यन्तचञ्चला या राजलक्ष्मीः राजश्रीः तस्याः बन्धनं तस्मै यः निगडः शृंखला तस्य शङ्कां भ्रान्तिम्, **उपजनयता**=कुर्वता, **इन्द्रनीलकेयूरयुगलेन**=इन्द्रनीलखचिताङ्गदयुगलेन, **मलयजरसगन्धलुब्धेन**=मलयजः चन्दनः तस्य रसः इव तस्य गन्धेन हरिमलेन लुब्ध आसक्तः तेन, **भुजंगद्वयेन** =सर्पयुगलेन इव, **वेष्टितबाहुयुगलं**=वेष्टितं परिक्षिप्तं बाहुयुगलं भुजद्वयं यस्य तम्, **ईषदालम्बिकर्णोत्पलं**=ईषद् किञ्चिद् आलम्बिनी लम्बमाने कर्णोत्पले कमलाकृति कर्णभूषणविशेषे यस्य तम्, **उन्नतघोणं**=उन्नता उच्चा घोणा नासिका यस्य तम्, **उत्फुल्लपुण्डरीकलोचनं**=उत्फुल्लं विकसित पुण्डरीकं श्वेताम्भोजं तद्वत् लोचने नयने यस्य सः तम्, **अमलकलधौतपट्टायतं**=अमलं स्वच्छं यत् कलधौतं सुवर्ण तस्य यः पट्टः फलकं तद्वत् आयतं विस्तीर्णम्, **अष्टमीचन्द्रशकलाकारं**=अष्टमीचन्द्रस्य अष्टम्यां तिथौ उदितस्य चन्द्रमसः यत् शकलं खण्डः तद्वदाकारः आकृतिः यस्य तम्, **अशेषभुवनराज्याभिषेकसलिलपूतं**=अशेषाणि समस्तानि भुवनानि तेषां राज्यम् आधिपत्यं तस्य अभिषेकसलिलं मंगलस्नानजलं तेन पूतं पवित्रम्, **ऊर्णासनाथं**=ऊर्णया भ्रूयुग्म-मध्यवर्तिना लोमावर्तेन सनाथं युक्तम्, **ललाटदेशं**=मस्तकप्रान्तं, **उद्वहन्तं**= धारयन्तम्, **आमोदितमालतीकुसुमशेखरं**=आमोदितानि सुरभीणि यानि मालतीकुसुमानि जातीपुष्पाणि तान्येव शेखरः शिरोभूषणं यस्य सः तम्, अतएव **उषसि**=प्रातःकाले, **शिखरपर्यस्ततारकापुञ्जं**=शिखरे शृंगे पर्यस्ताः

समवेताः तारकाणां नक्षत्राणां पुञ्जाः राशयः यस्मिन् तम्, **पश्चिमाचलं**= अस्ताचलम्, **इव** =उत्प्रेक्षायां **आभरणप्रभापिशंगितांगतया**=आभरणप्रभया अलङ्कारदीप्त्या पिशङ्गितानि पिङ्गलवर्णीकृतानि अङ्गानि अवयवाः यस्य तस्य भावः तत्त तया, **लग्नहरहुताशम्** = संसक्त शंकर तृतीय नेत्रवह्निम्, **मकरध्वज** = कामदेवम् इव, **आसन्नवर्तिनीभिः** =निकटस्थिताभिः सर्वतः, **सेवार्थ**=परिचर्यार्थम्, **आगताभिः** =प्राप्ताभिः, **दिग्वधूभिः**= दिशः एव वध्वः स्त्रियः ताभि **इव**, **वारविलासिनीभिः** =वेश्याभिः, **परिवृतम्**=परिवेष्टितम्, **अमलमणिकुट्टिमसंक्रान्तसकलदेहप्रतिबिम्बतया**=अमलाः अतिनिर्मलाः ये मणयः तैः कुट्टिमाः बद्धभूमयः तत्र संक्रान्तं सञ्चरितं यत् सकलदेहप्रतिबिम्बं समस्तशरीरप्रतिच्छायः तस्य भावः तत्त तया, **परिप्रेम्णा**=स्वामिप्रीत्या, **वसुन्धरया**=पृथिव्या, **हृदयेन**=चेतसा, **उह्यमानं**=धार्यमाणम्, इव, **अशेषजनभोग्यतां**=सर्वसाधारणोपभोग्यत्वम्, **उपनीतया**=संप्राप्तया अतएव **सर्वसाधारणयाअपि**=सर्वसामान्यापि, **असाधारणया**=असामान्यथा वा, अत्र विरोध, अन्यजनानां समीपे एतादृशी राजलक्ष्मीः न विद्यते अतः सर्वोत्कृष्टया इति तत्परिहारः, **राजलक्ष्म्या**=राज्यश्रिया, **समालिङ्गितं**=सम्यग् आलिंगितम्, **अपरिमितपरिवारजनमपि**=अपरिमिताः अगणिताः परिवारजनाः कुटुम्बिजनाः यस्य सः तम् अपि, **अद्वितीयं**=द्वितीयजनरहितम् इति विरोधः सर्वोत्कृष्टमिति परिहारः, **अनन्तगजतुरगसाधनमपि**=अनन्तानि असंख्यानि गजाः करिणः तुरगाः अश्वाः तेषां साधनानि उपकरणानि यस्य सः तमपि, **खड्गमात्रसहायं**=केवलं खड्ग खड्गमात्रं सहायः यस्य सः तम् अत्र विरोधः तस्य परिहारस्तु स्वखड्गबलेनैव विजयं प्राप्तवानिति, **एकदेशस्थितमपि**=एकस्मिन् जनपदे वर्तमानमपि, **व्याप्तभुवनमण्डलं**=व्याप्त समाक्रान्तं भुवनमण्डलं समस्तभुवनं येन तम् इति-विरोधः व्याप्तं भुवनमण्डलं येन तम् इति तत्परिहारः, **आसने** = सिंहासने, **स्थितमपि** =अवस्थितमपि **धनुषि**=चापे, **निषण्णं**=स्थितमिति विरोधः, धनुषि विजयविश्ववासनमिति परिहारः, **उत्सादिताशेषद्विषदिन्धनं**= उत्सादितानि विनाशितानि द्विषन्तः रिपवः एव इन्धनानि येन सः तम् अपि, **ज्वलत्प्रतापानलं** ज्वलनं ज्वालां प्रकटयन् प्रतापः एव अनलः अग्नि यस्य तम्, अत्र इन्धनना-

शेऽपि ज्वलनं इति विरोधः तत्परिहारस्तु ज्वलत इत्यस्य अर्थः देदीप्यमानः, **आयतलोचनमपि**=आयते विस्तीर्णे लोचने चक्षुषो यस्य तं तथाविधमपि, **सूक्ष्मदर्शनं**=सूक्ष्मे अविपुले दर्शने लोचने यस्य तमिति विरोधः सूक्ष्मे अध्यात्मविषये दर्शनं ज्ञानं यस्येति परिहारः, **महादोषमपि**=महान् बहुः दोषोऽवगुणों यस्मिन् सः तादृशमपि, **सकलगुणाधिष्ठानं**=समस्तगुणाश्रयमिति विरोधः महान्तौ दीर्घौ यस्य तमिति परिहारः, **कुपतिमपि**=कुत्सितस्वामिनमपि, **कलत्रवल्लभम्**=स्त्रीजनप्रियमिति विरोधः, कुः पृथ्वी यस्याः पतिः स्वामीति परिहारः, **अविरतप्रवृत्तदानमपि**=अविरतं निरन्तरं प्रवृत्तं दानं मदजलं यस्य तम् एवं भूतमपि **अमदं**=मदजलरहितमिति विरोधः, अविरतं सन्ततं दानं द्रव्यादिवितरणं यस्य तं तादृशमपि, अमदं गर्वशून्यमिति तत्परिहारः, **अतिशुद्धस्वभावमपि**=अत्यन्तशुद्धप्रकृतिमपि, **कृष्णचरितं**=कृष्णं मलिन चरितम् आचारः यस्य तमिति विरोधः, कृष्णस्य वासुदेवस्य चरितमिव चरितं यस्य तमिति तत्परिहारः, **अकरमपि**=कररहितमपि, **हस्तस्थितसकलभुवनतलं**=हस्ते करे स्थितं सकलं समग्रं भुवनतलं भूमण्डलं यस्य तमिति विरोधः परिहारस्तु न विद्यते करः राजग्राह्यद्रव्यसम्प्रदानं यस्य तं तथाविधम् । **राजानं**=नृपतिं शूद्रकम्, **अद्राक्षीत्**=विलोकयामास ।

टिप्पणी–**धवलित**–धवल+इतच् । **स्थासक**–स्था+स+क, हथेली पर केसर आदि लगाकर लगाया गया छापा । कोषकार ने भी लिखा है "**स्थासकं** हस्तबिम्बम्, **कैलासशिखरिणमिव**—यहाँ **उपमालंकार** है । '**शशिशंकया**'–शशिशङ्कया में **भ्रान्तिमान्** नक्षत्रमालया में **उत्प्रेक्षालंकार** है । इन दोनों में **अङ्गाङ्गिभाव संकर** है और इसके द्वारा मुख का चन्द्रसाम्य तथा हारलता का अत्यन्त **नैर्मल्य** ध्वनित होता है इस प्रकार यहाँ अलंकार से वस्तुध्वनि है । **निगडः**=श्रृंखला जंजीर । **केयूरयुगल**=बाजूबन्द का जोड़ा । **वेष्टित**–वेष्ट+क्त । '**निगडशंकामुपजनयता**' **में**–**भ्रान्तिमान्** तथा **भुजङ्गद्वयेनेव** में **उत्प्रेक्षालंकार** है और इन दोनों का **अंगांगिभाव संकर** है । **कर्णोत्पल**=कान का आभूषण विशेष, कर्णफूल । **घोणा**–नासिका **उत्फुल्लपुण्डरीकलोचनं**, अमल-

कलधौतपट्टायतं, **अष्टमीचन्द्रकलाकरं**, यहाँ सर्वत्र **लुप्तोपमालंकार** है। **कलधौत**–सुवर्ण। **ऊर्णा**–दोनों भौंहो के मध्य में स्थित रोमनिर्मित आवर्त, जो कि सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार महापुरुषों के ही पाया जाता है। "भ्रूद्वयमध्ये मृणालतन्तुसूक्ष्ममशुभ्रायतमेकं प्रशस्तावर्त्त महापुरुषलक्षणम्।" **पिशिङ्गित**–पीले किये गये। **मकरध्वज**–कामदेव। **शिखरपर्यस्ततारकापुञ्जमिव**–में उपमालंकार है। **आभरण.........मकरध्वजम्**–यहाँ भी **उपमालंकार** है। **सेवार्थमागताभिरवि-दिग्वधुभिरिव**–यहाँ **रूपक** एवं **उत्प्रेक्षा** आदि अलङ्कार है। **उह्यमानं**–वह् + यक् + शानच्। **मणिकुट्टिम** -मणिजटितफर्श। **हृदयेनेव**–यहाँ **उत्प्रेक्षालङ्कार** है। **अशेषजन............भुवनतलम्** इस अंक में श्लिष्ट पदों के द्वारा **विरोधाभास अलंकार** की योजना है। जहाँ विरोध का आभास मात्र होता है, और वास्तविक विरोध नहीं होता है वहाँ विरोधाभास अलङ्कार होता है। इस वाक्यांश में सर्वत्र विरोध का आभास होना है और श्लेष के द्वारा विरोध का परिहार हो जाता है। **व्याप्तम्** = (क) विरोधपक्ष में —व्यापक होकर स्थित होना, (ख) परिहारपक्ष में—प्रसिद्ध होना **निषण्ण**–नि √सद् + क्त—(क) विरोध पक्ष पक्ष में—बैठे हुए को (ख) परिहार पक्ष में—निश्चित होकर आश्रित रहने वाले को, **ज्वलत्**—(क) विरोधपक्ष में—जलती हुई (ख) परिहारपक्ष में—देदीप्यमान। **सूक्ष्म**—(क) विरोधपक्ष में अविपुल (ख) परिहारपक्ष में–अध्यात्म विषयक ज्ञान। **महादोष**–(क) विरोधपक्ष में–बहुत से दुर्गुणों वाले को। (ख) परिहार पक्ष में—बड़ी भुजाओं वाले को। **कुपति**—(क) विरोधपक्ष में–दुष्टपति (ख) परिहारपक्ष में पृथ्वीपति। **दान**—(क) विरोधपक्ष में—मदजल (ख) परिहारपक्ष में—धन आदि का देना। **मद**—(क) विरोध में—मदजल, (ख) परिहारपक्ष में—अहंकार। **कृष्णचरित**—(क) विरोधपक्ष में—बुरे चरित्रवाला (ख) परिहारपक्ष में—श्रीकृष्ण जैसे आचरणवाला। **अकर**—(क) विरोधपक्ष में—बिना हाथवाला, (ख) परिहारपक्ष में—कर अर्थात् टैक्स न लेने वाला, **अद्राक्षीत्** = दृश् लुङ् प्र० पु० ए० व०।

आलोक्य च सा दूरस्थितैव प्रचलितरत्नवलयेन रक्तकुवलयदल-

कोमलेन पाणिना जर्जरितमुखभागां वेणुलतामादाय नरप्रतिप्रबोधनार्थं सकृत्सभाकुट्टिममाजघान, येन सकलमेव तद्राजकम् एकपदे, वनकरियूथमिव तालशब्देन तेन वेणुलताध्वनिना युगपदावलितवदममवनिपालमुखादाकृष्य चक्षुस्तदभिमुखमासीत् ।

हिन्दी-अनुवाद—(महाराज शूद्रक को) देखकर, दूर से ही खड़ी हुई उस (चान्डालकन्या) ने प्रकम्पित मणिखचित कङ्कण वाले तथा अरुणिम कमलपत्र के समान सुकुमार हाथ से जर्जरीभूत (बिखरे हुए) अग्रभाग वाले बाँस की लाठी को थामकर महाराज को (अपनी ओर) आकृष्ट करने के लिए सभामण्डप के फर्श को एक बार पीटा जिससे कि वह समस्त राजमण्डल एक ही साथ मुँह पीछे घुमाकर, महाराज (शूद्रक) के मुँह की ओर से आँखे हटाकर तत्काल उस (मातङ्गकन्या) की ओर अभिमुख हो गया जैसे ताल (एक वाद्यविशेष) ध्वनि से वनैले हाथियों का दल एक ही साथ (ध्वनि की दिशा में) मुँह घुमा लेता है ।

संस्कृत-व्याख्या—**आलोक्य**=भूपतिं दृष्ट्वा, **च सा**=चाण्डालकन्यका, **दूरस्थितैव**=दूरदेशे वर्तमाना एव, **प्रचलितरत्नवलयेन**=प्रकम्पितमणिखचितकङ्कणेन, **रक्तकुवलयदलकोमलेन**=रक्तं शोणितं यत्कुवलयं कमलं तद्वत् कोमलेन, मृदुलेन, **पाणिना**=करेण, **जर्जरितमुखभागाम्**=जर्जरितः जीर्णः मुखभागः अग्रभागो यस्याः सा तां तथोक्ताम्, **वेणुलता**=वंशयष्टिम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **नरपतिप्रबोधनार्थं**=नरपतेः नृपतेः शूद्रकस्य प्रबोधनार्थं स्वाभिमुखीकरणार्थम्, **सकृत्**=एकवारं, **सभाकुट्टिकं**=सभाबद्धभूमिम्, **आजघान**=ताडयामास । **येन**=आघातेन, **सकलमेव**=समस्तमेव, **तद्राजकं**=नृपतिसमूहः, राज्ञां समूहः राजकम्, **एकपदे**=तत्कालमेव, 'तत्क्षणैकपदे तुल्ये' इति हलायुधः; **तालशब्देन**=तालः कांस्यकरतालः तस्य शब्देन ध्वनिना, **वदकरियूथमिव**=वनकारिणां वन्यहस्तिनां यूथं समूह इव, **तेन**=पूर्वोक्तेन, **वेणुलताध्वनिना**=वेणुलता वंशयष्टिः तस्य ध्वनिना शब्देन, **युगपद्**=एककालम्, **आविलतवदनं**=आवलितं परावर्तितं वदनं मुखं येन एवम्भूतम्, **अवनिपालमुखात्**=नृपतिमुखात्, **आकृष्य**

=आकर्षणं कृत्वा, **चक्षुः**=लोचनं, **तदभिमुखं**=चाण्डालकन्यायाः सम्मुखम् **आसीत्**=अभवत् ।

टिप्पणी–आलोक्य—आ+लोक्+क्त्वा—ल्यप् । **प्रचलितरत्नवलयेन**—प्रचलितं रत्नवलयं यस्य तेन—यह हाथ का विशेषण है । अर्थात् जिस हाथ में रत्नजटित कङ्कण हिल रहा था । **रक्तकुवलयदलकोमलेन**—रक्तं यत्कुवलयं तस्य दलवत् कोमलेन, लाल कमल के दल के समान कोमल यह भी साथ का विशेषण है । यहाँ **लुप्तोपमालंकार** है । **आजघान**—आ√हन् लिट् प्र० पु० ए० व० । **राजकम्**—राज्ञां समूहः–राजन्+वुञ्—अक । **आकृष्य**—आ+कृष्+क्त्वा—ल्यप् । **वनकरियूथमिव**— में **उपमालंकार** है ।

अवनिपतिस्तु 'दूरादालोकय' इत्यभिधाय प्रतीहार्य्या निदिश्यमानां तां वयःपरिणामशुभ्रशिरसा, रक्तराजीवेक्षणापाङ्गेनानवरतकृतव्यायामतया यौवनापगमेऽप्यशिथिलशरीरसन्धिना सत्यपि मातङ्गत्वे नातिनृशंसाकृतिनाऽनुगृहीतार्यवेशेन शुभ्रवाससा पुरुषेणाधिष्ठितपुरोभागाम् ।

हिन्दी-अनुवाद—नरेश ने अपलक (निर्निमेष) दृष्टि से उस (चाण्डाल कन्या) को देखा—जो 'दूर से (महाराज का) दर्शन करो' ऐसा कह कर प्रतिहारी द्वारा परिचित कराई जा रही थी, जो वार्द्धक्यावस्था के कारण श्वेत शीशवाले, लाल कमल के समान नयनों के अपाङ्ग (प्रान्त) भाग वाले, निरन्तर व्यायाम (परिश्रम) करने के कारण, तरुणाई बीत जाने के बावजूद भी सुदृढ़ शरीर के अस्थिबन्धों (जोड़ों) वाले, चाण्डालपना होने पर भी अत्यधिक क्रूर आकृति वाले नहीं अर्थात् उदार आकृतिवाले तथा सभ्य वेशभूषा धारण किये हुए धवल वस्त्रों से सुसज्जित पुरुष द्वारा अधिष्ठित अग्रभाग वाली थी ।

संस्कृत-व्याख्या—अवनिपतिस्तु=राजा शूद्रकस्तु, **अनिमिषलोचनः**=निमेषोन्मेषवर्जितनयनः, **तां**=चाण्डालकन्यकां, **ददर्श**=विलोकयामासेति दूरे-

णान्वयः । **दूरादालोकय**=हे चाण्डालकन्ये त्वं खलु दूरादेव शुकं दर्शय, यतोहि चाण्डालकन्यायाः नृपसमीपगमनं नोचितम्: **इत्यभिधाय**=एवमुक्त्वा, **प्रतीहार्या** =द्वारपालिकया **निर्दिश्यमानां**=ज्ञाप्यमानाम, **ताम्**= चाण्डालकन्यकाम् **वयःपरिणामशुभ्रशिरसा**=वयसः अवस्थायाः परिणामेन वार्धक्येन शुभ्रं श्वेतं शिरो मूर्द्धा यस्य सः तेन, **रक्तराजीवेक्षणापाङ्गेन**=रक्तं लोहितं राजीवं कमलं तद्वत् नेत्रापाङ्गौ लोचनप्रान्तौ यस्य सः तेन, **अनवरतकृतव्यायामतया**= अनवरतं सततं कृतो विहितो व्यायामः परिश्रमः येन तस्य भावस्तत्त तया, **यौवनापगमेऽपि**=यौवनं तारुण्यं तस्य अगमेऽपि समाप्तावपि, **अशिथिलशरीर-सन्धिना**=अशिथिलाः बृढ़ाः शरीरसन्धयः देहबन्धाः यस्य सः तेन, मातङ्गत्वे-चाण्डालत्वे, **सत्यपि नातिनृशंसाकृतिना**=नातिनृशंसा नातिक्रूरा आकृतिः स्वरूपं यस्य तेन, **अनुगृहीतार्यवेशेन**=अनुगृहीतः स्वीकृतः आर्यवेशः सभ्यनेपथ्यं येन स तेन, **शुभ्रवाससा**=धवलवस्त्रेण, **पुरुषेण**=मनुष्येण **अधिष्ठितपुरोभा-गाम्**=अधिष्ठितः आश्रितः पुरोभागः अग्रभागः यस्याः सा, ताम् ।

टिप्पणी-अभिधाय–अधि√धा+क्त्वा–ल्यप्=कहकर । **निर्दिश्यमानाम्** –निर्√दिश्+यक्+शानच्–निर्दिष्ट की जाती हुई चाण्डाल कन्या को । '**वयः परिणामशुभ्रशिरसा**' से लेकर '**शुभ्रवाससा**' तक समस्त पद पुरुरेण के विशेषण हैं । '**रक्तराजीवनेत्रापाङ्गेन**' **में लुप्तोपमालंङ्कार है** । **मातङ्गत्वे**— मातङ्गस्य भावः मातङ्ग+त्वल्=मातङ्गत्वं, तस्मिन् मातङ्गत्वे, 'चाण्डालप्ल वमातङ्गदिवाकीर्तिजनङ्गमाः' इत्यमरः । **आर्य**-सज्जन, 'कर्तव्यमाचरन् काममकर्तव्यमनाचरन् । तिष्ठति साध्वाचारे यः स आर्य इति स्मृतः' ।। **अधिष्ठित**— अधि√स्था+क्त, आश्रित ।

आकुलाकुलकाकपक्षधारिणा कनकशलाकानिर्मितमप्यन्तर्गतशुक-प्रभाश्यामायमानं मरकतमयमिव पञ्जरमुद्वहता चाण्डालदारकेणानु-गम्यमानाम्, असुरगृहीतामृतापहरणकृतकपटपटुविलासिनीवेशस्य श्यामतया भगवतो हरेरिवानुकुर्वतीम्, सञ्चारिणीमिवेन्द्रनीलमणि पुत्रिकाम् आगुल्फावलम्बिना नीलकञ्चुकेनाच्छन्नशरीराम्, उपरि-

रक्तांशुकविरचितावगुण्ठनां नीलोत्पलस्थलमिव निपतितसन्ध्यातपाम्, ।

हिन्दी-अनुवाद—जो सुनहरी सींकों से निर्मित होने पर भी भीतर बैठे हुए शुक (पक्षी) की कान्ति से सँवराए हुए अतएव मानो हरिन्माण से खचित पिंजरे को ढोते हुए तथा इधर-उधर छितराये हुए काकपक्षों (घुँघराली लटों) को धारण किये हुये चाण्डाल बालक द्वारा अनुगम्यमान थी, जो (अपने शरीर) की श्यामता के कारण—दानवों द्वारा अधिकृत अमृत का अपहरण करने के निमित्त कपटपूर्ण दीठ मोहनी नारी के वेश को धारण करने वाले भगवान् विष्णु का मानो अनुकरण कर रही थी, जो सञ्चरण करने वाली इन्द्रनील मणिखचित पुत्तलिका (पुतली) प्रतीत हो रही थी, जो घुटनों तक लटकने वाले आसमानी घाँघरे से आच्छादित शरीर वाली ऊर्ध्वप्रदेश अर्थात् शिरोभाग पर लाल ओढ़नी से घूँघट काढ़े हुये, अतएव सान्ध्यकालीन अर्थात् ललछौंही धूप से युक्त नीलकमलों से भरी धरती प्रतीत हो रही थी ।

संस्कृत-व्याख्या—**आकुलाकुलकाकपक्षधारिणा**=आकुलाकुलः इतस्ततः संलग्न यः काकपक्षः शिखण्डकः तं धारयितुं शीलं यस्य तेन, 'काकपक्षः शिखण्डकः' इत्यमरः, **कनकशलाका-निर्मितमपि**= कनकशलाकाः सुवर्णशलाकाः ताभिः निर्मितमपि रचितमपि, **अन्तर्गतशुकप्रभाश्यामायमानम्**=अन्तर्गतस्य मध्यस्थितस्य शुकस्य कीरस्य प्रभा कान्तिस्तया श्यामायमानं श्यामवर्णवदाचरत्, श्यामवर्णमिव दृश्यमानमित्यर्थः, **मरकतमयमिव**=मरकतमणिजटितमिव, **पञ्जरं**=पक्षिरक्षण-भवनम्, **उद्वहता**=धारयता, **चाण्डालदारकेण**=अन्त्यजसुतेन, **अनुगम्यमानां**=अनुगमनं क्रियमाणाम्, **असुरगृहीतामृतापहरणकृतकपटपटुविलासिनीवेशस्य**=असुरैः राक्षसैः गृहीतम् अपहृतं यदमृतं सुधा तस्यापहरणे अपहृतौ कृतो विहितः कपटो व्याजपूर्णः पटुः चातुर्ययुक्तः विलासिनीवेशो मोहिनीस्त्रीस्वरूपं येन तस्य, **भगवत हरेः**=विष्णोः, **श्यामतया**=तुल्यकृष्णवर्णतया, **अनुकुर्वतीमिव**=सादृश्यमनुभवन्तीमिव, **सञ्चरिणीम्**=सञ्चरणशीलाम्, **इन्द्रनीलमणिपुत्रिका**=नीलकांतमणिनिर्मितपुत्तलिकाम्, **इव**=उत्प्रेक्षायाम्, **आगुल्फावल**

म्बिना=घुटिकापर्यन्तपातिना, **नीलकञ्चुकेन**=नीलवर्णकार्पासकेन, **आच्छन्न-शरीरां**=आवृतगात्राम्, **उपरि**=ऊर्ध्वप्रदेशे, **रक्तांशुकविरचितावगुण्ठनां**=रक्तांशुकेन लोहितवर्णवस्त्रेण विरचितं कृतम् अवगुण्ठनं मुखाच्छादनं यया सा ताम्, अतएव **निपतितसन्ध्यातपां**=निपतितः उपरि प्राप्तः सन्ध्यातपः सन्ध्याकालीनः सूर्यकिरणः यस्यां तां, **नीलोत्पलस्थलीमिव**=कुवलयकृत्रिमभूमिमिव ।

टिप्पणी—आकुलाकुल—इधर-उधर फैले हुए । **काकपक्ष**—विशेष प्रकार से सजाये गये बालकों के केश, 'सा बालानां काकपक्षः शिखण्डकशिखाण्डकौ' इति कोषः । **श्यामायमानम्**—अश्यामं श्यामं सम्पद्यत इति श्यामायमानम्-श्यामवर्ण के होते हुए । श्याम+क्यङ्+शानच् । यहाँ 'श्यामायमानम्' में क्यङ् गत **उपमा** है तथा '**मरकतमयमिव**' में क्रियोत्प्रेक्षा अलंकार है । अतएव **अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर** । **उद्वहता**--उत्√वह+शतृ, तृ० ए० व०—धारण करते हुए के द्वारा **अनुगम्यमानाम्—अनु**√गम्+यक्+शानच्+टाप् द्वि० ए० –अनुगमन की जाती हुई को । '**असुरगृहीत**......' श्रीमद्भगवत महापुराण की कथा है कि देवताओं तथा असुरों ने मिलकर समुद्र का मन्थन किया । समुद्र-मन्थन से निकले हुए अमृत को दैत्यों ने देवताओं को न देकर स्वयं ले लिया । ऐसा देखकर भगवान् विष्णु ने मोहनी रूप धारण कर राक्षसों को धोखा देकर उस अमृत को देवताओं को दिया । **भगवान्**—भग+मतुप्, भगवान का लक्षण—"उत्पत्ति च स्थिति चैव लोकानामगतिं गतिम् । वेत्ति विद्यामविद्यां च स ज्ञेयोभगवानिति ।।" '**अनुकुर्वतीमिव**'—में **क्रियोत्प्रेक्षालंकार** । **सञ्चारिणीमिव**—सम्√चर्+णिनि+ङीप्, द्वि० ए० व०—गमनशील, यहाँ **उत्प्रेक्षालंकार** है । **पुत्रिका**—पुतली । **गुल्फ**—पैर की एड़ी के पास की गाँठ । **अवगुण्ठन**—घूँघट । '**नीलोत्पलस्थलीमिव**' में **उपमालंकार** है ।

एककर्णावसक्तदन्तपत्रप्रभाधवलितकपोलमण्डलाम्, उद्यदिन्दुकिरणच्छुरितमुखीमिव विभावरीम्, आकपिलमोगोरोचनारचिततिलकतृतीयलोचनाम्, ईशानुरचितकिरातवेशामिव भवानीम् उरःस्थलनिवास-

सङ्क्रान्तनारायणदेहप्रभाश्यामलितामिव श्रियम्, कुपितहरहुताशनदह्यमानमदनधूममलिनीकृतामिव रतिम्, उन्मदहलिहलाकर्षणभयपलायितामिव कालिन्दीम्, अतिबहलपिण्डालक्तकरसरागपल्लवितपादपङ्कजाम्, अचिरमृदितमहिषासुररुधिररक्तचरणामिव कात्यायनीम् ।

हिन्दी-अनुवाद—जो एक कान में पहने गये विशिष्ट कर्णाभरण की दमक से शुभ्रीकृत कपालमण्डल वाली अतएव उदीयमान चन्द्रमा की किरणों से (अन्धकारनाश के कारण) आलोकित मुख (प्रदोषारम्भ) वाली रात्रि-सी प्रतीत हो रही थी, जो कुछ-कुछ कपिल (लाल-पीली) वर्ण वाली गोरोचना से विरचित तिलक रूपी तृतीय नेत्रवाली अतएव देवाधिदेव शङ्कर द्वारा रचित (किरात) वेष की देखा देखी धारण किये गये किरातिनी के वेषवाली पार्वती-सी प्रतीत हो रही थी, जो वक्षःस्थल में निवास करने के कारण प्रतिबिम्बित होने वाली नारायण की (श्याम) देहप्रभावश श्यामता प्राप्त लक्ष्मी-सी प्रतीत हो रही थी, जो क्रोधाविष्ट शङ्कर की (तृतीयनेत्रजनित) अग्नि से सन्दग्ध किये जाते हुए कामदेव के (दाह से उठे हुए) धुएँ से मलिन बनाई गई (कामप्रिया) रति के समान थी, जो प्रचण्ड गर्व वाले (कृष्णाग्रज) बलभद्र के हलाकर्षण-भय से भागी हुई यमुना-सी प्रतीत हो रही थी, जो अति प्रचुर मात्रा वाले पिण्डीभूत महावर के रस की लालिमा के कारण नई कपोल के समान चरण कमलों वाली अतएव तत्काल मारे गये (दैत्य) महिषासुर के रुधिर से अरुणिम चरणों वाली भगवती दुर्गा-सी प्रतीत हो रही थी ।

संस्कृत-व्याख्या—**एककर्णविसक्तदन्तपत्रप्रभाधवलितकपोलमण्डलम्**=एकस्मिन् कर्णे श्रवणेऽवसक्तं संलग्नं यत् दन्तपत्रं कर्णभूषणविशेषस्तस्य प्रभया कान्त्या धवलितं श्वेतीकृतं कपोलमण्डलं गण्डबिम्बं यस्यास्ताम्, अत एव **उद्यदिन्दुकिरणच्छुरितमुखीम्**=उद्यद् उदयं प्राप्नुवन् य इन्दुः चन्द्रः तस्य किरणैः छुरितं रञ्जितं मुखमग्रभागं वदनञ्च यस्यास्ताम्, **विभावरीं**=रात्रिम्, **इव**=उत्प्रेक्षायाम्, **आकपिलगोरोचनारचिततिलकतृतीयलोचनां**=आ ईषत् कपिला पीतलोहितवर्णा या गोरोचना गोपित्तं तथा रचितं निर्मितं यत् तिलकं पुण्ड्

तदेव तृतीयं लोचनं नेत्रं यस्यास्ताम्, अत एव **ईशानुरचितकिरातवेशां** = ईशानुरचित: शिवानुरचित: किरातवेश: भिल्लनेपथ्यं यया सा एवम्भूताम्, **भवानी** = पार्वतीम्, **इव**, **उर:स्थलनिवाससङ्क्रान्तनारायणदेहप्रभाश्यामलिताम्** = उर:स्थले वक्षसि निवासेन आवासेन सङ्क्रान्ता प्रतिबिम्बिता या नारायणस्य विष्णो: देहप्रभा शरीरकान्ति: तया श्यामलितां श्यामत्वं प्राप्तां, **श्रियं** = लक्ष्मीम् **इव**, **कुपितहरहुताशनदह्यमानमदनधूममलिनीकृताम्** = कुपित: क्रुद्ध: य: हर: शिव: तस्य हुताशनेन तृतीयनेत्राग्निना दह्यमान: ज्वाल्यमान: य: मदन: कामदेवस्तस्य धूमेन दाहधूमेन मलिनीकृतां मालिन्यमुपगतां, **रतिं** = कामपत्नीम् **इव** **उन्मदहलिहलाकर्षणभयपलायितम्** = उन्मदस्य प्रबलाहङ्कारिण: हलिन: बलभद्रस्य हलेन लाङ्गलेन यद् आकर्षणाम् आकृष्टि: तस्माद् येन त्रासेन पलायिताम् विलयं गतां **कालिन्दीं** = यमुनाम् **इव**, **अतिबहुलपिण्डालक्तकरसरागपल्लवितपादपङ्जाम्** = अतिबहुल: अत्यधिक: य: पिण्डालक्तकरस: पिण्डीभूतालक्तकद्रवस्तस्य रागेण लौहित्येन पल्लविते नवकिसलयवत् शोभिते पादपङ्कजे चरणकमले यस्या: सा तां तादृशीम्, **अचिरमृदितमहिषासुररुधिररक्तचरणाम्** = अचिरमृदितस्य तत्कालच्छिन्नकण्ठस्य महिषासुरस्य एतदाख्यस्य राक्षसस्य रुधिरेण शोणितेन रक्तौ रक्तवर्णौ पादौ यस्यास्तां **कात्यायनीं** = दुर्गाम् **इव** ।

टिप्पणी- -'**एककर्णावसक्त**······**विभावरीम्**' में **उपमालंकार** । **अवसक्त** अव√सञ्ज् + क्त—धारण किया हुआ, लगा हुआ । **छुरित** = प्रकाशित । **आकपिल**—लाल तथा पीली । '**ईशानुरचित**······**भवानीम्**'—महाभारत की कथा है कि श्रीकृष्ण के कथनानुसार अर्जुन पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए तपस्या करने गये थे । उन अर्जुन के वध के लिए मूकदानव ने वराह का रूप धारण किया तो उस वराह वेशधारी दानव के वध के लिए भगवान् शङ्कर ने किरात का वेश धारण किया तथा उसी वेश को धारण कर पार्वती जी भी उनके पीछे-पीछे चलीं । यहाँ भी **उपमालंकार** है । **सङ्क्रान्त**—सम् + क्रम् + क्त–प्रतिबिम्बित । '**उर:स्थल**········**श्रियम्**' यहाँ लक्ष्मी तथा चाण्डालकन्या के साम्य से उपमा तथा लक्ष्मी जी से अपने गौरवर्ण के परि-

त्याग से नारायण के श्यामवर्ण गुण के ग्रहण कर लेने से **तद्गुणालंकार** है। **अङ्गाङ्गिभाव संकर**। **दह्यमान** दह्+क्यप्+शानच्–जलते हुए। **कुपित···रतिम्**–शिवपुराण की कथा है कि तारकासुर से त्रस्त होकर देवता ब्रह्मा जी के पास गये तथा अपने दुःख की कथा सुनायी। ब्रह्मा जी ने देवताओं को बतलाया कि शिव-पार्वती का पुत्र कार्तिकेय ही इसका वध कर सकता है। ऐसा सुनकर इस कार्य में सफलता किस प्रकार मिले ?–ऐसा विचार करके कामदेव को नियुक्त किया। कामदेव ने अपने सम्मोहन अस्त्र से शिव के धैर्य को लुप्त करना चाहा परन्तु शिव ने अपने तृतीय नेत्र से उसे भस्म कर डाला। **उन्मद······कालिन्दीम्**–श्रीमद्भागवत की कथा है कि एक वार मद्यपान से गर्वित बलराम ने जलक्रीड़ा के लिए यमुना को बुलाया। जब यमुना जी नहीं आयीं तो वह उन्हें हल से खींचने लगे। ऐसा किये जाने पर यमुना जी अन्तर्धान हो गयीं। **अलक्तक**–महावर। **'अतिबहल···कात्यायनीम्'** यहाँ रुधिर तथा रक्त पद से **पुनरुक्तवदाभास** तथा **उपमा** अलङ्कार–इन दोनों का **एकाश्रयानुप्रवेश रूप सङ्कर** है। **मार्कण्डेय पुराण की कथा** है कि ब्रह्मा से वर प्राप्त कर महिषासुर संसार को पीड़ित करने लग गया था। ऐसी दशा में भगवती दुर्गा ने स्वयं प्रकट होकर उसका वध किया।

आलोहिताङ्गुलिप्रभापाटलितनखमयूखाम् अतिकठिनमणिकुट्टिम-स्पर्शमसहमानां क्षितितले पल्लवभङ्गानिव निधाय सञ्चरन्तीम् आपिञ्जरेणोत्सर्पिणा नूपुरमणीनां प्रभाजालेन रञ्जितशरीरतया पावकेनेव-भगवता रूप एव पक्षपातिना प्रजापतिमप्रमाणीकुर्वता जातिसंशोध-नार्थमालिङ्गितदेहाम्, अनङ्गवारणशिरोनक्षत्रमालायमानेन रोमराजि-लतालवालकेन मेखलादाम्ना परिगतजघनस्थलाम्, अतिस्थूलमुक्ता-फलघटितेन शुचिना हारेण गङ्गास्रोतसेव कालिन्दीशङ्कया कृत-कण्ठग्रहाम्।

हिन्दी अनुवाद—जो अत्यधिक लाल (पैरों को) उँगलियों की कान्ति से पाटलित (श्वेतरक्त बनाई गई) नखदीप्ति वाली-अत्यन्त कर्कश मणिखचित

फर्श के संस्पर्श को न सह सकने वाली अतएव मानो भूतल पर किसलयखण्डों को बिछा कर चल रही थी, जो पायलों में जड़े हुए रत्नों के कुछ रक्तपीत एवं चतुर्दिक् फैले हुए प्रभाजाल से उपशोभित शरीरवाली होने के कारण मानो सौन्दर्यमात्र में अनुरक्त चित्त वाले अतएव लोकसर्जक ब्रह्मा को अप्रमाणित करने वाले भगवान् अग्निदेव द्वारा जातिसंशोधन अर्थात् अपवित्र चाण्डाल-कन्या को पवित्र बनाने के लिए आश्लिष्ट देहवाली थी, जो कामदेव रूपी गज-राज के शीर्षोपरि (शोभार्थं धारण की गई) नक्षत्रमाला सी प्रतीत होती हुई तथा रोमावली रूपी लता का आलवाल (थाला) स्वरूप करधनी रूपी बन्धन-रज्जु से घिरे हुए जघन प्रदेश वाली थी, जो अत्यन्त विशालकाय मोती के मनकों से निर्मित (६४ लच्छों वाले) उज्ज्वल हार के कारण मानो यमुना की आशंकावश गङ्गाप्रवाह द्वारा गलबाहीं की गई थी।

संस्कृत-व्याख्या—आलोहिताङ्गुलिप्रभापाटलितनखमयूखाम्=आलोहिता: अत्यधिकरक्तवर्णा: या: अङ्गुलय: करशाखा: तासां प्रभाभि: कान्तिभि: पाटलिता: श्वेतरक्तीकृता: नखमयूखा: नखरश्मय: यस्यास्ताम्, **अतिकठिनमणिकुट्टिम-स्पर्शमसहमानां**=अतिकठिनस्य अत्यधिककठोरस्य मणिकुट्टिमस्य मणिमयबद्ध-भुव: स्पर्श: संश्लेषम् असहमानाम् अक्षममाणाम् अतएव **क्षितितले**=भूतले, **पल्लवभङ्गान्**=किसलयखण्डान्, **इव**=उत्प्रेक्षायाम्, **निधाय**=स्थापयित्वा, **सञ्चरन्तीं**=गच्छन्तीम्, **आपिञ्जरेण**=ईषत्पीतलोहितेन, **उत्सर्पिणा**=ऊर्ध्वं-गामिना, **नूपुरमणीनां**=हंसकरत्नानां, **प्रभाजालेन**=कान्तिसमूहेन, **रञ्जित-शरीरतया**=शोभितदेहतया अतएव **प्रजापतिं**=ब्रह्माणम्, **अप्रमाणीकुर्वता**= प्रमाणत्वेन निराकुर्वता, **रूपे**=सौंदर्ये एव **पक्षपातिना**=आदरकारकेण, **भगवता पावकेन**=अग्निदेवेन; **जातिसंशोधनार्थम्**=चाण्डालजातिसंशोध-नार्थम्, **आलिङ्गितदेहां**=आश्लेषितशरीराम्, **अनङ्गवारणशिरोनक्षत्रमालाय-मानेन**=अनङ्ग: कामदेवस्तस्य यो वारणो हस्ती तस्य शिरसि मूर्ध्नि या नक्षत्र माला सप्तविंशतिसंख्यकमुक्ताग्रथितमाला तद्वदाचरता, **रोमराजिलताल-वालकेन**=रोमराजि: लोमपंक्ति: एव लता वल्ली तस्या आलवालम् आवा-पस्तत्स्वरूपेण, **मेखलादाम्ना**=रसनादाम्ना, **परिगतजघनस्थलाम्**=परिगतं

जघनस्थलाम्=परिगतं समन्ताद् व्याप्तं जघनस्थलं कटिपुरोभागो यस्याः सा तां तादृशीम्, **अतिस्थूलमुक्ताफलघटितेन**=अतिस्थूलानि अतिबृहन्ति यानि मुक्ताफलानि मौक्तिकानि तैः घटितेन रचितेन, **शुचिना**=श्वेतवर्णेन, **हारेण**=चतुःषष्टिललेन **गङ्गास्रोतसा**=गङ्गाप्रवाहेण, **इव कालिन्दीशङ्कया**=यमुना-भ्रान्त्या, **कृतकण्ठग्रहाम्**=कृतो विहितः कण्ठग्रहो गलसंश्लेषो यस्याः तां तादृशीम् ।

टिप्पणी–'आलोहित······संचरन्तीम्' यहाँ रक्तवर्ण की नखकिरणों को रक्तवर्ण किसलयखण्ड के रूप में सम्भावना किए जाने से उत्प्रेक्षालङ्कार है । **निधाय**–नि=धा+क्त्वा–ल्यप् । असहमाना–सह+शानच्+टाप् । न महमाना=असहमाना । आपिञ्जरेण ·····देहाम्–यहाँ 'अपिञ्जरेण, तथा उत्सर्पिणा ये दोनों 'प्रभाजालेन तथा 'पावकेन' के विशेषण हैं । अपवित्र वस्तु अग्नि के द्वारा पवित्र हो जाती है । धर्मशास्त्र 'सर्वमग्नौ प्रतप्तं शुध्यते ।' उपमा तथा उत्प्रेक्षा का अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर है । **नक्षत्रमालायमानेन**-नक्षत्र-मालावदाचरमाणः नक्षत्रमालायमानः तेन नक्षत्रमालायमानेन–नक्षत्र माला+क्यङ्+शानच् तृ० ए० व०, नक्षत्रमाला–मुक्तामणियों से गूँथी गयी माला विशेष । अमरकोश 'सैव नक्षत्रमाला स्यात् सप्तविंशतिमौक्तिकैः । **आलवालकः**-थलहा, वृक्ष आदि के सींचने के लिए उसके चारों ओर बनाया गया गढ़ा । 'स्यादालवालमावालमावापः' इत्यमरः । अनङ्ग···"स्थलीम्' यहाँ 'नक्षत्र-मालायमानेन' में क्यङ्गत उपमा तथा उससे सङ्कीर्ण रोमराजि में लतात्व का आरोप, मेखलादाम में आलवालत्व का आरोप होने से परम्परित रूपक अलङ्कार हैं । अतिस्थूल···कृतकण्ठग्रहाम्'–यहां चाण्डाल कन्या में श्यामता के कारण कालिन्दी के भ्रम होने से भ्रान्तिमान् अलङ्कार है तथा हार में गङ्गा-प्रवाह की सम्भावना से 'उत्प्रेक्षालङ्कार । दोनों का अङ्गाङ्गिभाव संकर ।

शरदमिव विकसितपुण्डरीकलोचनाम्, प्रावृषमिव घनकेशजालाम् मलयमेखलामिव चन्दनपल्लवावतंसाम्, नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणा-

भरणभूषिताम्, श्रियमिव हस्तस्थितकमलशोभाम्, मूर्च्छामिव मनोहारिणीम्, अरण्यभूमिमिव अक्षतरूपसम्पन्नाम्, दिव्ययोषितमिवाकुलीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणीम् अरण्यकमलिनीमिव मातङ्गकुल–दूषिताम् अमूर्त्तामिव स्पर्शवर्जिताम्, आलेख्यगतामिव दर्शनमात्र–फलाम्, मधुमासकुसुमसमृद्धिमिव अजातिम्, अनङ्गकुसुमचापलेखामिव मुष्टिग्राह्यमध्याम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम्, अचिरोपारूढयौवनाम्, अतिशयरूपाकृतिम्, अनिमिषलोचनो ददर्श ।

हिन्दी-अनुवाद–जो प्रफुल्लित श्वेतकमल रूपी नेत्रों वाली शरद्ऋतु की भाँति प्रफुल्लित श्वेतकमल के समान नेत्रों वाली थी, जो मेघमण्डल रूपी केशपाश वाली पावसऋतु की भाँति मेघसदृश अथवा सघन केशपुञ्जवाली थी, जो चन्दनलता के नूतन किसलय रूपी शेखर (आभूषण) वाली मलयपर्वत की मध्यस्थली की भांति चन्दन-पल्लवों के कर्णाभरण से युक्त थी, जो चित्रा तथा श्रवण नक्षत्र रूपी आभरणों से विभूषित नक्षत्रपंक्ति की भांति विविध प्रकार के कर्णाभूषणों से अलङ्कृत थी, जो हस्तस्थित कमल से उत्पन्न शोभावाली लक्ष्मी की भाँति हाथों में विद्यमान कमल सरीखी शोभा वाली थी, जो (चेतना नष्ट कर देने के कारण) मन अर्थात् चित्तवृत्ति का अपहरण करने वाली मूर्च्छा की भाँति (सुन्दराकृतित्वेन) चित्ताकर्षक थी, जो अक्षतरुओं (विभीतकवृक्षों) से उपशोभित अरण्य-भूमि की भाँति (कन्या होने के कारण) अक्षुण्णरूपश्री से समन्वित थी, जो भूतल पर न रहने वाली देवाङ्गना की भाँति 'अकुलीन' अर्थात् निम्नवंशोत्पन्न थी, जो नेत्रव्यापार (पलकों का उठना-गिरना) को निरुद्ध कर देने वाली निद्रा की भांति (असाधारणरूप श्री के कारण कामिजनों के) नेत्रों को आकृष्ट कर लेने वाली थी, जो 'मातङ्ग' अर्थात् गजसमूह द्वारा मर्दित वनकमलिनी की भांति 'मातङ्ग' अर्थात् चाण्डालवंश (में उत्पन्न होने) के कारण मालिन्ययुक्त थी, जो स्पर्शगुण से रहित अमूर्त (इयत्तारहित, परिमाणशून्य बुद्धि) द्रव्य की भांति (अकुलीनतावश शिष्टजनों द्वारा) स्पर्श न करने योग्य थी, जो दर्शनमात्र प्रयोजन वाली चित्रलिखित (कन्या) की भांति

(चाण्डालकन्या होने के कारण अनुपभोग्या) केवल देखने भर के लिए थी, जो जातिपुष्प अर्थात् मालती से विहीन बसन्तकालीन पुष्पसमृद्धि की भाँति (ब्राह्मणत्व प्रभृति श्रेष्ठ) जातिविहीन थी, जो मुट्ठी द्वारा पकड़ने योग्य मध्य-भाग वाले कामदेव के चापदण्ड की भाँति मुष्टिग्राह्य (अर्थात् अत्यन्त क्षीण) कटिप्रदेश वाली थी, जो अलकापुरी को सुशोभित करने वाली यक्षपति कुबेर की साम्राज्यश्री की भाँति अलकों अर्थात् घुँघराले केशकुन्तलों से शोभायमान थी, जो अभी-अभी तरुणाई को प्राप्त हुई थी तथा जो अतिशय सौन्दर्यसम्पन्न आकार वाली थी।

संस्कृत-व्याख्या–शरदमिव=घनात्ययमिव, **विकसितपुण्डरीकलोचनाम्**=विकसते विस्फारिते पुण्डरीके सिताम्भोजे तद्वत् लोचने नयने यस्यास्ताम्, शरत्पक्षे––विकसितानि पुण्डरीकाणि श्वेतकमलानि एव लोचनानि यस्याः, ताम्। **प्रावृषमिव**=वर्षाकालमिव, **घनकेशजालाम्**=घनाः सान्द्राः ये केशाः शिरोरुहास्तेषां जालानि समूहाः यस्यास्ताम्, प्रावृट्पक्षे— घनाः मेघाः एव केशजालानियस्यास्ताम्, **मलयमेखलामिव**=मलयस्य एतदाख्यस्य पर्वतस्य मेखलां मध्यभागमिव, **चन्दनपल्लवावतंसाम्**=चन्दनस्य पल्लवाः किसलयानि तेषामवतंसाः भूषणानि यस्याः, ताम्; मलयमेखलापक्षे चन्दनपल्लवास्त एवाव-तंसः शेखरो यस्यास्ताम्, **नक्षत्रमालामिव**=तारकापङ्क्तिमिव, **चित्रश्रवणाभ-रणभाषिताम्**=चित्रैः विचित्रैः श्रवणाभरणैः कर्णभूषणैः भूषितां शोभिताम्, नक्षत्रमालापक्षे–चित्रश्रवणाभरणीयसंज्ञकैः नक्षत्रविशेषैः भूषिताम्, **श्रियमिव**=लक्ष्मी मिव, **हस्तस्थितकमलशोभाम्**=हस्ते करे स्थिता विद्यमाना कमलस्य पद्मस्य शोभा श्री यस्या सा ताम्, श्रीपक्षे–हस्ते स्थितं यत्कमलं तेन शोभा यस्याः सा ताम्, **मूर्च्छामिव**=मोहमिव, **मनोहारिणीम्**=सौन्दर्याधिक्येन चित्ताक-र्षिणीम्, मूर्च्छापक्षे–चेतनालोपकरणेन मनोवृत्तिभ्रंशिनीम्, **अरण्यभूमिमिव** काननभुवमिव, **अक्षतरूपसम्पन्नाम्**=अक्षतं केनाऽप्यसम्भुक्तं यद् रूपं लावण्यं तेन सम्पन्नाम्, अरण्यभूमिपक्षे-अक्षतरुभिःरुद्राक्षवृक्षैःउपसम्पन्नां संयुक्ताम्, **दिव्ययोषि तमिव**=देवाङ्गनामिव, **अकुलीनां**=नीचकुलोत्पन्नाम् पक्षे तु कुः पृथिवी तस्यां

लीना स्थिता या भवति सा कुलीना एवं रूपा या न भवति सा अकुलीना ताम्, देवयोनीनां पृथ्वीतले स्पर्शो न भवतीति पौराणिकाः, **निद्रामिव**=प्रमीलामिव, **लोचनग्राहिणीम्**=सौन्दर्यातिशयेन कामुकानां नेत्राकर्षिणीम्, निद्रापक्षे–नेत्रनिमीलनकारिणीम्, **अरण्यकमलिनीमिव**=काननपद्मिनीमिव, **मातङ्गकुलदूषिताम्**=मातङ्गकुलेन चाण्डालान्वयेन दूषितां निन्दिताम्, पक्षे मातङ्गकुलेन हस्तिसमूहेन दूषितां विमथिताम् **अमूर्त्तामिव**=अशरीरिणीमिव, **स्पर्शवर्जिताम्**=शरीरस्पर्शरहिताम् पक्षे आकार-रहिता न स्पृश्यते, **आलेख्यगतामिव**=चित्रस्थितामिव, **दर्शनमात्रफलाम्**=दर्शनमात्रं चाण्डालत्वेन सम्भोगाभावात् अवलोकनमेव फलं प्रयोजनं यस्यास्ताम्. पक्षे आलेख्यगताया अपि दर्शनमात्रमेव फलं भवति। **मधुमासकुसुमसमृद्धिमिव**=माधुमासस्य वसन्तसमयस्य कुसुमसमृद्धिमिव=पुष्पसम्पत्तिमिव, **अजातिं**=न विद्यते जातिः मन्वादिपरिगणितब्राह्मणत्वादिः यस्या सा ताम्, पक्षे तु जातिपुष्परहिताम्, 'न स्याज्जातिःवसन्ते ।' **अनङ्गकुसुमचापलेखामिव**=अनङ्गस्य कामदेवस्य कुसुमचापस्य पुष्पधनुषः या लेखा लता तामिव, **मुष्टिग्राह्यमध्याम्**=मुष्टिना सम्पीडिताङ्गुलिना ग्राह्यः ग्रहीतुं शक्यः मध्यः कटिदेशो मध्यप्रदेशः यस्या सा ताम् । अनेन कटिदेशस्यात्यन्तकार्श्यं प्रत्याभ्यते । **यक्षाधिपलक्ष्मीमिव**=यक्षाधिपस्य कुबेरस्यलक्ष्मी सम्पत् तामिव, **अलकोद्भासिनीम्**=अलकैश्चूर्णकुन्तलैः उद्भासते शोभने इत्येवंशीला या सा ताम् पक्षे=अलकायां तन्नामिकायां पुर्याम् उद्भासते या, सा ताम् । **अचिरोपारूढयौवनाम्**=अचिरं शीघ्रम् उपारूढम् उपगतं यौवनं तारुण्यं यस्याः सा ताम्, **अतिशयरूपाकृतिम्**=अतिशयरूपं लावण्यं यस्याः सा एवम्भूता आकृतिः स्वरूपं यस्याः सा ताम् । शेषांशस्तु व्याख्यातः ।

टिप्पणी–'शरदमिव यक्षाधिपलक्ष्मीमिव' यहाँ सर्वत्र श्लेष से युक्त पूर्णोपमालंकार है। **पुण्डरीक**–सफेद कमल, 'पुण्डरीकं सिताम्भोजमित्यमरः ।' **मेखला**=मध्यभाग । **'नक्षत्रमालामिव···भूषिताम्'** यहाँ 'चित्र' 'चित्रा' तथा 'आभरण' भरणी में 'श्लेषे स्वरो न गण्यते' की विधि से लिङ्गव्यत्यय का औचित्य सिद्ध हो जाता है । **श्रियम्** – श्रयति हरिं या सा श्रीः लक्ष्मीः ताम्, 'कमला श्रीर्हरिप्रिया' इत्यमरः । **अक्षतरूपसम्पन्नाम्**-यहाँ प्रकरण के अनुसार पद अलग

कर लेने से चाण्डालकन्या के पक्ष में 'अक्षतरूपसम्पन्नाम्' तथा अरण्यभूमि के पक्ष में 'अक्षतरु उपसम्पन्नाम्' ये अर्थ होगे । **मातङ्ग**–(क) चाण्डालकन्या के पक्ष में–चाण्डाल, (ख) अरण्यकमलिनी के पक्ष में–हाथी । 'मातङ्गः श्वपचे गजे' इति मेदिनी । **स्पर्शवर्जिताम्**–चाण्डालकुल में जन्म होने के कारण स्पर्श वर्जिता थी-"दिवाकीर्त्तिमुदक्याञ्च पतितां सूतिकां तथा । शवं तत्स्पृष्टिनञ्चैव स्पृष्ट्वा स्नानेन शुद्ध्यति ।" मनु । **अजाति**–न विद्यते जातिः यस्यां सा ताम् । चाण्डाल जातिहीन होते हैं जैसा कि मनु ने कहा है-ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णाः द्विजातयः । चतुर्थं एकजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पञ्चमः" ॥ चाण्डालकन्या के पक्ष में जाति से रहित तथा मधुमास-कुसुमसमृद्धि के पक्ष में जाति अर्थात् मालतीकुसुम से रहिता क्योंकि वसन्त में मालती पुष्प का वर्णन अप्रसिद्ध है । जैसा कि साहित्यदर्पण में कहा गया है–'न स्याज्जाती वसन्ते' । 'जातिश्छन्दसि सामान्ये मालत्यां गोत्रजन्मनोः' इति मेदिनी । **अनङ्गमुष्टिग्राह्यमध्याम्**–इससे उसकी कमर का अत्यन्त पतला होना ध्वनित होता है । "सम्पीडिताङ्गुलिर्मुष्टिः" इति हलायुधः । **अलकोद्भासिनीम्**-(क) चाण्डाल कन्या के पक्ष में–केशों से सुशोभित होने वाली । (ख) कुबेर की लक्ष्मी के पक्ष में–अलका में शोभायमान । **उपारूढ**–उप + आ + रुह् + क्त । **ददर्श**–दृश् लिट् प्र० पु० ए० व० ।

दृष्ट्वा च तां समुपजातविस्मयस्याभून्मनसि महीपतेः–"अहो! विधातुरस्थाने रूपनिष्पादनप्रयत्नः । तथाहि यदि नामेयमात्मरूपोपहसिताशेषरूपसम्पदुत्पादिता, किमर्थमपगतस्पर्शसंभोगसुखे कृतं कुले जन्म । मन्ये च 'मातङ्गजातिस्पर्शदोषभयादस्पृशतेयमुत्पादिता प्रजापतिना, अन्यथा कथमियमक्लिष्टता लावण्यस्य । न हि करतलस्पर्शक्लेशितानामवयवानामीदृशी भवति कान्तिः । सर्वथा धिग्धिग्विधातारमसदृशसंयोगकारिणम्, अतिमनोहराकृतिरपि क्रूरजातितया येनेयमसुरश्रीरिव सततनिन्दितसुरता रमणीयाप्युद्वेजयति' इत्येवमादि

चिन्तयन्तमेव राजानमीषदवगलितकर्णपल्लवावतंसा प्रगल्भवनितेव कन्यका प्रणनाम ।

हिन्दी-अनुवाद—उस (चाण्डालकन्या को देखकर) विस्मय से अभिभूत होकर राजा (शूद्रक) के मन में आया-आश्चर्य है । विधाता ने प्रतिकूल स्थान में रूपश्री निर्मित करने का परिश्रम किया है । क्योंकि अपने सौन्दर्य से समग्र सौन्दर्य-समृद्धि का उपहास करने वाली यह (चाण्डालकन्या) भला यदि एवंविध बनाई गयी तो फिर क्यों आलिङ्गन एवं मैथुन सुख से वंचित (चाण्डाल) वंश में उत्पन्न की गयी ? और मैं समझाता हूँ कि-चाण्डाल जाति के संस्पर्शजनित दोष के भय से प्रजापति ब्रह्मा ने स्पर्श न करते हुए (हीं इसे) निर्मित किया है अन्यथा (पूर्वोक्त विपर्यय होने पर) लावण्य की कोमलता कैसे सम्भव थी ? हथेलियों के संस्पर्श से पीड़ित किये गये (कुचादि) अङ्गों की ऐसी सुकुमारता निश्चय ही नहीं होती । अनुचित सम्बन्ध कल्पित करने वाले विधाता को हर तरह से धिक्कार है ! धिक्कार है !! जिस (विषमसम्बन्ध) के कारण अत्यन्त मनोहर आकृति (स्वरूप) वाली होने पर भी, रमणीय होने पर भी क्रूर (दानव) जाति से सम्बन्ध होने के कारण निरन्तर देवसमुदाय की निन्दा करने वाली दैत्यलक्ष्मी की भाँति यह (चाण्डालकन्या) अत्यन्त (चित्ताकर्षक) रूप से युक्त होने पर भी, रमणीय होने पर भी (अर्थात् सम्भोगयोग्य होने पर भी) चाण्डालजाति में समुत्पन्न होने के कारण निरन्तर विगर्हित मैथुन वाली (होकर) उद्वेग उत्पन्न कर रही है ।" यूँ ही पूर्वोक्त रीति से विचार-विमर्श में तल्लीन महाराज (शूद्रक) को, कुछ नीचे खिसके हुए कर्णस्थित पत्राभरण वाली चाण्डाल-कन्या ने (आरूढ़यौवना होने के कारण अप्रगल्भ होने पर भी) प्रगल्भा नायिका की तरह प्रणाम किया ।

संस्कृत-व्याख्या-**तां**=चाण्डालकन्याम्, **दृष्ट्वा**=विलोक्य, **समुपजातविस्मयस्य**=समुपजात उत्पन्नोविस्मय आश्चर्य यस्य एवम्भूतस्य, **महीपतेः**=राज्ञः शूद्रकस्य, **मनसि**=चित्ते, **अभूत्**=आसीत् । **अहो**=वितर्के **विधातुः**=ब्रह्मणः-**अस्थाने**=अनुचितस्थाने: **रूपनिष्पादनप्रयत्नः**=रूपस्य सौन्दर्यस्य निष्पादने

निर्माणे प्रयत्न आयासः । **तथापि**=स्पष्टीकरणार्थे, **यदि नाम**=कोमलामन्त्रणे **आत्मरूपोहसिताशेषरूपसम्पद्**–आत्मरूपेण स्वीयसौन्दर्येण उपहसिताः तिरस्कृताः अशेषाः समग्राः रूपसम्पत् सौन्दर्य–समृद्धिः यया सा तादृशी, **इयं**=चाण्डालकन्यका, **उत्पादिता**=विनिर्मिता तदा, **किमर्थं**=किन्निमित्तम्, **अपगतस्पर्शसंभोगसुखे**=अपगते दूरीगते स्पर्शसम्भोगसुखे संश्लेषसुरतसुखे यस्मात् एवं विधे, **कुले**=चाण्डालवंशे, **जन्म**=उत्पत्तिः, **कृतं**=विहितम् **मन्ये च**=जाने च, **मातङ्गजातिस्पर्शदोषभयात्**=मातङ्गजातेः चाण्डालगोत्रस्य स्पर्शेन संश्लेषेण जनितः यः दोषः अपवित्रता तस्माद् यद्भयं त्रासः तस्मात्, **अस्पृशता**=अस्याः स्पर्शमकुर्वता, **प्रजापतिना**=ब्रह्मणा, **इयं**=चाण्डालकन्यका, **उत्पादिता**=निष्पादिता । **अन्यथा**=उक्तवैपरीत्ये सति, **इयं**=एषा, **लावण्यस्य**=सौन्दर्यस्य **अक्लिष्टता**=अक्षतता कथं स्यात् ? न कथमपि स्यादित्याशयः । **करतलस्पर्शक्लेशितानां**=पाणितलसंश्लेषमर्दितानाम्, **अवयवानाम्**=अङ्गानाम्, **ईदृशी**=एवंविधा, **कान्तिः** शोभा, **न हि भवति** । **असदृशसंयोगकारिणं**=असमानसंयोगनिर्मातारम्, **विधातारं**=ब्राह्मणम्, **सर्वथा**=सर्वविधिना, **धिग्धिक्**=अतिशयेन धिक्कारः **येन**=असदृशसंयोगेन, **अतिमनोहराकृतिरपि**=अतिरमणीयाकारवती अपि, **इयं**=एषा चाण्डालकन्या, **असुरश्रीरिव**=दैत्यलक्ष्मीरिव **सततनिन्दितसुरात**=सततं निरन्तरं निन्दितं जुगुप्सितं सुरतः सुरतसम्भोगः यस्यां सा, असुरश्रीपक्षे–सततम् अजस्रंनिन्दिता निरस्कृता सुरता देव भावो यया एवम्भूता, **रमणीयापि** सुरतयोग्यापि, **क्रूरजातितया**=नृशंसजातितया, **उद्वेजयति**=उद्वेगम् उत्पादयति । **इत्येवमादि**=पूर्वोक्तप्रकारेण, **चिन्तयन्तमेव**=विचारयन्तमेव, **राजानं**=भूपति शूद्रकम्, **ईषदवगलितकर्णपल्लवावतंसा**=ईषद् अल्पम् अवनमितौ अधःप्रसूतो कर्णयोः श्रोत्रयोः पल्लवावतंसौ किसलयभूषणे यस्याः सा, **कन्यका**=चाण्डालकुमारी, **प्रगल्भवनितेव**=प्रौढा नायिका इव, **प्रणनाम**=प्रणाममकरोत् ।

टिप्पणी–समुपजात–सम + उप + जन् + क्त–समुत्पन्न । अहो–वितर्क के अर्थ में, 'अहो उताहो किमुत' इत्यमरः । **निष्पादन**–निस् + पद + णिच् + ल्युट्

+अन–उत्पादन । **अस्पृशता**–नञ्+स्पृश्+शतृ तृ० ए० व०–न स्पर्श करते हुए । **'धिग्धिग्विधातारम्'**–धिक् के योग में द्वितीया विभक्ति का **'अतिमनोहराकृति···रपि उद्वेजयति'** में पूर्णोपमालङ्कार है । **चिन्तयन्तम्**-चिन्त्+णिच्+शतृ, दि० ए० व० । **प्रगल्भवनिता**–प्रगल्भा नायिका के छः भेद हैं—**"स्मरान्धा गाढतारुण्या समस्तरतकोविदा । भावोन्नता दरव्रीडा प्रगल्भाक्रान्तनायका ॥"** **प्रणनाम्**–नम्+लिट् प्र० पु० ए० व० ।

कृतप्रणामायाञ्च तस्यां मणिकुट्टिमोपविष्टायां सपुरुषस्तं विहङ्गममादाय पञ्जरगतमेत्र किञ्चिदुपसृत्य राज्ञे न्यवेदयब्रवीच्च देव ! विदितसकलशास्त्रार्थः, राजनीतिप्रयोगकुशलः, पुराणेतिहासकथालापनिपुणः, वेदिता गीतश्रुतीनाम्, काव्यनाटकाख्यायिकाख्यानकप्रभृतीनामपरिमितानां सुभाषितानामध्येता स्वयञ्च कर्त्ता, परिहासालापपेशलः, वीणावेणुमुरजप्रभृतीनां वाद्यविशेषाणामसमः श्रोता, नृत्तप्रयोग दर्शननिपुणः, चित्रकर्मणि प्रवीणः, द्यूतव्यापारे प्रगल्भः, प्रणयकलहकुपितकामिनीप्रसादनोपायचतुरः, गजतुरगपुरुषस्त्रीलक्षणाभिज्ञः, सकलभूतलरत्नभूतोऽयं वैशम्पायनो नाम शुकः । सर्वरत्नानाञ्च उदधिरिव देवो भाजनमिति कृत्वैनमादायास्मत्स्वामिदुहिता देवपादमूलमायता, तदयमात्मीयः क्रियतामित्युक्त्वा नरपतेः पुरो निधाय पञ्जरमसावपससार ।

हिन्दी-अनुवाद–प्रणाम निवेदित कर देने वाली उस (चाण्डालकन्या) के रत्नमयी भूमि पर बैठ जाने पर (साथ आए हुए) उस पुरुष ने पिंजरे में ही बैठे हुए उस पक्षी (शुक) को लेकर, कुछ समीप पहुँचकर महाराज को प्रदर्शित किया और बोला–महाराज ! (धर्म–अध्याय एवं तर्कादि) समस्त शास्त्रों का प्रतिपाद्य जानने वाला, (कामन्दक प्रतिपादित) राजनीति के प्रयोग में निपुण पुराण एवं इतिहास की वार्ताओं में विद्यमान अर्थबोधक वाक्यरचना में दक्ष, गायन की २२ श्रुतियों का ज्ञाता, काव्य-नाटक-आख्यायिका तथा आख्यानादि के साथ ही (शृङ्गारादिप्रतिपादक) असंख्य सदुक्तियों का पाठक तथा

स्वयं (उनका) रचयिता, परिहास के सन्दर्भ में रसव्यञ्जक शब्द प्रयोग में कुशल, वीणा, वंशी एवं मृदङ्ग प्रभृति विशिष्ट वाद्ययन्त्रों का अप्रतिम श्रोता, (तालल्याश्रित) नृत्त के प्रयोग में तथा अवलोकन में प्रवीण, चित्रकला में कृत परिश्रम, द्यूतक्रीडा में विलक्षण, प्रणय-कलह से रूठी हुई कामिनियों को अनुकूल बनाने के प्रपंचों में अभिज्ञ, (सामुद्रिकशास्त्र में वर्णित) हाथी-घोड़ा-पुरुष एवं स्त्री के लक्षण का विशेषज्ञ तथा समस्त पृथ्वीमण्डल का रत्नकल्प अर्थात् अपनी जाति में अत्युत्कृष्ट यह वैशम्पायन नाम का शुक है।

जैसे (कस्तुभप्रभृति) समग्र रत्नों का आश्रयस्थान सागर है उसी प्रकार महाराज भी समस्त उत्कृष्ट वस्तुओं के पात्र हैं ऐसा मानकर हमारे स्वामी की पुत्री इस सुये को लेकर मालिक के चरणतल में प्रस्तुत हुई है। इसलिए इस सुए को अपना बना लीजिए !–ऐसा कहकर पिंजरा महाराज के समक्ष रखकर वह (वृद्ध पुरुष) हट गया।

संस्कृत-व्याख्या–कृतप्रणामायां=कृतः विहितः प्रणामः नमस्कारः यया सा तथा तस्याम्, **मणिकुट्टिमोपविष्टायाम्**=मणिखचितबद्धभूमौ स्थितायाम्, **च तस्यां**=चाण्डालकन्यायाम्, **सः**=पूर्वोक्तः चाण्डालकन्यया सहागतः पुरुषः, **तं**=पूर्वोक्तम्, **पञ्जरगतं**=पञ्जरस्थितं, **विहङ्गमं**=पक्षिणं शुकम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **किञ्चिदुपसृत्य**=समीपागत्य, **राज्ञे**=शूद्रकाय, **न्यवेदयत्**=उपहृतवान्, **अब्रवीच्च**=अगादीच्च–**देव**=हे राजन् !, **विदितसकलशास्त्रार्थः**=विदितः ज्ञातः सकलशास्त्राणां समस्तशास्त्राणाम् अर्थः अभिधेयः येन सः, **राजनीतिप्रयोगकुशलः**=राजनीतिप्रयोगे कुशलः निपुणः, **पुराणेतिहासकथालापनिपुणः**=पुराणं पञ्चलक्षणम् इतिहासः पुरावृत्तं, तयोः कथायां वार्तायां य आलाप आभाषणं तत्र निपुणः प्रवीणः, **गीतश्रुतीनां**=गीतं गानं श्रुतयः शब्द-विशेषाः तासां, **वेदिता**=बोद्धा, **काव्यनाटकाख्यायिकाख्यानकप्रभृतीनाम्**=काव्यं रसात्मकं वाक्यं, नाटकम् अभिनयः, इत्यादीनाम्, **अपरिमितानां**=असंख्यानाम्, **सुभाषितानां**=सूक्तरूपपद्यानाम्, **अध्येता**=पाठकः च **स्वयं**=स्वयमेव, **कर्ता**=निर्माता। **परिहासालापपेशलः**=परिहासयुक्तवार्त्तालाप-

कुशल:,**वीणावेणुमुरजप्रभृतीनां**=वीणावाद्यविशेष:,वेणु:सुषिरं,मुरजम् आनद्धम् प्रभृतीनाम् इत्यादीनां वाद्यविशेषणाम्,**असम:**=अप्रतिम:, **श्रोता**=आकर्णयिता **नृत्तप्रयोगदर्शननिपुण:**=नृत्तं तालयाश्रितं तस्य प्रयोगदर्शने प्रयुज्यमानस्य नृत्तस्य अवलोकने निपुण: कुशल:, **चित्रकर्मणि**=आलेख्यव्यापारे, **प्रवीण:** =निपुण:, **द्यूतव्यापारे**=दुरोदरव्यापारे, **प्रगल्भ:**=कुशल:, **प्रणयकलहकुपित कामिनीप्रसादनोपायचतुर:**=प्रणयकलहेन स्नेहविषयकविवादेन कुपितानां क्रोधप्राप्तानां कामिनीनां प्रमदाना प्रसादनोपायेषु अनुकूलीकरणविविधं चतुर: पण्डित:, **गजतुरगपुरुषस्त्रीलक्षणाभिज्ञ:**=गजा: भद्रजातीया: तुरगा: अश्वा: पुरुषा: धीरोदात्तादय: स्त्रिय: पद्मिन्यादय: तासां लक्षणेषु समुद्रिकोक्तषु लक्षणेषु अभिज्ञ: निपुण:, **सकलभूतलरत्नभूत:**=सकलं समग्रं यत् भूतलं भूमण्डलं तत्र रत्नभूत: शिरोमणि:, **अयं**=एष: **वैशम्पायनो नाम**=वैशम्पायनाभिधान, **शुक:** =कीर: । **देव:**=स्वामी शूद्रक: **सर्वरत्नानाम्**=समस्तश्रेष्ठवस्तूनाम् **उदधिरिव**=सागर इव, **भाजनं**=पात्रम्, **इति कृत्वा**=इति हेतो:, **एनं**=शुकम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **अस्मत्स्वामिदुहिता**=अस्मत् स्वामिन: दुहिता पुत्री, **देवपादमूलम्**=देवस्य स्वामिन: पादमूलं चरणमूलम्, **आयाता**=आगता । **तत्**= तस्मात् **अयं**=शुक:, **आत्मीय: क्रियतां**=स्वीयो विधीयताम्, **इत्युक्त्वा**=एवं कथयित्वा, **पञ्जरं**=पक्षिरक्षणास्थानम्, **नरपते**= भूपते:, **पुर:**=अग्रे **निधाय** =स्थापयित्वा, **असौ**=पूर्वोक्त: पुरुष:, **अपससार**=अपसृतवान् ।

टिप्पणी—कृतप्रणामायाम्–कृत: प्रणामो यया सा तथा तस्याम् । **उपविष्टायाम्**=उप√विश्+क्त+टाप. स० ए० व० । **विहङ्गमम्**=विहायसा गच्छतीति विहङ्गम:-विहायस्+गम्+खच्, मुम् का आगम तथा 'विहायस्' को 'विह' आदेश, द्वि० ए० व० । **उपसृत्य**–उप√सृ+क्त्वा√ल्यप, तुक् का आगम । **देव**–दिव्+अच्, हे राजन्, 'राजा भट्टारको देव:' इत्यमर: । **नाटकम्**–नट्+ण्वुल्=नाटक+अच्=नाटकम् । 'नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात्पञ्चसन्धिसमन्वितम् ।' **श्रुति**–श्रु+क्तिन्, सङ्गीत में श्रुति के २२ प्रकार कहे गए हैं–'सप्त स्वरास्त्रयो ग्रामा मूर्च्छाश्चैकोनविंशति: । ताना एकोनपञ्चाशद्

द्वयधिका विंशति श्रुतिः' ।। अन्यत्र भी–नान्दी चालनिका रसा च सुमुखी चित्रा विचित्रा घना, मातङ्गी, सरसमृता मधुकरी मैत्री शिवा माधवी । बाला शार्ङ्गरवी कला कलरवा माला विशाला जया, मात्रेति श्रुतयः पुराणकविभिर्द्वाविंशतिः कीर्त्तिताः ।।' पेशल—कुशल । अपससार—अप√सृ+लिट् प्र० पु० ए० व० ।

अपसृते च तस्मिन् स विहङ्गराजो राजाभिमुखो भूत्वा समुन्नमय्य दक्षिणचरणमतिस्पष्टवर्णस्वरसंस्कारया गिरा कृतजयशब्दो राजानमुद्दिश्यार्य्यामिमां पपाठ–

"स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः ।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम् ।।"

हिन्दी-अनुवाद–उस (वृद्ध पुरुष) के दूर हट जाने पर उस पक्षिराज ने राजा की ओर अभिमुख होकर, दाहिना चरण ऊपर उठाकर अत्यन्त स्पष्ट (सुव्यक्त) अक्षरों तथा (उदात्तादि) स्वरों के परिपाक से युक्त वाणी से 'जय' शब्द का उच्चारण करके महाराज को लक्ष्य बना कर यह आर्या पढ़ी—'(महाराज !) आपके शत्रुओं की वनिताओं का स्तनयुगल–(नेत्रविगलित) अश्रुजल से स्नान करके, (स्वभर्तृवियोगजनित) हृदयस्थ शोकाग्नि के अत्यन्त समीप रहकर एवं आहार को तिलाञ्जलि देकर (अथवा वैधव्यवश आ=प्रत्येक अङ्ग से हार का परित्याग करके) मानो व्रत का आचरण कर रहा है ।

संस्कृत-व्याख्या-तस्मिन्=पूर्वोक्ते वृद्धे पुरुषे, अपसृते=दूरीभूते सति, स विहङ्गराजः=पक्षिणां राजा, राजाभिमुखः=राज्ञः शूद्रकनृपतेः अभिमुखः सम्मुखः, भूत्वा दक्षिणं=सव्येतरम्, चरणम्=पादम्, समुन्नमय्य=उत्तोल्य, अतिस्पष्टवर्णस्वरसंस्कारया=अतिस्पष्टाः सुव्यक्ताः वर्णाःअक्षराणि, स्वरा उदात्तादयः तेषां संस्कारः परिपाकः यस्यां सा तथा तया, गिरा=वाण्या, कृतजयशब्दः=विहितजयध्वनिः, राजानं=भूपतिम्, उद्दिश्य=लक्ष्यीकृत्य, इमाम् अधोविन्यस्ताम्, आर्यां=आर्यासंज्ञकछन्दोबद्धवाक्यम्, पपाठ=पठितवान्–स्तनयुगेति । 'भवतः रिपुस्त्रीणाम् अश्रुस्नातं हृदयशोकाग्नेः समीपतरवर्ति

विमुक्ताहारं स्तनयुगं व्रतम् इव चरति । इत्यन्वयः ।' भवतः=राज्ञः शूद्रकस्य, **रिपुस्त्रीणां**=शत्रुनारीणां, **अश्रुस्नातं**=अश्रुभिः लोचनजलैः स्नातं कृतस्नानम् **हृदयशोकाग्निः**=हृदये मनसि स्वपतिवियोगजनितः शोकः संताप एव अग्निः वह्निः तस्य, **समीपतरवर्ति**=निकटस्थितं, **विमुक्ताहारं**=विगतःपतिविनाशात् दूरं गतः मुक्ताहारः मौक्तिकहारः यस्मात् तत् (स्तनयुगम्) पक्षे विमुक्तः परित्यक्त आहारः भोजनं येन, **स्तनयुगं**=कुचयुगलं, **व्रतं**=नियमम्, **इव चरति**=आचरति ।

टिप्पणी-पपाठ—पठ् लिट् प्र० पु० ए० व० । 'स्तनयुगं··· ··रिपुस्त्रीणाम्' यह आर्या जाति है । आर्या का लक्षण **यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि । अष्टादश द्वितीयेचतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या ।''** यहाँ कवि ने श्लिष्ट पदावली के द्वारा स्तनयुगल तथा व्रतधारी पुरुष में समानता दिखलायी है । शोकयुक्त होने से अतएव रोने से शत्रुस्त्रियों के स्तनयुगल अश्रुस्नात हैं तथा व्रतधारण करने वाला भी स्नान करता है । स्तनयुगल हृदय शोकाग्नि के समीप में विद्यमान है तथा व्रतधारण करने वाला पञ्चाग्नि का सेवन करता है । शोकाभिभूत शत्रुनारियाँ हार को धारण नहीं करती हैं अतः स्तनयुगल 'विमुक्ताहार' है तथा व्रत धारण करने वाला आहार करना छोड़कर 'विमुक्ताहार' है । यहाँ **विमुक्ताहारम्' में सभङ्गश्लेष है ।** निरङ्ग केवल रूपक तथा **वाच्याभिमानिनी क्रियोत्प्रेक्षा की संसृष्टि है ।**

राजा तु तामार्यां श्रुत्वा सञ्जातविस्मयः सहर्षमासन्नवर्तिनम् अतिमहार्घहेमासनोपविष्टम् अमरगुरुमिवाशेषनीतिशास्त्रपारगम् अतियमग्रजन्मानमखिलमन्त्रिमण्डलप्रधानममात्यं कुमारपालितनामानमब्रवीत्—

श्रुता भवद्भिरस्य विहङ्गमस्य स्पष्टता वर्णोच्चारणे, स्वरे च मधुरता ! प्रथमे तावदिदमेव महदाश्चर्यम्, यदयमसङ्कीर्णवर्णप्रविभागमव्यक्तमात्रानुस्वरसंस्कारयोगां विशेषसंयुक्ताम् अतिपरि—

स्फुटाक्षरां गिरमुदीरयति ।

हिन्दी अनुवाद— राजा ने उस आर्या (छन्द विशेष) को सुनकर तथा विस्मयाभिभूत होकर प्रमुदित मन से—समीप बैठे हुए, अत्यन्त मूल्यवान् सुवर्ण-आसन पर समासीन, देवगुरु बृहस्पति के समान सम्पूर्ण नीति विद्या के रहस्य-वेत्ता, अत्यधिक अवस्था वाले, ब्राह्मण (वंशोत्पन्न) तथा समग्र मन्त्रि मण्डल में प्रधान कुमारपालित नामक अमात्य से कहा-सुनी आप लोगो ने इस पक्षी को वर्णोच्चारण के सन्दर्भ से स्पष्टता और स्वर विषयक मधुरता ? पहले तो यही (प्रत्यक्षगत) महान् आश्चर्य है जो कि यह (शुक) परस्पर वैलक्षण्य (पार्थक्य) सहित प्रतीत होती हुई अक्षरों की भिन्नता वाली, (एकारादि) मात्रा, अनुस्वार एवं व्याकरण शुद्धि के अभिव्यक्त अर्थात् प्रकटित सम्बन्ध वाली, (शब्द-श्लेषादि) विशेष लक्षणों से संयुक्त तथा अत्यन्त परिस्फुट अक्षरों वाली वाणी बोलता है ।

संस्कृत-व्याख्या—राजा तु—शूद्रकस्तु, **तां**=शुकगीताम् आर्याम्=गाथाम्, श्रुत्वा=निशम्य, **सञ्जातविस्मयः**=सञ्जातः समुत्पन्नःविस्मयः आश्चर्यं यस्य सः, **सहर्षं**=सानन्दं यथा स्यात्तथा, **आसन्नवर्तिनम्**=समीपवर्तिनम्, अति-**महार्घहेमासनोपविष्टम्**=अतिमहार्घम् अतिबहुमूल्यं यत् हेमासनं सुवर्णपीठकं तत्र उपविष्टं वर्त्तिनम् **अमरगुरुमिव**=बृहस्पतिमिव,**अशेषनीतिशास्त्रपारगम्**=अशेषाणि समस्तानि यानि नीतिशास्त्राणि तेषां पारगः पारङ्गतः तम् **अतिवय-सम्**=अति अत्यधिकं वयः अवस्था यस्य तम्, **अग्रजन्मान्**=ब्राह्मणम्, **अखिल-मन्त्रिमण्डलप्रधानं**=अखिलमन्त्रिमण्डले समस्तसचिवसमुदाये प्रधानं मुख्यं, **कुमारपालितनामानम् अमात्यं**=मन्त्रिणम्,**अब्रवीत्**=अवोचत् । **भवद्भिः**=युष्माभिः, **अस्य विहङ्गमस्य**=अस्य पक्षिणः शुकस्य, **वर्णोच्चारणे**=वर्णाना भाषणे, **स्पष्टता**=स्फुटत्वम् **स्वरे**=स्वरसंयोगे, **मधुरता**=माधुर्यं, **श्रुता**=**आकर्णिता** । **प्रथमं**=आदौ,**तावद् इदमेव**=प्रत्यक्षगतमेव,**महादाश्चर्यं**=अति कौतूहलं, यत् **अयं**=शुकः, **असङ्कीर्णवर्णप्रविभागं**=असङ्कीर्णःअमिश्रितःवर्ण प्रविभागः अक्षरपार्थक्यं यस्यां सा ताम्, **अभिव्यक्तमात्रानुस्वारस्वरसंस्कारयो-गां**=अभिव्यक्तः, स्फुटमवगम्यमानः,मात्राः ह्रस्वदीर्घप्लुतरूपाः, अनुस्वाराः,

अनुनासिकाः संस्कारः व्याकरणशुद्धिः एतेषां योगः सम्बन्धः यस्या सा ताम्, **विशेषसंयुक्तां**=असामान्याम्, **अतिपरिस्फुटाक्षरां**=अतिपरिफुटानि अत्यन्त-स्पष्टानि अक्षराणि वर्णाः यस्यां ताम्, **गिरं**=वाणीम्, **उदीरयति**=उच्चा-रयति ।

टिप्पणी-अग्रजन्मानं–ब्राह्मण को, ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र इन चारों वर्णों में सबसे पहले जन्म लेने के कारण ब्राह्मण को अग्रजन्मा कहा जाता है। **श्रुता**–श्रु+क्त+टाप् । **मधुरता**–मधुर+तल्+टाप् । **'अमरगुरुमिव'**–में उपमालङ्कार है ।**'विशेषसंयुक्ताम्'**–विशेष अर्थात् श्लेष आदि अलङ्कारों से संयुक्त ।

तत्र पुनरपरम् अभिमतविषये तिरश्चोऽपि मनुजस्येव संस्कार-वतो बुद्धिपूर्वा प्रवृत्तिः । तथा हि अनेन समुत्क्षिप्तदक्षिणचरणेनो-च्चार्य जतशब्दमियमार्या मामुद्दिश्यातिस्फुटाक्षरं गीता । प्रायेण हि पक्षिणः पशवश्च भयाहारमैथुननिद्रासंज्ञामात्रवेदिनो भवन्ति । इदन्तु महच्चित्रम् ।

हिन्दी-अनुवाद–उस पर दूसरा (आश्चर्य यह) है कि पक्षी होते हुए भी संस्कार सम्पन्न मनुष्य की भाँति अभीष्ट विषय में (इसकी) प्रतिभामूलक प्रवृत्ति ! देखिये न ! इसने दाहिना चरण उठाकर, 'जय' शब्द का उच्चारण करके, मुझको लक्ष्य बनाकर सुव्यक्त अक्षरों वाली यह आर्या पढ़ी । प्रायः पक्षी एवं पशुगण भय (अनिष्टहेतुज्ञात), आहार (क्षुधानिवृत्युपाय) मथुन (रति क्रिया), निद्रा (बाह्य इन्द्रियों का उपरम) एवं संज्ञा (लोकव्यवहारजनक शब्द) मात्र को जानने वाले होते है (इससे अधिक नहीं) यह तो महान् आश्चर्य है !

संस्कृत-व्याख्या—**तत्र**=उच्चारणविषये, **पुनः अपरं**=अन्यदाश्चर्यम् । **अभिमतविषये**=उपादेयेऽर्थे, **तिरश्चोऽपि**=पक्षिणोऽपि, **मनुजस्येव**=मानवस्येव **संस्कारवती**=संस्कारयुक्ता, **बुद्धिपूर्वा**=धीपूर्विका, **प्रवृत्तिः**=कथनप्रवर्त्तनम् । अत्रकिमाश्चर्यमिति प्रदर्शयति तथाहीति । **समुत्क्षिप्तदक्षिणचरणेन**=समुत्क्षिप्तः

उत्थापितः दक्षिणचरणः सव्येतरपादः येन स तेन, **अनेन**=शुकेन, **जयशब्दं**=जयपदम्, **उच्चार्य**=अभिधाय, **इयं**=एषा, **आर्या**=आर्या जातिः **मामुद्दिश्य**=मामभिलक्ष्य, **अतिस्फुटाक्षरं**=अतिस्फुटानि परिस्फुटानि अक्षराणि वर्णाः यत्र तद्यथा स्यात्तथा, **गीता**=पठिता । **प्रायेण**=बाहुल्येन, हि **पक्षिणः**=खगाः **पशवश्च**=मृगाद्याः पशवश्च, **भयाहारमैथुननिद्रासंज्ञामात्रवेदनः**=भयं भीतिः आहारः भोजनं, मैथुनं स्त्रीसम्भोगः, निद्रा बाह्येन्द्रियशमः संज्ञा लोकव्यवहार-जनकसङ्केतः नाम वा एतन्मात्रवेदिनः भवन्ति । केवलमेतदेव जानन्ति नाति-रिक्तम् । **इदन्तु**=विलक्षणज्ञातृत्वं तु, **महच्चित्रं**=अत्याश्चर्यम् ।

टिप्पणी–**संस्कारवतः**–संस्कार+मतुप्, ष० ए० व० । **प्रवृत्तिः**–प्र+वृत्+क्तिन् । **गीता**–गै+क्त+टाप् । **'भयाहारमैथुननिद्रा'**–पशु, पक्षी भय, आहार आदि को समझने वाले होते है । कहा भी गया है–'आहारनिद्राभय-मैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्' । **संज्ञा**–संकेत अथवा नाम ।

इत्युक्तवति भूभजि कुमारपालितः किञ्चित् स्मितवदनो नृप-मवादीत्––"देव ! किमत्र चित्रम । एते हि शुकसारिकाप्रभृतयो विहङ्गविशेषा यथाश्रुतां वाचमुच्चारयन्तीत्यधिगतमेव देवेन । तथा-प्यन्यजन्मोपात्तसंस्कारानुबन्धेन वा पुरुषप्रयत्नेन वा संस्कारातिशय जायन इति नातिचित्रम् । अन्यच्च, एतेषामपि पुरा पुरुषाणामिवा-तिपरिस्फुटाक्षरा वागासीत्, अग्निशापात्त्वस्फुटालापता शुकानामु-पजाता, करिणाञ्च जिह्वापरिवृत्तिः' इत्येवमुच्चारयत्येव तस्मिन्न-शिशिरकिरणमम्बरतलस्य मध्यमारूढमावेदयन् नाडिकाच्छेदपटुपट हनादानुसारी मध्याह्नशंखध्वनिरुदतिष्ठत् । तमाकर्ण्य च समासन्न-स्नानसमयो विसर्जितराजलोकः क्षितिपतिरास्थानमण्डपादुत्तस्थौ ।

हिन्दी-अनुवाद–महाराज (शूद्रक) के इस प्रकार कहने पर कुमारपालित ने थोड़ा मुस्कराकर कहा–'स्वामिन् ! इसमें आश्चर्य क्या है ! क्योंकि यह तो महाराज को ज्ञात ही है कि ये शुक एवं सारिका प्रभृति विशिष्ट पक्षी (अर्थ-

बोधशून्य) सुनी-सुनाई वाणी का उच्चारण करते हैं। उसमें भी पूर्वजन्मोपार्जित संस्कार (प्राक्तनकर्मविशेष) की अनुवृत्तिवश अथवा पुरुषों के प्रयत्न वश संस्कार में दृढ़ता उत्पन्न हो जाती है--इस प्रकार यह बड़े आश्चर्य की बात नहीं है। एक बात और है, पुरुषों की भाँति प्राचीन काल में इन पक्षियों की भी वाणी अत्यन्त परिस्फुट अक्षरों वाली थी (परन्तु) अग्निदेवता के शापवश शुकों में अस्पष्टभाषिता तथा हाथियों में जिह्वापरिवर्तन उत्पन्न हो गया। (महामात्य] कुमारपालित के इस प्रकार इतना कहते ही अशिशिर किरणों वाले [भगवान् सूर्य] को गगनमण्डल के मध्यभाग में आया हुआ ज्ञापित करने वाली, [सभाविसर्जनसूचक] घड़ी की परिसमाप्ति पर ताडित किये गये नगाड़े के महान् नाद का अनुसरण करने वाली माध्यन्दिन शंखध्वनि फूट पड़ी। उस [ध्वनि] को सुनकर, स्नानवेला को निकट आई हुई जानकर, राजवर्ग को विदा देकर पृथ्वीपति सभा मण्डप से उठ पड़े।

संस्कृत-व्याख्या--भूभुजे=नृपे शूद्रके, **इत्युक्तवति**=एवं कथितवति, **किञ्चित्स्मितवदनः**=किञ्चित् ईषत् स्मितेन हास्येन युक्तं वदनं लपनं यस्य सः, **कुमारपालितः**=एतदाख्यः पूर्वोक्तसचिवः, नृपं=राजानाम्, **अवादीत्**=अब्रवीत्-देव ! किमत्रेति । **देव** ! **अत्र**=अस्मिन् विषये, किं **चित्रं**=किमाश्चर्यम्,? हि=यतः, एते **शुकसारिकाप्रभृतयः**=कीरसारिकाद्याः, **विहङ्गविशेषाः**=पक्षिविशेषाः, **यथाश्रुतां**=अर्थप्रतीतिरहितां श्रवणमात्रानुसारिणीं, **वाचं**=वाणीम्, **उच्चारयन्ति**उ=द्गिरति. इति **देवेन**=स्वामिना, **अधिगतमेव**=ज्ञातमेव। **तत्रापि**=पूर्ववक्तव्यतायाम्, **अन्यजन्मोपात्तसंस्कारानुबन्धेन**=अन्यजन्मनि जन्मान्तरे उपात्तस्य गृहीतस्य संस्कारस्य वासनायाः अनुबन्धेन, **वा**=अथवा, **पुरुषप्रयत्नेन**=परिपालकजनपाठनाद्युद्योगेन, वा=अथवा, **संस्कारातिशयः**=संस्कारेवासनायाम् अतिशयःआधिक्यं **जायते**=उत्पद्यते। इति=हेतोः **नातिचित्रं**=नातीवाश्चर्यम्। **अन्यच्च**=अपरमपि, **कारणामस्ति**। एतेषां=शुकादीनां, **पुरा**=पूर्वं, **पुरुषाणामिव**=मनुष्याणामिव, **अतिपरिस्फुटाक्षरा**=अतिपरिस्फुटानि अत्यन्तस्पष्टानि अक्षराणि वर्णाः यस्यामेवम्भूता, **वाक्**=वाणी **आसीत्**=अभूत्। **अग्निशापात्**=वह्निशापात् तु, **शुकानां**=कीराणाम् अस्फुटा-

लापता = अस्पष्टभाषिता, **उपजाता** = समुत्पन्ना, **च करिणां** = हस्तिनां, **जिह्वा-परिवृत्तिः** = जिह्वायाः रसनायाः परिवृत्तिः परिवर्त्तनं संजातम् । **तस्मिन्** = अमात्ये, **एवं** = इत्यम्, **उच्चारयति** = कथयति एव, **अशिशिरकिरणं** = सूर्यम्, **अम्बरतलस्य** = गगनमण्डलस्य, **मध्यं** = मध्यभागम्, **आरूढं** = प्राप्तम्, **आवेदयन्** = सूचयन्, **नाडिकाच्छेदप्रहतपटुपटहनादानुसारी** = नाडिका घटिका तस्याः छेदे समाप्तौ प्रहतः ताडितः यः पटुः महान् पटहः दुन्दुभिः तस्य नादः शब्दः तमनु-सर्तुं शीलमस्येति सः, **मध्यान्हशंखध्वनिः** = मध्याह्नसूचकजलजशब्दः, **उदतिष्ठत्** = उत्पन्नोऽभूत् । **तं** = ध्वनिम्, **आकर्ण्य** = श्रुत्वा, **च समासन्नस्नानसमयः** = समासन्नः समीपवर्ती स्नानसमयः स्नानकालः यस्य सः, **विसर्जितराजलोकः** = विसर्जितः निर्वर्त्तिनः राजलोकः परिजनजनः येन सः, **क्षितिपतिः** = शूद्रकः, **आस्थानमण्डपात्** = सभामण्डपात्, **उत्तस्थौ** = उत्थितवान् ।

टिप्पणी–भूभुजि–भुवं भुनक्तीति भूभुक्, तस्मिन्–पृथ्वी का भोग करने वाला भूपति । **अवादीत्**–वद् लुङ् प्र० पु० ए० व० । **अग्निशापात्**……… **परिवृत्तिः**–महाभारत की कथा है कि प्राचीनकाल में तारकासुर से पीडित होकर देवता ब्रह्मा जी के पास गये । ब्रह्मा जी ने देवताओं को बतलाया कि अग्नि का पुत्र कार्तिकेय ही उस दैत्य का वध कर सकेगा । अतः अग्नि को खोजकर उनके पुत्र को माँगें । अग्नि को खोजते हुए जब देवताओं ने कहीं भी नहीं पाया तो एक बड़े हाथी को देखकर पूछा कि अग्नि कहाँ है ? उस गज ने देवताओं को बताया कि अग्नि अश्वत्थ वृक्ष में छिपे हुए हैं । ऐसा सुनकर क्रुद्ध अग्नि ने प्रकट होकर हाथी को जीभ उलट जाने का शाप दे दिया तथा स्वयं शमी वृक्ष में प्रविष्ट हो गया । पुनश्च तोते से पूछे जाने पर तोते ने देवताओं को बतला दिया कि अग्नि शमी वृक्ष में हैं तब अग्नि ने प्रकट होकर तोते को अस्पष्ट वाणी हो जाने का शाप दे दिया । **अशिशिरकिरणं**–अशिशि-राणि उष्णानि किरणानि रश्मयो यस्य तं–सूर्यमित्यर्थः । **उत्तस्थौ**–उत् उपसर्ग पूर्वक 'स्था' धातु लिट् लकार प्र० पु० ए० व० ।

अथ चलति महीपतावन्योन्यमतिरभससञ्चलनचालिताङ्गदपत्र-भङ्गमकरकोटिपाटितांशुकपटानाम्, आक्षेपदोलायमानकण्ठदाम्नाम्

अंसस्थलोल्लसितकुङ्कुमपटवासधूलिपिंजरितदिशाम्, आलोलमालती-कुसुमशेखरोत्पतदलिकदम्बकानाम्, अर्द्धावलम्बिभिः कर्णोत्पलैश्चुम्ब्यमानगण्डस्थलानाम्, गमनप्रणामलालसानाम्, अहमहमिकया वक्षःस्थलप्रेङ्खोलितहारलतानाम्, उत्तिष्ठतामासीदतिमहान् सम्भ्रमो महीपतीनाम् ।

हिन्दी-अनुवाद–इसके पश्चात् महाराज (शूद्रक) के प्रस्थित हो जाने पर उठते हुए (दरबारी) राजाओं की अपार भीड़ हो गई जो एक दूसरे के साथ अत्यन्त वेगपूर्वक चलने के कारण आन्दोलित किये गये भुजबन्धों के टूटने से मकर के आकार वाली अर्थात् कटियादार (उनकी) नोकों से फाड़े गये रेशमी वस्त्रों वाले थे, जो परस्पर संलग्नतावश झूलते हुए कण्ठहारों वाले थे, जो (अपने) स्कन्ध प्रदेश से उड़ते हुए कुंकुम (रोली) एवं गुलाल के चूर्ण से दिशाओं को रक्तपीत बना रहे थे, जिनके मालतीकुसुम-विरचित चञ्चल शिरोभूषणों (के ऊपर) से भ्रमरसमूह उड़ रहे थे, जो अर्धावनत कान पर रखे कमलों से चूमे जाते हुए (आश्लिष्यमाण) कपोलभागों वाले थे, जो विदाकालीन (राजा को) प्रणाम करने के लिए लालायित थे, तथा अहमहमिका (अर्थात् 'मैं पहले प्रणाम करूँ, मैं पहले प्रणाम करूँ' इस प्रकार की स्पर्धामयी भावना) के कारण लहराती हुई मौक्तिक हार लताओं वाले थे ।

संस्कृत-व्याख्या—अथ = अनन्तरं, **महीपतौ** = शूद्रके, **चलति** = सति, **अन्योन्यं** = परस्परम्, **अतिरभसस‍ञ्चलनचालितांगदपत्रभंगमकरकोटिपाटितांशुकपटानाम्** = अतिरभसेन अतिवेगेन यत् सञ्चलनं गमनं तेन चालितानि यानि अङ्गदानि केयूराणि तेषां पत्रभङ्गेषु पत्ररचनासु ये मकराः उत्कीर्णजलजन्तु-विशेषाः तेषां कोटिभिरग्रभागैः पाटिताः छिन्नाः अंशुकपटाः उत्तरीयवस्त्राणि येषां तेषाम्, **आक्षेपदोलायमानकण्ठदाम्नाम्** = आक्षेपेण शरीरसञ्चलनेन दोलायमानानि चञ्चलानि कण्ठदामानि कण्ठहारा येषां तेषाम्, **अंसस्थलोल्लसितकुङ्कुमपटवासधूलिपिञ्जरितदिशाम्** = अंसस्थलेभ्यः स्कन्धप्रदेशेभ्यः उल्लसितानि उत्थितानि यानि कुंकुमानि केसराणि पटवासः सुगन्धचूर्णविशेषः तयोः धूलिपटलं

रेणुसमुदायः तेन पिञ्जरीकृताः पीतरक्तीकृताः दिशः आशा यैस्तेषाम्, **आलोल-मालतीकुसुमशेखरोत्पतदलिकदम्बकानाम्** = आलोलाः चञ्चलाः ये मालतीकुसुमशेखराः मालतीपुष्पशिरोभूषणानि तदुपरि उत्पतन्तः उड्डीयमानाः अलिकदम्बकाः भ्रमरयूथाः येषां तेषाम्, **अर्धावलम्बिभिः** = अर्धप्रलम्बमानैः, **कर्णोत्पलैः** = कर्णकमलैः, **चुम्ब्यमानगण्डस्थलानाम्** — चुम्ब्यमानानि स्पृश्यमानानि गण्डस्थलानि कपोलप्रान्ताः येषां तेषाम्, **गमनप्रणामलालसानाम्** = गमने राज्ञः प्रस्थानसमये प्रणामाय नमस्काराय लालसानाम् अतिस्पृहाणाम्, **अहमहमिकया** = 'अहं पूर्वमहं पूर्वम्' इत्यहमहमिका तया, **वक्षःस्थलप्रेंखोलितहारलतानाम्** = वक्षःस्थले भुजान्तरे प्रेंखोलिताः आन्दोलिताः हारलताः मुक्ताफलमालाः येषां तेषाम्, **उत्तिष्ठतां** = उत्थानं कुर्वतां, **महीपतीनां** = राज्ञाम्, **अतिमहान् सम्भ्रमः** = सम्मर्दनः, **आसीत्** = अभूत् ।

टिप्पणी—'**अथ महीपतौ चलति उत्तिष्ठतां महीपतीनाम् अतिमहान् सम्भ्रमः आसीत्**' यह मुख्य वाक्य है। **अंगद** = बाजूबन्द। **पत्रभंग** = जड़ाई। **पटवास** = सौन्दर्य के लिए शरीर पर लगाया जाने वाला सुगन्धित चूर्ण विशेष। **अहमहमिकया** = अहं पूर्वमहंपूर्वमिति अहमहमिका तया। '**अहमहमिका** तु सा स्यात् परस्परं यो भवत्यहङ्कारः' इत्यमरः। **प्रेंखोलित** = हिलायी हुयी **सम्भ्रमः** = हड़बड़ाहट। सम् + भ्रम् + घञ्।

इतश्चेतश्च निष्पतन्तीनां स्कन्धावसक्तचामराणां चामरग्राहिणीनां कमलमधुपानमत्तजरत्कलहंसनादजर्जरेण पदे-पदे रणितमणीनां नूपुरमणीनां निनादेन, वारविलासिनीजनस्य संचरतो जघनस्थलास्फालनरसितरत्नमालिकानां मेखलानां मनोहारिणा झङ्कारेण, नूपुररवाकृष्टानां धवलितास्थानमण्डपसोपानफलकानां भवनदीर्घिकाकलहंसकानां कोलाहलेन, रसनारसितोत्सुकितानां च तारतरविराविणामु-

ल्लिख्यमानकांस्यकेङ्कारदीर्घेण गृहसारसानां कूजितेन, सरभसप्रच-लितसामन्तशतचरणतलाभिहतस्य चास्थानमण्डपस्य निर्घोषगम्भीरेण कम्पयतेव वसुमतीं ध्वनिना ।

हिन्दी-अनुवाद—(भीड़ के कारण) इधर-उधर से निकलती हुई, कन्धों पर चँवर रखे हुए चामरधारिणी स्त्रियों के कमल का मधुपान करने के कारण मदमत्त वृद्ध कलहंस के शब्दों से मिश्रित—पग-पग पर झकृत हो उठने वाली मणियों वाले रत्नखचित नूपुरों के निनाद से, संचरण करती हुई वाराङ्गनाओं के (कटिपुरोवर्ती) जघनस्थलों पर सन्ताडित होने के कारण झनझनाती हुई रत्नमालाओं वाली करधनियों की मनोहर झंकार से, पायलों की झंकार से आकृष्ट किए गए तथा सभामण्डप के सोपानफलकों (सीढ़ियों) को शुभ्रीकृत कर देने वाले राजभवन की बावलियों के कलहंसों की कलकलध्वनि से, कर-धनियों की रुनझुन ध्वनि उत्कंठित बनाए गए तथा अत्यन्त उच्चस्वर से बोलने वाले पालतू सारसपक्षियों के—घिसे जाते हुए काँसे की 'किकियाहट' की भाँति देर तक गूँजने वाले—कूजन से, सम्भ्रमसहित चल पड़े सैकड़ों सामन्तों के चरण तल से प्रताड़ित अर्थात् रौंदे गए सभामण्डप की वज्रघोष के समान गम्भीर अतएव मानो करधनी को कम्पित करती हुई ध्वनि से ।

संस्कृत-व्याख्या—तद् आस्थानभवनं सर्वतः क्षुभितमिवाभवदित्यन्वयः। **इतश्चेतश्च**=सम्भ्रमवशादितस्ततः, **निष्पतन्तीनां**=स्खलन्तीनाम, **स्कन्धावसक्त-चामराणां**=स्कन्धेषु अंशप्रदेशेषु अवसक्तानि विन्यस्तानि चामराणि बालव्यज-नानि यासां तासाम्, **चामरग्राहिणीनां**=चमरग्रहणे नियुक्तानां योषिताम्, **कमलमधुपानमराजरत्कलहंसनादजर्जरेण**—कमलमधुपानेन पद्मरसास्वादनेन मत्ताः क्षीबाः ये जरन्तः वृद्धाः कलहंसाः कादम्बाः तेषां नादः कण्ठध्वनिस्तद्वत् जर्जरिते सम्भिन्नेन, **पदे-पदे**=प्रतिपदं, **रणितमणीनां**=शब्दायमानमणीनां, **मणिनूपुराणां**=पादकटकानां, **निनादेन**=शब्देन, **सञ्चरतः**=गच्छतः, **वारविलासिनीजनस्य**=गणिकाजनस्य, **जघनस्थलास्फालनरसितरत्नमालिका-नाम्**=जघनस्थलानां कटिपुरोभागानाम् आस्फालनेन नितान्तसञ्चाल-

नेन रसिता शब्दिता रत्नमालिका मणिमाला यासामेवंविधानां, **मेखलानां**= काञ्चीनां, **मनोहारिणा** = चित्ताकर्षणेन, **झङ्कारेण** = झनझनेति ध्वनिना, **नूपुर-रवाकृष्टानां**=नूपुरध्वनिभिः आकर्षितानां, **धवलितास्थानमण्डपसोपानफलका-नाम्**=धवलितानि श्वेतवर्णीकृतानि आस्थानमण्डपस्य सभाभवनस्य सोपानफल-कानि आरोहणपटलानि यैः तेषाम्, **भवनदीर्घिकाकलहंसकानां**=गृहवापीस्थ-कादम्बाना, **कोलाहलेन**=अस्पष्टशब्देन, **रसनारसितोत्सुकितानां** = रसनाना कटिमेखलानां रसितैः शब्दितैः उत्सुकानाम् उत्कण्ठितानाम्, अतएव **तारतरवि-राविणाम्**=उच्चैस्तरशब्दकारकाणाम्,**गृहसारसानां**=भवनस्थसारसपक्षिणाम्, **उल्लिख्यमानकांस्यकेङ्कारदीर्घेण** =उल्लिख्यमानस्य घर्षणं प्राप्तस्य कांस्यस्य विद्युत्प्रियस्य केङ्कारः 'के' 'के' इत्यस्फुटध्वनिस्तद्वत् दीर्घेण विस्तृतेन, **कूजितेन**= कूजनध्वनिना, **सरभसप्रचलितसामन्तशतचरणतलाभिहतस्य**=सरभसं सवेगं प्रचलिताः गन्तुमुद्यताः ये सामन्ताः अधिकृतराजानः तेषां शतं तस्य चरणतलैः अभिहतस्य ताडितस्य, च **आस्थानमंडपस्य** = सभाभवनस्य, **निर्घोषगम्भीरेण**= निर्घोषः अव्यक्तशब्दः तद्वत् गम्भीरेण, **वसुमती**=पृथ्वी, **कम्पयता**=क्षोभं जन-यता, **एव ध्वनिना**=शब्देन ।

टिप्पणी–सञ्चरतः=सम्+चर्+शतृ, प० ए० व० । **वारविलासिनी**= वेश्या, 'वारस्त्री गणिका वेश्या' इत्यमरः । **दीर्घिका**=बावड़ी । **विराव**= शब्द । **कूजितः**=अस्पष्ट शब्द (पक्षियों की बोली के लिए) 'कूजितं स्या-द्विहङ्गानाम्' इत्यमरः । **'केङ्कारदीर्घेण'** में **लुप्तोपमा** अलङ्कार । **'निर्घोष··· कम्पयतेव ध्वनिना में लुप्तोपमा तथा क्रियोत्प्रेक्षा का अङ्गाङ्गीभाव संकर है ।**

प्रतीहारिणाञ्च पुरः ससम्भ्रमं समुत्सारितजनानां दण्डिनां समारब्धहेलमुच्चैरुच्चारयतामालोकयतालोकयतेति तारतरदीर्घेण भवनप्रासादकुञ्जेषूच्चरितप्रतिशब्दतया दीर्घतरतामुपगतेनालोक-शब्देन, राज्ञां च ससम्भ्रमावर्जितमौलिलोलचूडामणीनां प्रणमताम-

लमणिशलाकादन्तुराभिः किरीटकोटिभिरुल्लिख्यमानस्य मणिकुट्टिमस्य निःस्वनेन, प्रणामपर्यन्तानामतिकठिनमणिकुट्टिमनिपतनरणरणायितानाञ्च मणिकर्णपूराणां निनादेन, मङ्गलपाठकानाञ्च पुरोयायिनां जयजीवेति मधुरवचनानुयातेन पठतां दिगन्तव्यापिना कलकलेन, प्रचलितजनचरणशतसंक्षोभभयादपहाय कुसुमप्रकरमुत्पतताञ्च मधुलिहां हुङ्कृतेन, संक्षोभादतित्वरितपदप्रवृत्तैरवनिपतिभिः केयूरकोटिताडितानां क्वणितमुखररत्नदाम्नाञ्च मणिस्तम्भानां रणितेन सर्वतः क्षुभितमिव तदास्थानभवनमभवत ।

हिन्दी-अनुवाद—वेगपूर्वक सामने से जनसम्मर्द (लोगों की भीड़) को तितर-बितर करने वाले दण्डधारी द्वारपालों द्वारा लीलापूर्वक (अर्थात् दौड़-दौड़कर) उच्चस्वर से घोषित किये जाते हुए 'देखिये-देखिये' इस प्रकार के अत्यन्त ऊँचे तथा देर तक गूँजने वाले साथ ही साथ सामान्य गृहों, देवालयों एवं राजभवनों में विद्यमान कुञ्जों (लतान्तरित-प्रदेशों) में घोषित किए गए शब्द की प्रतिध्वनिवश और अधिक दीर्घता को प्राप्त हो जाने वाले 'आलोक' शब्द से, अकस्मात् झुके हुए मस्तक पर विद्यमान चञ्चल शिरोरत्नों वाले तथा (राजा शूद्रक को) प्रणाम करते हुए भूपतियों की (जड़ी गई) निर्मल मणिशलाकाओं के कारण विषमीभूत मुकुटाग्रभाग से खरोंची जाती हुई मणिखचित फर्श की ध्वनि से, प्रणामवेला में (नीचे) गिरते हुए—अत्यन्त कठोर मणिखचित फर्श पर गिरने के कारण 'रण-रण' सरीखी ध्वनि उत्पन्न करने वाले रत्ननिर्मित कर्णाभरणों के निनाद से 'महाराज की जय हो' 'महाराज युग-युग जियें' इस प्रकार के मधुर वचनों से सम्मिश्रित-यशोगायक, आगे-आगे चलने वाले, मङ्गलपाठी (चारणों) के-दिगन्तव्यापी कोलाहल से, चल पड़े हुए मनुष्यों के शत-शत चरणों से उत्पन्न हलचल के भय से पुष्पसमूह को छोड़कर उड़ते हुए भ्रमरों के हुंकार शब्द से तथा चित्त की विकलता वश अत्यन्त त्वरासम्पन्न चरणों से आगे बढ़ते हुए

भूपतियों के भुजबन्दों की नोकों से आहत किये गए तथा शब्दायमान होने के कारण झनझना उठने वाली मणिखचित जञ्जीरों वाले रत्नस्तम्भों के नाद मे वह सभामण्डप चारों ओर से मानो क्षुब्ध (अशान्त) हो उठा ।

संस्कृत-व्याख्या–पुरः=अग्रे, **ससम्भ्रमं** = ससत्वरं, **समुत्सारितजनानां**= दूरीकृतलोकानां, **दंडिनां**=यष्टिग्राहिणाम्, **समारब्धहेलम्**=समारब्धा हेला क्रीडा यस्मिन् कर्मणि तद् यथा स्यात्तथा, **आलोकयतालोकयत** =पृथ्वीपतिरयं गच्छति पश्यत पश्यत इति, **उच्चैः**=उच्चस्वरेण अभिभाषमाणानां, **प्रतीहारीणां**=द्वारपालकानाञ्च, **तारतरदीर्घेण**=तारतरः शिरः समुत्पन्नध्वनितेन दीर्घेण अतिविस्तृतेन, **भवनप्रासादकुञ्जेषु** =भवनस्य साधारणगृहस्य प्रसादानां देवसद्मनां राजसद्मनाञ्च कुञ्जेषु लताद्यन्तरितस्थानेषु,**उच्चरितप्रतिशब्दतया**= उच्चरित उत्थितः प्रतिशब्दो यस्य तस्यभावस्तया,**दीर्घतरताम्** =अत्यधिकविस्तृतत्वम्, **उपगतेन** = सम्प्राप्तेन, **आलोकशब्देन**=जयकारनादेन, **ससम्भ्रमावर्जितमौलिलोलचूडामणीनां**=ससम्भ्रमं ससत्वरम् आवर्जितेषु अवनमितेषु मौलिषु मस्तकेषु लोलाः चञ्चलाः चूडामणयः शिरोरत्नानि येषां तेषाम्, **प्रणमतां** =नमस्कारं कुर्वतां, **राज्ञां**=नृपाणाञ्च, **अमलमणिशलाकादन्तुराभिः** =अमलाः निर्मलाः याः मणिशलाकाः ताभिः दन्तुराः विषमास्ताभिः, **किरीटकोटिभिः**=मुकुटाग्रभागैः, **उल्लिख्यमानस्य**=घर्षण कुर्वतः, **मणिकुट्टिमस्य** = रत्नमयबद्धभूमेः, **निःस्वनेन**=ध्वनिना, **प्रणामपर्यस्तानाम्**=प्रणामे प्रणामकाले पर्यस्तानाम् अधःपतितानाम्, **अतिकठिनमणिकुट्टिमनिपतनरणरणायितानां**=अतिकठिने अतिकर्कशे मणिकुट्टिमे रत्नमयबद्धभूमौ निपतनेन पातेन रणरणायितानां रणरणेति शब्दं विदधतां,च **मणिकर्णपूराणां**=रत्नजटितकर्णभूषणानां, **निनादेन**=शब्देन, **पुरोयायिनां**=अग्रेगामिनां,**पठतां**=यशोगानमुच्चारयतां, **मङ्गलपाठकानां**=वन्दिनाञ्च,**जयजीवेति**=इत्येवंरूपेण,**मधुरवचनानुयातेन** = मधुरवाक्यानुकरणकारिणा, **दिगन्तव्यापिना**=सर्वतः प्रसारिणा, **कलकलेन**=कोलाहलेन, **प्रचलितजनचरणशतसंक्षोभभयाद्**=प्रचलितानां गन्तुं प्रवृत्तानां जनानां मानवानां चरणशतस्य पादशतस्य संक्षोभभयात् प्रहारभीतेः

कुसुमप्रकरं = पुष्पसमूहम्, **अपहाय** = त्यक्त्वा, **उत्पततां** = उड्डीयमानानां, **मधुलिहां** = भ्रमराणाञ्च, **हुङ्कृतेन** = हुङ्कारेण, **संक्षोभात्** = मनोवेगवशात्, **अतित्वरितपदप्रवृत्तैः** = अतित्वरितपदेषु, **अत्यन्तशीघ्रचरणनिक्षेपेषु** = प्रवृत्तैः प्रचलितैः, **अवनिपतिभिः** = भूपतिभिः, **केयूरकोटिताडितानां** = केयूराणाम् अङ्गदाना कोटयः अग्रभागास्तैः ताडितानाम् आहृतानाम्, **क्वणितमुखररत्नदाम्नां** = क्वणितेन मुखराणि वाचालानि रत्नदामानि मणिरचितवेष्टनश्रृङ्खला येषु तेषां, **मणिस्तम्भानां** = रत्नमयस्थूणानां, **रणितेन** = क्वणितेन च, **तत्** = पूर्वोक्तम्, **आस्थानभवनं** = सभामण्डपं, **क्षुभितमिव** = क्षोभमुपगतमिव, **अभवत्** = अभूत ।

टिप्पणी—दडिनः—दण्डोऽस्त्येषां दण्डिनः—दण्ड + इनि, दण्ड धारण करने वाले । **हेला** = खेला । **तारतर** = अत्यधिक ऊँचा । **दन्तुर**—दन्त + उरच्—निम्नोन्नत । **पर्यस्त**-गिरे हुए । **रणरणायितानां**-'रणरण' इस प्रकार की ध्वनि करते हुए । **पुरोयायिनां** = पुरः अग्रे यान्ति गच्छन्ति इति पुरोयायिनम्तेषाम्-आगे चलने वालों का । **प्रकरः** = समूह । **क्वणित** = खनकना । **दाम** = माला । **आस्थानभवनं** = सभामण्डप । **अभवत्** = भू धातु, लङ् प्र० प० ए० व० । अनुप्रास तथा उत्प्रेक्षा अलङ्कार ।

अथ विसर्जितराजलोको 'विश्राम्यताम्' इति स्वयमेवाभिधाय तां चाण्डालकन्यकाम्, 'वैशम्पायनः प्रवेश्यतामभ्यन्तरम्' इति ताम्बूलकरङ्कवाहिनीमादिश्य कतिपयाप्तराजपुत्रपरिवृतो नरपतिरभ्यन्तरं प्राविशत् । अपनीताशेषाभरणश्च दिवसकर इव विगलितकिरणजालः चन्द्रतारकाशून्य इव गगनाभोगः समुपाहृतसमुचितव्यायामोपकरणां व्यायामभूमिमयासीत् ।

हिन्दी-अनुवाद—इसके पश्चात् 'राजसमूह को विदा देकर (तुम) विश्राम करो' इस प्रकार उस चाण्डालकन्या को स्वयं ही कह कर तथा 'वैशम्पायन (शुक) को भीतर ले जाओ' इस प्रकार पान की पिटारी ढोने वाली (दासी)

को आदेश देकर कुछ शिष्ट (विश्वासपात्र) राजकुमारों से घिरे हुए महाराज (शूद्रक) ने (राजभवन के) भीतर प्रवेश किया। और समस्त आभूषणों को उतार कर (अतएव) विस्रस्त (ढली हुई) प्रभापुञ्ज वाले सूर्य के समान (तथा) चन्द्र-तारकों से शून्य आकाश विस्तार के समान एकत्रीकृत समुचित व्यायाम साधनों वाली व्यायाम भूमि में प्रविष्ट हुए।

संस्कृत-व्याख्या—अथ=अनन्तरं, **विसर्जितराजलोकः**=विसर्जिताः विसृष्टाः राजलोकाः नृपतयो येन सः राजा शूद्रकः, **स्वयमेव**=आत्मनैव, **तां**=पूर्वोक्तां, **चाण्डालकन्यकां**=मातङ्गकुमारीं,'**विश्राम्यतां**'=विश्रामं क्रियताम्, **इत्यभिधाय**=एतं कथयित्वा, **वैशम्पायनः**=एतदाख्यः शुकः, **अभ्यन्तरं**=राजभवनमध्ये, **प्रवेश्यतां**=नीयतामिति, **ताम्बूलकरङ्कवाहिनीं**=पर्णवीटिकाधारिणीं स्त्रियम्, **आदिश्य**=आज्ञाप्य, **कतिपयाप्तराजपुत्रपरिवृतः**=कतिपयैः कियद्भिः आप्तैः विश्वस्तैः राजपुत्रैः नृपसुतैः परिवृतः परिवेष्टितः, **नरपतिः**=भूपतिः शूद्रकः, **अभ्यन्तरं**=गृहमध्यं, **प्राविशत्**=प्रवेशमकरोत्। **अपनीताशेषाभरणश्च**=परित्यक्ताशेषभूषणश्च, **विगलितकिरणजालः**=विगलितानि विच्युतानि किरणजालानि रश्मिसमूहाः यस्य सः, **दिवसकरः**=सूर्यः, **इव चन्द्रतारकाशून्यः**=चन्द्रतारकाणां समूहेन शून्यः रहितः, **गगनाभोगः**=गगनस्य आकाशस्य आभोगः विस्तारः, इव, स राजा शूद्रकः, **समुपाहृतसमुचितव्यायामोपकरणाम्**=समुपाहृतानि एकत्रीकृतानि समुचितानि योग्यानि व्यायामे परिश्रमे उपकरणानि साधनानि यस्यां तथाविधां, **व्यायामभूमिं**=परिश्रमविधानयोग्यपृथ्वीम्, **अयासीत्**=अगच्छत्।

टिप्पणी—अथ=अनन्तर, 'अथाथो संशये स्यातामधिकारे च मङ्गले। विकल्पानन्तरप्रश्नकात्स्न्यारम्भसमुच्चये' इति मेदिनी। 'मङ्गलानन्तरारम्भप्रश्नकात्स्न्र्येष्वथो अथ' इति चामरः। **अभिधाय**=अभि√धा+क्त्वा—ल्यप्। **आदिश्य**=आ+दिश्+क्त्वा—ल्यप्। **आप्त**=आप्+क्त=विश्वास के योग्य। **परिवृतः**=परि√वृ+क्त। **समुपाहृत**=सम्+उप+आ√हृ+क्त=लाये गये। '**दिवसकर इव**' तथा '**गगनाभोग इव**' में उपमालंकार। दोनों

की नैरपेक्ष्य स्थिति होने से संसृष्टि है।

स तस्याञ्च समानवयोभिः सह राजपुत्रैः कृतमधुरव्यायामः, श्रमवशादुन्मिषन्तीभिः कपोलयोरीषदवदलितसिन्धुवारकुसुममञ्जरी-विभ्रमाभिः, उरसि निर्दयश्रमच्छिन्नहारविगलितमुक्ताफलप्रकरानुकारिणीभिः, ललाटपट्टकेऽष्टमीचन्द्रशकलतलोल्लसदमृतबिन्दुविडम्बिनीभिः, स्वेदजलकणिकासन्ततिभिरलङ्क्रियमाणमूर्त्तिः इतस्ततः स्नानोपकरणसम्पादनसत्वरेण पुरःप्रधावता परिजनेन तत्कालं विरलजनेऽपि राजकुले समुत्सारणाधिकारमुचितमाचरद्भिः दण्डिभिरुपदिश्यमान-मार्गः, विततसितवितानाम्, अनेकचारणगणनिबध्यमानमण्डलाम्, गन्धोदकपूर्णकनकमयद्रोणीसनाथमध्याम्, उपस्थापितस्फाटिकस्नान-पीठाम्, एकान्तनिहितैरतिसुरभिगन्धसलिलपूर्णैः परिमलावकृष्टमधुकरकुलान्धकारितमुखैरातपभयान्नीलकर्पटावगुण्ठितमुखैरिव स्नानकलशैरुपशोभितां स्नानभूमिमगच्छत्।

हिन्दी-अनुवाद—उस (व्यायामस्थली) में समान अवस्था वाले राजकुमारों के साथ साधारण व्यायाम करके, (व्यायामोचित) परिश्रम करने के कारण आविर्भूत होती हुई (तथा राजा के) उभय कपोल भागों पर कुछ-कुछ मसली हुई सिन्दुवार पुष्प की वल्लरी (बौर या स्तबक) का भ्रम उत्पन्न करने वाली, वक्षःस्थल पर कठिन परिश्रम करने के कारण टूटे हुए हार से संस्खलित मोती के मनकों के समूह का अनुकरण करने वाली तथा ललाटपट्ट पर अष्टमीस्थ चन्द्रखण्ड के उत्तान भाग (ऊपर) पर दमकती हुई अमृतबिन्दुओं की सी छवि उत्पन्न करने वाली (श्रमजनित) पसीने की जलबिन्दु परम्पराओं द्वारा विभूषित किये जाते हुए शरीर वाला, इधर-उधर (जलादि) स्नानोपकरण जुटाने में जल्दबाजी करते हुए सामने दौड़धूप करने वाले सेवक द्वारा तथा उस (मध्याह्न) समय राजभवन में गिने-चुने लोगों के ही बीच रहने पर भी (लोगों

को) तितर-बितर करने के अधिकार का भलीभाँति पालन करने वाले दण्ड-धारियों (लठैतसेवकों) द्वारा निर्दिष्ट किये जाते हुए मार्ग वाला वह (राजा शूद्रक) तने हुए सफेद तम्बूवाली, असंख्य बन्दीजनों (भाटों) द्वारा बनाई गई परिधि वाली, सुरभित जल से परिपूर्ण सुवर्णमयी जलकुण्डिका (कण्डाल) से अलंकृत मध्यभाग वाली, विन्यस्त कर दी गई स्फटिकमणिनिर्मित स्नान की चौकी वाली, एकान्तप्रदेश में रखे गए—अत्यन्त सुगन्धित वास वाले जल से परिपूर्ण तथा सुगन्ध से आकृष्ट किये गए भ्रमर-समूह से अन्धकारित (अँधियारे) मुखों वाले अतएव मानो आतपभय से काले कपड़े से ढँके हुए मुखों वाले स्नानोपयोगी कलशों से सुशोभित स्नानभूमि में पहुँचे ।

संस्कृत-व्याख्या—**सः**=राजा शूद्रकः, **च तस्यां**=व्यायामशालायां, **समानवयोभिः**=तुल्यावस्थैः **राजपुत्रैः**=राजकुमारैः, **सह**=साकं, **कृतमधुरव्यायामः**=कृतः विहितः मधुरः स्वल्पायासजनकव्यायामः परिश्रमः येन सः, **श्रमवशात्**=परिश्रमवशात् **कपोलयोः**=गण्डयोः, **उन्मिषन्तीभिः**=स्फुरन्तीभिः, **ईषदवदलितसिन्धुवारकुसुममञ्जरीविभ्रमाभिः**=ईषत् किञ्चित् अवदलितं मर्दितं यत् सिन्धुवारस्य निर्गुण्ड्याः कुसुमं पुष्पं तस्य मञ्जरी वल्लरी तस्याः इव विभ्रमः विलासः यासां ताभिः, **उरसि**=वक्षःस्थले, **निर्दयश्रमच्छिन्नहारविगलित-मुक्ताफलप्रकरानुकारिणीभिः**=निर्दयश्रमेण क्लिष्टपरिश्रमेण छिन्नः छेदमुपगतः यः हारः मुक्तामाला तस्माद् विगलितानां विच्युतानां मुक्ताफलानां मौक्तिकानां प्रकरं समुदायमनुकर्तुं शीलं यासां ताभिः **ललाटपटके**=भालप्रान्ते, **अष्टमीचन्द्रशकलतलोल्लसदमृतबिन्दुविडम्बिनीभिः**=अष्टमीचन्द्रः अष्टमीतिथिसमुदितः सुधांशुरेव शकलं खण्डं तस्य तले उल्लसन्तः द्योतमानाः ये अमृतबिन्दवः पीयूषकणाः तान् विडम्बयितुमनुकर्तुं शीलं यासां ताभिः, **स्वेदजलकणिकासंततिभिः**=स्वेदजलबिन्दुश्रेणिभिः, **अलंक्रियमाणमूर्तिः**=सुशोभितशरीरः, **इतस्ततः**=समन्तात्, **स्नानोपकरणसम्पादनसत्वरेण**=स्नानम् आप्लवस्तस्य उपकरणानां साधनानां सम्पादने निष्पादने सत्वरेण त्वरायुतेन अतएव **पुरःप्रधावता**=अग्रतः शीघ्रं व्रजता, **परिजनेन**=सेवकजनेन, **तत्कालं**=तस्मिन् समये, **विरलजनेऽपि**=स्वल्पलोकेऽपि, **राजकुले**=राजगृहे, **उचितं**=योग्यं, **समुत्सार-**

णाधिकारं=जनसम्मर्दनिवारणाधिकारम्, **आचरद्भिः**=पालनं, कुर्वद्भिः, **दण्डिभिः**=यष्टिधारिपुरुषैः, **उपदिश्यमानमार्गः**=उपदिश्यमानः प्रदर्श्यमानः मार्गः अध्वा यस्य स तादृशः, **विततसितवितानां**=वितत ऊर्ध्व विस्तीर्ण सितं शुभ्रं वितानम् उल्लोचः यस्यां ताम्, **अनेकचारणगणनिबध्यमानमंडलाम्**=अनेके ये चारणाः स्तुतिपाठकाः तैः निबध्यमानं निर्मीयमाणं मण्डलं यस्यां तां तादृशीम्, **गन्धोदकपूर्णकनकमयद्रोणीसनाथमध्याम्**=गन्धोदकैः सुरभिसलिलैः पूर्णा भृता या कनकमयी सुवर्णरचिता द्रोणी जलकुण्डिका तया सनाथः युक्तः मध्यः मध्यभागः यस्याः ताम्, **उपस्थापितस्फाटिकस्नानपीठां**=उपस्थापितं विन्यस्तं स्फाटिकं स्फटिकमणिविरचितं स्नानपीठं आप्लवनचतुष्किका यस्यां सा तां तादृशीम्, **एकान्तनिहितैः**=एकान्ते एकस्मिन् भागे निहितैः स्थापितैः, **अतिसुरभिगन्धसलिलपूर्णैः**=अति अतिशयेन सुरभिः घ्राणतर्पणः येषा तादृशः सलिलैः जलैः पूर्णाः भृतास्तैस्तथोक्तैः, अतएव **परिमलावकृष्टमधुकरकुलान्धकारितमुखैः**=परिमलेन सुगन्धेन अवकृष्टाः आकृष्टाः ये मधुकराः मधुपाः तेषां कुलानि समूहा तैः अन्धकारितानि अन्धकारीकृतानि मुखानि वदनानि येषां तैः अतएव **आतपभयात्**=घर्मत्रासात्, **नीलकर्पटावगुण्ठितमुखैरिव**=नीलकर्पटैः श्यामवर्णवस्त्रखण्डैः अवगुण्ठितानि आच्छादितानि मुखानि आननानि येषां तैः तथोक्तैरिव, **स्नानकलशैः**=आप्लवकुम्भैः, **उपशोभितां**=विराजितां, **स्नानभूमिं**=आप्लवस्थानम्, **अगच्छत्**=अयासीत् ।

टिप्पणी—**'राजपुत्रैः सह' 'सहयुक्तेऽप्रधाने'** से सह के योग में तृतीया । **'कपोलयोः..........विभ्रमाभिः'**—व्यायाम करने के कारण राजा के कपोलों पर पसीने की बूदें झलक आयी थीं जो कि चमकती हुई ऐसी प्रतीत हो रही थीं कि मानो सिन्धुवार के श्वेतवर्ण पुष्पों की अधखिली कलियाँ हों । यहाँ लुप्तोपमालङ्कार है । **प्रकर**—समुदाय । **शकल**—खण्ड । **'मुक्ताफलप्रकरानुकारिणीभिः'** तथा **'अमृतबिन्दुविडम्बिनीभिः'** में **आर्थी उपमा है । उल्लसन्ती**=उत्+लस्+शतृ+ङीप् । **विडम्बिनी**—तिरस्कृत कर देने वाली अथवा अनुकरण करने वाली । **सन्ततिः**—

परम्परा, लड़ी । **उपदिश्यमान**–उप √ दिश् + यक् + शानच्–निर्देश किया जाता हुआ । **जलद्रोणी**–पानी से भरी हुई कुण्डिका । **कर्पट**–कपड़ा । **अवगुण्ठित**–ढके हुए । **नीलकर्पटावगुण्ठितमुखैरिव में भावाभिमानिनी वाच्या क्रियोत्प्रेक्षा है । अगच्छत्**–गम् धातु, लङ् प्र० पु० ए० व० ।

अवतीर्णस्य च जलद्रोणीं वारविलासिनीकरमृदितसुगन्धामलकालिप्तशिरसो राज्ञः समन्तात् समुत्तस्थुरंशुकनिबद्धस्तनपरिकराः, दूरसमुत्सारितवलयबाहुलताः, समुत्क्षिप्तकर्णाभरणाः, कर्णोत्सङ्गोत्सारितालकाः, गृहीतजलकलसाः, स्नानार्थमभिषेकदेवता इव वारयोषितः । ताभिश्च समुन्नतकुचकुम्भमण्डलाभिर्वारिमध्यप्रविष्टः कारिणीभिरिव वनकरी परिवृतस्तत्क्षणं रराज राजा ।

हिन्दी-अनुवाद–जलद्रोणी (नहाने के हौज) में उतरे हुए, वाराङ्गनाओं के हाथों से उपमर्दित (पीसे गए) सुगन्धित आँवले से उपलिप्त शिर वाले महाराज (शूद्रक) के चारों ओर वस्त्र से कस कर बाँधे गए (संयत किये गए) स्तनमण्डल वाली, दूर हटा दिये गए अर्थात् ऊपर चढ़ा दिए गए कंगनों से युक्त बाहुलता वाली, कनफूलों को ऊपर उठाए हुई, कर्णपाली से घुँघराली लटों को दूर किये हुई तथा पानी से भरे घटों को लिये हुई वारवनिताएँ (गणिकाएँ) महाराज को स्नान कराने के लिए अभिषेक की अधिष्ठात्री देवियों की भाँति उपस्थित हुईं ।

समुन्नत पयोधर रूपी कुम्भमण्डलों वाली उन (वाराङ्गनाओं) से परिवेष्टित तथा जल के भीतर प्रविष्ट नरेश उस समय समुन्नत पयोधर सदृश कुम्भमण्डल-वाली हथिनियों से घिरे हुए तथा जल के भीतर प्रविष्ट राजा अरण्यचारी गजराज की भाँति सुशोभित हो उठे ।

संस्कृत-व्याख्या–**जलद्रोणीं**=जलकुण्डिकाम्, **अवतीर्णस्य**=तन्मध्ये प्रविष्टस्य, **वारविलासिनीकरमृदितसुगन्धामलकालिप्तशिरसः**=वारविलासिनीभिः

वेश्याभिः करैः हस्तैः मुदितेन मृष्टेन सुगन्धेन सुरभिणा आमलकेन धात्रीफलेन लिप्तं शिरः मस्तकं यस्य तस्य, **राज्ञः**=शूद्रकस्य, **समन्तात्**=परितः, **अंशुकनिबिडनिबद्धस्तनपरिकराः**=अंशुकैः वस्त्रैः निबिडं दृढं यथा स्यात्तथा निबद्धाः संयताः स्तनपरिकराः कुचाभोगाः याभिस्तास्तथोक्ताः, **दूरसमुत्सारितवलयबाहुलता**=दूरे ऊर्ध्वभागे समुत्सारितानि उत्तोलितानि वलयानि कङ्कणानि यासु ताः तथोक्ताः बाहुलताः भुजलताः यासां ताः तथोक्ताः, **समुत्क्षिप्तकर्णाभरणाः**=समुत्क्षिप्तानि नेत्रकपोलयोरुपरिपतननिवारणाय कर्णयोः उपरि विन्यस्तानि कर्णाभरणानि श्रवणाभूषणानि याभिस्ताः तथोक्ताः; **कर्णोत्सङ्गोत्सारितालकाः**=कर्णोत्सङ्गात् श्रवणान्तिकात् उत्सारिताः निवारिताः अलकाः चूर्णकुन्तला याभिस्ताः, **गृहीतजलकलसाः**=गृहीताः आत्ताः जलकलसाः सलिलपूर्णघटाः याभिस्ताः, **अभिषेकदेवताः**=स्नानाधिष्ठात्र्यः, **इव**, **स्नानार्थं**=राज्ञः स्नानविधिसम्पादनाय, **वारयोषितः**=गणिकाः समुत्तस्थुः । **समुन्नतकुचकुम्भमंडलाभिः**=समुन्नतं अत्यन्तोच्च कुचकुम्भमण्डलं स्तनकलससमूहः यासां ताभिः, **ताभिः**=वारयोषिद्भिः, **परिवृतः**=परिवेष्टितः, **वारिमध्यप्रविष्टः**=वारिमध्ये जलमध्ये प्रविष्टः कृतप्रवेशः, **राजा**=शूद्रकः, **करिणीभिः**=हस्तिनीभिः, परिवृतः, **वनकरी**=वन्यगजः, **इव** **रराज**=शुशुभे ।

टिप्पणी—वारविलासिनी—वेश्या । **समुत्तस्थुः**–सम्+उत्+स्था लिट् प्र० पु० ब० व० । **अंशुक**–रेशमीवस्त्र । **निबिड**—दृढ़तापूर्वक । **स्तनपरिकर**–स्तनों का विस्तार । **समुत्क्षिप्त**–सम्+उत्√क्षिप्+क्त—ऊपर फेंके हुए । **अलकाः**—बालों की लटें । **अभिषेकदेवताः**–अभिषेक–अभि+सिच्+घञ् । देवता—देव+तल् । **'अभिषेकदेवता इव वारयोषितः'** में **जात्युत्प्रेक्षा तथा स्वभावोक्ति का अङ्गाङ्गिभाव संकर है 'ताभिः······राजा'** यहाँ रूपक है । **परिवृतः**–परि√+वृ+क्त, घिरा हुआ । **रराज**–राज्+लिट् लकार प्र० पु० ए० व० । **'कारिणीभिरिव वनकरी'** में उपमालङ्कार है ।

द्रोणीसलिलादुत्थाय च स्नानपीठममलिस्फटिकधवलं वरुण इव राजहंसमारुरोह । ततस्ताः काश्चिन्मरकतकलसप्रभाश्यामायमाना नलिन्य इव मूर्तिमत्यः पत्रपुटैः, काश्चिद्रजतकलसहस्ता रजन्य इव पूर्णचन्द्रमण्डलविनिर्गतेन ज्योत्स्नाप्रवाहेण, काश्चित्कलसोत्क्षेपश्रम-स्वेदार्द्रशरीरा जलदेवता इव स्फाटिकैः कलसैस्तीर्थजलेन, काश्चिन्म-लयसरित इव चन्दनरसमिश्रेण सलिलेन, काश्चिदुत्क्षिप्तकलसपा-र्श्वविन्यस्तहस्तपल्लवाः प्रकीर्यमाणनखमयूखजालकाः प्रत्यङ्गुलिवि-वरविनिर्गतजलधाराः सलिलयन्त्रदेवता इव, काश्चिज्जाड्यमपनेतु-माक्षिप्तबालातपेनेव दिवसश्रिय इव कनककलसहस्ताः कुङ्कुमजलेन वाराङ्गनाः क्रमेण राजानमभिषिषिचुः ।

हिन्दी-अनुवाद—और द्रोणी (हौज) के जल से बाहर निकलकर मल-विहीन स्फटिक की भाँति शुभ्रवर्णा स्नान की चौकी पर (राजा) उसी प्रकार आरूढ़ हो गये जैसे निर्मल स्फटिक (बिल्लौर पत्थर) की भाँति शुभ्रवर्ण राजहंस पर वरुणदेव ।

इसके (स्नानपीठ) पर आरोहण के अनन्तर उन वाराङ्गनाओं ने एक-एक करके (बारी-बारी से) महाराज को अभिषिक्त किया । मरकतमणि से निर्मित घड़े की चमक से सँवराई हुई अतएव सशरीर पद्मिनियों-सी प्रतीत होने वाली कुछ (गणिकाओं) ने पत्रनिर्मित पुटों (दोनों) से, रूपहले कलशों से अलंकृत हाँथों वाली अतएव (चन्द्रिकाधवल) रातों के समान प्रतीत होने वाली कुछ (गणिकाओं) ने पूर्ण चन्द्रबिम्ब से विगलित कौमुदीधारा के समान जलधारा से, (जल से भरे) कलश उठाने के परिश्रम से समुत्पन्न पसीने से तर-बतर देहवाली अतएव जलदेवियों-सी प्रतीत होने वाली कुछ (गणिकाओं) ने स्फटिकमणिनिर्मित घड़ों द्वारा तीर्थजल के समान जल से, मलयपर्वत से समुद्-

भूत नदियों की भाँति प्रतीत होने वाली कुछ (गणिकाओं) ने चन्दनरस से सम्मिश्रित जल के समान जल से, ऊपर उठाये गये कलशों के पार्श्व (वाम-दक्षिण) भाग में पल्लवसदृश हाथों को रखे हुई–नखों से उत्पन्न प्रभाजाल को (इधर-उधर) बिखेरती हुई तथा प्रत्येक उँगली के विवर (अन्तराल या छिद्र) भाग से फूटती हुई जलधारा वाली कुछ (गणिकाओं) ने सलिल यंत्र देवता अर्थात् फौब्बारों की अधिष्ठात्री देवियों की भाँति, सुवर्णकलसों से युक्त हाथों वाली अतएव दिनलक्ष्मी सी प्रतीत होने वाली कुछ (गणिकाओं) ने शैत्याप-नोदनार्थ आकृष्ट किये गये बालातप अर्थात् नवोदित रवि के प्रकाश के समान कुङ्कुममिश्रित (पीले) जल से महाराज को अभिषिक्त किया ।

संस्कृत-व्याख्या—ततः स राजा, **द्रोणीसलिलात्**=कुण्डिकाजलात् **उत्थाय** =उत्थानं कृत्वा, च **अमलस्फटिकधवलं**=अमलः मलरहितः यः स्फटिकस्त-दाख्यो मणिविशेषः तद्वत् धवलं स्वच्छं, **स्नानपीठम्**=आप्लवनचतुष्किकां, **वरुणः** = प्रचेताः, **राजहंसमिव**=कलहंसमिव, **आरुरोह**=आरूढवान् । 'ततस्ताः... वाराङ्गना राजानमभिषिषिचुः' इत्यन्वयः । ततः=आरोहणानन्तरं, **काश्चित् ताः**=काश्चन वाराङ्गनाः, **मरकतकलशप्रभाश्यामायमाना**=मरकतकलस्य मणिनिर्मितघटस्य प्रभया दीप्त्या श्यामायमानाः अश्यामाः अपि श्यामवदाचरन्त्यः अत एव, **पत्रपुटैः**=पर्णसम्पुटैः, **मूर्तिमत्यः**=श्यामात्वसाम्यात्तत्स्वरूपधारिण्यः, **नलिन्यः**=पद्मिन्य इव राजानमभिषिषिचुरिति सर्वत्रान्वयः । **काश्चित्**= काश्चन, **रजतकलशहस्ताः**=रजतकलशः रूप्यनिर्मितघटः हस्ते पाणौ यासां ताः तथोक्ताः, **रजन्यः**=निशाः, **पूर्णचन्द्रमण्डलविनिर्गतेन**=पूर्णश्चासौ चन्द्रश्चे-ति पूर्णचन्द्र,पूर्णचन्द्रस्य मण्डलं तस्मात् समस्तशशिबिम्बात् विनिर्गतेन निःसृतेन, **ज्योत्स्नाप्रवाहेण**=चन्द्रिकारयेण इव,**काश्चित्**=काश्चन,**कलशोत्क्षेपश्रमस्वेदा-र्द्रशरीराः**=कलशस्य उत्क्षेपात् ऊर्ध्वमुत्थापनात् यः श्रमः आयासः तेन ये स्वेदाः धर्मसलिलानि तैरार्द्राणि स्विन्नानि शरीराणि वपूंषि यासां ताः,**स्फाटिककैः**=स्फ-टिकमणिनिर्मितैः,**कलशैः**=घटैः,**तीर्थजलेन**=पुण्यप्रदेशपयसा,अतएव **जलदेवताः** =जलाधिष्ठात्र्यः, इव **काश्चित्**=काश्चन वाराङ्गनाः, **मलयसरितः**=मलया-

नद्यः इव, **चन्दनरसमिश्रेण**=मलयजद्रवसंयुक्तेन, **सलिलेन**=जलेन, **काश्चित्**=अन्याः काश्चन, **उत्क्षिप्तकलशपार्श्वविन्यस्तहस्तपल्लवाः**=उत्क्षिप्ताः उत्तोल्य कक्षं नीताः ये कलशाः कुम्भाः तेषां पार्श्वेषु वामदक्षिणेषु विन्यस्ताः स्थापिताः हस्तपल्लवाः करकिसलयानि याभिस्ताः, **प्रकीर्यमाणनखमयूखजालकाः**=प्रकीर्यमाणानि विपर्यमाणानि विपर्यस्तानि नखानां पुनर्भवानां मयूखजालकानि किरणचयाः यासां ताः, **प्रत्यङ्गुलिविवरविनिर्गतजलधाराः**=प्रत्यङ्गुलि प्रतिहस्तशाखं यानि विवराणि अन्तरालप्रदेशाः तेभ्यो विनिर्गताः निःसृता जलधाराः सलिलसम्पाताः यासां ताः, अतएव **सलिलयन्त्रदेवताः**=जलयन्त्राधिष्ठातृदेवाः, **इव काश्चित्**=काश्चन अन्याः, **कनककलशहस्ताः**=कनककलशाः सुवर्णघटाः हस्तेषु पाणिषुयासां ताः, **वाराङ्गनाः**=वेश्याः, **दिवसश्रियइव**=दिनलक्ष्म्य इव, **जाड्यं**=जलीयशैत्यम् **अपनेतुं**,=अपकर्तुं **आक्षिप्त-बालातपेनेव**=आक्षिप्तः आकर्षितः बालातपः नवोदितसूर्यरश्मिः यस्मिन् तेन, इव कुङ्कुमजलेन=केसरमिश्रितसलिलेन, **क्रमेण राजानं**=भूपतिम् **अभिषिषिचुः**=स्नान कारयामासुः ।

टिप्पणी—वरुण इव राजहंसम् में उत्प्रेक्षालंकार है । **उत्थाय**–उत्+स्था+क्त्वा–ल्यप् । **आरुरोह**–आङ् √रुह्+लिट् प्र० पु० ए० व० । **श्यामायमानाः**–श्याम+क्यङ्+शानच्–जो श्याम नहीं थीं वे श्याम के समान आचरण करती थीं । यहाँ **क्यङ्गत उपमा है ।** ज्योत्स्ना–ज्योतिः अस्ति अस्यामिति, ज्योतिष् शब्द से 'ज्योत्स्ना-तमिस्रा'—इत्यादि सूत्र से उपधा का लोप और न प्रत्यय । "चन्द्रिका कौमुदी ज्योत्स्ना" इत्यमरः । **उत्क्षेप**–उत्+क्षिप्+घञ्–ऊपर उठाना । **स्फाटिकैः**—स्फटिकस्य इदं स्फटिक+अण् । **कलशोत्क्षेप·····तीर्थजलेन** में **जाति उत्प्रेक्षा अलंकार है । विन्यस्त**–वि+नि+अस्+क्त–रखा हुआ । **जाड्यं**–जड+ष्यञ्–ठिठुरन । **आक्षिप्त**–आ+क्षिप्+क्त–आकर्षित । **वाराङ्गना**–वेश्या "वारस्त्री गणिका वेश्या" इत्यमरः । **अभिषिषिचुः**–अभि+सिच्+लिट् प्र० पु० ब० व० । **कलशोत्क्षेप से अभिषिषिचुः** तक

जहाँ-जहाँ इव शब्द आया है वहाँ सर्वत्र जाति उत्प्रेक्षालङ्कार है ।

अनन्तरमुदपादि च स्फोटयन्निव श्रुतिपथमनेकप्रहतपटुपटह-झल्लरीमृदङ्गवेणुवीणागीतनिनादानुगम्यमानो वन्दिवृन्दकोलाहला-कुलो भुवनविवरव्यापी स्नानशङ्खानामापूर्यमाणानामतिमुखरो ध्वनिः ।

हिन्दी-अनुवाद—इसके (अभिषेक) अनन्तर कर्णकुहरों को मानो विदीर्ण करती हुई, बजाए गए अगणित सामर्थ्यशाली नगाड़ों, झाँझों, मृदङ्गों, वंशियों, वीणाओं तथा गीतों की ध्वनि से प्रवर्तमान, वैतालिक समुदाय के कोलाहल मे सम्मिश्रित तथा भुवनों के अन्तराल (मध्यभाग) को प्राप्त कर लेने वाली (मुखवायु से भर कर) बजाए जाते हुए स्नानकालीन शंखों की अतिशय तारतर ऊँची ध्वनि उत्पन्न हुई ।

संस्कृत-व्याख्या—**अनन्तरं**=राज्ञः स्नानानन्तरम्, **अनेकप्रहतपटुपटह-झल्लरीमृदङ्गवेणुवीणानिनादानुगम्यमानः**=अनेकपुरुषैः प्रहताः वादिताः पटवः वाद्यविधाने समर्थाः पटहाः दुन्दुभयः झल्लर्यः वाद्य-विशेषाः मृदङ्गा मुरजा वेणवः वंश्यः वीणाः वल्लक्यः तासां गीतानां गानानाञ्च निनादैः ध्वनिभिः अनुगम्यमानः=अनुगमनं क्रियमाणः, **वन्दिवृन्दकोलाहलाकुलः**=वन्दिवृन्दस्य वैतालिकसमूहस्य, **कोलाहलेन**=कलकलेन, **आकुलः**=व्याप्तः, अतएव, **भुवनविवरव्यापी**=विष्टापान्तरालप्रसारी, **श्रुतिपथं**=कर्णकुहरं, **स्फोटयन्निव**=द्विधाकुर्वन्निव, **आपूर्यमाणानां**=वाद्यमानानां, **स्नानशङ्खानां**=स्नानकाल-वादनीयशङ्खानाम्, **अतिमुखरः**=अतिशयेन तारतरम्, **ध्वनि**=शब्दः, **उदपादि**=उत्पन्नोऽभूत् ।

टिप्पणी—"**अनन्तरं**..............**श्रुतिपथं स्फोटयन्निव आपूर्यमाणानां स्नानशङ्खानाम् अतिमुखरो ध्वनिः उदपादि**"—यह समस्त वाक्य का अन्वयांश

है । **स्फोटयन्**–स्फुट्+णिच्+शतृ । **प्रहत**–प्र√हन्+क्त–जोर से पीटे गये । झल्लरी–झाल । **अनुगम्यमान**–अनु+गम्+यक्+शानच् । **आपूर्यमाणानां**–आ+पूर्+यक्+शानच्; बजाते हुए । **उदपादि**–उत्+पद् लुङ् प्र० पु० ए० व० । 'अनन्तरम्·········ध्वनिः–यहाँ भुवनविवरव्यापन सम्बन्ध के न होने से भी उसके सम्बन्ध के कथन से **अतिशयोक्ति** अलङ्कार है तथा '**स्फोटयन्निव**' में **उत्प्रेक्षालङ्कार** है इन दोनों की निरपेक्ष स्थिति होने से **संसृष्टि** है ।

एवञ्च क्रमेण निर्वत्तिताभिषेको विषधरनिर्मोकपरिलघुनी धवले परिधाय धौते वाससी शरदम्बरैकदेश इव जलक्षालननिर्मलतनुः, अतिधवलजलधरच्छेदशुचिना दुकूलपटपल्लवेन, तुहिनगिरिरिव गगनसरित्स्रोतसा कृतशिरोवेष्टनः सम्पादितपितृजलक्रियो मन्त्रपूतेन तोयाञ्जलिना दिवसकरमभिप्रणम्य देवगृहमगमत् ।

हिन्दी-अनुवाद–इस प्रकार (पूर्वोक्त) क्रम से स्नानकृत्य सम्पन्न करके सर्पकञ्चुक के समान अत्यन्त सूक्ष्म (हल्के फुलके) तथा धवलवर्ण वाले, धुले हुए वस्त्रद्वय को धारण करके (महाराज शूद्रक) देवायतन में गये–जो (वृष्टि के अभाववश) जल से धुले हुए स्वच्छ प्रदेश वाले शरत्कालीन आकाश के एक खण्ड की भाँति स्नानजल से प्रक्षालित होने के कारण निर्मल शरीर वाला था, जो अतिशय धवल मेघखण्ड के समान निर्मल आकाशगङ्गा के जल-प्रवाह का पगिया (पगड़ी) बाँधे हुए तुहिनगिरि अर्थात् हिमाचल की भाँति अत्यन्त धवल मेघखण्ड के समान स्वच्छ रेशमी दुपट्टे से विरचित शिरोवेष्टन (पगड़ी) वाला था जो पितृतर्पण कार्य सम्पन्न कर चुके थे और जो मन्त्रों से पवित्रित जलाञ्जलि से भगवान् सूर्य को प्रणाम कर चुके थे ।

संस्कृत-व्याख्या–**एवञ्च क्रमेण**=पूर्वोक्तविधिना, **निर्वर्तिताभिषेकः**= निर्वर्त्तितः कृतः अभिषेकः स्नानं येन सः तादृशः स राजा शूद्रकः, **विषधर**=

निर्मोक-परिलघुनी=विषधरा: सर्पाः तेषां निर्मोक: कञ्चुक: तद्वत् परिलघुनी अत्यन्तसूक्ष्मे, **धवले**=स्वच्छे च, **धौतवाससी**=प्रक्षालितवसने, **परिधाय**= धारणं कृत्वा, **शरदम्बरैकदेशे**= शरदि वर्षात्यये अम्बरैकदेशे आकाशैकभागे इव, **जलक्षालननिर्मल:**=जलक्षालनेन अभिषेचनीयसलिलद्वारा प्रक्षालनेन च निर्मला मलरहिता तनु: शरीरं यस्य स तादृश: **अतिधवलजलधरच्छेदशुचिना**=अति-धवल: अतीव स्वच्छ: य: जलधरच्छेद: मेघखण्ड: तद्वत् शुचिना शुभ्रेण, **दुकूल-पटपल्लवेन**=दुकूलपटस्य क्षौमवसनस्य पल्लवेन विस्तरेण, **तुहिनगिरिरिव**= हिमाचलो यथा, **गगनसरित्स्रोतसा**=गगनसरित आकाशगङ्गातस्याः स्रोतसा प्रवाहेण इव, **कृतशिरोवेष्टन:**=कृत: विहित: शिरोवेष्टनम् उष्णीषो येन स तादृश:, **सम्पादितपितृजलक्रिय:**=सम्पादिता निष्पादिता पितृजलक्रिया पितृ-तर्पणादिर्येन स तादृश:, **मन्त्रपूतेन**=वेदमन्त्रपवित्रेण, **तोयाञ्जलिना**=सलि-लाञ्जलिना, **दिवसकरं**=सूर्यम्, **अभिप्रणम्य**=प्रणामं कृत्वा, **देवगृहं**=देव-मन्दिरम्, **अगमत्**=अगच्छत् ।

टिप्पणी—'**एवं च क्रमेण निर्वर्त्तिताभिषेक: (स राजा) देवगृहमगमत्**' यह मुख्य वाक्य है । विषधरनिर्मोक=साँप की केंचुली । **परिलघुनी**—अत्यन्त सूक्ष्म । **परिधाय**—परि √धा+क्त्वा–ल्यप् । धौतवाससी–यहाँ दो वस्त्र पहने जाने का विधान परिलक्षित हो रहा है । देवपूजा के लिए दो वस्त्रों को धारण करना आवश्यक है जैसा कि आह्निक—सूत्रावली में कहा गया है–"होम-देवार्च्चनाद्यासु क्रियासु पठने तथा । नैकवस्त्र: प्रवर्त्तेत यत्नतः सर्वथा बुधः ।।" **सम्पादितपितृजलक्रियः**—स्नान करने के उपरान्त पितृजलक्रिया का विधान है–'स्नात्वा सन्तर्पयेद् देवान् पितॄंश्च मानवांस्तथा' । '**मन्त्रपूतेन तोयाञ्ज-लिना दिवसकरमभिप्रणम्य**—मन्त्रों से अभिमन्त्रित सलिलाञ्जलि के द्वारा सूर्य को प्रणाम कर । अर्थात् प्रथम अर्घ्यदान तत्पश्चात् प्रणाम । कहा भी गया है–'अर्घ्यं दद्यात्तु प्रथमं भास्कराय महात्मने । ततो विष्णुं शिवं शान्तः, सूर्यं चैव प्रपूजयेत् ।।' '**विषधरनिर्मोक**' यहाँ **लुप्तोपमालंकार**, '**शरदम्बरैकदेश**

इव' में पूर्णोपमालंकार, **अतिधवलजलधर में लुप्तोपमा** तथा **तुहिनगिरिरिव में उपमालंकार है** ।

उपरचितपशुपतिपूजनश्च निष्क्रम्य देवगृहान्निर्वर्तिताग्निकार्यो विलेपनभूमौ झाङ्कारिभिरलिकदम्बकैरनुबध्यमानपरिमलेन मृगमद-कर्पूरकुङ्कुमवाससुरभिणा चन्दनेनानुलिप्तसर्वाङ्गो विरचितामोदि-मालतीकुसुमशेखरः कृतवस्त्रपरिवर्त्तः रत्नकर्णपूरमात्राभरणः समुचितभोजनैः सह भूपतिभिराहारमभिमतरसास्वादजातप्रीतिरवनिपो निर्वर्त्तयामास ।

हिन्दी-अनुवाद—पशुपति (शकर) की समर्चनक्रिया सम्पन्न करके, देवालय से बाहर निकल कर, होमादिक अग्निकार्य से निवृत्त होकर, विलेपन-भूमि अर्थात् उबटन आदि तैयार किये जाने वाले स्थान मे—भनभनाते हुए भ्रमरसमुदाय द्वारा पीछा किये जाते हुए परिमल (महक) वाले कस्तूरी, कपूर तथा केसर की बास से सुगन्धित चन्दन द्वारा—उपलिप्त किये गये समस्त अङ्गों वाले, सुगन्धित मालतीपुष्पों का शिरोभूषण बना कर, (पूर्वगृहीत) वस्त्र का परिवर्तन करके, रत्नजटित कर्णाभरण मात्र आभरण वाले महाराज (शूद्रक ने) अपने साथ जेवनार में बैठने योग्य (अर्थात् उच्चस्तरीय) भूपतियों के साथ उत्कृष्ट रसों के आस्वादन से परितुष्ट होकर भोजन कार्य निष्पन्न किया ।

संस्कृत-व्याख्या—**उपरचितपशुपतिपूजनः**—उपरचितं निष्पादितं पशुपतेः शिवस्य पूजनमभ्यर्च्चनं येन सः, च **देवगृहात्**—सुरमन्दिरात्, **निष्क्रम्य**—बहिः-रागत्य, **निर्वर्त्तिताग्निकार्यः**—निर्वर्तितं निष्पादितम् अग्निकार्यम् अग्निहोमादि-र्येन सः, **विलेपनभूमौ**—अङ्गरागसम्पादनस्थाने, **झङ्कारिभिः**—झमिति शब्द कुर्वद्भिः, **अलिकदम्बकैः**—भ्रमरसमूहैः, **अनुबध्यमानपरिमलेन**—अनुबध्यमानः

सेव्यमानः परिमलः सौरभं यस्य स तेन, **मृगमदकर्पूरकुंकुमवाससुरभिणा**= मृगमदस्य कस्तूर्याः कर्पूरकुङ्कुमयोः हिमबालुककेसरयोश्च वासेन परिमलेन सुरभिणा घ्राणतर्पणेन, **चन्दनेन**=मलवजेन, **अनुलिप्तसर्वांगः**=लेपितसकल-शरीरावयवः, **विरचितामोदिमालतीकुसुमशेखरः**=विरचितः विनिर्मितः आमोदिभिः परिमलवद्भिः मालतीकुसुमैः जातीपुष्पैः शेखरः शिरोभूषणं येन स तादृशः, **कृतवस्त्रपरिवर्त्तः**=कृतः विहितः वस्त्रयोः पूर्वपरिहितवसनयोः परिवर्तः परिवर्त्तनं येन सः, **रत्नकर्णपूरमात्राभरणः**=रत्नकर्णपूरमात्रं रत्नखचितं कुण्डलमेव आभरणं तत्समयालङ्कारो यस्य सः, **अभिमतरसास्वादजातप्रीतिः**= अभिमता अभिलषिता ये रसाः मधुरादयस्तेषाम् आस्वादेन ग्रहणेन जाता उत्पन्ना प्रीतिः सन्तुष्टिः यस्य सः, **अवनिपः**=पृथ्वीपतिः राजा शूद्रकः, **समुचितभोजनैः**=समुचितं योग्यं भोजनम् एकपङ्क्तावशनं येषां तैः यथोक्तैः, **भूपतिभिः**=अन्यैः नृपैः, **सह**=साधं, **आहारं**=भोजनं, **निर्वर्त्तयामास**= सम्पादयामास ।

टिप्पणी—'अवनिप आहारं निर्वर्त्तयामास' यह वाक्य का मुख्यांश है । '**उपरचितपशुपतिपूजनश्च**'—पशुपति=शिव, 'शम्भुरीशः पशुपतिः शिवः शूली महेश्वरः' इत्यमरः । शिवपूजन के विषय में कहा गया है–'असम्पूज्य शिवं मोहाद्ये नरा भुञ्जतेऽन्वहम् । सौख्यं नैवाप्नुवन्तीह भग्नाशाः पर्यटन्ति ते ।।" **निष्क्रम्य**—निस्√क्रम्+क्त्वा ल्यप् । **विलेपनभूमि**=प्रसाधन कक्ष । **अनुबध्यमान**—अनु+बध्+यक्+शानच् । **अलिकदम्बक**—भ्रमर समूह । परिमल—सुगन्ध । मृगमद—कस्तरी । प्रीति—प्री+क्तिन् ।

परिपीतधूमवर्त्तिरुपस्पृश्य च गृहीतताम्बूलस्तस्मात्प्रमृष्टमणि-कुट्टिमप्रदेशादुत्थाय नातिदूरवर्तिन्या ससम्भ्रमप्रधावितया प्रतीहार्या प्रसारितं बाहुम् अवलम्ब्यानवरतवेत्रलताग्रहणप्रसङ्गादतिजरठकिस-लयानुकारिकरतलं करेण, अभ्यन्तरसञ्चारसमुचितेन परिजनेनानु-

गम्यमानः, धवलां शुकपरिगतपर्यन्ततया स्फटिकमणिमयभित्तिबद्ध-मिवोपलक्ष्यमाणम् अतिसुरभिमृगनाभिपरिगतेनामोदिना चन्दनवा-रिणा सिक्तशिशिरमणिभूमिम् अविरलविप्रकीर्णेन विमलमणिकुट्टि-मगगनतलतारागणेनेव कुसुमोपहारेण निरन्तरनिचितम्, उत्कीर्णशा-लभञ्जिकानिवहेन सन्निहितगृहदेवतेनेव गन्धसलिलक्षालितेन कल-धौतमयेन स्तम्भसञ्चयेन विराजमानम् अतिबहलागुरुधूपपरिमलम्, अखिलविगलितजलनिवहधवलजलशकलानुकारिणा कुसुमामोदवासि-तप्रच्छदपटेन, पट्टोपधानाध्यासितशिरोभागेन मणिमयप्रतिपादुका-प्रतिष्ठितपादेन पार्श्वस्थरत्नपादपीठेन तुहिनगिरिशिलातलसदृशेन शयनेन सनाथीकृतवेदिकं भुक्त्वास्थानमण्डपमयासीत् ।

हिन्दी-अनुवाद—भोजन करके (मुखसौगन्ध्यप्रतिपादनार्थं) भली-भाँति धूमवर्तिका (सिगरेट) पीकर, आचमन कर तथा ताम्बूल लेकर–अच्छी तरह झाड़े-पोंछे गये उस मणिखचित फर्श से उठकर–कुछ दूर पर ही खड़ी हुई, घबरा कर दौड़ती आयी हुई प्रतीहारी द्वारा (आश्रय लेने के लिए) बढ़ाई गई तथा निरन्तर बेंत की छड़ी थामने के कारण (निरन्तर) अभ्यासवश अत्यन्त कठिन किसलय का अनुकरण करने वाली हथेली से युक्त भुजा का (अपने) हाथ से सहारा लेकर, अन्तःपुर में यातायात करने योग्य सेवकों द्वारा अनुगम्यमान (महाराज शूद्रक) 'स्थानमण्डप अर्थात् भोजन के बाद आराम करने योग्य गृहमण्डप में प्रविष्ट हुए–जो कि धवल रेशमी वस्त्रों से घिरे हुए किनारों वाला होने के कारण स्फटिकमणिमयी दीवारों से निर्मित हुआ-सा दृष्टिगोचर हो रहा था, जो अत्यन्त सुरभित कस्तूरी से सम्मिश्रित अतएव आमोद (सुगन्ध) युक्त चन्दनजल से सींची जाने के कारण शीतल मणिमयी भूमि वाला था, जो अम्बरतल के समान निष्कलङ्क मणिखचित फर्श

पर सघन रूप से फैले हुए तारकमण्डल की भाँति सघन रूप से फैले हुए पुष्प-समूह से प्रतिपल व्याप्त था, जो उत्कीर्ण की गई पुत्तलिकाओं के समूह वाले अतएव मानों समीपवर्तिनी गृहाधिष्ठात्री देवियों से युक्त–सुरभित जल से धोए गए सुवर्णनिर्मित स्तम्भसमूह से शोभायमान था, जो अत्यन्त प्रचुर कालागुरु एवं धूप की सुगन्धि से युक्त था और जो पूर्णरूप से निथरे हुए जलसमूह के कारण शुभ्र मेघखण्ड का अनुकरण करने वाली, पुष्पों की सुगन्धि से वासित चादरवाली, पट्टोपधान (रेशमी तकिये) से अलंकृत सिरहाने वाली, मणि-प्रचुर प्रतिपादुकाओं (अधःपीठों अथवा ठीहों) पर स्थापित किये गये पायों वाली, पार्श्ववर्ती रत्नखचित चरणासन (पीढ़े) वाली तथा हिमगिरि के शिलातल सदृश शय्या से सनाथ बनाई गई अर्थात् अलंकृत वेदिका वाला था।

संस्कृत-व्याख्या—(स राजा) भुक्त्वा उपस्पृश्य परिपीतधूमवर्तिः सभा-मण्डपमयासीत्। **उपस्पृश्य**=आचम्य च, **परिपीतधूमवर्तिः**=परिपीता मुखसुवासार्थं गृहीता धूमवर्तिः धूमशलाका येन सः, **गृहीतताम्बूलः**=गृहीतं मुखाभ्यन्तरे धृतं ताम्बूलं नागवल्लीदलं येन स तथोक्तः, **तस्मात्**=पूर्वोल्लिखितात्, **प्रमृष्टमणिकुट्टिमप्रदेशात्**=प्रमृष्टः संस्कृतः यः मणिकुट्टिमप्रदेशः रत्नमयबद्धस्थलं तस्मात्, **उत्थाय**=उत्थानं कृत्वा, **नातिदूरवर्त्तिन्या**=नातिदूरं वर्तते या सा तया, **ससम्भ्रमप्रधावितया**=ससम्भ्रमं सत्रासं प्रधावितया शीघ्रं व्रजन्त्या, **प्रतीहार्या**=द्वारपालिन्या **प्रसारितं**=विस्तारितम्, **अनवरत-वेत्रलताग्रहणप्रसङ्गात्**=अनवरतं निरन्तरं वेत्रस्य वेतसः या लता मृदुयष्टिः तस्याः ग्रहणं धारणं तस्य प्रसङ्गात् अभ्यासात्, **अतिजरठकिसलयानुकारिकर-तलं**=अतिजरठम् अतिकठिनं यत् किसलयं पल्लवं तदनुकर्तुं शीलं यस्य तत्तथोक्तं करतलं पाणितलं यस्य तत्तथोक्तम्, **बाहुं**=भुजं, **अवलम्ब्य**=आश्रित्य, **अभ्यन्तरसञ्चारसमुचितेन**=अभ्यन्तरे अभ्यन्तरभागे यः सञ्चारः सञ्चरणं तत्र समुचितेन योग्येन परिजनेन=सेवकलोकेन, **अनुगम्यमानः**=अनु-व्रज्यमानः, **धवलांशुकपरिगतपर्यंस्ततया**=धवलानि निर्मलानि यानि अंशुकानि

सूक्ष्मवस्त्राणि तः परिगताः परिवेष्टिताः पर्य्यन्ताः प्रान्तभागाः यस्य तस्य भावस्तत्ता तया, **स्फटिकमणिमयभित्तिबद्ध मिव**=स्फटिकमणिमयी या भित्तिः कुड्यं तया बद्धं रचितमिव, **उपलक्ष्यमाणं**=अवलोक्यमानम्, **अतिसुरभिमृगनाभिपरिगतेन**=अतिसुरभिणा अत्यन्तघ्राणतर्पणेन मृगनाभिपरिगतेन कस्तूरीपरिवेष्टितेन, **आमोदिना**=परमसुगन्धिना, **चन्दनवारिणा**=मलयजजलेन, **सिक्तशिशिरमणिभूमिम्**=सिक्ता अतएव शिशिरा शीतला मणिभूमिः रत्नबद्धाभूर्यत्र तं तथोक्तम्, **अविरलविप्रकीर्णेन**=अविरलं सान्द्रं यथा स्यात्तथा विप्रकीर्णेन प्रक्षिप्तेन, **विमलमणिकुट्टिमगगनतलतारागणेनेव**=विमलं निर्मलं मणि कुट्टिम्-रत्नबद्धभूमिः गगनतलतारागणेनेव=आकाशस्थितनक्षत्रमण्डलेनेव, **कुसुमोपहारेण**=पुष्पसमूहेन, **निरन्तरनिचितं**=निरन्तरम् अनवरतं निचितं व्याप्तम्, **उत्कीर्णशालभञ्जिकानिवहेन**=उत्कीर्ण उत्कीर्य विहितः शालभञ्जिकानिवहः पुत्तलिकापुञ्जः यस्मिन् तथोक्ते, अतएव **सन्निहितगृहदेवतेन**=सन्निहिताः सन्निकटाः गृहदेवता भवनाधिष्ठात्र्यो–देव्यो यस्मिन् तथोक्तेन इव, **गन्धसलिलक्षालितेन**=सुगन्धजलधौतेन, **कलधौतमयेन**=सुवर्णमयेन, **स्तम्भनिचयेन**=स्तम्भसमूहेन, **विराजमानम्**=शोभमानम्, **अतिबहलागुरुधूपपरिमलं**=अतिवहलः अत्यन्तप्रचुरो योऽगुरुः कृष्णागुरुः तस्य धूपस्य परिमलः सौरभं यस्मिंस्तत् तथोक्तम्, **अखिलविगलितजलनिवहधवलजलशकलानुकारिणा**=अखिलः समस्तः विगलितः निर्गतः जलनिवहः सलिलसमूहः–यस्मात् सः, अतएव धवलो यो जलधरो मेघस्तस्य शकलं खण्डमनुकर्तुं शीलं यस्य तेन, **कुसुमामोदवासितप्रच्छदपटेन**=कुसुमानां पुष्पाणाम् आमोदेन सौगन्ध्येन वासितः सुगन्धीकृतः प्रच्छदपटः आस्तरणवस्त्रं यस्य सः तेन, **पट्टोपधानाध्यासितशिरोभागेन**=पट्टस्य क्षौमवसनस्य यदुपधानम उच्छीर्षकं तेन अध्यासितः आश्रितः शिरोभागः यस्य तेन, **मणिमयप्रतिपादुकाप्रतिष्ठितपादेन**=मणिमयीषु रत्नचितासु प्रतिपादुकासु आधारपीठेषु प्रतिष्ठिताः स्थिताः पादाः पल्यङ्कपादाः यस्य स तेन, **पार्श्वस्थरत्नपादपीठेन**=पार्श्वस्थं निकटस्थं रत्नपादपीठं मणिपादासनं यस्य स तेन-**तुहिनगिरिशिलातलसदृशेन**=तुहिनगिरेः हिमालयपर्वतस्य यत् शिलातलं तत्सदृशेन, **शयनेन**=शय्यया, **सनाथीकृतवेदिकं**=सनाथीकृता अलंकृता वेदिका

यस्य तम्, **आस्थानमण्डपं**=सभाभवन (प्रति), **भुक्त्वा**=भोजनं कृत्वा, **अयासीत्**=अगच्छत् ।

टिप्पणी—इस वाक्य का मुख्यांश—**स राजा भुक्त्वा उपस्पृश्य आस्थानमण्डपमयासीत् । धूमवर्ति**—धूमशलाका । **उपस्पृश्य**—आचमन करके, उपस्पर्शस्त्वाचमनम्' इत्यमरः, भोजन के पश्चात् आचमन करना अत्यावश्यक है जैसा कि नारद ने कहा है—'सुप्त्वा क्षुत्वा च भुक्त्वा च निष्ठीव्योक्त्वा—मृतं वचः । पीत्वाऽपोऽध्येष्यमाणश्च आचामेत् प्रयतोऽपि-सन् ॥' उप+स्पृश्+क्त्वा+ल्यप्=उपस्पृश्य । **धवलांशुक.........बद्धमिवोपलक्ष्यमाणम्**—में क्रियोत्प्रेक्षा अलङ्कार है । **मृगनाभि**—कस्तूरी । **परिमल**—गन्ध, 'विमर्दोत्थे परिमलो गन्धे जनमनोहरे' इत्यमरः । **आमोदि**—सुगन्धित । **'अविरल.....निरन्तरनिचितम्'** में **उपमा** तथा **लुप्तोपमा** का **अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर** है । **शालभञ्जिका**—पुतलियाँ । **'सन्निहितगृहदेवतेनेव'** में **क्रियोत्प्रेक्षालंकार** है । **कलधौत**—सुवर्ण । **प्रच्छदपटः**—पलङ्गपोश । **पट्टोपधान**—रेशमी कपड़े का बना हुआ तकिया । **शिरोभाग**—सिरहाना । **पादपीठम्**—पायदान । **शिशिरकरमणि**—चन्द्रकान्तमणि । "**धवलजलधरशकलानुकारिणा'** तथा **'तुहिनगिरिशिलातलसदृशेन'** में आर्थी उपमा है ।

तत्र च शयने निषण्णः क्षितितलोपविष्टया शनैः शनैरुत्संगनिहितासिलतया खंगवाहिन्या नवनलिनदलकोमलेन करसम्पुटेन संवाह्यमानचरणस्तत्कालोचितदर्शनैरवनिपतिभिरमात्यैर्मित्रैश्च सह तास्ताः कथाः कुर्वन मुहूर्तमिवासाञ्चके । ततो नातिदूरवर्तिनीम् "अन्तःपुराद्वैशम्पायनमादायागच्छेति" समुपजाततद्वृत्तान्तप्रश्नकुतूहलो राजा प्रतीहारीमादिदेश । सा क्षितितलनिहितजानुकरतला'यथाज्ञापयति देवः' इति शिरसि कृत्वाज्ञां यथादिष्टमकरोत् ।

हिन्दी-अनुवाद—वहाँ (अर्थात् स्थानमण्डप में) शय्या पर बैठे हुए, भूमितल पर बैठी हुई तथा गोदी में लता सदृश (लम्बी) तलवार लिये हुई, खड्गवाहिनी (दासी) द्वारा—नूतन कमलपत्र के समान कोमल करयुगल से

धीरे-धीरे दबाये जाते हुए चरणों वाले (महाराज शूद्रक) शयन काल में साक्षात्कार करने योग्य भूपतियों, मन्त्रियों तथा मित्रों के साथ प्रकरणानुकूल बातें करते हुए लगभग दो घड़ी तक (विश्राम करते) रहे।

इसके पश्चात् (चाण्डालकन्या द्वारा प्रदत्त) शुक की प्रवृत्ति (वृत्तान्त) पूछने में समुत्पन्न कुतूहल (उत्कण्ठा) वाले नरेश ने कुछ ही अन्तर पर खड़ी हुई प्रतीहारी को आदेश दिया—'अन्तःपुर से वैशम्पायन को लेकर आओ!'

उस (प्रतीहारी) ने पृथ्वीतल पर घुटनों एवं हथेलियों को टेक कर 'जैसी महाराज की आज्ञा' इस प्रकार आज्ञा को शिरोधार्य करके (महाराज के) आदेशानुकूल कार्य किया।

संस्कृत-व्याख्या—तत्र=तस्मिन् सभामण्डपे, **शयने**=आस्तरणे, **निषण्णः**=उपविष्टः राजा शूद्रकः, **क्षितितलोपविष्टया**=क्षितितले भूतले उपविष्टया निषण्णया तथा **उत्सङ्गनिहितासिलतया**=उत्सङ्गे क्रोडे निहिता संस्थापिता असिलता लतावत् लम्बमानः खड्गः यया सा तया, **खड्गवाहिन्या**=कृपाण-धारिण्या, **नवनलिनदलकोमलेन**=नव नवीनं यन्नलिनं कमलं तस्य दलानि पत्राणि तद्वत् कोमलेन मृदुलेन, **करसम्पुटेन**=हस्तयुगलेन, **शनैः शनैः**=मन्दं-मन्दं, **संवाह्यमानचरणः**=संवाह्यमानौ सञ्चाल्यमानौ चरणौ पादयुगलं यस्य सः, **तत्कालोचितदर्शनैः**=तत्काले विश्रामसमये उचितं योग्यं दर्शनं साक्षात्कारः येषां तैः, **अवनिपतिभिः**=भूपतिभिः, **अमात्यैः**=मंत्रिभिः, **मित्रैः**=सुहृद्भिश्च, **सह**=सार्धं, **तास्ताः**=तथाविधाः, **कथाः**=वार्ताः, **कुर्वन्**=विदधत्, **मुहूर्तं**=स्वल्पकालमिव, **आसाञ्चक्रे**=अवतस्थे। **ततः**=तदनन्तरं, **समुपजाततद्वृत्तान्तप्रश्नकुतूहलः**=समुपजातं समुत्पन्नं तस्य शुकस्य वृत्तान्तप्रश्ने प्रवृत्तिपृच्छायां कुतूहलं कौतुकं यस्य स तादृशः, राजा शूद्रकः, **नातिदूरवर्तिनीं**=न अतिदूरे समीप एव वर्तते या सा तां तादृशीं, **प्रतीहारीं**=द्वाररक्षिकाम्, **अन्तःपुरात्**=अवरोधात्, **वैशम्पायनं**=पूर्वोक्तं शुकम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **आगच्छ**=आव्रज **इति**=इत्येवंरूपेण, **आदिदेश**=आज्ञापयामास, **सा**=प्रतीहारी, **क्षितितलनिहितजानुकरतला**=क्षितितले भूतले निहितौ स्थापितौ जानू ऊरुपर्वणी करतले पाणितले च यया सा तथोक्ता, **यथा**=येन प्रकारेण, **देवः**=स्वामी,

आज्ञापयति = आदिशति, **इति** = एवं कथयित्वा, **आज्ञां** = आदेशं, **शिरसि कृत्वा** = मस्तके निधाय, **यथादिष्टं** = यथादेशः, **तथा अकरोत्** = चकार ।

टिप्पणी–निषण्णः–नि + सद् + क्त–बैठा हुआ । **उत्सङ्ग**—गोद । **आसाञ्चक्रे**–आस् (उपवेशने) प्र० पु० ए० व०–बैठा । **"नवनलिनम्"** में **लुप्तोपमालङ्कार** है । **आदाय**–आ + दा + क्त्वा–ल्यप् । **आदिदेश**–आङ + दिश् + लिट् प्र० पु० ए० व० ।

अथ मुहूर्त्तादेव वैशम्पायनः प्रतीहार्या गृहीतपञ्जरः कनकवेत्रलतावलम्बिना किञ्चिदवनतपूर्वकायेन सितकञ्चुकाच्छन्नवपुषा जराधवलितमौलिना गद्‌गदस्वरेण मन्दमन्दसञ्चारिणा विहङ्गजाति प्रीत्या जरत्कलहंसेनेव कञ्चुकिनानुगम्यमानो राजान्तिकमाजगाम ।

हिन्दी-अनुवाद–इसके बाद क्षण भर में ही वैशम्पायन (नामक शुक) महाराज के पास आ पहुंचा जो कि प्रतीहारी द्वारा थामे गये पिंजरे वाला था तथा जो सुनहरी वेत्रलताओं का (निवारणार्थ) आश्रय लेने वाले, कुछ झुके हुए शरीराग्रभाग वाले, धवल पंखों से समावृत शरीर वाले, बुढ़ौती के कारण धवलित शिर वाले, गद्‌गद (अव्यक्त) स्वर वाले तथा (अपनी) विहङ्गजाति के प्रति (स्वाभाविक) स्नेह होने के कारण पीछे-पीछे चलते हुए बूढ़े राजहंस की भाँति–स्वर्णजटित वेत्रयष्टि का आश्रय लेने वाले वृद्धावस्था के कारण पलित शिरोभाग वाले अस्फुट स्वर वाले, धीरे–धीरे चलने वाले तथा विहङ्गजाति के प्रति (स्वाभाविक) लगाव होने के कारण कञ्चुकी द्वारा अनुगमन किया जा रहा था ।

संस्कृत-व्याख्या–अथ = अन्तःपुरप्रवेशानन्तरं, **मुहूर्त्तादेव** = घटिकाद्वयमेव, **वैशम्पायनः** = शुकः, **प्रतीहार्या** = द्वारपालिकया, **गृहीतपञ्जरः** = गृहीतं धृतं पञ्जरं लौहशलाकानिर्मितपक्षिनिलयं यस्य स तथोक्तः, **कनकवेत्रलतावलम्बिना** = कनकेन सुवर्णेन खचिता या वेत्रलता वेतसयष्टिः तामवलम्बते धारणं करोतीत्येवं शीलो यः सः तेन तथोक्तेन, **किञ्चिदवनतपूर्वकायेन** = किञ्चिद् ईषद् अवनतः वार्धक्यवशान्नतः पूर्वकायः नाभेरूर्ध्वभागः यस्य तेन तादृशेन, **सितकञ्चुकाच्छन्नवपुषा** = सितकञ्चुकेन शुभ्रकूर्पासकेन आच्छन्नं आच्छादितं वपुर्देहो यस्य

सः तेन तादृशेन, **जराधवलितमौलिना** = जरया वार्द्धक्येन धवलितः स्वच्छकृतः मौलिः केशसमूहः यस्य तेन तादृशेन, **गद्गदस्वरेण** = गद्गदः अस्फुटः स्वरः कण्ठध्वनिर्यस्य सः तेन तादृशेन, **मन्दमन्दसञ्चारिणा** = मन्दं मन्दं शनैः शनैः सञ्चरितुं शीलं यस्य सः तेन तादृशेन, **विहङ्गजातिप्रीत्या** = पक्षिजातिप्रेम्णा, **जरत्कलहंसेनेव** = वृद्धराजहंसेनेव, **कञ्चुकिना** = सौविदल्लकेन, **अनुगम्यमानः** = अनुव्रज्यमानः **वैशम्पायनः** = पूर्वोक्तः शुकः, **राजान्तिकं** = नृपसमीपम्, **आजगाम** = आययौ ।

टिप्पणी—इस वाक्य का अन्वय इस प्रकार है—'**अथ वैशम्पायनः राजान्तिकमाजगाम** । **कञ्चुकी**—रनिवास में रहने वाला वृद्ध विद्वान् ब्राह्मण सेवक—'अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः । सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते ।' **अनुगम्यमान**—अनु + गम् + यक् + शानच् । '**राजान्तिकमाजगाम**' —यहाँ गत्यर्थक 'आङ् + गम्' धातु के योग में 'अन्तिकम्' में द्वितीय विभक्ति हुई । **आजगाम**—आङ् + गम् + लिट् प्र० पु० ए० व० । **जरत्कलहंसेनेव** में उपमालंकार है ।

क्षितितलनिहितकरतलस्तु कञ्चुकी राजानं व्यज्ञापयत्—'देव देव्यो विज्ञापयन्ति, देवादेशादेष वैशम्पायनः स्नातः कृताहारश्च देवपादमूलं प्रतीहार्या नीतः' इत्यभिधायापगते च तस्मिन् राजा वैशम्पायनमपृच्छत्—"कच्चिदभिमतमास्वादितमभ्यन्तरे भवता किञ्चिदशनजातम् ?" इति ।

हिन्दी-अनुवाद—पृथ्वीतल पर हाथ टेक कर कञ्चुकी ने महाराज को निवेदित किया—**स्वामिन् !** महारानियां (मेरे मुँह से महाराज को) सूचित कर रही है कि महाराज के आदेशानुसार यह वैशम्पायन (शुक) स्नान तथा भोजन सम्पन्न करके प्रतीहारी द्वारा स्वामी के चरणों में प्रस्तुत किया गया है ।' ऐसा कह कर उस (वृद्ध कञ्चुकी) के चले जाने पर राजा ने वैशम्पायन से पूछा—क्या आपने अन्तःपुर मे कुछ रुचि के अनुकूल भक्ष्यपदार्थ आस्वादित कर लिया ?

संस्कृत-व्याख्या—क्षितितलनिहितकरतलः = क्षितितले धरणीतले निहित स्थापितं करतलं हस्ततलं येन सः तु, **कञ्चुकी** = अन्तःपुरनियुक्तः वृद्धः गुणान्वितो विप्रः, **राजानं** = नृपं शूद्रकं, **व्यज्ञापयत्** = न्यवेदयत्–**देव**! = हे स्वामिन्, **देव्यः** = महिष्यः, **विज्ञापयन्ति** = सूचयन्ति, यत् **देवादेशात्** = भवतो नियोगात्, एप **वैशम्पायनः** = शुकः, **स्नातः** = पूर्व कृतस्नानः पश्चात्, **कृताहारः** = विहितभोजनश्च, **देवपादमूलं** = देवस्य भवतः पादमूलं सन्निधि, **प्रतीहार्या** = द्वारपालिन्या, **नीतः** = प्रापितः, **इत्यभिधाय** = इत्युक्त्वा, **तस्मिन्** = कञ्चुकिनि, **गते** = सति, **राजा** = भूपतिः, **वैशम्पायनं** = शुकम्, **अपृच्छत्** = पृष्टवान्, **अभ्यन्तरे** = अन्तःपुरे, **भवता** = त्वया, **अभिमतं** = इष्टं, **किञ्चदशनजातं** = भोजनसामग्रीसमूहः, **आस्वादितं किञ्चित्** = भुक्तं न वेति ।

टिप्पणी—व्यज्ञापयत्—वि + ज्ञा + णिच् + लङ् प्र०पु०ए०व० + **अभिधाय**—अभि + धा + क्त्वा—ल्यप् । **अशनजातम्** = भोजन सामग्री का समूह । **कच्चित्** ···**अशनजातम्** ? यहाँ काकु है । लक्षण—'भिन्नकण्ठध्वनिर्धीरैः काकुरित्यभिधीयते' ।

स प्रत्युवाच—'देव ! किं वा नास्वादितम् ? आमत्तकोकिललोचनच्छविर्नीलपाटलः कषायमधुरः प्रकाममापीतो जम्बूफलरसः, हरिनखरभिन्नमत्तमातङ्गकुम्भमुक्तरक्तार्द्रमुक्ताफलत्वींषि खण्डितानि दाडिमबीजानि, नलिनीदलहरिन्ति द्राक्षाफलस्वादूनि च दलितानि स्वेच्छया प्राचीनामलकीफलानि । किं वा प्रलपितेन बहुना सर्वमेव देवीभिः स्वयं करतलोपनीयमानममृतायते' इति ।

हिन्दी-अनुवाद—उस (सुए) ने उत्तर दिया—महाराज ! भला क्या नहीं आस्वादित किया ? मदोन्मत्त कोकिल की नेत्रच्छवि के समान छवि वाले, लाल-नीले तथा तितमिट्ठे जामुनफलो के रस को मैंने जी भर कर पिया है, वनकेसरी के नखों से विदीर्ण किए गये मतवाले हाथियों के कुम्भस्थलों से पृथग्भूत रक्तसने मुक्ताफलों की प्रभा के समान प्रभाव वाले अनार के दानों

को मैंने खण्डित किया है, कमलिनी के पत्तों की भांति हरे रंगवाली तथा द्राक्षाफल (अगूर) के समान स्वादिष्ट पुरानी आमलकी (धराऊँ आँवला) के फलों को मैंने इच्छानुसार फोडा है। (महाराज !) अधिक बकवास करने से क्या लाभ ? महारानियों द्वारा स्वयमेव हाथों से मेरे पास तक लाया जाता हुआ सब कुछ ही अमृत जैसा लगता था।

संस्कृत-व्याख्या-सः = वैशम्पायनः, **प्रत्युवाच** = प्रतिवचनं ददौ, देव! = हे नाथ!, **वा** = अथवा, **किं** = कीदृशं भोजनं, **न आस्वादितं** = न भक्षितमिति काकुः ? अयम्भावो यद् मद्भक्ष्ययोग्यं सर्वमेव भक्षितम्। **आमत्तकोकिल-लोचनच्छविः** = आमत्तः मधुपानेनोन्मत्तः यः कोकिलः पिकः तस्य लोचनच्छविः नयनकान्तिः सैव छविर्यस्य स तादृशः, **नीलपाटलः** = नीलश्चासौ पाटलः श्वेतरक्तश्चेति नीलपाटलः,। **कषायमधुरः** = कषायोऽम्लश्चासौ मधुरो मिष्टर-मश्चेति कषायमधुरः, **जम्बूफलरसः** = जम्बूफलद्रवः, **प्रकामं** = पर्याप्तम्, **आपीतः** = पानविषयीकृतः, **हरिनखरभिन्नमत्तमातङ्गकुम्भमुक्तरक्तार्द्र मुक्ताफलत्वींषि** = हरेः सिंहस्य नखरैः नखैः भिन्नाः विदारिताः—ये मत्तमातङ्गानाम् उन्मत्तगजानां कुम्भाः शिरःस्था मांसपिण्डा तेभ्यो मुक्तानि अपगता नियानि रक्तार्द्राणि शोणि-तस्विन्नानि मुक्ताफलानि मौक्तिकानि तेषां त्विष इव त्विषः कान्तयो येषां तानि तथोक्तानि, **दाडिमबीजानि** = दाडिमफलबीजानि, **खण्डितानि** = शकली-कृतानि, **नलिनीदलहरिन्ति** = नलिनी कमलिनी तस्याः दलानि पत्राणि तद्वत् हरिन्ति हरिद्वर्णानि, **द्राक्षाफलस्वादूनि** = द्राक्षाफलतुल्यस्वादिष्टानि च **प्राचीनामलकीफलानि** = क्षीरधात्रीसस्यानि, **स्वेच्छया** = स्वाधीनतया, **दलितानि** = चञ्चुपुटेन मर्दयित्वा खादितानि, **वा** = अथवा, **बहुना** = अधिकेन, **प्रलपि-तेन** = वृथा जल्पनेन, **किं** = को लाभः, **देवीभिः** = राज्ञः शूद्रकस्य महिषीभिः, **स्वयं** = आत्मना, **करतलोपनीयमानं** = निजैः हस्ततलैः दीयमानं, **सर्वमेव** = निखिलमपि भोज्यम्, **अमृतायते** = अमृतवदाचरति।

टिप्पणी—देव किं वा नास्वादितम् ?—यहाँ काकु है। **पाटलः** = गुलाबी सफेद, लालरंग, 'श्वेतरक्तस्तु पाटलः' इत्यमरः। **'कोकिललोचनच्छविः'** में

लुप्तोपमालङ्कार है । **हरनिखर**–सिंह के नाखून । **त्वींषि**—कान्तियाँ, । **हरिन्ति**–हरे । **प्राचीनामलकीफलानि**–पुराने आँवलों के फल । **अमृतायते**–अमृतवदाचरति –अमृत + क्यङ् अमृत के समान मधुर लगता है । 'नलिनीदलहरिन्ति' तथा 'द्राक्षाफलस्वादूनि' में लुप्तोपमालङ्कार है । दोनों की निरपेक्ष स्थिति से संसृष्टि है ।

एवंवादिनो वचनमाक्षिप्य नरपतिरब्रवीत्–"आस्तां तावत्सर्वमेवेदम्, अपनयतु नः कुतूहलम्, आवेदयतु भवनादितः प्रभृति कार्त्स्न्येनात्मनः जन्म कस्मिन्देशे ? भवान् कथं जातः ? केन वा नाम कृतम् ? का ते माता ? कस्ते पिता ? कथं वेदानामागमः ? कथं शास्त्राणां परिचयः ? कुतः कलाः समासादिताः ? किं जन्मान्तरानुस्मरणम् ? उत वरप्रदानम्, अथवा विहङ्गवेषधारी कश्चिच्छन्नो निवससि ? क्व पूर्वमुषितम् ? कियद्वा वयः ? कथं पञ्जरबन्धः ? कथं चाण्डालहस्तगमनम् ? इह वा कथमागमनम् ?" वैशम्पायनस्तु स्वयमुपजातकुतूहलेन सबहुमानमवनिपतिना पृष्टो मुहूर्त्तमिव ध्यात्वा सादरमब्रवीत्–देव ! महतीयं कथा । यदि कौतुकमाकर्ण्यताम्–

हिन्दी अनुवाद–इस प्रकार बतियाते हुए वैशम्पायन की बात को रोककर महाराज (शूद्रक) ने कहा–अच्छा, यह सब रहने दीजिए ! (पहले) हमारा कुतूहल (उत्कण्ठा) दूर कीजिए । प्रारम्भ से लेकर (अवतक) अपनी आप वीती अच्छी तरह प्रस्तुत कीजिये–किस जनपद में जन्म हुआ ? आप किस प्रकार पैदा हुये ? अथवा किसके द्वारा (आपका) नामकरण हुआ ? कौन आपकी माता हैं ? कौन आपके पिता हैं ? कैसे वेद की उपलब्धि हुई ? कैसे (न्यायमीमांसादि) शास्त्रों का परिचय (ज्ञान) हुआ ? कहाँ से (७५ भेद वाली) कलाओं का अभ्यास किया ? किस कारण (प्रभाव) से पूर्वजन्म का (आपको) अनुस्मरण है ? अथवा (यह) वरप्रदान है ? (जिसके प्रभाव

से आप अनुभूतार्थ को जान रहे हैं) अथवा कोई (अन्य विलक्षण जीव हैं आप जो कि) विहंगवेष धारण कर गुप्तरूप से रह रहे है ? पहले कहाँ रहे ? अथवा आपकी अवस्था कितनी है ? कैसे पिंजरे में फँस गये ? कैसे चाण्डाल के हाथ में आ पड़े ? अथवा यहाँ तक (राजदरबार में) कैसे आना हुआ ? अपने आप उत्पन्न हुई उत्कण्ठा वाले महाराज (शूद्रक) द्वारा आदर-पूर्वक पूछा गया वैशम्पायन भी पलभर के लिए ध्यानमग्न-सा होकर आदर सहित बोला—महाराज ! बड़ी लम्बी है यह कहानी । (फिर भी) यदि उत्कण्ठा है तो सुनिये—

संस्कृत-व्याख्या—एवंवादिनः = पूर्वोक्तप्रकारेण कथयतः, **तस्य** = वैशम्पायनस्य, **वचनं** = कथनम्, **आक्षिप्य** = अनादृत्य, **नरपतिः** = भूपतिः शूद्रकः, **अब्रवीत्** = अवदत्, **सर्वं** = निखिलं, **तावद्** = आदौ, **इदं** = पूर्वोक्तमेव, **आस्ताम्** = तिष्ठतु, **नः** = अस्माकं, **कुतूहलं** = कौतुकम्, **अपनयतु** = दूरीकरोतु । **भवानादितः प्रभृति** = उत्पत्तिकालादारम्य, **कात्स्न्येन** = समग्ररूपेण, **आत्मनः** = स्वकीयं (वृत्तान्तं), **आवेदयतु** = निवेदयतु । यथा हि भवतः, **कस्मिन् देशे** = कुत्र जनपदे, **जन्म** = उत्पत्तिः ? **कथं** = केन प्रकारेण भवान्, **जातः** = उत्पन्नः ? **केन वा नाम कृतं** = केन जनेन वा वैशम्पायनेति नाम विहितम् ? **ते का माता** = तव का जननी ? **ते कः पिता** = तव कः जनकः ? **कथं वेदानामागमः** = कथं वेदानामुपलब्धिः ? **कथं शास्त्राणां परिचयः** = कथं न्यायशास्त्रादीनां विशेषबोधः । **कला कुतः समासादिताः** = नृत्यगीतादिविद्याः कुतः प्राप्ताः ? **किं जन्मान्तरानुसरणं** = किन्निमित्तकं पूर्वजन्मोदन्तस्मृतिः ? **उत किं वरप्रदानं** = वरदानप्राप्तिः, **अथवा** = सिद्ध एव किंवा, **कश्चित्** = कश्चन, **विहङ्गवेषधारी** = स्वरूपधपक्षिारी, **छन्नः** = गुप्तः, **सन् निवससि** = वासं विदधासि ? **क्व पूर्वमुषितं** = कुत्र वा पूर्वमवस्थितम् ? **वा कियद्वयः** = अथवा वार्षिकावस्था का ? **कथं पञ्जरबन्धः** = केन प्रकारेण पञ्जरमध्येऽवस्थानम् ? **कथं चाण्डालहस्तगमनं** = अन्त्यजहस्तप्राप्तिः कथम् ? **इह वा कथमागमनं** = अस्मिन् प्रदेशे वा कथमुपस्थितिः ? **तु** = पुनः, **वैशम्पायनः** = शुकः, **सबहुमानं** = सादरम्, सादरम्, **उपजातकुतूहलेन** = समुत्पन्नकौतूहलेन, **स्वयं** = आत्मना, **अवनिपति**

ना=भूपतिना, **पृष्टः**=कृतप्रश्नः, **मुहूर्तमिव**=क्षणमिव, **ध्यात्वा**=चिन्तयित्वा, **सादरं**=सबहुमानम्, **अब्रवीत्**=उवाच, **देव**=हे नाथ ! **इयं**=एषा कथा, **महती**=अतिविस्तृता कथा । **यदि**=चेत्, **कौतुकं**=कौतूहलं तर्हि, **आकर्ण्यतां**=श्रूयताम्—

टिप्पणी—कुतूहलं—कौतुक, 'कौतूहलं कौतुकं च कुतुकं च कुतूहलम्' **इत्यमरः** । **अपनयतु**—दूर करें—अप नी+लोट् प्र० पु० ए० व० । **उत**—क्या, 'आहो उताहो किमुत विकल्पे किं किमूत च' इत्यमरः । **कार्त्स्न्येन**—कृत्स्न+ष्यञ्=कार्त्स्न्यं । **छन्नः**—छद्+क्त, छिपा हुआ । **उषितम्**—वस्+क्त, निवास स्थान ।

'अस्ति पूर्वापरजलनिधिवेलावलग्ना, मध्यदेशालङ्कारभूता मेखलेव भुवः, वनकरिकुलमदजलसेकसंवर्धितैरतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युच्चतया तारागणमिव शिखरदेशलग्नमुद्वहद्भिः पादपैरुपशोभिता, मदकलकुररकुलदश्यमानमरिचपल्लवा, करिकलभकरमृदिततमालकिसलयामोदिनी, मधुमदोपरक्तकेरलीकपोलकोमलच्छविना सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तकरसरञ्जितेनेव पल्लवचयेन संच्छादिता, शुककुलदलितदाडिमीफलद्रवार्द्रीकृततलैरतिचपलकपिकुलकम्पितकक्कोलच्युतपल्लवफलशबलैः अनवरतनिपतितकुसुमरेणुपांशुलैः पथिकजनरचितलवङ्गपल्लवसंस्तरैः अतिकठोरनारिकेलकेतकीकरीरबकुलपरिगतप्रान्तैः ताम्बूलीलतावनद्धपूगषण्डमण्डितैर्वनलक्ष्मीवासभवनैरिव विराजिता लतामण्डपैः, उन्मदमातङ्गकपोलस्थलगलितसलिलसिक्तेनेव निरन्तरमेलालतावनेन मदगन्धिनान्धकारिता, नखमुखलग्नेभकुम्भमुक्ताफललुब्धैः शबरसेनापतिभिरभिहन्यमानकेसरिशता ।

हिन्दी-अनुवाद—पूर्वी और पश्चिमी सागर-तट तक फैली हुई, मध्यप्रदेश की आभूषण स्वरूपा अतएव पृथ्वी की मेखला (करधनी) सी प्रतीत होने वाली, अरण्यचारी गजसमूहों के मदजल से सींचे जाने के कारण संवर्धित, शिखरभाग पर लगे हुए तथा अत्यन्त ऊँचाई के कारण नक्षत्रमण्डल से प्रतीत

होने वाले भरपूर खिले हुए श्वेतवर्णी पुष्प पुञ्ज को धारण करने वाले वृक्षों से शोभायमान, मदमस्त होने के कारण प्यारे लगने वाले कुरर पक्षियों के समुदाय द्वारा कुतरे जाते हुए मरिच वृक्ष के पत्रों वाली, हस्तिशावकों के शुण्डा-दण्डों से उपमर्दित तमालवृक्षों के नूतनपर्णों की गन्ध से संकुल मदिरा के आवेश (प्रभाव, मस्ती) से सुर्ख वने हुए केरली सुन्दरियों के कपोलों की कोमल छवि के समान छवि वाली तथा सञ्चरण करती हुई वनदेवियों के चरणों में लगे अलक्तकरस (महावर) से अनुरंजित (रंगी हुई) प्रतीत होने वाली नई कोपलों के समूह से आच्छादित, शुकसमूह द्वारा विदीर्ण किये गये दाडिम-फलों के रस से भिगोयी गई फर्श वाले अत्यन्त चञ्चल वानरसमूह द्वारा झिझोड़े गये कङ्कोल वृक्षों से घिरे हुए पल्लवों तथा फलों के कारण चितकबरे, निरन्तर गिरी हुई पुष्पधूलियों से पांशुल (धूलभरी), बटोहियों द्वारा बनाये गये लवङ्ग की पत्तियों के बिछौनों से युक्त-अत्यन्त कठोर नारियल, केवड़ा, करील तथा मोलसिरी वृक्षों से घिरी हुई चौहद्दी वाले पान की (चढ़ी हुई) लतरों से व्याप्त सुपारी के वनों से अलंकृत तथा वनलक्ष्मी के निवासगृह प्रतीत होने वाले लताकुञ्जों से विराजित, मानों मतवाले गजराजों के कपोलमण्डलों से बहते हुए मदजल से सींचे गये अतएव मदजल की गन्ध के समान गन्ध वाले एलालताओं (इलाइची की लतर) के वन से निरन्तर अँधियारी बनाई गई, नखाग्रभागों में संलग्नहाथियों के कुम्भस्थलों से उत्पन्न मुक्ताफलों के लालची किरात सेनापतियों द्वारा मारे जाते हुए सैकड़ों सिहों वाली ।

संस्कृत-व्याख्या—'अस्तीति' अस्य दूरस्थेन विन्ध्याटवी नामेति कर्तृपदेन सम्बन्धः । अथ सा विन्ध्याटवी कीदृशी वर्तते ? सम्प्रति तामेव विशिनष्टि **पूर्वापरेति** । **पूर्वापरजलनिधिवेलावलग्ना**=पूर्वश्चापरश्चेति पूर्वापरौ प्राच्यप्र-तीच्यदिग्वर्तिनौ यौ जलनिधि समुद्रौ तयोः वेलयोः तीरयोरवलग्ना संयुक्ता, **मध्यदेशालङ्कारभूता**=मध्यदेशस्य मध्यवर्त्ति स्थानस्य अलङ्कारभूता भूषणस्व-रूपा, **भुवः**=पृथिव्याः, **मेखलेव**-रशनादामेव, **वनकरिकुलमदजलसेकसंव-र्धितैः**=वने कानने ये करिणः हस्तिनः तेषां कुलानि यूथानि तेषां मदजलस्य

दानवारिणः सेकेन सिञ्चनेन संवर्धितैः वृद्धि सम्प्राप्तैः, **अतिविकचधवलकुसुमनिकरं**=अतिविकचानाम् अतिविकसितानां धवलानां शुभ्राणां कुसुमानां पुष्पाणां निकरं समुदायम् अत्युच्चतया वृक्षाणाम् अत्यन्तम् उच्चतावशात्, **शिखरदेशलग्नं**=शिरोभागसंलग्नं, **तारागणं**=नक्षत्रमण्डलमिव, **उद्वहद्भिः**=धारयद्भिः, **पादपैः**=वृक्षैः, **उपशोभिता**=भूषिता, **मदकलकुररकुलदश्यमानमरिचपल्लवः**=मदकलैः मदोन्मत्तैः कुरराणां मत्स्यनाशनानां कुलानि समूहाः तैः दश्यमानाः चञ्चुपुटेन संदश्य आस्वाद्यमानाः मरिचानां कोलकानां पल्लवाः किसलयानि यस्यां सा, **करिकलभकरमृदिततमालकिसलयामोदिनी**=करिणां हस्तिनां कलभाः तेषां करैः शुण्डादण्डैः मृदितानि मर्दितानि यानि तमालकिसलयादिपिच्छपल्लवानि तेषाम् आमोदः सुगन्धिः विद्यते यस्यां सा तादृशी, **मधुमदोपरक्तकेरलीकपोलकोमलच्छविना**=मधु मद्यं तस्य यो मदः मदिरापानेन मत्तता तेन उपरक्ताः रक्तवर्णीभूताः ये केरलीकपोलाः केरलदेशोत्पन्नानां सुन्दरीणां कपोलाः गल्लप्रदेशाः तेषामिव कोमला मृद्वी छविः कान्तिः यस्य तेन, **सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तकरसरञ्जितेनेव**=सञ्चरन्तीनां व्रजन्तीनां वनदेवतानां काननाधिष्ठातृदेवीनां चरणालक्तकरसैः पादस्थितयावकद्रवैः रञ्जितेनेव रक्तीकृतेनेव, **पल्लवचयेन**=किसलयसमूहेन, **सञ्छादिता**=आच्छादिता **शुककुलदलितदाडिमीफलद्रवार्द्रीकृततलैः**=शुककुलैः कीरसमूहैः दलितानि चञ्चुभिः विदारितानि यानि दाडिमीफलानि तेषां द्रवैः रसैः आर्द्रीकृतानि आर्द्रत्वमुपनीतानि तलानि अधोवर्त्तिस्थानानि येषां तैः, **अतिचपलकपिकुलकम्पितकक्कोलच्युतपल्लवफलशबलैः**=अतिचपलैः अत्यन्तचञ्चलैः कपिकुलैः वानरसमूहैः कम्पितेभ्यः आन्दोलितेभ्यः कक्कोलेभ्यः तरुविशेषेभ्यः च्युतानि पतितानि यानि पल्लवफलानि तैः शबलैश्चित्रैः, **अनवरतनिपतितकुसुमरेणुपांशुलैः**=अनवरतनिपतितानां निरन्तरप्रच्युतानां कुसुमानां पुष्पाणां रेणुभिः परागधूलिभिः पांशुलैः सरजस्कैः, **पथिकजनरचितलवङ्गपल्लवसंस्तरैः**=पथिकजनैः पान्थपुरुषैः रचिताः निर्मिताः, **लवङ्गपल्लवानां**=लवङ्गवृक्षविशेषकिसलयानां संस्तरा आसनानि येषु तैः तथोक्तैः, **अतिकठोरनारिकेलकेतकीकरीरबकुलपरिगतप्रान्तैः**=

अतिकठोरा अत्यन्तकठिनाः परिपक्वा इत्यर्थः, ये नारिकेलाः लाङ्गलिवृक्षाः, केतक्यः क्रकचपर्णाः करीरा पत्रविहीनाः कण्टकसहिताः वृक्षविशेषाः, बकुलाश्च तैः परिगताः परितो व्याप्ताः प्रान्ताः पर्यन्तप्रदेशाः येषां तैः तथोक्तैः, **ताम्बूलीलतावनद्धपूगषण्डमण्डितैः**=ताम्बूलीलताभिः नागवल्लीव्रततीभिः अवनद्धं संबद्धं यत् पूगषण्ड क्रमुकवन तेन मण्डितैः अलंकृतैः, अत एव **वनलक्ष्मीवासभवनैरिव**=वनलक्ष्म्याः विपिनश्रियः वासभवनैरिव वसतिगृहैरिव, **लतामण्डपैः**=वल्लीगृहैः, **विराजिता**=सुशोभिता, **उन्मदमातङ्गकपोलस्थलगलितसलिलसिक्तेनेव**=उन्मदानां मदोन्मत्तानां मातङ्गानां गजानां कपोलस्थलेभ्यः गण्डप्रदेशेभ्यः गलितैः च्युतैः सलिलैः मदजलैः सिक्तेनेव सिञ्चितेनेव अतएव **मदगन्धिना**=मदगन्धयुक्तेन, **निरन्तरं**=सघनं यथा स्यात्तथा, **एलालतावनेन**=एलाचन्द्रवालावल्लीनां वनेन विपिनेन **अन्धकारिता**=अन्धकारयुक्ता, **नखमुखलग्नेभकुम्भमुक्ताफललुब्धैः**=नखानां नखराणां मुखेषु अग्रभागेषु लग्नानि संसक्तानि यानि इभकुम्भमुक्ताफलानि सिंहविदारितगजमस्तकमांसपिण्डोद्भवानि मौक्तिकानि तेषु लुब्धैः लोलुपैः, **शबरसेनापतिभिः**=भिल्लसेनानायकैः, **अभिहन्यमानकेसरिशता**=अभिहन्यमानं व्यापाद्यमानं केशरिशतं मृगेन्द्रमण्डलं यस्यां सा तथोक्ता।

टिप्पणी—यहाँ वाक्य से प्रारम्भ में आई हुई 'अस्ति' क्रिया का सम्बन्ध वाक्य के अन्त में स्थित '**विन्ध्याटवी नाम**' से है । **वेला**—समुद्र का किनारा । **मध्यप्रदेश**—'हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्ये' यत्प्राग्विनशनादपि । प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः । **मनु**-'**मेखला**—करधनी, 'स्त्रीकट्यां मेखला काञ्ची सप्तकी रशना तथा' इत्यमरः । **उद्वहद्भिः**—उत् वह+शतृ तृ० ब० व० । '**शिखरदेशलग्नं तारागणमिव**' में जात्युत्प्रेक्षालंकार है । **कुरर**=क्रौञ्चपक्षी । **वश्यमान**-कुतरे जाते हुए । **कलभ**=हाथी का बच्चा, 'कलभः करिशावकः' इत्यमरः । **मृदित**—मृद्+क्त—मसला हुआ । **केरली**—केरल देश की स्त्री । **अलक्तक**—महावर । **चयः**—राशि, समूह । 'कपोल-कोमलच्छविना' में **लुप्तोपमा** तथा '**रंजितेनेव**' में **क्रियोत्प्रेक्षा** है । दोनों के **अङ्गाङ्गिभाव से सङ्कर** । **दाडिमीफल**—अनार का फल । **कक्कोल**—शीतल चीनी का वृक्ष । **शबलाः**—चितकबरे ।

संस्तरः–सम् स्तृ + अप्, बिछौना, बिछावन । **बकुलः**–मौलसिरी । **शुककुलदलितदाडिमीफल**...यहाँ दाडिमीफल के रस से मध्य भाग के आर्द्र किये जाने रूप सम्बन्ध के न होने पर भी उसके सम्बन्ध के प्रतिपादन के द्वारा **अतिशयोक्ति अलंकार** है तथा '**वनलक्ष्मीवासभवनैरिव**' में **जात्युत्प्रेक्षालङ्कार** है । दोनों की निरपेक्ष स्थिति होने से संसृष्टि है । **एलालता**–इलायची की बेल । **इभ**–हाथी । **अभिहन्यमान**–अभि+हन् + यक् + शानच् । **सलिलसिक्तेनेव**–**क्रियोत्प्रेक्षालंकार** है ।

प्रेताधिपनगरीव सदासन्निहितमृत्युभीषण महिषाधिष्ठिता च समरोद्यतपताकिनीव बाणासनारोपितशिलीमुखा विमुक्तसिंहनादा च, कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालङ्कृता च, कर्णीसुतकथेव सन्निहितविपुलाचला शशोपगता च, कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव प्रनृत्यन्नीलकण्ठा पल्लवारुणा च अमृतमथनवेलेव श्रीद्रुमोपशोभिता वारुणीपरिगता च, प्रावृडिव घनश्यामला अनेकशतह्रदालङ्कृता च,

हिन्दी-अनुवाद–सदैव निकटवर्ती यमदेवता के कारण भयकारिणी तथा (यमराज के वाहनभूत) महिष से युक्त प्रेताधिप अर्थात् यमराज की नगरी के समान सदैव समीपवर्ती अजगरों के कारण भयावह (अथवा मृत्यु - व्याघ्रादि हिंस जीव, उनके कारण भयावह) तथा जंगली भैंसों से भरी हुई, 'बाणासन' अर्थात् धनुष पर चढ़ाये गये बाणों वाली तथा सिंहनाद (घोरगर्जन) करती हुई युद्धाभिमुख सेना की भाँति बाण और असन वृक्षों पर बैठे हुए भ्रमरों वाली तथा उत्पन्न हुई वनकेसरियों की दहाड़ों से युक्त, माँजी जाती तलवार के कारण भयङ्कर तथा लालचन्दन से शोभायमान भगवती महाकाली की भाँति सञ्चरण करती हुई गैंडों के कारण भयावह तथा रक्तचन्दन वृक्षों से अलंकृत, विपुल और अचल (नामक मित्रों) से अलंकृत तथा शश (मुख्यामात्य) से संयुक्त 'कर्णीसुत' की कथा के समान समीपवर्ती पृथुकाय पर्वतों वाली तथा खरगोशों (अथवा शश=लोध्रवृक्षों) से भरी हुई, ताण्डवनृत्य करते हुए नील

कण्ठ(भगवान-शङ्कर से युक्त तथा नूतन पर्णों के समान रतनारी प्रलयकालीन रात्रि की सान्ध्यवेला के समान नाचते हुए मयूरों वाली तथा नूतनपल्लवों के कारण अरुणवर्ण, लक्ष्मी एवं कल्पद्रुम से सुशोभित तथा 'वारुण' अर्थात् सुरा से युक्त अमृतमन्थन-वेला की भाँति बिल्व वृक्षों से सुशोभित तथा 'वारुण' अर्थात् वरुणवृक्षों के समूह से परिव्याप्त, (सजल) जलधरों के कारण श्याम-वर्ण तथा अनेक (भिन्न-भिन्न स्वरूपवाली) विद्युल्लेखाओं से अलंकृत पावस ऋतु की भाँति सघन पीपलों से युक्त(अथवा अत्यधिक अन्धकारमय) तथा कई सौ सरोवरों से अलंकृत ।

संस्कृत-व्याख्या—प्रेताधिपनगरीव = प्रेताधिपस्य यमराजस्य नगरीव पत्तन-मिव, **सदासन्निहितमृत्युभीषणा** - सदा सर्वदा सन्निहितः समीपवर्ती मृत्यु यमः तेन भीषणा भयदायिनी, **महिषाधिष्ठिता च** = महिषः यमस्य वाहनं तेन अधि-ष्ठिता सहिता च, पक्षे सदा सन्निहितेन सर्वदा निकटस्थितेन मृत्युना हिंस्रजन्तु-भिराक्रमणसम्भवान्मरणेन भीषणा भयावहा तथा च महिषैः वन्यसैरिभैरधि-ष्ठिता व्याप्ता, **समरोद्यतपताकिनीव**=समरे युद्धे उद्यता प्रवृत्ता या पताकिनी सेना तद्वदिव, **बाणासनारोपितशिलीमुखाः**=बाणासनेषु चापेषु आरोपिताः शिलीमुखाः लोहखण्डाः यया सा तथोक्ता, **विमुक्तसिंहनादा च** = तथा विमुक्तः परित्यक्तः सुभटैर्विहित इत्यर्थः, सिंहनादः क्ष्वेडा इव नादो यया सा, पक्षे बाणासु नीलीझिण्टीषु असनेषु पीतशालेषुच तरुषु आरोपिताः संस्थापिताः शिलीमुखा भ्रमराः यया सा तथोक्ता, विमुक्ताः स्वच्छन्दरूपेण भूताः सिंहानां नादाः गर्जनानि यत्र तथाविधा, **कात्यायनीव** = दुर्गेव, **प्रचलितखड्गभीषणा**= प्रचलितेन चञ्चलीभूतेन खड्गेन असिना भीषणा भयानका, **रक्तचन्दनालङ्कृता च**=रक्तचन्दनानुलेपेन अलंकृता च=भूषिता च, पक्षे प्रचलितैः सञ्चरद्भिः खड्गैः गण्डकैः भीषणा तथा रक्तचन्दनैः तत्संज्ञकतरुभिः अलंकृता । **कर्णीसुत-कथेव** = कर्णीसुतः चौर्यशास्त्रनिर्माता क्षत्रियविशेषः तस्य कथा वृत्तान्तः तद्वदिव, **सन्निहितविपुलाचला**=सन्निहितौ समीपवर्तिनौ विपुलाचलौ तत्संज्ञकौ सखायौ यस्यां सा तादृशी, **शशोपेता च**=तथा शशेन शशसंज्ञकेन सचिवेन

उपगता विशिष्टा, पक्षे सन्निहिताः सन्निकटवर्त्तिनः विपुलाः विस्तृता अचलाः पर्वताः यस्या सा तादृशी तथा शशैः मृदुलोमकैः लोध्रवृक्षैर्वा उपगता सहिता, **कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव**=कल्पान्ते युगान्ते प्रदोषः रजनीमुखं तस्य या सन्ध्या सायंकालस्तद्वदिव, **प्रनृत्यन्नीलकण्ठा**=प्रनृत्यन् संसारसंहारप्रमोदेन नटन् नीलकण्ठः महेश्वरः यस्यां सा तथोक्ता, **पल्लवारुणा च**=तथा पल्लवः किसलयस्तद्वदरुणा रक्ता, पक्षे प्रनृत्यन्तः नटन्तः नीलकण्ठाः मयूराः तस्यां सा तथा पल्लवैः किसलयैः अरुणा रक्तवर्णरूपा, **अमृतमथनवेलेव**=अमृताय पीयूषाय यन्मथनं क्षीरसागरस्य विलोडनं तस्य वेला समय इव, **श्रीद्रुमोपशोभिता**= श्रिया लक्ष्म्या द्रुमेण कल्पद्रुमेण उपशोभिता उपरञ्जिता, **वारुणीपरिगता च**= तथा वारुणीं सुरां परिगता सहिता, पक्षे श्रीद्रुमैः विल्ववृक्षैः उपशोभिता तथा पश्चिमां दिशं परिगता सामस्त्येन प्राप्ता, **प्रावृडिव**=वर्षाकाल इव, **घनश्यामला**=घनैः मेघैः श्यामला कृष्णवर्णा, **अनेकशतह्रदालङ्कृता च**=तथा अनेकाभिः शतह्रदाभिः तडिद्भिः अलङ्कृता मण्डिता, पक्षे घना वृक्षादिभिः सान्द्रा अत एव श्यामलवर्णा उपलक्ष्यमाणा तथा अनेकाः भिन्नाभिन्नस्वरूपाः शतह्रदाः जलवालिकाः ताभिः अलंकृता ।

टिप्पणी–प्रेताधिपः–प्रेतानामधिपः–प्रेतों का स्वामी–यमराज । **मृत्युभीषणा** –(क) प्रेताधिपनगरी के पक्ष में–यमराज से भीषण (क) विन्ध्याटवी के पक्ष में–व्याघ्रादिहिंसक जन्तुओं से भीषण । **महिषः**–भैंसा, 'लुलायो महिषो वाहद्विषत्कासरसैरिभाः' इत्यमरः । **अधिष्ठिता**—स्था + क्त + टाप्—युक्त, आश्रित । **बाणासन**–(क) सेना के पक्ष में–धनुष (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में बाण तथा असन नामक वृक्ष । शिलीमुख–(क) सेना के पक्ष में–बाण, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में भौंरे । **सिंहनाद** (क) सेना के पक्ष में-सिंहों के समान गर्जन (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—सिंहों की गर्जन । **खड्ग**–(क) कात्यायनी के पक्ष में—तलवार (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—गैंडा । **रक्तचन्दन**–(क) कात्यायनी के पक्ष में—लाल चन्दन का लेप, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—लाल चन्दन का पेड़ । **कर्णीसुत**—चौर्यशास्त्र का प्रवर्तक क्षत्रियविशेष । बृहत्कथा के अनुसार विपुल तथा अचलनामक मित्र थे तथा शश नामक

मंत्री था–'कर्णीसुतः करकटः स्तेयशास्त्रप्रवर्तकः । तस्य ख्यातौ सखायौ द्वौ विपुलाचलसंज्ञितौ । शशो मन्त्रिवरस्तस्य···।' **विपुलाचल**–(क) कर्णीसुतकथा के पक्ष में–कर्णीसुत के विपुल तथा अचल नामक मित्र, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में बड़े पर्वत । **शश**–(क) कर्णीसुतकथा के पक्ष में–शश नामक मन्त्री, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—खरगोश । 'शशो लोध्रे नृभेदे च पशौ' इत्यनेकार्थः । **नीलकण्ठ**–(क) कल्पान्तप्रदोषसन्ध्या के पक्ष में–शिव, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–मयूर । **पल्लवारुणा**–(क) सन्ध्या के पक्ष में–पल्लवों जैसी लाल । (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–पल्लवों के कारण लाल । '**अमृत······परिगता**'—देवताओं तथा दैत्यों ने अमृत के लिए समुद्रमन्थन किया था । ऐसी पौराणिक कथा है । **श्रीद्रुमोपशोभिता**–(क) समुद्रमन्थन के समय के पक्ष में–लक्ष्मी तथा कल्पद्रुम से सुशोभित (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–बिल्ववृक्षों से सुशोभित । 'श्रीद्रुमोपशोभिता' यहाँ समुन्मन्थन के पक्ष में 'श्री' शब्द का अर्थ 'लक्ष्मी' तथा 'द्रुम' शब्द का अर्थ 'कल्पद्रुम' है क्योंकि ऐसा विधान है—"नामैकदेशग्रहणेन नामग्रहणं बोध्यम्" अर्थात् नाम के एकभाग के ग्रहण से सम्पूर्ण नाम का ग्रहण समझना चाहिए । **वारुणी**—(क) अमृतमंथन वेला के पक्ष में–सुरा, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–वरुण देव की दिशा, पश्चिम दिशा । **प्रावृट्**–वर्षा ऋतु । **घनश्यामला**–(क)वर्षा ऋतु के पक्ष में–मेघों के कारण श्यामली, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–मेघों जैसी श्यामली । **शतह्रदालङ्कृता**–(क) वर्षा ऋतु के पक्ष में–बिजलियों से अलंकृत (ख) सैकड़ों सरोवरों से अलंकृत–(विन्ध्याटवी के पक्ष में) । **प्रेताधिपनगरीव······अनेकशतह्रदालंकृता च**' पर्यन्त पूर्णोपमालंकार है ।

चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणाध्यासिता च, राज्यस्थितिरिव चमरमृगबालव्यजनोपशोभिता समदगजघटापरिपालिता च, गिरितनयेव स्थाणुसङ्गता मृगपतिसेविता च, जानकीव प्रसूतकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च, कामिनीव चन्दनमृगमदपरिमलवाहिनी रुचिरागुरुतिलकभूषिता च, सोत्कण्ठेव विविधपल्लवानिलवीजिता

समदना च, बालग्रीवेव व्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डिता गण्डकाभरणा च, पानभूमिरिव प्रकटितमधुकोशशता प्रकीर्णविविधकुसमा च,

हिन्दी अनुवाद—निरन्तर तारकमण्डल से अनुगम्यमान तथा मृगलांछन से अध्यासित चन्द्रमा की मूर्ति के समान निरन्तर भालुओं के समुदाय से व्याप्त तथा हरिणों से सुशोभित, चमरमृग के बालों अर्थात् चामरों एवं व्यञ्जनों (पंखों) से सुशोभित तथा मदमस्त हाथियों के समूह से परिरक्षित राजमर्यादा के समान चमरमृगों के केशपाश रूपी व्यञ्जनों से उपशोभित तथा मदोन्मत्त गजराजों के समुदाय को पालने (आश्रय देने) वाली, 'स्थाणु' अर्थात् देवाधिदेव शङ्कर से अलंकृत तथा (वाहनभूत) सिंह से संसेवित गिरितनया (पार्वती) की भाँति ठूँठ वृक्षों से व्याप्त तथा सिंहों से समाश्रित, कुश और लव (पुत्रद्वय) को जन्म देने वाली तथा निशाचर (लङ्कापति रावण) द्वारा अपहृत जानकी की भाँति कुशाङ्कुरों को उत्पन्न करने वाली तथा 'निशाचर' अर्थात् उल्लू पक्षियों से परिपूर्ण, चन्दन और कस्तूरी (के अनुलेपन से उत्पन्न) की सुगन्धि का वहन करने वाली तथा शोभन अगुरु (से विरचित) तिलक से विभूषित श्रृङ्गारनायिका की भाँति चन्दनतरु एवं कस्तूरी से उठी हुई सुरभि का वहन करने वाली तथा रमणीय अगुरु एवं तिलकवृक्षों से शोभायमान, अनेकविध पल्लवों की वायु से हवा की गई तथा मदनभावाविष्ट (कामातुरा) प्रियसंगमोत्सुका नारी की भाँति अनेक प्रकार के पल्लवों की वायु से युक्त तथा मदनवृक्षों से संकुल, बघनखों की माला से अलंकृत तथा 'गण्डक' नाम वाले आभरण से युक्त बच्चे की ग्रीवा (कण्ठ प्रदेश) के समान बाघ की नखपंक्तियों (नाखूनों के निशान) से मण्डित (अथवा बाघों तथा नखों = नाखूनवाले हिंस्र जीवविशेषों से सुशोभित) तथा गैंडी रूपी अलंकारों वाली, दीखते हुए सैकड़ों मधुचषकों वाली तथा बिखरे हुए बहुरङ्गी पुष्पोंवाली मदिरापानस्थली की भाँति दृष्टिगोचर होते हुए मधुमक्खियों के सैकड़ों छत्तों से युक्त तथा बिखरे हुए नानाविध पुष्पोंवाली।

संस्कृत-व्याख्या—चन्द्रमूर्तिरिव = चन्द्रस्य हिमांशोः मूर्त्तिः, शरीरमिव, **सततमृक्षसार्थानुगता** = सततं निरन्तरम् ऋक्षाणि ताराः तेषां सार्थः समूहः तेन

अनुगता परिवेष्टिता, **हरिणाध्यासिता च**=तथा हरिणेन हरिणचिह्नेन अध्यासिता आश्रिता, पक्षे सततम् ऋक्षाः भल्लूकाः तेषां सार्थः समुदायः तेन अनुगता व्याप्ता, हरिणैः मृगैः अध्यासिता, **राज्यस्थितिरिव** = राज्यमर्यादा इव, **चमरमृगबालव्यजनोपशोभिता**=चमरमृगाणां बालचामराणि व्यजनानि तालवृन्तानि च तैरुपशोभिता, **समदगजघटापरिपालिता** = समदाभिः गजघटाभिः करिमण्डलैः परिपालिता परिरक्षिता, पक्षे चमरमृगाणां बालाः लोमान्येव व्यजनानि तैः तथोक्तैः, उपशोभिता तथा समदगजघटापरिपालिता, **गिरितनयेव**=हिमाचलसुतेव, **स्थाणुसङ्गता**=स्थाणुना रुद्रेण सङ्गता मिलता, **मृगपतिसेविता च**=मृगपतिना सिंहेन सेविता वाहनेन शुश्रूषिता च, पक्षे स्थाणुभिः शाखापत्रादिशून्यतरुभिः सङ्गता तथा मृगपतिभिः सिंहैः सेविता आश्रिता, **जानकीव** =सीतेव, **प्रसूतकुशलवा** = प्रसूतौ कुशलवौ तन्नामकसुतौ यया सा तथोक्ता, **निशाचरपरिगृहीता च** = निशाचरेण रावणेन परिगृहीता पञ्चवटीतोऽपहृता च पक्षे प्रसूताः जनिताः कुशानां बर्हिषां लवाः अंकुराः यस्यां सा तथोक्ता, निशाचरैः उलूकादिपक्षिभिः परिगृहीता आश्रिता, **कामिनीव**=शृंगारनायिकेव, **चन्दनमृगमदपरिमलवाहिनी**=चन्दनमृगमदानुलेपनसुगन्धवाहिनी, **रुचिरागुरुतिलकभूषिता च**=तथा रुचिरागुरुणा सुन्दरकाकतुण्डसौगन्ध्येन तिलकेन पुण्ड्रकेण भूषिता अलंकृता, पक्षे चन्दनानां चन्दनवृक्षाणां मृगमदानां कस्तूरीणाञ्च सम्बन्धात् यत् परिमलं सौगन्ध्यं वहति धारयतीत्येवं शीला तथा रुचिराभ्यां मनोहराभ्यां अगुरुतिलकाभ्याम् आमोदितरुविशेषपुष्पतरुविशेषाभ्यां भूषिता शोभिता, **सोत्कण्ठेव**=कान्तप्राप्तिसमुत्सुका नायिकेव, **विविधपल्लवानिलवीजिता**=विविधानाम् अनेकविधानां पल्लवानां किसलयानाम् अनिलैः पवनैः वीजिता सहचरीभिः कामपीडापनोपदाय स्पर्शिता, **समदना च**=तथा मदनैः कामदेवैः सह वर्तमाना युक्ता, पक्षे स्पष्टा च तथा मदनैः तदाख्यातरुविशेषैश्च सह वर्तमाना संयुक्ता, **बालग्रीवेव**=बालाः बालकाः तेषां ग्रीवाः गलदेशाः तद्वदिव, **व्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डिता**=व्याघ्रनखपंक्तिभिः व्याघ्रनखचिह्नश्रेणिभिः मण्डिता सुशोभिता, **गण्डकाभरणा च**=तथा गण्डकः भूषणविशेषः आभरणम् अलंकरणं यस्यां सा; पक्षे व्याघ्रनखपंक्तिभिः परिभ्रमणकालोत्पन्ननखचिह्ना-

वलीभिः मण्डिता, गण्डकाः वार्ध्रीणसाः त एव आभरणानि भूषणानि यस्याः सा तथोक्ता, **पानभूमिरिव**=मद्यपानस्थलमिव, **प्रकटितमधुकोशशता**=प्रकटितं प्रकाशितं मधु मद्य तस्य कोशानां पानपात्राणां शतं यस्यां सा, **प्रकीर्णविविध-कुसुमा च**=तथा प्रकीर्णानि पर्यस्तानि विविधानि अनेकप्रकाराणि कुसुमानि पुष्पाणि यस्यां सा; पक्षे प्रकटितं प्रकाशितं मधूनां पुष्परसानां कोशानां तदाश्रयाणाञ्च शतं यस्यां सा, प्रकीर्णविविधकुसुमा च ।

टिप्पणी—ऋक्षसार्थं–(क) चन्द्रमूर्ति के पक्ष में–तारों का समुदाय, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–रीछों का समूह । **हरिण**–(क) चन्द्रमूर्ति के पक्ष में–मृगचिह्न, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–मृग । **स्थाणु**–(क) गिरितनया के पक्ष में–शिव, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–ठूंठ । **कुशलव**–(क) सीता के पक्ष में–कुश, लव नामक बालक, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–काँस का अङ्कुर । **निशाचर**–(क) सीता के पक्ष में–रावण, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–रात्रि में विचरण करने वाले (उल्लू आदि पक्षी) । **अगुरुतिलकभूषिता**–(क) कामिनी के पक्ष में–अगर तिलक से सुशोभित, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–अगर और तिलक नामक वृक्षों से सुशोभित । **सोत्कण्ठा**–उत्कण्ठा से युक्त नायिका । **वीजिता**–हवा की गई । **समदना**–(क) उत्कण्ठा युक्त नायिका के पक्ष में–कामयुक्ता, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–मदन नामक वृक्षों से युक्त । **व्याघ्र-नखपंक्ति**–(क) बालग्रीवा के पक्ष में–बघनखों की कतार, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–भूतल पर अंकित व्याघ्र के नाखूनों की श्रेणी । **गण्डक**–(क) बालग्रीवा के पक्ष में–गण्डा–ताबीज, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–गैंडा । **मधुकोश**–(क) पानभूमि के पक्ष में–मदिरा के प्याले, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–मधुमक्खी के छत्ते । यहाँ सर्वत्र श्लेष से युक्त पूर्णोपमालंकार है ।

क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणीमण्डला, क्वचिद्दशमुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुङ्गशालाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव हरितकुशसमित्कुसुमशमीपलाशशोभिता, क्वचिदुन्मत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता, क्वचिन्मत्तेव कोकिलकुल-

कलप्रलापिनी, क्वचिदुन्मत्तेव वायुवेगकृततालशब्दा, क्वचिद्विधवेव उन्मुक्ततालपत्रा, क्वचित् समरभूमिरिव शरशतनिचता ।

हिन्दी अनुवाद—महावराहरूपधारी नारायण के द्वारा दाढ़ों से उखाडी गई (ऊर्ध्वानीत) कही पर पृथ्वी के मण्डलवाली युगान्तवेला के समान विशालाकृति सूकरों की दाढ़ों से भलीभाँति खोदे गये भूप्रदेशवाली, कहीं पर चञ्चल कपिसमूह द्वारा भग्न किये जाते हुए ऊँचे कक्षों (गृहैकदेशों) के कारण व्याकुल बनी हुई दशमुख (रावण) की राजधानी लङ्का की भाँति चपल वानर यूथ द्वारा तोड़े जाते हुए ऊँचे साल वृक्षों से व्याप्त, कहीं पर हरे-हरे कुशों, समिधाओं, पुष्पों शमी की लकड़ियों एवं पलाशों (पत्तों) से उपशोभित सद्यः सम्पन्न विवाह भूमि की भाँति हरे रङ्ग वाले कुशों, ईधनों (लकड़ियों) पुष्पों शमी एवं पलाश (ढाँक) वृक्षों से शोभायमान, कहीं पर दुर्दान्त सिंह की गर्जना से डरी हुई तथा रोमाञ्चित रमणी की भाँति मतवाले मृगराज (सिंह) की दहाड़ से प्रकम्पित तथा कंटकाकीर्ण, कहीं पर कोकिल-समूह की भांति अव्यक्त (अस्फुट) प्रलाप (बेतुकी बातें) करने वाली (मदिरापानवश) मतवाली नायिका की भाँति कोकिल समुदाय की अपरिस्फुट मधुर ध्वनियों से परिपूर्ण, कहीं पर वातवेग अर्थात् वायुरोग की बढ़ोत्तरी के कारण ताली बजाने वाली उन्मादिनी स्त्री की भाँति पवन के वेग से ताल वृक्षों में शब्द उत्पन्न करने वाली, कहीं पर कर्णाभरणों (झुमकों) का परित्याग कर देने वाली विधवा की भाँति ताल वृक्ष के पत्रों को गिराने वाली, कहीं पर सैकड़ों बाणों से संकुल युद्ध भूमि की भाँति सैकड़ों 'मुञ्जादण्डों' (सरकण्डों) से परिव्याप्त ।

संस्कृत व्याख्या—**क्वचित्**=कस्मिंश्चित् प्रदेशे, **प्रलयवेलेव**=प्रलयस्य वेला समयस्तद्वदिव, **महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणीमण्डला**=महावराहेण दंष्ट्रया दन्तेन समुत्खातं सम्यक् खनितं धरणिमण्डलं भूतलं यस्यां सा तथोक्ता, पक्षे महावराहैः पृथुलशूकरैः दंष्ट्राभिः दशनैः समुत्खातं धरणिमण्डलं भूप्रदेशो यस्याः सा, **क्वचित्**=कस्मिंश्चित् प्रदेशे, **दशमुखनगरीव**=लङ्केव, **चटुलवानरवृन्द-भज्यमानतुङ्गशालाकुला**=चटुलाः ये वानराः कपयः तेषां वृन्देन समूहेन भज्य-

माना: तुङ्गा: उन्नता: या: शाला: भवनानि ताभि: आकुला: व्याप्ता:, पक्षे **चटुल-वानरवृन्देन** भज्यमाना: ये तुङ्गा: उच्चा: शाला: शालवृक्षा: त: आकुला:, **क्वचित्** = कस्मिंश्चित् प्रदेशे, **अचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव** = अचिरं तत्कालमेव निर्वृत्त: निष्पन्न: य: विवाह: पाणिग्रहणं तस्य भूमिरिव घरेव, **हरितकुशसमित्कु-सुमशमीपलाश-शोभिता** = हरिता: नीलवर्णा: ये कुशा: दर्भा:, समिध: यज्ञीय-काष्ठानि, कुसुमानि पुष्पाणि, समीवृक्षा:, पलाशा: ब्रह्मवृक्षा: तै: शोभिता: भूषिता:, पक्षेऽपि एवमेव, क्वचिद्, **उन्मत्तमृगपतिनादभीतेव** = उन्मत्त: मदमत्त: या मृगपति: सिंह: तस्य नादेन गर्जितेन त्रस्ता सुन्दरीव, **कण्टकिता** = कण्टक: रोमाञ्च: सञ्जातोऽस्या इति कण्टकिता पक्षे कण्टकयुक्ता, **क्वचित्**, **मत्तेव** = मधुपानेनोन्मत्ता नायिकेव, **कोकिलकुलकलप्रलापिनी** = कोकिलकुलकलप्रलपितुं वक्तु शीलं यस्या: सा: पक्षे कोकिलकुलस्य पिकमण्डलस्य कलप्रलापोऽस्फुटमञ्जुल ध्वनिर्यस्या अस्तीति सा तादृशी, **क्वचित्**, **उन्मत्तेव** = उन्मत्ता उन्मादयुक्ता स्त्रीव, **वायुवेगकृततालशब्दा** = वायुवेगेन व्याधिरूपपवनबाहुल्येन कृता: विहिता: तालशब्दा: करतलध्वनय: यया सा पक्षे वायुवेगेन पवनाधिक्येन कृत: तालानां तालतरूणां शब्दा: यस्यां सा तादृशी, **क्वचित्**, **विधवेव** = नष्ट: धव: पति: यस्या: सा सुन्दरीव, **उन्मुक्ततालपत्रा** = उन्मुक्तं परित्यक्तं तालपत्रं ताटङ्क: कर्णाभरण-विशेषो यया सा तादृशी पक्षे उन्मत्तानि पवनाधिक्येन पतितानि तालानां तालतरूणां पत्राणि यस्यां सा तादृशी, **क्वचित् समरभूमिरिव** = युद्धस्थलमिव, **शरशतनिचिता** = शराणां बाणानां शतेन समुदायेन निचिता व्याप्ता; पक्षे शराणां मुञ्जादण्डानां शतेन समुदायेन निचिता ।

टिप्पणी–महावराह–(क) प्रलयवेला के पक्ष में–वराह के रूप में विष्णु भगवान् का अवतार, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–बड़े-बड़े सूअर । पौराणिक कथा है कि प्रलयकाल में जल निमग्न पृथ्वी को वराहावतारी विष्णु ने ऊपर उठाया था। **समुत्खात**—सम् + उत् + खन् + क्त । **शालाकुल**–(क) लङ्का के पक्ष में–भवनो से व्याप्त:; (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–शाल नामक वृक्षों से युक्त । **कण्टकिता**–(क) भयभीत स्त्री के पक्ष में-रोमांच से युक्त । (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—कांटों से युक्त । **वायवेगकृत-**

तालशब्दा—उन्माद रोग से युक्त स्त्री वाताधिक्य के कारण अकारण ही ताली बजाना आदि क्रियायें करने लगती हैं । विन्ध्याटवी में भी वाताधिक्य के कारण ताड़ के वृक्षों में शब्द उत्पन्न हो रहा था **तालपत्र**–(क) विधवा स्त्री के पक्ष में–ताटङ्क नामक कर्णाभूषण, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–ताड़ के पत्ते । **शर**-(क) सेना के पक्ष में–बाण, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में–सरकण्डे । यहाँ श्लेष से युक्त पूर्णोपमालङ्कार है ।

क्वचिदमरपतितनुरिव नेत्रसहस्रसङ्कुला, क्वचिन्नारायणमूर्तिरिव तमालनीला, क्वचित्पार्थरथपताकेव वानराक्रान्ता, क्वचिदवनिपतिद्वारभूमिरिव वेत्रलताशतदुष्प्रवेशा, क्वचिद्विराटनगरीव कीचकशतावृता, क्वचिदम्बरश्रीरिव व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा, क्वचिद्गृहीतव्रतेव दर्भचीरजटावल्कलधारिणी, अपरिमितबहलपत्रसञ्चयापि सप्तपर्णभूषिता, क्रूरसत्त्वापि मुनिजनसेविता, पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम ।

हिन्दी-अनुवाद—कहीं पर सहस्र नेत्रों से विभूषित अमरपति इन्द्र के शरीर के समान सहस्रों नेत्रों(वृक्ष विशेष) से भरी हुई (अथवा सहस्रों जटाओं से भरी हुई), कहीं पर तमाल वृक्ष के समान श्याम भगवान् विष्णु की देह के समान तमाल वृक्षों से श्यामायमान, कहीं पर वानर (हनूमान) द्वारा अधिष्ठित अर्जुन के रथ की पताका के समान वानरों से आक्रान्त, कहीं पर सैकड़ों वेत्रयष्टियों (को धारण करने वाले द्वार रक्षकों) के कारण दुष्प्रवेश राजद्वार की भूमि के समान सैकड़ों वेतसलताओं के कारण दुःखपूर्वक प्रवेश पाने योग्य, कहीं पर सौ कीचक बन्धुओं (राजा विराट के साले) से घिरी हुई महाराज विराट की पुरी के समान सैकड़ों कीचकों (पोपले बासों) से परिव्याप्त, कहीं पर (रुद्र रूपी) व्याध अर्थात् आर्द्रा नक्षत्र द्वारा अनुगम्यमान चञ्चल (ब्रह्मा रूपी) तारक मृग अर्थात् मृगशिरा नक्षत्रवाली गगनशोभा की भाँति बधिकों द्वारा पीछा किये जाते हुए अतएव (भय वश) चञ्चल पुतलियों वाले हरिणों

से युक्त, कहीं पर कुश, चीर, जटा और वल्कल वस्त्र धारण करने वाली व्रत परायणा स्त्री की भाँति कुश, चीर (तृण विशेष) जटा(तरमूल) एवं वल्कल (पेड़ों की छाल) धारण करने वाली, अगणित सघन पर्ण समूह से युक्त होने पर भी (केवल) साल पत्तों से विभूषित (=सप्तपर्णी अर्थात् 'सतौना' वृक्षों से भूषितविरोध परिहार), क्रूरमन वाली होने पर भी (=क्रूरसत्त्व अर्थात् हिंसक जीवों से युक्त होने पर भी वि० परि०) मुनि जनों से सेवित तथा रजस्वला होने पर भी (=पुष्पवती अर्थात् फूलों से भरी होने पर भी-वि० परि०) पवित्र विन्ध्य नाम की (एक) वनस्थली है ।

संस्कृत-व्याख्या—क्वचित् अमरपतितनुरिव=अमरपतिः इन्द्रः तस्य तनुरिव शरीरमिव, **नेत्रसहस्रसङ्कुला**=नेत्राणां लोचनानां यत् सहस्रं तेन संकुला, पक्षे नेत्राणां तरुमूलानां जटानां वा यत् सहस्रं तेन सङ्कुला, **क्वचित् नारायणमूर्तिरिव** नारायणस्य विष्णोः मूर्तिः शरीरमिव, **तमालनीला**=तमालं तापिच्छं तद्वन्नीला श्यामवर्णा; पक्षे तन्नामकवृक्षैः नीला, **क्वचित्पार्थरथपताकेव**=पार्थस्य अर्जुनस्य यः रथः तस्योपरि पताकेव वैजयन्तीव, **वानराक्रान्ता**=वानरेण हनूमता पक्षे वानरैः शाखामृगैः आक्रान्ता अधिष्ठिता, **क्वचित् अवनिपतिद्वारभूमिरिव**=अवनिपतिः राजा तस्य द्वारभूमिरिव, **वेत्रलताशतदुष्प्रवेशा**=वेत्र लताशतेन द्वारपालहस्तस्थितवेत्रयष्टिसमूहेन दुष्प्रवेशा दुःखेन प्रवेष्टुं योग्या, पक्षे वेत्राणि लताश्च तासां शतं समूहस्तेन दुष्प्रवेशा, **क्वचिद् विराटनगरीव**=विराटस्य तदाख्यनरपतेः नगरीव राजधानीव, **कीचकशतावृता**=कीचकशतेन स्वप्रियबान्धवकीचकसमूहेन आवृता; पक्षे कीचकाः सरन्ध्रवेणवस्तेषां शतैः समूहैः आवृता, **क्वचित्, अम्बरश्रीरिव**=गगनलक्ष्मीरिव, **व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा**=व्याधेन व्याधरूपधारिणा शिवेन अनुगम्यमानं अनुव्रज्यमानम् अतएव तरलं त्रासेन चञ्चलं तारकमृगं मृगशिरो नक्षत्रं यस्यां सा तथोक्ता; पक्षे व्याधैः भिल्लैः अनुगम्यमानाः अतएव तरलाः चञ्चलाः तारका लोचनकनीनिका येषां ते तथोक्ताः मृगाः हरिणाः यस्यां सा तादृशी, **क्वचिद्गृहीतव्रतेव**=गृहीतं स्वीकृतं व्रतं नियमः यया सा एवं विधा सुन्दरीव, **दर्भचीरजटावल्कलधारिणी**=दर्भाः कुशाः, चीराणि जीर्णवसनखण्डानि जटाः संहतकेशाः, वल्कलानि

च धारयितुं शीलं यस्याः सा तथोक्ता, पक्षेऽपि एवमेव, **अपरिमितबहुलपत्रसञ्चयाऽपि**=अपरिमितानि असंख्यानि बहुलानि सघनानि पत्राणि दलानि तेषां सञ्चयः समूहः यस्यां सा तथोक्ताऽपि, **सप्तपर्णभूषिता**=सप्तभिः पर्णैः भूषितेति विरोधः, सप्तपर्णसञ्ज्ञकतरुभिर्विराजितेति तत्परिहारः, **क्रूरसत्त्वापि**=क्रूरं दुष्टं सत्त्वं हृदयं यस्याः सा तथोक्तापि मुनिजनसेवितेति विरोधः, क्रूराः हिंस्राः सत्त्वाः व्याघ्रादयः यस्यां सा तादृशीति तत्परिहारः, **पुष्पवती**=रजोधर्मवत्यपि पवित्रेति विरोधः, पुष्पाणि कुसुमानि अस्याः सन्तीति तत्परिहारः, एवम्भूता **विन्ध्याटवी नामासीत्** ।

टिप्पणी–अमरपतिः—अमरों अर्थात् देवताओं के पति देवराज, इन्द्र । 'अमरा निर्जरा देवाः' इत्यमरः । **नेत्र**—(क) इन्द्रशरीर के साथ—आँखें, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—जटा अथवा वृक्षों की जड़ । **वेत्रलता**–(क) राजद्वारभूमि के पक्ष में-बेंत की छड़ी, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में-बेंत की बेलें । **कीचक**–(क) विराटनगरी के पक्ष में—विराट देश के राजा का साला कीचक, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—छिद्रयुक्त बाँस जिनके छिद्रों में वायु भर कर शब्द करती है । 'वेणवः कीचकास्ते स्युर्ये स्वनन्त्यनिलोद्धताः' इत्यमरः । **'क्वचित्……मृगा'** शिवपुराण की कथा के अनुसार प्राचीन काल में ब्रह्मा अपनी परमसुन्दरी कन्या सन्ध्या के पीछे काम से पीड़ित होकर दौड़ पड़े । सन्ध्या ने अपने धर्म की रक्षा के लिये हरिणी का रूप धारण कर लिया और रक्षा के लिये शिवजी के शरण में गयी । ब्रह्मा ने भी हरिण का रूप धारण कर उसका पीछा किया । ऐसा देख कर शङ्कर जी ने ब्रह्मा जी का सिर काट डालने के लिये बाण छोड़ा । तब ब्रह्मा अत्यन्त लज्जित हुये तथा मृगशिरा नक्षत्र में प्रविष्ट हो गये । शिव के बाण ने भी आर्द्रा नक्षत्र के रूप में उनका पीछा किया । **तरलतारकमृगा** (क) अम्बरश्री के पक्ष में—चञ्चल मृगशिरा नक्षत्रवाली, (ख) विन्ध्याटवी के पक्ष में—चञ्चल पुतलियों वाले हरिणों वाली । **'अमरपतितनुरिव'** में **दर्भचीरवल्कलधारिणी** पर्यन्त पूर्णोपमालङ्कार है **'अपरिमित……पवित्रा'** में विरोधाभास अलंकार है । (क) **'अपरिमित……सप्तपर्णभूषिता'** यहाँ 'सप्तपर्ण' का अर्थ सात पत्ते कर लेने पर विरोध होता है तथा 'सप्तपर्ण' नामक वृक्ष अर्थ मान लेने पर

विरोध का परिहार हो जाता है। (ख) 'क्रूरमुनिजनसेविता' यहाँ 'क्रूर' का अर्थ निर्दय, सत्त्व का अर्थ मन करने पर विरोध होता है तथा 'सत्त्व' का अर्थ 'प्राणी' मान लेने पर परिहार हो जाता है। (ग) 'पुष्पवत्यपि पवित्रा' यहाँ 'पुष्पवती' का अर्थ 'रजस्वला स्त्री' को मान लेने पर विरोध होता है, क्योंकि 'रजस्वला स्त्री' को शास्त्रों में अपवित्र बतलाया गया है। परन्तु 'पुष्पवती' का अर्थ 'फूलों वाली' मान लेने पर विरोध का परिहार हो जाता है।

तस्याञ्च दण्डकारण्यान्तःपाति, सकलभुवनविख्यातम्, उत्पत्तिक्षेत्रमिव भगवतो धर्मस्य सुरपतिप्रार्थनापीतसकलसागरसलिलस्य मेरुमत्सरादम्बरतलप्रसारितशिरःसहस्रेण दिवसकररथगमनपथमपनेतुमभ्युद्यतेन अवगणितसकलसुरवचसा विन्ध्यगिरिणाप्यनुल्लङ्घिताज्ञस्य, जठरानलजीर्णवातापिदानवस्य, सुरासुरमुकुटमकरपत्रकोटिचुम्बितचरण रजसो दक्षिणाशावधूमुखविशेषकस्य, सुरलोकादेकहुङ्कारनिपातितनहुषप्रकटप्रभावस्य भगवतो महामुनेरगस्त्यस्य, भार्यया लोपामुद्रया स्वयमुपरचितालवालकैः करपुटसलिलसेकसंवर्द्धितैः सुतनिर्विशेषैरुपशोभितं पादपैः तत्पुत्रेण च गृहीतव्रतेनाषाढिना पवित्रभस्मविरचितत्रिपुण्ड्रकाभरणेन कुशचीवरवाससा मौञ्जमेखलाकलितमध्येन गृहीतहरितपर्णपुटेन प्रत्युटजमटता भिक्षां दृढदस्युनाम्ना पवित्रीकृतम् अतिप्रभूतेध्माहरणाच्च अस्येध्वमवाह इति पिता द्वितीयं नाम चकार, दिशिदिशि शुकहरितैश्च कदलीवनैः श्यामलीकृतपरिसरं सरिता च कलसयोनिपरिपीतसागरमार्गानुगतयेव बद्धवेणिकया गोदावर्या परिगतमाश्रमपदमासीत्।

हिन्दी-अनुवाद—उस (विन्ध्याटवी) में दण्डकारण्य (की सीमा) के अन्तर्गत, समस्त लोकों में प्रसिद्ध, भगवान् धर्म के प्रभवस्थान सा प्रतीत होने वाला, देवराज (इन्द्र) की अभ्यर्थनावश समूचे सागर की जलराशि पी ले जाने वाले-

सुवर्णगिरि (सुमेरु) के प्रति मात्सर्यभावना होने के कारण आकाश मण्डल में सहस्रों विकट शिखरों को विस्तारित करने वाले सूर्य के रथ की प्रस्थानसरणि (प्रयाणमार्ग) को अवरुद्ध कर लेने के लिए प्रयत्नशील तथा (मार्ग छोड़ देने के लिए प्रस्तुत किये गये) देवताओं के समस्त वचनों को अनादृत कर देने वाले (हठी) विन्ध्यपर्वत द्वारा भी अनुल्लङ्घित अर्थात् शिरोधृत आज्ञा वाले-उदराग्नि द्वारा वातापि दानव को अन्तस्तिरोहित कर (पचा) लेने वाले–देवताओं तथा राक्षसों के मुकुटों पर विद्यमान मकर के आकार वाले पत्रों के अग्रभाग से चुम्बित चरणधूलि वाले दक्षिणदिशारूपी वधू के ललाट पर (विद्यमान) सौभाग्य तिलक के समान–देवलोक से एक हुङ्कृतिमात्र से (इन्द्रकल्प राजा) नहुष को भ्रष्ट कर देने से अभिव्यक्त महिमावाले महामुनि भगवान् अगस्त्य की प्रियतमा लोपामुद्रा द्वारा स्वयं निर्मित थलहों वाले, हस्तसम्पुटों के जलसेचन से संवर्धित किये गये तथा पुत्र सदृश वृक्षों से उपशोभित, (तथा) ब्रह्मचर्यव्रत परायण, पलाशदण्डधारी पवित्र भस्म से विरचित त्रिपुण्ड्र रूपी आभरणवाले, कुशों से विरचित वस्त्र वाले-मूँजों से बनी करधनी से विभूषित कटि प्रदेश वाले-हरितवर्ण के दोने को धारण किये हुये प्रत्येक पर्णकुटीर के भिक्षार्थ पर्यटन करते हुए तथा अत्यधिक प्रचुर मात्रा में समिधा (यज्ञ का ईंधन) लाने के कारण पिता द्वारा 'इध्मवाह' (सरीखे) द्वितीय नाम से सम्बोधित उन (महर्षि अगस्त्य) के दृढ़दस्यु नामक पुत्र द्वारा पवित्र बनाया गया, प्रत्येक दिशा में शुकपक्षी के समान हरे रंग वाले केले के वनों से श्यामल बनाई गई पर्यन्तभूमियों (छोरों) वाला, महर्षि अगस्त्य द्वारा चुलुकीकृत चुल्लू बाँधकर पी डाले गये (अर्थात् मृत अपने पति) सागर के मार्ग का मानो अनुकरण करने वाली तथा (जलधारा रूपी बँधी हुई एक वेणी वाली गोदावरी (नदी) से परिवेष्टित आश्रमपद था।

संस्कृत-व्याख्या–**तस्यां च**=पूर्ववर्णितायां विन्ध्याटव्याम् अगस्त्यस्य आश्रमपदमासीत् इति वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः इह प्रथमान्तानि पदानि खलु आश्रमस्य विशेषणानि सन्ति। **दण्डारण्यान्तःपाति**=दण्डकारण्यस्य-दण्डकाख्यस्य वनस्य अन्तःपाति तन्मध्यवर्ति, **सकलभुवनविख्यातं**=सकलानि समस्तानि भुवनानि तेषु विख्यातं प्रसिद्धम्, **भगवतः धर्मस्य**=माहात्म्यवतः सुकृतस्य, **उत्पत्ति**-

क्षेत्रमिव=जन्मभूमिरिव,इतः खलु मुनेरगस्त्यस्य विशेषणानि । **सुरपतिप्रार्थनापीतसकलसागरसलिलस्य**=सुपतिप्रार्थनया इन्द्रयाचनया पीतानि चुलुकीकृतानि सकलसागराणां समस्तसमुद्राणां जलानि सलिलानि येन तस्य, **मेरुमत्सरात्**= मेरोः सुवर्णाद्रेः मत्सरात् शुभद्वेषात्,**अम्बरतलप्रसारितशिरःसहस्रेण**=अम्बरतले गगनतले प्रसारितानि विस्तारितानि शिरांसि मस्तकानि तेषां सहस्रं समूहः येन स तेन,**दिवसकरथगमनपथं**=दिवसकरस्य सूर्यस्य रथगमनपथं स्यन्दनगमनमार्गम्, **अपनेतुं**=दूरीकर्तुम्, **अभ्युद्यतेन**=प्रवृत्तेन, **अवगणितसकलसुरवचसा**=अवगणितानि अनादृतानि सकलानां समस्तानां सुराणां देवानां वचांसि वचनानि येन तेन, **विन्ध्यगिरिणापि**=विन्ध्याचलेनापि, **अनुल्लङ्घिताज्ञस्य**=अनुल्लङ्घिता अनतिक्रान्ता आज्ञा आदेशः यस्य तस्य तादृशस्य, **जठरानलजीर्णवातापिदानवस्य** =जठरानलेन उदराग्निना जीर्णः परिपाकं प्रापितः वातापिदानवः वातापिनामकासुरः येन, तादृशस्य, **सुरासुरमुकुटमकरपत्रकोटिचुम्बितचरणरजसः**=सुराः देवाः असुराः राक्षसाः तेषां मुकुटेषु किरीटेषु यानि मकरपत्राणि सुवर्णनिर्मिताः मकराकारपक्षाः तेषां कोटयः अग्रभागाः तैः चुम्बितानि स्पर्शितानि चरणरजांसि चरणरेणवः यस्य तस्य, **दक्षिणाशावधूमुखविशेषकस्य**=दक्षिणा अवाची आशा दिगेव वधूः स्त्री तस्याः मुखे लपने विशेषकस्य तिलकस्वरूपस्य, **सुरलोकात्**= देवलोकात्,**एकहुङ्कारनिपातितनहुषप्रकटप्रभावस्य**=एकहुङ्कारेण हुङ्कृतिमात्रेण निपातिते प्रच्याविते नहुषे तदाख्ये नृपे प्रकटः स्फुटः प्रभावः माहात्म्यं यस्य तस्य तादृशस्य, **भगवतः**=महात्म्यशालिनः, **महामुनेः**=महर्षेः, **अगस्त्यस्य**=कुम्भजस्य, **भार्यया**=जायया, **लोपामुद्रया**=तन्नामिकया, **स्वयं**=आत्मना, **उपरचितालवालकैः**=उपरचितानि विनिर्मितानि आलवालकानि आवापाः येषां तैः, **करपुटसलिलसेकसंवर्द्धितैः**=करपुटेन हस्तद्वयेन यः सलिलस्य जलस्य सेकः सिञ्चनं तेन सम्वर्द्धितैः वृद्धिं प्रापितैः, **सुतनिर्विशेषैः**=पुत्रतुल्यैः, **पादपैः**=वृक्षैः, **उपशोभितं**=भूषितम्, **तत्पुत्रेण च**=तस्य अगस्त्यस्य पुत्रेण सुतेन, **गृहीतव्रतेन** गृहीतम् अङ्गीकृतं व्रतं ब्रह्मचारिव्रतं येन तेन, **आषाढिना**=आषाढः पलाशदण्डः अस्यास्तीति तेन, **पवित्रभस्मविरचितत्रिपुण्ड्रकाभरणेन**=पवित्रं पूतं यद्भस्म तेन रचितं विहितं त्रिपुण्ड्रकं रेखात्रययुक्ततिलकविशेष एव आभरणं भूषणं येन तेन,

कुशचीरवाससा=कुशाः दर्भा एव चीरं चीवरं वासः वसनं यस्य तेन, **मौञ्ज-मेखलाकलितमध्येन**=मौञ्ज्या मुञ्जरचितया मेखलया कलितः बद्धः मध्यः कटिप्रदेशः येन तेन, **गृहीतहरितपर्णपुटेन**=गृहीतम् आत्तं हरितं श्यामलं पर्णपुटं पत्ररचितपुटक येन तेन, **प्रत्युटजं**=उटजमुटजं प्रति, **भिक्षामटता**=भिक्षार्थं भ्रमणं कुर्वता, **दृढदस्युनाम्ना**=दृढदस्युसंज्ञकेन, **पवित्रीकृतं**=तत्र उषित्वा पूती-कृतम्, **अतिप्रभूतेध्माहरणाच्च**=अतिप्रभूतानि अतिप्रचुराणि यानि इध्मानि काष्ठानि तेषाम् आहरणात् आनयनात्, **पिता**=अगस्त्यः, **अस्य इध्मवाहः**=इध्मं वहतीति इध्मवह इति, **द्वितीयं नाम**=अपरं नाम, **चकार**=विदधौ, **दिशि-दिशि**=प्रत्येकं दिशि, **शुकहरितैः**=शुकवत् कीरवत् हरितैः नीलवर्णैः,**कदलीवनैः**=रम्भाविपिनैः, **श्यामलीकृतपरिसरं**=श्यामलीकृतः=कृष्णवर्णीकृतः परिसरः प्रान्तभूमिः यस्य तत्, **कलसयोनिपरिपीतसागरमार्गानुगतया**=कलसयोनिना अगस्त्येन परिपीतस्य चुलुकीकृतस्य सागरस्य समुद्रस्य मार्गमध्वानम अनुगतया अनुव्रजितयेव, **बद्धवेणिकया**=बद्धा संयता वेणिका जलधारा यया तया, बद्धा संयता वेणिका केशरचनाविशेषः यया तया च, **गोदावर्या सरिता**=गोदावर्या नद्या, **परिगतं**=परिवेष्टितम्, **आश्रम पदमासीत्** ।

टिप्पणी—'तस्यां च‥ ‥‥‥अगस्त्यस्य ‥‥‥आश्रमपदम् आसीत्' यह मुख्य वाक्य है । 'सुरयति ‥‥‥जलस्य'–महाभारत की कथा है कि प्राचीन-काल मे कालेय नामक कुछ दैत्य थे जो कि दिन मे समुद्र के जल मे छिपे रहते थे तथा रात्रि में समुद्र से निकलकर लोगों को पीड़ा पहुँचाते थे । उनके उपद्रव से त्रस्त होकर देवराज इन्द्र महर्षि अगस्त्य की शरण में गये । इन्द्र की प्रार्थना सुनकर महर्षि अगस्त्य ने समुद्र के समस्त जल को पी डाला । मरु‥ ‥‥‥‥ सहस्रेण–स्कन्दपुराण की कथा है कि प्राचीन काल में पर्यटन करते हुए महर्षि नारद विन्ध्याचल पर्वत पर पहुँचे । विन्ध्याचल के आतिथ्य को स्वीकार कर देवर्षि नारद ने उससे कहा कि सूर्य प्रतिदिन सुमेरु पर्वत की परिक्रमा करता है परन्तु तुम्हारी नहीं । इसलिए मेरा मन खिन्न हो रहा है । अतः उसके लिए यत्न करो—ऐसा कहकर नारद चले गये । इसके

पश्चात् विन्ध्याचल ने अपनी चोटियों को आकाश में अधिक ऊँचाई तक फैलाना प्रारम्भ कर दिया। इससे सूर्य का मार्ग रुक गया। ऐसी स्थिति में एक ओर तो प्रकाश तथा आतप का बाहुल्य हो गया तथा दूसरी ओर प्रगाढ़ अन्धकार। देवताओं ने विन्ध्याचल से ऐसा न करने का अनुरोध किया। परन्तु विन्ध्याचल ने देवताओं की भी बात नहीं मानी। तब देवताओं की प्रार्थना पर महर्षि अगस्त्य भार्या के सहित वहाँ पधारे। विन्ध्याचल उन्हें प्रणाम करने के लिए झुक गया। तब महर्षि अगस्त्य ने कहा कि प्रिय वत्स ! जब तक मैं पुन: न लौटूँ तब तक तुम इसी प्रकार रहना-यह आज्ञा देकर दक्षिण की ओर चले गये और फिर लौटे ही नहीं। विन्ध्याचल आज भी उनकी आज्ञानुसार उसी प्रकार झुका हुआ है। 'जठर·········दानवस्य'—प्राचीन काल में इल्वल तथा वातापि नामक दो दैत्य थे। इल्वल ने ब्राह्मण का रूप धारण किया और वातापि ने भेड़ का। इल्वल ने मेषरूपधारी वातापि के मांस को ब्राह्मणों को खिला दिया और कहा—'वातापि बाहर निकल आओ।' वातापि वर के प्रभाव से ब्राह्मणों के पेट को फाड़कर, बाहर निकल आया। इस प्रकार ब्राह्मणों के संहार को देखकर देवताओं ने महर्षि अगस्त्य से प्रार्थना की। महर्षि अगस्त्य ने वातापि को खाकर अपनी प्रचण्ड जठराग्नि से उसे पचा डाला। यह महाभारत की कथा है। 'सुर······प्रभावस्य'—महाभारत की कथा है कि वृत्रासुर के वध के पश्चात् देवराज इन्द्र को ब्रह्म हत्या का पाप-भागी होना पड़ा ऐसी स्थिति मे उनके स्थान पर नहुष को स्वर्ग का राजा बनाया गया। किसी के कहने पर उसने इन्द्राणी को प्राप्त करना चाहा तथा इन्द्राणी से प्रार्थना की। इन्द्राणी ने उसे सन्देश भिजवाया कि यदि तुम महर्षियों द्वारा उठायी गयी पालकी में सवार होकर मेरे पास आओ तो तुम्हें स्वीकार कर सकती हूँ। ऐश्वर्य के मद से मत्त नहुष ने भृगु आदि महर्षियों को पालकी में बैठा दिया और इन्द्राणी के पास शीघ्र पहुँचने की इच्छा से 'सर्प सर्प' (चलो, चलो) कहकर भृगु के सिर पर चरणप्रहार किया। इसी बीच भृगु की जटाओं में छिपे हुए महर्षि अगस्त्य ने क्रुद्धित होकर शाप दे दिया—'तुम सर्प होकर पृथ्वी पर गिरो।' इससे नहुष तुरन्त सर्प होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

आलवालक–थलहा, 'स्यादालवालमावालमावापः' इत्यमरः । **आषाढिना**–पलाश दण्ड को धारण करने वाला ब्रह्मचारी । 'ब्राह्मणो बैल्वपालाशौ'–मनु० । **त्रिपुण्ड्रक**–तीन रेखाओं वाला तिलक विशेष । **मौञ्ज**–मुञ्ज+अण्–मूँज की बनी हुई । 'मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला'–मनु० । **'प्रत्युटजं भिक्षामदत्ता'** 'अकथितं च' से 'भिक्षा' में द्वितीया । इध्म-ईंधन, समिधायें । **कलसयोनि**–उत्पत्ति स्थान है कलश जिनका, महर्षि अगस्त्य । 'उत्पत्ति-······**धर्म्मस्य**' में जात्युत्प्रेक्षालङ्कार है । "**दक्षिणाशा**······**विशेषकस्य**' अगस्त्य पर तिलकत्व का आरोप तथा दक्षिण दिशा पर वधूत्व का आरोप होने से परम्परित रूपकालङ्कार है । '**शुकहरितैः**' में लुप्तोपमालङ्कार । '**कलसयोनि**····**परिगतम्**'–यहाँ 'अनुगतयेव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है तथा व्यञ्जना के द्वारा **समासोक्ति** भी ।

यत्र च दशरथवचनमनुपालयन्नुत्सृष्टराज्यो दशवदनलक्ष्मीविभ्रमविरामो रामो महामुनिमगस्त्यमनुचरन् सह सीतया लक्ष्मणोपरिचितरुचिरपर्णशालः पञ्चवट्यां कञ्चित् कालं सुखमुवास । चिरशून्ये अद्यापि यत्र शाखानिलीननिभृतपाण्डुकपोतपङ्क्तयो लग्नतापसाग्निहोत्रधूमराजय इव लक्ष्यन्ते तरवः । बलिकर्मकुसुमान्युद्धरन्त्याः सीतायाः करतलादिव सङ्क्रान्तो यत्र रागः स्फुरति लताकिसलयेषु । यत्र च पीतोद्गीर्णजलनिधिजलमिव मुनिना निखिलमाश्रमोपान्तवर्त्तिषु विभक्तं महाह्रदेषु । यत्र च दशरथसुतनिशितशरनिकरनिपातनिहतरजनीचरबलवहुलरुधिरसिक्तमूलमद्यापि तद्रागाबिद्धनिर्गतपलाशमिवाभाति नवकिसलयमरण्यम् ।

हिन्दी-अनुवाद–जिस (आश्रमपद) में (पिता) दशरथ की आज्ञा का पालन करते हुए, (अपने पैतृक अयोध्या) साम्राज्य का परित्याग कर देने वाले, दशमुख (रावण) की साम्राज्यलक्ष्मी के विलासों का समापन कर देने वाले, तथा (अपने रहने के लिए छोटे भाई) लक्ष्मण द्वारा बनाई गयी रमणीय

पर्णशाला वाले श्रीराम महामुनि अगस्त्य की परिचर्या (सेवा) करते हुए (प्रियतमा) वैदेही के साथ पञ्चवटी में कुछ समय तक सुखपूर्वक रहे । चिरकाल से (जन) शून्य जिस (आश्रम) में आज भी शाखाओं पर छिपे बैठे, निःशब्द धूसरवर्ण कपोतमण्डल वाले वृक्ष ऐसे दिखाई पड़ते हैं मानों तपस्वियों के (द्वारा सम्पादित) अग्निहोत्रों की धूम पंक्तियों से आच्छन्न हों। जिस (आश्रम) में लताओं के नूतन पर्णों मे (विद्यमान) लालिमा ऐसी संस्फुरित होती है मानो (वनवासकाल) में पूजा कार्य के निमित्त फूल चुनती हुई देवी सीता के करतलों से (निकलकर फूलों में) संक्रान्त हो गई हो ! और जहाँ महामुनि अगस्त्य द्वारा (सर्वप्रथम) पिया गया (और बाद में) उगल दिया गया सागर का सम्पूर्ण जल मानो आश्रम के छोरों पर विद्यमान विशाल सरोवरों में बाँट दिया गया है । जिस (आश्रम) में दशरथनन्दन राम के तीखे शरसमूहों के आघात से मारी गई राक्षससेना के अत्यधिक रक्त से सींचे गए (वृक्षों के) मूलवाला तथा नूतन (रक्तवर्ण) पर्णों से युक्त वन आज भी इस प्रकार सुशोभित होता है मानो (मृत राक्षसों के) सर रुधिर की अरुणाई के प्रभाववश निकले हुए (अतएव लाल) पत्तों से युक्त हो ।

संस्कृत-व्याख्या–**यत्र च**=अगस्त्याश्रमपदे, **दशरथवचनमनुपालयन्** =दशरथस्य स्वपितुः वचन वाक्यम् अनुपालयन् पालनं कुर्वन्, **उत्सृष्टराज्यः**= उत्सृष्टं परित्यक्तं राज्यं येन सः,**दशवदनलक्ष्मीविभ्रमविरामः**=दशवदनः दशाननस्तस्य या लक्ष्मीः राज्यश्रीः तस्याः विभ्रमस्य विलासस्य विरामोऽवसानं यस्मात् स तथोक्तः, **रामः**=दशरथात्मजः, **महामुनि**=मुनिश्रेष्ठम्, **अगस्त्यं**=कलसयोनिम्, **अनुचरन्**=सेवमानः,**लक्ष्मणोपरचितरुचिरपर्णशालः**=लक्ष्मणेनरामानुजेन उपरचिता विनिर्मिता रुचिरा मनोज्ञा पर्णशाला उटजःयस्य सः,**कञ्चित्कालं पंचवट्यां**=जनस्थाने, **सीतया**=जनकनन्दिन्या, **सह, सुखं**=मुनिआनन्दपूर्वकं यथा स्यात्तथा, **उवास**=निवसतिस्म । **चिरशून्ये**=बहोः कालात् जनरहितं, **यत्र**= यस्मिन्नाश्रमपदे, **अद्यापि**=इदानीमपि, **शाखानिलीननिभृतपाण्डुकपोतपङ्क्तयः** =**शाखसु** निलीनाः स्थिताः निभृताः निःशब्दाः पाण्डवः श्वेताः ये

कपोताः पारावताः तेषां पङ्क्तयः राजयः येषु ते, अतएव **लग्नतापसाग्निहोत्र-धूमराजयः**==लग्नाः संलग्नाः तापसानां तपस्विनां यदग्निहोत्रं दैनिकयज्ञविशेषः तस्य धूमानाम् अग्निशाखानां राजयः पङ्क्तयः येषु ते तथोक्ता इव, **तरवः**= वृक्षाः, **लक्ष्यन्ते**=विलोक्यन्ते । **बलिकर्मकुसुमानि**=बलिकर्मणः देवपूजनकार्यस्य कुसुमानि पुष्पाणि, **उद्धरन्त्या**=सञ्चयं कुर्वन्त्याः, **सीतायाः**=जानक्याः, **करतलात्**=पाणितलात्, **लताकिसलयेषु**=व्रततिपल्लवेषु, **संक्रान्तः**=संलग्न इव, यत्र **रागः**=लौहित्यं, **स्फुरति**=द्योतते । **यत्र च**==आश्रमपदे, **मुनिना**= अगस्त्येन, **पीतोद्गीर्णजलनिधिजलमिव**=पूर्वं पीतं पश्चादुद्गीर्णं वमनेन निःसारितं निखिलं समग्रं जलनिधिजलं समुद्रसलिलम्, **आश्रमोपान्तवर्तिषु**= आश्रमसमीपस्थितेषु, **महाह्रदेषु**=महातडागेषु, **विभक्तं**=विभज्य कृतमपि प्रतीयते । **यत्र च**=आश्रमपदे, **दशरथसुतनिशितशरनिकरनिपातनिहतरजनीचरबलबहुलरुधिरसिक्तशूलम्**=दशरथसुतयोः रामलक्ष्मणयोः निशिताः तीक्ष्णा ये शराः बाणाः तेषां यः निकरः समूहः तस्य निपातेन वर्षणेन निहतानिः घातितानि यानि रजनीचरबलानि असुरसैन्यानि तेषां बहुलरुधिरैः प्रचुरशोणितैः सिक्तानि मूलानि यस्य तत्, **नवकिसलयं**=नवानि नूतनानि किसलयानि पल्लवाः यस्मिन् तत् तादृशम्, **अरण्यं**=विपिनम्, **अद्यापि**=अधुनापि, **तद्रागाविद्धनिर्गतपलाशमिव**=तेषां रागेण रक्तिम्ना आविद्धानि युक्तानि निर्गतानि निःसृतानि पलाशानि पत्राणि यत्र तत् तथोक्तमिव, **आभाति**=शोभते ।

टिप्पणी–दशरथः–दशसु दिशासु अप्रतिहतो रथो यस्य सः दशरथः– रामचन्द्र के पिता दशरथ । **उत्सृष्ट**–उत्+सृज्+क्त । **दशवदन**······**रामः**' 'रामो विरामो······' में यमक अलङ्कार है । **विभ्रम**–विलास । **विराम**– अवसान । **बलिकर्म** ·····**सङ्क्रान्तः**–में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** है । **'यत्र च**······ महाह्रदेषु' के 'विभक्तमिव' में **क्रियोत्प्रेक्षालंकार** है । अतएव तालाबों का अगाध जल से युक्त होना ध्वनित होता है । इस प्रकार यहाँ अलङ्कार के द्वारा वस्तुध्वनित है । **'पलाशमिव आभाति'** में **क्रियोत्प्रेक्षालंकार** है ।

अधुनापि यत्र जलधरसमये गम्भीरमभिनवजलधरनिवहनिनाद-माकर्ण्य भगवतो रामस्य त्रिभुवनविवरव्यापिनश्चापघोषस्य स्मरतो

न गृह्णन्ति शष्पकवलमजस्रमश्रुजललुलितदीनदृष्टयो वीक्ष्य शून्या दशदिशो जराजर्जरितविषाणकोटयो जानकीसंवर्द्धिता जीर्णमृगाः। यस्मिन्ननवरतमृगयानिहतशेषवनहरिणप्रोत्साहित इव कृतसीताविप्रलम्भः कनकमृगो राघवमरिदूरं जहार। यत्र मैथिलीवियोगदुःखदुःखितौ दशवदनविनाशपिशुनौ चन्द्रसूर्याविव कबन्धग्रस्तौ समं रामलक्ष्मणौ त्रिभुवनभयं महच्चक्रतुः। अत्यायतश्च यस्मिन् दशरथसुतशरनिपातितो योजनबाहोर्बाहुरगस्त्यप्रसादनागतनहुषाजगरकायशङ्कामकरोदृषिजनस्य। जनकतनया च भर्त्रा विरहविनोदनार्थमुटजाभ्यन्तरलिखिता यत्र रामनिवासदर्शनोत्सुका पुनरिव धरणीतलादुल्लसन्ती वनचरैरद्याप्यालोक्यते।

हिन्दी-अनुवाद–आज भी जहाँ पावसऋतु में नवीनमेघमण्डल की गम्भीर ध्वनि को सुनकर भगवान् श्रीराम के त्रिभुवन-अन्तराल को प्राप्त कर लेने वाली धनुष की टङ्कार का स्मरण करते हुए-निरन्तर गिरते हुए अश्रुजल से व्याकुलित एवं दीन दृष्टि वाले, वृद्धावस्था के कारण विशीर्ण शृङ्गाग्रभाग वाले तथा (देवी) सीता द्वारा संवर्धित बूढ़े हिरण दशों दिशाओं को (श्रीराम आदि से) शून्य देखकर (वियोगवश) हरी हरी घासों का कौर नहीं ग्रहण करते हैं।

जिस (दण्डकारण्य) में निरन्तर किये गए आखेट (शिकार) में मरने से बचे हुए जंगली हिरणों द्वारा मानो उकसाया गया (अतएव) (भगवान्-राम से) सीता का विछोह करने वाला स्वर्णमृग रघुवंशी राम को बहुत दूर तक ले गया था। जहाँ जानकी के विरहजनित दुःख से दुःखी, कबन्ध अर्थात् राहु द्वारा एक साथ संग्रस्त चन्द्रमा और सूर्य की भाँति 'कबन्ध' अर्थात् दण्डकारण्यवासी राक्षसविशेष द्वारा एक साथ पकड़े गए तथा दशानन-रावण के विनाशसूचक राम और लक्ष्मण नें उत्कृष्ट लोकभय (आतङ्क) उत्पन्न कर दिया था।

जिस (आश्रमपद) में दशरथनन्दन श्रीराम के बाण से धराशायी बनाई गई योजनबाहु (राक्षस विशेष अथवा स्वयं कबन्ध) की अत्यन्त विशाल भुजा ने महामुनि अगस्त्य को प्रसन्न करने के लिए समागत (राजा) नहुष की अजगर रूपिणी काया की शङ्का ऋषिजनों में उत्पन्न कर दी थी। जहाँ (अपने) प्रियतम श्रीराम द्वारा वियोगव्यथा को भुलावा देने के लिए पर्णशाला के भीतर चित्रार्पित की गई जनकनन्दिनी सीता मानो श्रीराम का निवास स्थान देखने के लिए उत्कण्ठित होकर पुनः पृथ्वीतल से (ऊपर) उठती हुई आज भी वनचरकिरातों द्वारा देखी जाती है।

संस्कृत-व्याख्या—अधुनापि=इदानीमपि, **यत्र**=आश्रमपदे, **जलधरसमये**=वर्षाकाले, **गम्भीरम्**=मन्द्रं मञ्जुलं वा, **अभिनवजलधरनिवहनिनाद**=अभिनवाः नूतनाः ये जलधराः जलदास्तेषां निवहस्य समूहस्य निनादं गर्जनम्, **आकर्ण्य**=श्रुत्वा, **भगवतः**=पूज्यस्य, **रामस्य**=दशरथेः, **त्रिभुवनविवरव्यापिनः**=त्रिभुवनस्य विष्टपस्य विवराणि छिद्राणि तानि व्याप्नोति पूरयतीति स तस्य, **चापघोषस्य**=धनुःशब्दस्य, **स्मरन्तः**=चिन्तयन्तः, **दशदिश**=दशाशाः, **शून्याः**=रामलक्ष्मणसीतारहिताः, **वीक्ष्य**=अवलोक्य, **अजस्रं**=निरन्तरम्, **अश्रुजललुलितदीनदृष्टयः**=अश्रुजलैः नयनसलिलैः लुलिताः व्याकुलीभूताः दीनाः कातराः दृष्टयः लोचनानि येषां ते तथोक्ताः, तथा **जराजर्जरितविषाणकोटयः**=जरया वृद्धावस्थया जर्जरिताः विशीर्णाः विषाणानां शृङ्गाणां कोटयोऽग्रभागाः येषां ते तथोक्ताः, **जानकीसंवर्धिताः**=जानक्याः वैदेह्याः संवर्द्धिताः वृद्धिं प्रापिताः, **जीर्णमृगाः**=वृद्धहरिणाः, **शष्पकवलं**=शष्पस्य बालतृणस्य कवलं ग्रासं, **न गृह्णन्ति**=न स्वीकुर्वन्ति। **यस्मिन्**=विपिने, **अनवरतमृगयानिहतशेषवनहरिणप्रोत्साहितः**=अनवरतं निरन्तरं मृगयया आखेटेन निहताः व्यापादिताः तेभ्यश्च शेषा अवशिष्टाः ये वनहारिणाः काननमृगाः तैः प्रोत्साहिताः उत्साहं प्रापितः, **इव कृतसीताविप्रलम्भः**=कृतः विहितः सीतायाः जानक्याः विप्रलम्भः प्रवञ्चनं येन सः, **कनकमृगः**=सुवर्णहरिणः सुवर्णमयमृगरूपधारी मारीचः, **राघवं**=रामचन्द्रम्, **अतिदूरं**=अनतिसमीपं, **जहार**=हृतवान्। **यत्र**=पञ्चवट्यां, **मैथिलीवियोगदुःखदुःखितौ**=मैथिल्याः वियोगदुःखेन विरहकष्टेन

दु:खितौ दु:खं प्रापितौ, **दशवदनविनाशपिशुनौ**=दशवदनस्य रावणस्य विनाश-पिशुनौ ध्वंसबोधकौ, **रामलक्ष्मणौ, चन्द्रसूर्याविव**=पुष्पवन्ताविव, **कबन्धग्रस्तौ**=कबन्ध: राहू राक्षसाधिपति: तेन दनुकबन्धेन च ग्रस्तौ कवलीकृतौ गृहीतौ, **च समं**=एककालं, **महत्**=अत्यधिकं, **त्रिभुवनभयं**=त्रिभुवनस्य जगत्त्रय स्थितलोकस्य भयं भीति:, **चक्रतु:**=विदधतु: । **यस्मिन्**=आश्रमे, **च दशरथसुतशरनिपातित:**=दशरथसुत: राम: तस्य शरेण बाणेन निपातित: पातित:, **अत्यायत:**=अतिविस्तृत:, **योजनबाहो:**=दनुकबन्धापरनाम्न:, **बाहु:**=भुज: **अगस्त्यप्रसादनागतनहुषाजगरकायशङ्कां**=अगस्त्यस्य तदाख्यस्य मुने: प्रसादनाय अनुनयाय आगत: प्राप्त: य: नहुषाजगर: तस्य कायशङ्कां देहभ्रान्तिम्, **ऋषिजनस्य**=मुनिमण्डलस्य, **चकार**=अकरोत् । **यत्र**=आश्रमपदे, **जनकतनया**=वैदेही, **भर्त्रा**=स्वामिना रामेण, **विरहविनोदनार्थं**=वियोगपरिहारार्थम्, **उटजाभ्यन्तरलिखिता**=उटजस्य पर्णशालाया: अभ्यन्तरे अन्त: प्रदेशे लिखिता चित्रिता, **रामनिवासदर्शनोत्सुका**=रामस्य य: निवासोऽवस्थानभूमि: तस्य दर्शनाय अवलोकनाय, **उत्सुका**=उत्कण्ठिता सती, **पुन:**=भूय:, **धरणीतलात्**=पातालात्, **उल्लसन्तीव**=ऊर्ध्वम् आगच्छन्तीव, **वनचरै:**=किरातै:, **अद्यापि**=अधुनापि, **आलोक्यते**=दृश्यते ।

टिप्पणी—'**अधुनापि......जीर्णमृगा:**' यहाँ जीर्णमृगों के द्वारा गम्भीर मेघ-गर्जन को सुनने से राम के धनुष के ध्वनि का स्मरण होने से **स्मरणालंकार** है । शष्पग्रासग्रहणरूप सम्बन्ध के होने पर भी उसके सम्बन्ध के वर्णित न होने से **अतिशयोक्ति** अलङ्कार है । '**चापघोषस्य स्मरन्त:**' में 'अधीगर्थदयेशां कर्मणि' से कर्म में षष्ठी । **शष्पं**—कोमल घास, 'शष्पं बालतृणं स्मृतम्' इत्यमर: । **लुलित**=व्याकुल हुई । **विषाणकोटय:**=सींगों के अग्रभाग । **प्रोत्साहित इव**' में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** है । **विप्रलम्भ**—धोखा । **जहार**—हृ लिट् प्र० पु० ए० व०—अपहरण किया । '**चन्द्रसूर्याविव**' में **उपमालङ्कार** है । '**अत्यायतश्च ऋषिगणस्य**' यहाँ योजनबाहु की लम्बी भुजा में 'राजा नहुष का अजगर शरीर' होने की भ्रान्ति ऋषिजनों को हुई है, अत: '**भ्रान्तिमान्**' अलङ्कार है । **योजनबाहु**—एक राक्षस जिसकी भुजाएँ एक योजन लम्बी थीं । '**जनकतनया**...

आलोक्यते–यहाँ **'उल्लसन्तीव'** में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** है। यहाँ 'पुनः' शब्द से ऐसा प्रतीत होता है कि पहले सीता जी का आविर्भाव मिथिला में यज्ञभूमि के जोतने के समय पाताल से हुआ, पुनश्च अग्नि से विशुद्ध परन्तु लोकापवाद के भय से राम के द्वारा वनवास तथा पुनः परीक्षा के समय में भूमितल में प्रवेश, ततश्च यहाँ प्रकट होकर उनकी अवस्थिति। **उल्लसन्ति**–उत्+लस्+शतृ, **पिशुन**–सूचक। वनचरैः-वन+चर्+ट=तृ० ब० व०।

तस्य चैवंविधस्य सम्प्रत्यपि प्रकटोपलक्ष्यमाणपूर्ववृत्तान्तस्यागस्त्याश्रमस्य नातिदूरे जलनिधिपानकुपितवरुणोत्साहितेन अगस्त्यमत्सरात्तदाश्रमसमीपवर्त्त्यपर इव वेधसा महाजलनिधिरुत्पादितः, प्रलयकालविघटिताष्टदिग्भागसन्धिबन्धं गगनतलमिव भुवि निपतितम्, आदिवराहसमुद्धृतधरामण्डलस्थानमिव सलिलपूरितम्, अनवरतमज्जदुन्मदशबरकामिनीकुचकलसलुलितजलम् उत्फुल्लकुमुदकुवलयकह्लारम्, उन्निद्रारविन्दमधुबिन्दुचन्द्रकम्, अलिकुलपटलान्धकारितसौगन्धिकम्, सारसितसमदसारसम्, अम्बुरुहमधुपानमत्तकलहंसकामिनीकृतकोलाहलम्, अनेकजलचरपतङ्गशतसञ्चलनचलितवाचालवीचिमालम्, अनिलोल्लसितकल्लोलशिशिरशीकराब्धदुर्दिनम्, अशङ्कितावतीर्णाभिरम्भःक्रीडारागिणीभिः स्नानसमये वनदेवताभिः केशपाशाकुसुमैः सुरभीकृतम्, एकदेशावतीर्णमुनिजनापूर्यमाणकमण्डलु कलजलध्वनिमनोहरम् उन्मिषदुत्पलवनमध्यचारिभिः सवर्णतया रसितानुमेयैः कादम्बकदम्बकैरासेवितम्।

हिन्दी-अनुवाद–आज भी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हुए पुरातन वृत्तान्तों वाले इस (पूर्वोक्त) प्रकार के उस अगस्त्याश्रम के निकट ही जलराशियों का भाण्डारभूत पम्पानामवाला (एक) सरोवर है–जोकि सागर (जल) को पी जाने के कारण प्रकुपित हुए वरुणदेवता से उकसाए गए ब्रह्मा द्वारा अगस्त्य-

मुनि के प्रति द्वेषभावना के कारण उत्पन्न किया गया उन्हीं के आश्रम के समीप विद्यमान दूसरे महासागर-सा प्रतीत होता था, जो कल्पान्तवेला में विनष्ट हुए आठों दिक्प्रदेशों के सन्धिबन्धनों (परस्पर जुड़े रहने की मर्यादाओं) वाले अतएव भूतल पर गिरे हुए गगनमण्डल सा प्रतीत होता था, जो जल से परिपूर्ण आदिवराह (नारायण) द्वारा सम्यक् रूप से बाहर लाए गए भूमण्डल के स्थान (विस्तार या अवकाश) सा प्रतीत होता था, जो निरन्तर (आठोंपहर) स्नान करती हुई यौवनगर्विता भीलसुन्दरियों के कुचकुम्भों द्वारा आलोडित जल वाला था, जो पूर्णत: खिले हुए कुमुदों, कुवलयों (नीलकमलों) एवं कह्लारों (लालकमलों) वाला था, जो प्रफुल्लित कमलों की मकरन्दबिन्दुओं (के टपकने) से निर्मित मयूरपखी चन्द्रको (रचनाविशेष) से युक्त था, जो शब्द उत्पन्न करते हुए मदोत्कट सारस पक्षियों से युक्त था, जो कमलों के मधुरस को पान करने के कारण मतवाली कलहंसिनियों द्वारा उत्पन्न कोलाहल से युक्त था, जो अनेक जातियों के सैकड़ों (नक्रादि) जलचरों एवं पक्षियों के सञ्चरणवश क्षुब्ध (चंचल या अशान्त) बनाया गया अतएव वाचाल (मुखर) तरङ्गमालाओं वाला था, जो (तूफानी) हवाओं द्वारा उत्पन्न की गई महातरङ्गों की बर्फीली फुहारों से प्रारम्भ किये गए दुर्दिन मेघाच्छन्न दिन) वाला था, जो स्नानवेला में निश्शङ्क भाव से जल के भीतर उतरी हुई तथा जलविहार में रुचि रखनेवाली वनदेवियों द्वारा (अपने) केशपाशों में गुँथे पुष्पों से सुगन्धित कर दिया गया था, जो एक भाग में जलाभ्यन्तर-प्रविष्ट-मुनिजनों द्वारा भरे जाते हुए कमन्डलुओं की मधुर जलध्वनि के कारण हृदयावर्जक था, जो प्रस्फुटित होते हुए कमलों के वन में सञ्चरण करने वाले तथा समान (श्वेत) वर्ण वाला होने के कारण (अपनी) बोली भर से पहचाने जा सकने योग्य कलहंस मण्डलों से सुसेवित था।

संस्कृत-व्याख्या–तस्य चैवंविधस्य=पूर्वर्वणितस्य अगस्त्याश्रमस्य, **सम्प्रत्यपि**=इदानीमपि, **प्रकटोपलक्ष्यमाणपूर्ववृत्तान्तस्य**=प्रकटं स्पष्टरूपेण उपलक्ष्यमाण: ज्ञायमान: पूर्ववृत्तान्त: पूर्वोदन्त: यस्य तस्य, **अगस्त्याश्रमस्य**=घटजाश्रमपदस्य, **नातिदूरे**=समीप एव, **पम्पाभिधानं**=पम्पासंज्ञकं, **पद्मसर:**=कमलयुक्तसरोवर: विद्यत इति वक्ष्यमाणेनान्वय:। अत्र खलु प्रथमान्तपदानि पद्मसरो-

विशेषणानि । **जलनिधिपानकुपितवरुणोत्साहितेन**=जलनिधिपानेन समुद्रपानेन कुपित: क्रुद्ध: य: वरुण: प्रचेता: तेन उत्साहितेन, **वेधसा**=प्रजापतिना, **अगस्त्यमत्सरात्**=अगस्त्यशुभद्वेषात्, **तदाश्रमसमीपवर्ती**=तस्य अगस्त्यस्य आश्रमसमीपवर्ती मुनिजनस्थाननिकटवर्ती, **अपर:**=अन्य:, **उत्पादित:**=निर्मित:, **महाजलनिधि:**=सागर:, **इव**, **प्रलयकालविघटिताष्टदिग्भागसन्धिबन्धं**=प्रलयकाले कल्पान्ते विघटिता: विस्खलिता: अष्टानाम् अष्टसंख्यकानां दिशां हरितां भागा: प्रदेशा: तेषां सन्धय: संयोजनानि तेषां बन्धा: बन्धनानि यत्र एवम्भूतम् **भुवि**=पृथिव्यां, **निपतितं गगनतलमिव**=नभस्तलमिव, **आदिवराहसमुद्धृतधरामण्डलस्थानं**=आदिवराहेण समुद्धृतं उद्धृत्य जलाद् बहिरानीतं धरामण्डलस्थानं पृथ्वीमण्डलस्थानं, **सलिलपूरितमिव**=जलपूरितमिव, **अनवरतमज्जदुन्मदशबरकामिनीकुचकलसलुलितजलम्**=अनवरतं निरन्तरं मज्जन्त्य: अवगाहमाना: या उन्मदा: यौवनगर्वयुक्ता: शबरकामिन्य: भिल्लनार्य: तासां कुचकलसै: स्तनघटै: लुलितानि आलोडितानि जलानि सलिलानि यस्य तत् तथोक्तम्, **उत्फुल्लकुमुदकुवलयकल्हारं**=उत्फुल्लानि प्रस्फुटितानि कुमुदानि श्वेतोत्पलानि कुवलयानि नीलोत्पलानि कल्हाराणि रक्तोत्पलानि च यत्र तत् तादृशम्, **उन्निद्रारविन्दमधुबिन्दुबद्धचन्द्रकं**=उन्निद्राणि विकसितानि यानि अरविन्दानि पद्मानि तेषां मधुबिन्दुभि: मकरन्दकणिकाभि: बद्धा: विहिता: चन्द्रक मयूरबर्हचन्द्राकारा: यत्र तत् तादृशम्, **अलिकुलपटलान्धकारितसौगन्धिकं**=अलिकुलानां भ्रमरवृन्दानां पटलेन समूहेन अन्धकारितानि आवृतानि सौगन्धिकानि कल्हाराणि यत्र तत् **सारसितसमदसारसं**=सारसितेन कूजनशब्देन सह स्थिता: समदा: मदयुक्ता: सारसा: लक्ष्मणप्रभृतय: यत्र तत्, **अम्बुरुहमधुपानमत्तकलहंसकामिनीकृतकोलाहलं**=अम्बुरुहाणि कमलानि तेषां यन्मधुमकरन्द: तस्य पानेन मत्ता: मदोत्कटा: या: कलहंसकामिन्य: वरटा: ताभि: कृत: विहित: कोलाहल: कलकल: यत्र तत् तादृशम्, **अनेकजलचरपतंगशतसञ्चलनचलितवाचालवीचिमालं**=अनेके ये जलचरा: जलजन्तव: तेषां पतङ्गानां पक्षिणाञ्च शतस्य मण्डलस्य सञ्चलनेन गमनागमनेन चलिता: क्षोभं प्राप्ता:

वाचाला: मुखरायमाणा: च वीचिमाला: तरङ्गपङ्क्तय: यस्मिन् तत्, **अनिलोल्लासितकल्लोलशिशिरशीकराब्धदुर्दिनं**=अनिलेन वायुना उल्लासिता: उत्थानं प्रापिता: ये कल्लोला: महातरङ्गा: तेषां शिशिरशीकरै: शीतलाम्बुकणै: आरब्धं विहितं दुर्दिनं मेघाच्छन्नदिनं यत्र तत् तादृशम्, **अशङ्किताक्तीर्णाभि:**=अशङ्कितं यथा स्यात्तथा, **अवतीर्णाभि:**=सरोवरे स्नानाय प्रविष्टाभि:, **अम्भ:क्रीडारागिणीभि:**=अम्भ:क्रीडायां जलकेल्यां रागिणीभि: अनुरक्ताभि:, **वनदेवताभि:**=वनाधिष्ठातृदेवीभि:, **स्नानसमये**=मज्जनकाले, **केशपाशकुसुमै:**=केशपाशानां कचसमूहानां कुसुमै: सुमनोभि:, **सुरभीकृतं**= सुगन्धीकृतम्, **एकदेशावतीर्णमुनिजनापूर्यमाणकमण्डलुकलध्वनिमनोहरं**= एकदेशे एकभागे अवतीर्णै: अन्त:प्रदेशं कृतवद्भि: मुनिजनै: तापसलोकै: आपूर्यमाणा: जलेन भ्रियमाणा: ये कमण्डलव: मुनिजनपात्रविशेषा: तेषां कलै: मधुरै: जलध्वनिभि: सलिलपूरणशब्दै: मनोहरं मनोज्ञं चित्ताकर्षकं वा, **उन्मिषदुत्पलवनमध्यचारिभि:**=उन्मिषत: प्रस्फुटत: उत्पलवनस्य श्वेताम्भोजविपिनस्य मध्येऽन्त: चरन्तीति: तै:, **सवर्णतया**=समानवर्णतया, **रसितानुमेयै:** =रसितेन शब्देन अनुमेयै: अनुमातुं योग्यै:, **कादम्बकदम्बकै:**=कलहंससमूहै:, **आसेवितं**=समन्तात्पर्युपासितम् ।

टिप्पणी–'**तस्य च अगस्त्याश्रमस्य नातिदूरे**···**पम्पाभिधानं सर:**'–यह वाक्य का मुख्यांश है । **महाजलनिधिरिव** में **द्रव्योत्प्रेक्षालङ्कार** है । 'गगनतलमिव' में द्रव्योत्प्रेक्षालङ्कार है । '**जलपूरितमिव**' में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** है । **मज्जत्**–नहाती हुई । **लुलित**–आलोडित । '**कुचकलस**' यहाँ कुचा एव कलसा:' ऐसा विग्रह करने से **रूपक** तथा 'कुचा: कलसा इव' इस प्रकार का विग्रह करने से **उपमा** है । अतएव दोनों का **सन्देहसंकर** । **कुमुद**–सफेद कमल, 'सिते कुमुदकैरवे' **कुवलय**–नीलकमल, 'स्यादुत्पलं कुवलयमथ नीलाम्बुजन्म च' इत्यमर: । कह्लार–लाल रंग का कमल । **चन्द्रक**–चन्द्राकार मयूर पुच्छ । **सौगन्धिक**–कह्लार नामक कमल, 'सौगन्धिकं तु कह्लारम्' इत्यमर: । सारसित शब्दयुक्त । **कामिनीकुचकलसलुलितजलम्' उत्फुल्लकुमुदकुवलयकह्लारम्'**

'सारसितसमदसारसम्' यहाँ अनुप्रास की अनुपम छटा छिटक रही है । **वाचाल**-शब्दयुक्त । **वीचि**=लहर । **शीकर**–जल की बूंद, 'शीकरोऽम्बुकण: स्मृत:' । **'अलिकुलपटल'**–यहाँ कुल तथा पटल दोनों शब्द पर्यायवाची हैं । ऐसी स्थिति में एक ही शब्द के कथन से उक्त अर्थ निकल आता है अत: दूसरे का ग्रहण करना निरर्थक है । **''कादम्बकदम्बकै:''**–कलहंसों के समूहों से, 'कादम्ब: कलहंस: स्यात्'; 'स्त्रियां तु संहतिर्वृन्दं निकुरम्बं कदम्बकम्' इत्यमर: । **'रसितानुमेयै: में मीलितालंकार'** ध्वनित हो रहा है । इस प्रकार यहाँ वस्तु से अलङ्कार-ध्वनि है ।

अभिषेकावतीर्णपुलिन्दराजसुन्दरीकुचचन्दनधूलिधवलिततरङ्गम्, उपान्तजातकेतकीरज:पटलबद्धकूलपुलिनम्, आसन्नाश्रमागततापसक्षालिताद्र वल्कलकषायपाटलतटजलम्, उपतटविटपिपल्लवपुटानिलवीजितम्, अविरलतमालवीथिकान्धकारिताभि: बालिनिर्वासितेन सञ्चरता प्रतिदिनमृष्यमूकवासिना सुग्रीवेणावलुप्तफललघुलताभि:, उद्वासितापसानां देवार्च्चनोपयुक्तकुसुमाभि: उत्पतज्जलचरपतङ्गपक्षपुटविगलितजलबिन्दुसेकसुकुमारकिसलयाभि: लतामण्डपतलशिखण्डिमण्डलारब्धताण्डवाभि: अनेककुसुमपरिमलवाहिनीभिर्वनदेवताभि: श्वासवासिताभिरिव वनराजिभिरुपरुद्धतीरम्, अपरसागरशङ्किभि: सलिलमादातुमवतीर्णैर्जलधरैरिव बहलपङ्कमलिनैर्वनकरिभिरनवरतमापीयमानसलिलम् अगाधमनन्तमप्रतिमम् अपां निधानं पम्पाभिधानं पद्मसर: । यत्र च विकचकुवलयप्रभाश्यामायमानपक्षपुटान्यद्यापि मूर्तिमद्रामशापग्रस्तानीव मध्यचारिणामालोक्यन्ते चक्रवाकनाम्नां मिथुनानि ।

हिन्दी-अनुवाद–जो अभिषेक (जलावगाहन) के निमित्त उतरी हुई भील चौधरियों की सुन्दरियों के उरोजों पर उपलिप्त चन्दन के चूर्ण से शुभ्रकृत तरङ्गों वाला था, जो तटभागों पर छहराई हुई केतकियों के परागपुञ्ज से

संकुल निकटवर्ती आश्रमों से आए हुए तपस्वियों द्वारा प्रक्षालित अतएव गीले वल्कलों (के रस) के कारण कषाय (कसैला) तथा श्वेतरक्त तटीय जलवाला था, जो तट के समीपवर्ती वृक्षों के पल्लवसमूहों की वायु से वीजित (पंखा झला गया) था, जो सघन तमालवृक्षों की पंक्तियों से अँधियारी बनाई गई-(बड़े भाई) बालि द्वारा निर्वासित (अतएव वहाँ) प्रतिदिन पर्यटन करने वाले ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करने वाले (वनराज) सुग्रीव द्वारा भक्षित फलों के कारण हल्की (भारहीन) लताओं वाली–जल में निवास करने वाले तपोधनियों के देवार्चन में काम आने वाले पुष्पों वाली–उड़ते हुए जलचारी विहङ्गों के पक्षद्वय से झरे हुए जलबिन्दुओं के सिञ्चनप्रभाववश सुकोमल कोयलों वाली–लताकुञ्जों के अधः प्रदेशों में मयूरमण्डल द्वारा प्रारम्भ किए गए नर्तन वाली–विविध जाति के पुष्पों की सुरभि का वहन करने वाली तथा वनदेवियों द्वारा (अपनी) निश्वासवायु से सुवासित की गई प्रतीत होने वाली वनपंक्तियों से परिव्याप्त तटों वाला था, जो दूसरे समुद्र की आशङ्का (भ्रान्ति) करने वाले अतएव जलग्रहण के लिये (नीचे) उतरे हुए बादलों से प्रतीत होने वाले-सघन पङ्क से मलिनीभूत जङ्गली हाथियों द्वारा निरन्तर पिये जाते हुए जल-वाला था, जो अथाह, अपरिमित एवं (अक्षय-जलत्वात्) अद्वितीय था।

जिस (पम्पासरोवर) में प्रफुल्लित नीलकमलों की कान्ति से श्यामलवर्णी पक्षद्वय वाले चक्रवाक नामक पक्षियों के जोड़े आज भी 'मध्यचारी' अर्थात् वन में भ्रमण करने वाले व्यक्ति द्वारा मानों (भगवान्) श्रीराम के मूर्तिमान् शाप द्वारा ग्रस्त हुए देखे जाते हैं।

संस्कृत-व्याख्या—अभिषेकावतीर्णपुलिन्दराजसुन्दरीकुचचन्दनधूलिधवलित-तरंगम् = अभिषेकाय मज्जनार्थम् अवतीर्णाः सलिलान्तःप्रविष्टाः या पुलिन्द-राजस्य शबराधिपतेः सुन्दर्यः कामिन्यः तासां ये कुचाः वक्षोजाः तेषां चन्दन-धूलिभिः लिप्तशुष्कमलयजरजोभिः धवलिताः शुभ्रीकृताः तरङ्गा ऊर्मयो यस्य तत् तादृशम् **उपान्तजातकेतकीरजःपटलबद्धकूलपुलिनं =** उपान्ते पानीयनिकटे जातानाम् उत्पन्नानां केतकीनां मालतीपुष्पाणां रजःपटलैः धूलिसमूहैः बद्धं

रचितं कूले तटसमीपे पुलिनं सैकतं यस्य तत्, **आसन्नाश्रमागततापसक्षालितार्द्र-वल्कलकषायपाटलतटजलं**=आसन्नाः समीपवर्तिनः ये आश्रमाः तपस्विस्थानानि तेभ्यः आगतैः प्राप्तैः तापसैः मुनिजनैः क्षालितानां धौतानाम् आर्द्राणां जलाविलानां वल्कलानां वृक्षत्वचां कषायैः तुवरैः पाटलं श्वेतरक्तं तटजलं तीरान्तिकसलिलं यस्य तत् तादृशम्, **उपतटविटपिपल्लवपुटानिलवीजितं**=तटस्य समीपमुपतटं तत्र उपतटे ये विटपिनः पादपाः तेषां पल्लवाः किसलयानि तैः यः अनिलः वायुः तेन वीजितं व्यजनेनेवाचरितम्, **अविरलतमालवीथिकान्धकारिताभिः**=अविरला सान्द्रा या तमालवीथिका तापिच्छपङ्क्तिः तया अन्धकारिताभिः कृतान्धकाराभिः, **वालिनिर्वासितेन**=वालिना निर्वासितेन निष्कासितेन, **प्रतिदिनं**=प्रत्यहं, **सञ्चरता**=तत्रागच्छता, **ऋष्यमूकवासिना**=ऋष्यमूकनिवसनशीलेन, **सुग्रीवेण**=वाल्यनुजेन, **अवलुप्तफललताभिः**=अवलुप्तानि दूरीकरोति फलानि याभ्यः ताः, अतएव लघ्व्यः फलभाररहिताः लताः व्रतत्यो यासु ताभिः तादृशीभिः, **उदवासितापसानां**=उदके जले वसन्तीत्युदवासिनश्च ते तापसास्तपस्विनश्चेति तेषां तथोक्तानाम्, **देवार्चनोपयुक्तकुसुमाभिः**=देवार्चनेषु देवपूजासु उपयुक्तानि उचितानि कुसुमानि पुष्पाणि यासु ताभिः तथोक्ताभिः, **उत्पतज्जलचरपतङ्गपक्षपुटविगलितजलबिन्दुसेकसुकुमारकिसलयाभिः**=उत्पतन्त उड्डीय गच्छन्तो ये जलचरा नक्रादयः पतङ्गाः पक्षिणः तेषां पक्षपुटेभ्यः विगलिताः च्युताः ये जलबिन्दवः सलिलकणाः तैः सेकः तेन सुकुमाराणि मृदुलानि किसलयानि पल्लवानि यासां ताभिः तथोक्ताभिः, **लतामण्डपतलशिखण्डिमण्डलारब्धताण्डवाभिः**=लतामण्डपानां लताच्छादितप्रान्तानां तलेषु अधः प्रदेशेषु शिखण्डिमण्डलेन मयूरसमूहेन आरब्धं प्रारब्धं ताण्डवं नृत्यं यासु ताभिः तथोक्ताभिः, **अनेककुसुमपरिमलवाहिनीभिः**=अनेकेषां बहुप्रकाराणां कुसुमानां पुष्पाणां परिमलं गन्धं वहन्तीति ताः तादृशीभिः, **वनदेवताभिः**=काननाधिष्ठातृदेवीभिः, **श्वासवासिताभिरिव**=निःश्वाससुगन्धीकृताभिरिव, **वनराजिभिः**=अरण्यपङ्क्तिभिः, **उपरुद्धतीरं**=उपरुद्धानि व्याप्तानि तीराणि तटानि यस्य तत्, पम्पासरोविशेषणमिदम् । **अपरसागरशङ्किभिः**=अपरः भिन्नः सागरः समुद्रः इति शङ्कां

जनयतीति तैः तथोक्तैः, **सलिलं**=जलम्, **आदातुं**=गृहीतुम्, **अवतीर्णैः**=पम्पासरोवरेऽवतरितैः, **जलधरैरिव**=मेघैरिव, **बहलपङ्कमलिनैः**=बहलपङ्कैः शरीरलग्नाधिककर्दमैः मलिनाः श्यामाः तैः तथोक्तैः, **वनकरिभिः**=आरण्यकहस्तिभिः **अनवरतं**=निरन्तरम् **आपीयमानसलिलं**=आपीयमानानि सलिलानि जलानि यस्य तत् तादृशम्, **अगाधं**=अप्राप्ततलम्, **अनन्तं**=अन्तरहितम्, **अप्रतिमं**=अद्वितीयम्, **अपां**=जलानां, **निधानं**=निधिस्वरूपं, **पम्पाभिधानं**=पम्पासंज्ञकं, **पद्मसरः**=पद्मानां कमलानां सरः कासारः । **यत्र च**=यस्मिन् सरोवरे, **विकचकुवलयप्रभाश्यामायमानपक्षपुटानि**=विकचानि विकसितानि यानि कुवलयानि नीलोत्पलानि तेषां याः प्रभाः कान्तयः ताभिः श्यामायमानानि श्यामवदाचरन्ति पक्षपुटानि येषां तानि तथोक्तानि, **मध्यचारिणां** पम्पासरोवरमध्ये विचरणशीलानां, **चक्रवाकनाम्नां**=चक्रवाकसंज्ञकाना पक्षिणां, **मिथुनानि**=युगलानि, **अद्यापि**=अधुनापि, **मूर्तिमद्रामशाप प्रस्तानीव**=मूर्तिमान् देदीप्यमानरूपो यो रामस्य दशरथनन्दनस्य शापः अभिसम्पातः तेन प्रस्तानिव, **आलोक्यन्ते**=दृश्यन्ते ।

टिप्पणी–**अभिषेक**–स्नान । **पुलिन्दराज**–भीलों का स्वामी । '**अभिषेकावतीर्ण**···**तरङ्गम्**' में अतिशयोक्ति अलङ्कार । **पुलिनम्**–रेतीला तट । 'उपान्त··· पुलिनम्' यहाँ भी अतिशयोक्ति अलङ्कार है । **कषाय**–**कसैला**, 'तुवरस्तु कपायोऽस्त्री' । **पाटल**–गुलाबी, 'श्वेतरक्तस्तु पाटलः' इत्यमरः । **उदवासितापसानां**–जल में रहकर तपस्या करने वाले तपस्वियों की । **पतङ्ग**–पक्षी । 'लता··· ताण्डवाभिः' यहाँ अनुप्रास अलङ्कार है । **ताण्डव**–नृत्य, 'ताण्डवं नटनं नाट्यं लास्यं नृत्यं च नर्तनम्' इत्यमरः । 'अनेक वासितामिरिव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है । बहलपङ्क-अत्यधिक कीचड़ । 'अपर··सलिलम्' में जातिस्वरूपोत्प्रेक्षा है । "यत्र··मिथुनानि'—यहाँ अन्तर्कथा इस प्रकार है कि सीता के विरह से व्यथित राम का चक्रवाक पक्षियों ने उपहास किया । तब राम ने उन्हें शाप दे दिया कि तुम्हें भी मेरे ही समान दुःखी होकर रात्रि व्यतीत करनी पड़ेगी । इसी शाप के कारण चक्रवाक युगल रात्रि में एक दूसरे से अलग हो जाता है ।

'ग्रस्तानीव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है।

तस्यैव पद्मसरसः पश्चिमे तीरे राघवशरप्रहारजर्जरितजीर्णताल-तरुषण्डस्य च समीपे दिग्गजकरदण्डानुकारिणा जरदजगरेण सततमा-वेष्टितमूलतया बद्धमहालवाल इव तुङ्गस्कन्धावलम्बिभिरनिलवेल्लि-तैरहिनिर्म्मोकैर्धृतोत्तरीय इव, दिक्चक्रवालपरिमाणमिव गृह्णता भुवनान्तरालविप्रकीर्णेन शाखासञ्चयेन प्रलयकालताण्डवप्रसारित-भुजसहस्रमुडुपतिशेखरमिव विडम्बयितुमुद्यतः, पुराणतया पतनभया-दिव गगनस्कन्धलग्नः, निखिलशरीरव्यापिनीभिरतिदूरोन्नतभिर्जीर्णतया शिराभिरिव परिगतो व्रततिभिः, जरातिलकबिन्दुभिरिव कण्टकैरा-चिततनुः, इतस्ततः परिपीतसागरसलिलैर्गगनागतैः पत्ररथैरिव शाखा-न्तरेषुनिलीयमानैः क्षणमम्बुभारालसैरार्द्रीकृतपल्लवैर्जलधरपटलैरप्य-दृष्टशिखरः तुङ्गतया नन्दनवनश्रियमिवावलोकयितुमभ्युद्यतः।

हिन्दी-अनुवाद—उसी कमल-सरोवर के पश्चिमी तट पर, श्रीराम के बाण-प्रहार से जर्जर हुए (छिन्न-भिन्न) तालवृक्षों के वन के समीप (एक) भारी-भरकम, पुरातन (पुराना) सेमर का पेड़ था—जो दिग्गजों के शुण्डादण्डों (सूँड़) का अनुकरण करने वाले पुराने अजगर द्वारा निरन्तर मूलभाग को लपेटे रहने के कारण बँधे हुए विशाल थाल्हे से युक्त प्रतीत होता था, जो ऊँचे स्कन्धों (तनों) में लटकते हुए तथा पवन द्वारा आन्दोलित सर्पकञ्चुकों के कारण उत्तरीय से अलङ्कृत प्रतीत होता था, जो मानो दिङ्मण्डल का आयाम (विस्तार या क्षेत्रफल) नापते हुए संसार के अन्तराल (मध्यभाग) में फैले हुए (अपने) शाखासमूह से प्रलयकालीन ताण्डवनृत्य में फैलाई गई हजारों भुजाओं वाले चन्द्रशेखर भगवान् शिव का अनुकरण करने के लिए उद्यत प्रतीत होता था, जो जीर्ण-शीर्ण होने के कारण गिर जाने की आशंका वश आकाश के कन्धे पर आश्रित प्रतीत होता था, जो सम्पूर्ण शरीर में परि-

व्याप्त तथा वृद्धावस्था के कारण बड़ी दूर तक उभरी हुई शिराओं (अस्थि-बन्धनों) से परिवेष्टित (वृद्ध-पुरुष) की भाँति सम्पूर्ण वृक्ष में विद्यमान तथा प्राचीन होने के कारण बड़ी दूर तक उठी हुई लताओं से परिवेष्टित था जो वृद्धावस्था में उत्पन्न तिलबिन्दुओं (काले तिलों) से व्याप्त शरीर की भाँति काँटों से भरे शरीर वाला था, जो इधर-उधर आकाश मण्डल से उतरे हुए–सागर-जल पिए हुए–(पिये गए) जल के भार से अलसाये हुए–क्षणभर के लिए शाखाओं के अन्तराल में चुपचाप बैठे हुए तथा पल्लवों को गीला बना देने वाले विहंगों की भाँति इधर-उधर गगनमण्डल से आए-समुद्रजल पिये हुए (पिये गए) जलभार वश मन्द गति वाले क्षणभर के लिए शाखाओं के भीतर गुप्त रूप से बैठते हुए तथा (जल-से) पल्लवों को भिगो देने वाले मेघमण्डल द्वारा भी अदृष्ट शिखरवाला था, जो (अपनी) ऊँचाई के कारण इन्द्रोपवन नन्दन का सौन्दर्य देखने के लिए समुद्यत प्रतीत होता था।

संस्कृत-व्याख्या–तस्यैव=पम्पाभिधेयस्यव, **पद्मसरसः**=पद्मसरोवरस्य, **पश्चिमे तीरे**=पश्चिमे, तटे, **राघवशरप्रहारजर्जरितजीर्णतालतरुषण्डस्य**=राघवस्य रामचन्द्रस्य ये शराः बाणाः तेषां प्रहारेण जीर्णानां प्राचीनानां तालतरूणां तालवृक्षाणां षण्डस्य समुदायस्य च समीपे निकटे, **महान्**=विशालः, **जीर्णः**=पुरातनः, **शाल्मलीवृक्षः**=रोचनाख्यस्तरुरस्तीति दूरेणान्वयः। अत्र प्रथमान्तानि पदानि शाल्मलीवृक्षविशेषणानि। **दिग्गजकरदण्डानुकारिणा**=दिग्गज ऐरावतादिः तस्य यः करदण्डः शुण्डादण्डः तमनुकर्तुं शीलं यस्य तेन तथोक्तेन, **जरदजगरेण**=जरन् जरां प्राप्नुवन् वृद्धो योऽजगरस्तन्नामकः पृथुलसर्पः तेन तादृशेन, **सततं**=निरन्तरम्, **आवेमूलतया**=आवेष्टितं वलयितं मूल चरणभागः यस्य तस्य भावः तत्ता तया, **बद्धमहालवाल इव**=बद्धं निर्मितं महत् विशालम् आलवालम् आवापः यस्य स इव क्रियोत्प्रेक्षा।' **तुङ्गस्कन्धावलम्बिभिः**=तुङ्गम् उन्नतं स्कन्धं प्रकाण्डभागं स्कन्धमागञ्च अवलम्बितुं शीलं येषां तैः तथोक्तैः, **अनलवेल्लितैः**=पवनचालितैः, **अहिनिर्मोकैः**=सर्पकञ्चुकैः, **धृतोत्तरीय इव**=गृहीतोपसंव्यानवस्त्र इव, **दिक्चक्रवालपरिमाणमिव**=दिशां ककुभां चक्रवालं मण्डलं तस्य परिमाणमिव इयत्तापरिमितमिव, **गृह्णता**=धारयता, **भुवनान्त-**

रालविप्रकीर्णेन=भुवनान्तराले संसारमध्य-भागे विप्रकीर्णं इतस्तो विस्तारितः तेन, **शाखासञ्चयेन**=लतासंदोहेन, **प्रलयकालताण्डवप्रसारितभुजसहस्रम्**= प्रलयकाले कल्पान्तसमये यत् ताण्डवम् उद्धतनृत्यं तत्र प्रसारितम् इतस्ततो-विपर्यस्तं भुजसहस्रम् अनेकतरुबाहवो येन स तं तादृशम्, **उडुपतिशेखरं**= उडुपतिः तारापतिश्चन्द्र शेखरो मस्तकालङ्कारो यस्य तं महादेवं, **विडम्बयितुं** =अनुकर्तुं, **उद्यत इव**=संनद्ध इव, **पुराणतया**, **पतनभयादिव**=स्खलनश-ङ्कयेव, **गगनस्कन्धलग्नः**=गगनस्य आकाशस्य स्कन्धे प्रकाण्डे लग्नः यस्य तादृशः, **निखिलशरीरव्यापिनीभिः**=निखिलं समस्तं यत् शरीरं वपुः तद् व्याप्तुं शीलं यासां तादृशीभिः, **अतिदूरोन्नताभिः**=अतिविप्रकृष्टमुत्थिताभिः, **जीर्णतया** प्राचीनतया, **शिराभिरिव**=अस्थिबन्धनैरिव, **लतिभिः**=लताभिः **परिगतः** =परिवेष्टितः, **जरातिलकबिन्दुभिरिव**=जरायां वृद्धावस्थायां ये तिलकबिन्दवः कृष्णतिलसदृशाः चिह्नविशेषाः तैरिव, **कण्टकैः**=क्षुद्रशत्रुभिः, **आचिततनुः**= आचिता व्याप्ता तनुः देहः यस्य सः तथोक्तः, **इतस्ततः**=समन्तात्, **परिपीतसा-गरसलिलैः**=परिपीतानि सागराणां समुद्राणां सलिलानि पानीयानि यैस्तैः, **गगनागतैः**=गगनात् आकाशात् आगतैः उपस्थितैः, **पत्ररथैरिव**=पक्षिभिरिव, **शाखान्तरेषु**=शाखानां स्कन्धानाम्, अन्तरेषु मध्येषु, **क्षणं**=क्षणमात्रं, **निलीयमानैः**=गुप्ततया स्थितवद्भिः, **अम्बुभारालसैः**=अम्बुभारालसैः= अम्बुभारेण पीतसलिलभारेण, अलसैः मन्थरगामिभिः, **आर्द्रीकृतपल्लवैः**= आर्द्रीकृतानि वर्षणेन क्लिन्नानि पल्लवानि किसलयानि यैस्तानि, तैः, **जलधर-पटलैः**=मेघसमूहै रपि, **अदृष्टशिखरः**=न दृष्टम्, अत्युन्नततया नेक्षितं शिखरं प्रान्तप्रदेशोः यस्य स तथोक्तः, **तुङ्गतया**=उन्नततया, **नन्दनवनश्रियं**= नन्दनवनस्य इन्द्रोद्यानस्य या श्रीः शोभा ताम्, **अवलोकयितुमिव**=वीक्षितुमिव, **अभ्युद्यत इव**=संनद्ध इव ।

टिप्पणी—षण्ड—समुदाय । जड़ वस्तु समुदाय के लिए 'षण्ड' शब्द का प्रयोग होता है । दिग्गज-पौराणिक मान्यता है कि आठ दिशाओं में आठ हाथी सम्भाले हुए हैं । वैज्ञानिक लोग इन्हें वायुमण्डल की संज्ञा से अभिहित करते

हैं । पूर्वादि दिशाओं के दिग्गज क्रमश: ये है–'ऐरावत: पुण्डरीको वामनः कुमदोऽञ्जनः । पुष्पदन्त: सार्वभौम: सुप्रतीकश्च दिग्गजा: ।' **आलवाल–थलहा** । 'दिग्गज···आलवाला इव' यहाँ 'दिग्गज में' 'लुप्तोपमा' तथा 'आलवाला इव' में वाच्या तथा क्रियोत्प्रेक्षालंकार हैं। दोनों का अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर। **चक्रवाल**–मण्डल । **अन्तराल**–मध्यभाग । 'धृतोत्तरीय इव' में क्रियोत्प्रेक्षा । प्रलयकाल···शेखरमिव' यहाँ 'गृह्णतेव' 'उद्यत इव' में वाच्या तथा क्रियोत्प्रेक्षा 'विडम्बयितुम्' में आर्थी उपमा । इन सबका अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर। पौराणिक मान्यता के अनुसार भगवान् शंकर प्रलयकाल में रुद्र रूप को धारण करके सहस्रों भुजाओं को फैलाकर ताण्डव नृत्य किया करते हैं। विडम्बयितुम् अनुकरण करने के लिए। **शिरा**–नाड़ी, 'नाड़ी तु धमनी शिरा' इत्यमर: । **व्रतति**–लता, 'वल्ली तु व्रततिर्लता इत्यमर: । **कण्टक**–क्षुद्र शत्रु, 'कण्टक: क्षुद्रशत्रौ च' इति विश्व: । **पत्ररथ**–पक्षी, 'पतत्पत्ररथाण्डजा:' इत्यमर: । '**इस्तत: शिखर:**' यहाँ वाच्योपमा तथा अतिशयोक्ति अलङ्कार है। नन्दन इन्द्र का उद्यान, 'अथ नन्दनम् इन्द्रोद्याने नन्दनस्तु तनये हर्षकारिणि' इति हैम: । 'तुङ्गतया···अभ्युद्यत:' यहाँ 'अवलोकयितुमिव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है।

स्वसमीपवर्त्तिनामुपरि सञ्चरतां गगनतलगमनखेदायासितानां रविरथतुरंगमाणां सृक्कपरिस्रुतैः फेनपटलै: सन्देहिततूलराशिभिर्धवलीकृतशिखरशाख:, वनगजकपोलकण्डूयनलग्नमदनिलीनमत्तमधुकरमालेन लोहश्रृङ्खलाबन्धननिश्चलेनेव कल्पस्थायिना मूलेन समुपेत:, कोटराभ्यन्तरनिविष्टैः स्फुरद्भिः सजीव इव मधुकरपटलै:, दुर्योधन इवोपलक्षितशकुनिपक्षपात:, नलिननाभ इव वनमालोपगूढ:, नवजलधरव्यूह इव नभसि दर्शितोन्नतिः, अखिलभुवनतलावलाकनप्रसाद इव वनदेवतानाम्, अधिपतिरिव दण्डकारण्यस्य, नायक इव सर्ववनस्पतीनाम्, सखेव विन्ध्यस्य, शाखाबाहुभिरुपगुह्येव विन्ध्याटवीमवस्थितो महान् जीर्ण: शाल्मलीवृक्ष: ।

हिन्दी-अनुवाद—जो अपने निकटवर्ती—(अपने) ऊर्ध्वभाग में सञ्चरण करने वाले—आकाशतल पर पर्यटन करने के प्रयास से थके हुए—सूर्य के रथवाहा अश्वों के ओष्ठप्रान्तों से विगलित तथा तूल राशि (रुई के ढेर) को सन्देह का विषय बनाने वाले फेन समूह से शुभ्र बनाई गई शिखरवर्तिनी शाखाओ वाला था, जो बनैले हाथियों के कपोलमण्डलों के कण्डूयन (खर्जूयन अथवा खुजलाहट) से उत्पन्न मदजल पर बैठे हुये मदमत्त भ्रमरों की माला से युक्त अतएव (कालिमा की समता के कारण) लौहशृंखला के नियन्त्रणवश स्थिरीभूतकल्पान्तवेला तक अक्षुण्ण रहने वाले मूल मे समुपेत प्रतीत होता था, जो कोटरों के मध्यभाग में प्रविष्ट तथा देदीप्यमान मधुकर मण्डलों से सजीव (श्वासादिप्राण-युक्त) प्रतीत होता था, जो (जनसमूह द्वारा अपने मामा) शकुनी के प्रति देखे गये पक्षपात (स्वीकृति या समर्थन) वाले दुर्योधन की भाँति (लोगों द्वारा) देखे गये पक्षियों के पंखों के पतनवाला था, जो (आप्रपदीन) बनमाला द्वारा आलिङ्गित कमलनाभ विष्णु की भाँति वनपंक्तियो से आच्छादित था, जो श्रावण मास मे वृद्धि प्रदर्शित करने वाले नवीन मेघमण्डल की भाँति आकाश में उच्चता प्रदर्शित करने वाला था, जो समस्त पृथ्वीमण्डल का पर्यवेक्षण करने के लिए वनदेवियों का प्रासाद (अट्टालिका) प्रतीत होता था, जो दण्डकवन का स्वामी प्रतीत होता था, जो (बिना पुष्प के ही फलने वाली) समस्त वनस्पतियों का नायक प्रतीत होता था, जो विन्ध्यपर्वत का मित्र प्रतीत होता था और जो शाखाओं रूपी भुजाओं से विन्ध्याटवी का आलिङ्गन करके अव्यवस्थित प्रतीत होता था ।

संस्कृत-व्याख्या-स्वसमीपवर्त्तिनां = निजान्तिकस्थायिनाम्, **उपरि** = ऊर्ध्वं, **सञ्चरतां** = गच्छतां, **गगनतलगमनखेदायासितानां** = गगनतले आकाशतले गमनेन सञ्चारेण यः खेदः परिश्रमः तेन खेदमुपगतानां तेन आयासितानां, **रवितुरङ्ग-माणां** = सूर्यरथनियुक्ताश्वानां, **सृक्कपरिस्रुतैः** = सृक्काभ्याम् ओष्ठप्रान्ताभ्यां परिस्रुतैः पतितैः, **सन्देहिततूलराशिभिः** = सन्देहित. सन्देहविषयीकृतः तूलराशिः कार्पासकपिण्डः यैस्तैः, **फेनपटलैः** = श्वेतकसमूहैः, **धवलीकृतशिखरशाखः** = धवलीकृताः श्वेनीकृता शिखरशाखा अग्रस्थायिन्यःशाखा यस्य सः, **वनगजकपोलकण्डू-**

यनलग्नमदनिलीनमत्तमधुकरमालेन=वनगजानां काननहस्तिनां कपोलयोः गण्डयोः कण्डूयनेन खर्जनेन लग्नेषु सक्तेषु मदेषु दानवारिषु निलीना अवस्थिताः मत्ताः मधुपानेन क्षीबाः मधुकरमालाः भ्रमरपङ्क्तयो यत्र तेन तादृशेन, **लोह-शृंखलाबन्धननिश्चलेनेव** =लोहशृंखलया लोहनिगडेन यद् बन्धनं नियन्त्रणं तेन निश्चलं स्थिरं तेनेव विद्यमानेन,**कल्पस्थायिना** = प्रलयपर्यन्तं तिष्ठता, मूलेन, **समुपेतः**=संयुक्तः, **कोटराभ्यन्तरनिविष्टैः** =कोटराभ्यन्तरे कोटरमध्ये निविष्टैः निलीनैः, **स्फुरद्भिः** = दीप्यमानैः, **मधुकरपटलैः**=भ्रमरसमूहैः, **सजीव इव** = श्वासादिप्राणयुक्त इव, **दुर्योधन इव**=सुयोधन इव, **उपलक्षितशकुनिपक्षपातः**= उपलक्षितः जनैर्दृष्टः; शकुनीनां पक्षिणां पक्षैः छदैः पातः पतन यस्मिन् स तादृशः, दुर्योधनपक्षे उपलक्षितः शकुनौ स्वमातुले पक्षपातः प्रणयः यस्य स तथोक्तः । **नलिननाभ इव** =नलिनं कमलं नाभौ यस्य स विष्णुरिव, **वनमालोप-गूढः** =वनमालया काननपङ्क्त्या **उपगूढ** आच्छादितः, विष्णुपक्षे वनमाला सर्व-र्तुपुष्पोज्ज्वला माला तया उपगूढ आश्लिष्टः । **नवजलधरव्यूह इव**=नवाः नूतनाः ये जलधारा मेघाः तेषां व्यूहः मण्डलं तद्वत्, **नभसि** =आकाशे, **दर्शितो-न्नतिः**=दर्शिता प्रकटिता उन्नतिः उच्चत्वं येन स तथोक्तः, जलधरव्यूहपक्षे,**नभसि** श्रावणे दर्शिता उन्नतिः वृद्धिः येन स तादृशः, **अखिलभुवनतलावलोकनप्रसाद इव**=अखिलानि समस्तानि यानि भुवनतलानि जगन्ति तेषाम् अवलोकनं निरीक्षणं तदर्थं प्रासादः राजभवनमिव, **वनदेवतानां** = अरण्याधिष्ठात्रीणां देवीनाम्, **दण्डकारण्यस्य**=दण्डकाख्यस्य वनस्य, **अधिपतिरिव** = स्वामी इव, **सर्ववनस्पतीनां**=पुष्पं विना फलं येषामेवंविधसर्वतरूणां, **नायक इव**= अध्यक्ष इव, **विन्ध्यस्य** = एतदाख्यपर्वतस्य, **सखा इव** = मित्रमिव, **शाखाबाहुभिः** शाखाः विटपाः ता एव बाहवः भुजाः तैः, **विन्ध्याटवीं**=विन्ध्यभूमिम्, **उपगुह्येव**=आश्लिष्येव, **अवस्थितः** = विद्यमानः, **महान्** =विशालः, **जीर्णः** =पुरातनः, **शाल्मलीवृक्षः**=सप्तपर्णतरुः ।

टिप्पणी—सृक्क—घोड़ों के ओष्ठप्रान्त, जबड़ा, 'प्रान्तावोष्ठस्य सृक्कणी' इत्यमरः । 'स्वसमीप···शिखरशाखः' यहाँ अतिशयोक्ति अलङ्कार है । कल्प-एक सृष्टि की अवस्था, इसमें मन्वन्तर होते हैं तथा चारों युग एक हजार बार बीत

जाते हैं। एक कल्प में चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष होते हैं। कल्प के पश्चात् प्रलय हो जाती है। 'वनगज ·····समुपेतः' यहाँ काव्यलिङ्ग तथा उत्प्रेक्षालंकार का संकर है। मधुकरमालेन यहाँ 'माला' शब्द में 'गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य' से ह्रस्व हो जाता है। 'कोटराभ्यन्तर····पटलैः' यहाँ गुणोत्प्रेक्षा है। शकुनि--(क) दुर्योधन के पक्ष में—शकुनि नामक दुर्योधन के मामा (ख) शाल्मलीवृक्ष के पक्ष में—पक्षि। नलिननाभ—भगवान विष्णु। वनमाला (क) विष्णु के पक्ष में—भगवान् विष्णु के गले में रहने वाली माला विशेष, जिसका लक्षण इस प्रकार है— 'आजानुलम्बिनी माला सर्वर्तुकुसुमोज्ज्वला। मध्ये स्थूलकदम्बाढ्या वनमालेति कीर्त्तिता ॥" (ख) शाल्मलीवृक्ष के पक्ष में—वनों की पङ्क्ति। नभसि—(क) नवजलधरव्यूह के पक्ष में—श्रावण में, (ख) शाल्मलीवृक्ष के पक्ष मे—आकाश मे; 'नभः खं श्रावणो नभः' इत्यमरः। 'दुर्योधन····दर्शितोन्नतिः' यहाँ पूर्णोपमालङ्कार है। वनस्पति—इस प्रकार के सभी वृक्ष जिनपर बिना पुष्प के फल आते है। 'वनस्पतिर्वृक्ष-मात्रे विना पुष्पफलद्रुमे' इति विश्वः। 'अखिल···विन्ध्यस्य' यहाँ जात्युत्प्रेक्षा है। 'शाखाबाहुभिरेव' यहाँ निरङ्ग केवल रूपक तथा क्रियोत्प्रेक्षा का अङ्गाङ्गि-भाव संकर है।

तत्र च शाखाग्रेषु कोटरोदरेषु पल्लवान्तरेषु स्कन्धसन्धिषु जीर्ण-वल्कलविवरेषु च महावकाशतया विश्रब्धविरचितकुलायसहस्राणि दुरारोहतया विगलितविनाशभयानि नानादेशसमागतानि शुकशकुनि-कुलानि प्रतिवसन्ति स्म। यैः परिणामविरलसंहतिरपि स वनस्प-तिरविरलदलनिचयश्यामल इवोपलक्ष्यते दिवानिशं निलीनैः।

हिन्दी-अनुवाद—उस शाल्मलीवृक्ष (सेमर) पर शाखाओं के प्रान्त भागों में, कोटरों के भीतरी भागों में, पल्लवों के अन्तराल में, तनों एवं शाखाओं के जड़ों में, तथा पुराने वल्कलों (छालों अथवा पपड़ियों) के छिद्रों में प्रभूत (अत्यधिक) अन्तर्विस्तार (जगह) होने के कारण निर्विशङ्कभाव से हजारों घोसले बनाये हुए तथा दुरारोह (न चढ़ा जा सकने योग्य) होने के कारण

विनाशभय से मुक्त, भिन्न-भिन्न प्रदेशों से (बसेरा लेने के लिये) आए हुए शुकों तथा अन्य पक्षियों के कुल (सन्तति या समूह) रहा करते थे।

रात-दिन भीतर छिपे बैठे जिन (शुक-शकुनिकलों) के कारण वार्धक्यवश छिट-पुट-पत्रसमूह वाला भी वह सेमर का पेड़ सघन पत्रसमूह से हराभरा प्रतीत होता था।

संस्कृत-व्याख्या–**तत्र च**=शाल्मलीवृक्षे,**शाखाग्रेषु**=शालप्रान्तेषु, **कोटरोदरेषु**=कोटराणां स्कन्धविवराणाम् उदरेषु मध्यभागेषु,**पल्लवान्तरेषु**—किसलयमध्येषु,**स्कन्धसन्धिषु**=प्रकाण्डबन्धेषु,**जीर्णवल्कलविवरेषु**=जीर्णानि प्राचीनानि यानि वल्कानि त्वचः तेषां विवरेषु छिद्रेषु च, **महावकाशतया**=महान् अतिदीर्घ अवकाश अन्तर्विस्तारः येषां तेषां भावस्तया तथोक्तया, **विश्रब्धविरचितकुलायसहस्राणि**=विश्रब्धं सविश्वास निःसंदेहं यथा स्यात्तथा विरचितानि विनिर्मितानि कुलायसहस्राणि नीडसङ्घाः यैस्तानि तथोक्तानि, **दुरारोहतया**=दुःखेन क्लेशेन आरुह्यत इति दुरारोहः तस्य भावः तत्ता तया, **विगलितविनाशभयानि**=विगलितं हृदयात् प्रच्युतं विनाशभयं मृत्युभयं येषां तानि, **नानादेशसमागतानि**=नानदेशेभ्यः भिन्न-भिन्न प्रान्तेभ्यः समागतानि समायातानि, **शुकशकुनिकुलानि**=शुकाः कीराःशकुनयस्तदतिरिक्ताःपतत्रिणःतेषां कुलानि समूहाः, **प्रतिवसन्ति स्म**=निवसन्ति स्म। **दिवानिशं**=रात्रिन्दिवं, **निलीनैः**=निविष्टैः, **यैः**=शकुनिकुलैः, **परिणामविरलदलसंहतिरपि**=परिणामेन पुरातनया विरला स्वल्पा दलसंहृतिः पत्रसमुदायः यत्र स तथोक्तोऽपि,**सः वनस्पतिः**=शाल्मलीवृक्षः, **अविरलदलनिचयश्यामल इव**=अविरलानि सान्द्राणि यानि दलानि पर्णानि तेषां निचयः संहतिः तेन श्यामलः कृष्णवर्ण इव, **उपलक्ष्यते**=जनैरवलोक्यते।

टिप्पणी–**स्कन्धसन्धि**–दो तनों का सन्धिस्थल जहाँ पक्षी घोसला रख लिया करते हैं। **महावकाशतया**–बहुत स्थान वाला होने के कारण। **कुलाय**–घोंसला। **शकुनि**–पक्षी। **निचय**–समूह। **यैः···निलीनैः**'–यहाँ श्यामलता गुण है अतएव उसके उत्प्रेक्षण से उत्प्रेक्षालङ्कार है।

ते च तस्मिन् वनस्पतावतिवाह्य रजनीमात्मनीडेषु प्रतिदिनमुत्था-

याहारान्वेषणाय नभसि विरचितपङ्क्तयो मदकलहलधरहलमुखोत्क्षेपविकीर्णबहुस्रोतसमम्बरतले कालिन्दकन्यामिव दर्शयन्तः, सुरगजोन्मूलितविगलदाकाशगंगाकमलिनीशंकामुपजनयन्तः, दिवसकररथतुरगप्रभानुलिप्तामिव गगनतलमुपपादयन्तः, सञ्चारिणीमिव मरकतस्थलीं विडम्बयन्तः शैवालपल्लवावलीमिवाम्बरसरसि प्रसारयन्तः, गगनविततैः पक्षपुटैः, कदलीदलैरिव दिनकरखरकरनिकरपरिखेदिताऽन्याशामुखानि वीजयन्तः, वियति विसारिणीं शष्पवीथीमिवारचयन्तः, सेन्द्रायुधमिवान्तरिक्षमादधाना विचरन्ति स्म शुकशकुनयः। कृताहाराश्च पुनः प्रतिनिवृत्यात्मकुलायावस्थितेभ्यः शावकेभ्यो विविधान् फलरसान् कलममञ्जरीविकारांश्च प्रहतहरिणरुधिरारुणस्फुशार्दूलनखकोटिपाटलेन चञ्चुपुटेन दत्त्वा अधरीकृतसर्वस्नेहनासाधारणेन गुरुणापत्यप्रेम्णा तस्मिन्नेव क्रोडान्तर्निहिततनया क्षपाः क्षपयन्ति स्म ।

हिन्दी-अनुवाद—अपने घोसलों में रात बिताकर प्रतिदिन (सवेरे) उठ कर चारा खोजने के लिये आकाश में कतार बाँधे हुये अतएव मानो गगन-मण्डल में मदिरा पान के कारण मनोज्ञ (प्रतीत होने वाले) बलराम के हलाग्रभाग अर्थात् फाल के आकर्षण से पर्यस्त (फैली या छितराई) हुई अनेक धाराओं वाली यमुना को प्रदर्शित करते हुये, सुरगज ऐरावत द्वारा उत्पाटित (उखाड़ी गई) अतएव नीचे गिरती हुई आकाशगङ्गा में उगी कमलिनी के भ्रम को उत्पन्न करते हुये, आकाशमण्डल को (अपनी देहप्रभा के कारण) मानो सूर्य के रथवाही (हरित) अश्वों की शारीरिक कान्ति से उपलिप्त हुआ ज्ञापित करते हुए, भ्रमणशील मरकतमणिखचित भूमि का मानो अनुकरण करते हुये, आकाश रूपी सरोवर में मानो सेवार की किसलय श्रेणी फैलाते हुये, आकाश में फैले हुए तथा कदलीपत्र के समान प्रतीत होने वाले पंखसमूह से मानो सूर्य की तीखी किरणों के समूह से थकाई गई दिशाओं के मुँह पर हवा करते हुए, आकाश में

विस्तारित नई घासों का कछार माना बनाते हुए तथा आकाश को इन्द्रधनुष से संवलित प्रस्तुत करते हुए वे शुकपक्षी उस सेमर के पेड़ पर विचरण किया करते थे ।

चारा खा-पो लेने के बाद पुनः लौटकर मारे-गये हरिण के रक्त से अरुणोकृत सिंह के नखाग्रभाग के समान पाटलवर्णी (श्वेत रक्त) चञ्चुपुट से अपने घोंसलों में अवस्थित चिरौटों (बच्चों) के लिए विविध प्रकार वाले फलों के रसों को तथा जङ्गलीधान की वल्लरियों से उद्भूत (पका) चावल देकर-सब प्रकार के स्नेह को नगण्य बना देने वाले, विलक्षण तथा भारी सन्तति प्रेम से उसी (पेड़) पर बच्चों को गोदी में लिए हुए रातें बिताया करते थे ।

संस्कृत-व्याख्या—'ते च=शुकशकुनयः विचरन्ति स्म' इति दूरेणान्वयः । **तस्मिन् वनस्पतौ**=शाल्मलीवृक्षे, **आत्मनीडेषु**=निजनिजकुलायेषु, **रजनीं**=रात्रिम्, **अतिवाह्य**=अतिक्रम्य, **प्रतिदिनं**=प्रत्यहम्, **उत्थाय**=उत्थानं विधाय, **आहारान्वेषणाय**=भक्ष्यमार्गणाय, **नभसि**=गगने, **विरचितपङ्क्तयः**=विरचिता विहिता पङ्क्तिः श्रेणी यैस्ते तथोक्ताः, **मदकलहलधरहलमुखोत्क्षेपविकीर्णबहुस्रोतसम्**=मदेन मधुपानेन कलो मत्तो यो हलधरो बलरामः तस्य हलमुखेन लाङ्गल प्रदेशेन य उत्क्षेप ऊर्ध्वदेशेक्षेपणं तेन विकीर्णानि विक्षिप्तानि बहूनि स्रोतांसि प्रवाहा यस्याः तां तथोक्तां, **कलिन्दकन्यामिव**=यमुनामिव, **अम्बरतले**=आकाशतले, **दर्शयन्तः**=प्रदर्शयन्तः, **सुरगजोन्मूलितविगलदाकाशगङ्गाकमलिनीशङ्काम्**=सुरगजेन-ऐरावतेन उन्मूलिता उत्पाटिता अतएव विगलन्ती अधःपतन्ती या आकाशगङ्गा मन्दाकिनी तस्याः कमलिनी पद्मिनी तस्याः शङ्कां भ्रान्तिम्, **उपजनयन्तः**=उत्पादयन्तः, **गगनतलं**=अम्बरतलं, **दिवसकररथतुरगप्रभानुलिप्तमिव**=दिवसकरस्य सूर्यस्य ये रथतुरगाः स्यन्दनायोजितशताश्वाः तेषां प्रभाभिः कान्तिभिः अनुलिप्तं रञ्जितमिव, **उपपादयन्तः**=विदधतः, **सञ्चारिणीं**=सञ्चरणशीलां, **मरकतस्थलीं**=नीलमणिभूमिं, **विडम्बयन्तः**=अनुकुर्वन्त इव, **अम्बरसरसि**=आकाशजलाशये, **शैवलपल्लवावलीं**=शैवलपल्लवस्य शैवालकिसलयस्य अवलीं पङ्क्तिं, **प्रसारयन्तः**=विस्तारयन्त इव, **कदलीदलैरिव**=रम्भापत्रैरिव, **गगनवितते**=गगने आकाशे

वितर्तैः विस्तृतैः,**पक्षपुटैः**=पक्षच्छेदैः, **दिनकरखरकरनिकरपरिखेदितानि**=दिन-करस्य सूर्यस्य खराः तीक्ष्णाः ये करनिकराः किरणसमूहाः तैः परिखेदितानि संक्लेशितानि, **आशामुखानि**=दिग्वदनानि वीजयन्तः, **वियति**=आकाशे, **विसारिणीं**=विस्तारिणीं, **शष्पवीथीं**=बालतृणपङ्क्तिम्, **आरचयन्तः**=निर्माणं कुर्वन्त इव, **अन्तरिक्षं**=आकाशं, **सेन्द्रायुधमिव**=शक्रधनुषा सह विद्य-मानमिव, **आदधानाः**=कुर्वन्तः, **शुकशकुनयः**=कीरपक्षिणः, **विचरन्ति स्म**=पर्यटन्ति स्म । **कृताहाराश्च**=कृतो विहित आहारो भोजनं यैस्ते तथोक्ताः । **पुनः**=भूयः, **प्रतिनिवृत्य**=परावृत्य, **आत्मकुलायावस्थितेभ्यः**=आत्मीयाः निजाः ये कुलायाः नीडानि तत्र अवस्थितेभ्यः वर्तमानेभ्यः, **शावकेभ्यः**=शिशुभ्यः, **विविधान्**=अनेकप्रकारान्, **फलरसान्**=सस्यनिर्यासान्, **कलममञ्ज-रीविकारान्**=कलमानां धान्यविशेषाणां मञ्जर्यो वल्लर्यस्तासां विकाराः परि-पक्वाः कणाः तांश्च, **प्रहतहरिणरुधिरानुरक्तशार्दूलनखकोटिपाटलेन**=प्रहतस्य विनाशितस्य हरिणस्य मृगस्य रुधिरं शोणितं तेन अनुरक्ता रक्तवर्णीकृता या शार्दूलनखकोटिः व्याघ्रनखाग्रप्रदेशः तद्वत् पाटलेन श्वेतरक्तेन, **चञ्चुपुटेन**=पञ्चाङ्गुलसम्पुटेन दत्त्वा, **अधरीकृतसर्वस्नेहेन**=अधरीकृतः निम्नत्वमापादितः सर्वस्नेहः समस्तप्रेम येन तेन तादृशेन अतएव, **आसाधारणेन**=असामान्येन, **गुरुणा**=महता, **अपत्यप्रेम्णा**=सन्तानस्नेहेन, **तस्मिन्नेव**=शाल्मलीतरावेव, **क्रोडान्तर्निहिततनयाः**=क्रोडानाम् उत्सङ्गानाम् अन्तर्निहिता मध्येषु रक्षिताः तनया अपत्यानि यैस्ते तथोक्ताः, **शुकशकुनयः**=कीरपक्षिणः, **क्षपाः**=त्रियामाः, **क्षपयन्ति स्म**=अतिवाहयन्ति स्म ।

टिप्पणी—नीड—घोंसला, **'कुलायो नीडमस्त्रियाम्'** इत्यमरः । **अतिवाह्य**=व्यतीतकर । अति+वह्+णिच्+क्त्वा√ल्यप् । **'मदकल······स्रोतसम्'** भागवत पुराण की कथा है कि एक समय नदी के तट पर मदमत्त होकर विचरण करते हुए बलराम ने यमुना को विहार के लिए बुलाया । यमुना ने बलराम के वचनों की अनसुनी कर दी । तब क्रुद्ध होकर बलराम ने हल के अग्रभाग से यमुना के प्रवाह को ऊपर उछाला और यमुना स्त्री वेष धारण कर बलराम के चरणों पर गिरी । **कलिन्दकन्या**—यमुना, कलिन्द नामक पर्वत

से निकलकर बहने वाली यमुना नदी । पौराणिक मान्यता है कि विवस्वान् सूर्य की पत्नी संज्ञा से यम तथा यमुना का जन्म हुआ था । मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सूर्य ने प्रसन्न होकर यम को पितरों का अधिपति तथा यमुना को कालिन्द पर्वत मे बहने वाली पवित्र नदी बना दिया—'पितॄणामाधिपत्येन च परितुष्टो दिवाकरः । यमुनां यो नदीं चक्रे कलिन्दान्तरवाहिनीम् ॥' 'सुरगज··· ···उपजनयन्तः' यहाँ भ्रान्तिमान् अलङ्कार है। 'दिवस··· उपपादयन्त.' यहाँ 'अनुलिप्तमिव' में क्रियोत्प्रेक्षा अलङ्कार है । 'विडम्बयन्तः' यहाँ भी क्रियोत्प्रेक्षा है। 'शैवल··· प्रसारयन्तः' यहाँ 'अम्बरमेव सरः' में निरङ्गकेवलरूपक तथा प्रसारयन्त इव में क्रियोत्प्रेक्षा। दोनो का अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर। अवली--माला । 'कदलीदलैरिव' यहाँ उपमालङ्कार है । आशा—दिशा । 'आरचयन्त इव' में क्रियोत्प्रेक्षा । 'सेन्द्रायुधमिव' में गुणोत्प्रेक्षा । इन्द्रायुध—इन्द्रधनुष, 'इन्द्रायुधं शक्रधनुः' इत्यमरः । शावक—पक्षी । कलम—एक प्रकार का धान जिसका चावल सुगन्धयुक्त तथा बारीक होता है। शार्दूल—व्याघ्र । क्रोड—गोद । क्षपा—रात्रि । 'कृताहाराश्च·····क्षपयन्ति स्म'—यहाँ वात्सल्य रस है ।

एकस्मिंश्च जीर्णकोटरे जायया सह निवसतः पश्चिमे वयसि वर्त्तमानस्य कथमपि पितुरहमेवैको विधिवशात् सूनुरभवम् । अतिप्रबलया चाभिभूता ममैव जायमानस्य प्रसववेदनया जननी मे लोकान्तरमगमत् । अभिमतजायाविनाशदुःखितोऽपि खलु तातः सुतस्नेहादन्तर्निगृह्य पटुप्रसरमपि शोकमेकाकी मत्सम्वर्द्धनपर एवाभवत् । अतिपरिणतवयाश्च कुशचीरानुकारिणीमल्पावशिष्टजीर्णपिच्छजालजर्जराम् अवस्रस्तांसदेशशिथिलाम् अपगतोत्पतनसंस्काराँ पक्षसन्ततिम् उद्वहन् उपारूढकम्पतया सन्तापकारिणीमंगलग्नां जरामिव विधुन्वन् अकठोरशेफालिकाकुसुमनालपिञ्जरेण कलममञ्जरीदलनमसृणितक्षीणोपान्तलेखेन स्फुटिताग्रकोटिना चञ्चुपुटेन परनीडनिप-

तिताभ्यः शालिवल्लरीभ्यस्तण्डुलकणान् आदायादाय तरुमूलनिपतितानि च शुककुलावदलितानि फलशकलानि समाहृत्य परिभ्रमितुमशक्तो मह्यमदात् प्रतिदिवसमात्मना च मदुपभुक्तशेषम् अकरोदशनम् ।

हिन्दी-अनुवाद—पत्नी के साथ एक पुराने कोटर में निवास करते हुए, उतरती (वार्धक्य) अवस्था में पहुँचे हुए (अपने) पिता का यथाकथञ्चित् (अर्थात् बड़ी मनौतियों के बाद) दैवयोग से–एकमात्र ही मैं पुत्र हुआ। उत्पन्न होते हुए मेरे ही अत्यन्त प्रबल प्रसव कष्ट (प्रसूतिव्यथा) से पीड़ित होकर मेरी माँ परलोक चल बसी। मनोऽनुकूल प्रियतमा की मृत्यु से उत्पन्न (रोदनादिरूप) शोक से दुःखी होते हुए भी तातचरण पुत्र प्रेम के कारण तीव्र विस्तार वाले अर्थात् दारुण दुःख को भी भीतर ही भीतर बाँधकर अकेले मेरे पालन-पोषण में ही तल्लीन हुए।

कुशनिर्मित जीर्ण वस्त्र खण्ड का अनुकरण करने वाले, (वार्धक्यवश) अत्यल्प बचे हुए पुराने पिच्छजाल (पूँछों) के कारण विशीर्ण, गलित (झुके हुए) स्कन्धप्रदेश के कारण ढीले अवयव संयोगों वाले तथा उड़ान भरने में असमर्थ पक्ष समूह को धारण करते हुए, कँपकँपी उत्पन्न हो जाने के कारण मानो अंगों में समायी हुई दुःखदायिनी वृद्धावस्था को दूर फेंकते हुए, सुकोमल हारसिंगारडठल के समान पिङ्गलवर्ण –जंगलीधान की लच्छी खण्डित करने के कारण चिकनाई हुई और घिसी हुई उपान्तलेखा (अग्रभाग) वाले तथा क्षत-विक्षत नोंक वाले चञ्चुपुट द्वारा पराये (पक्षियों के) नीडों से नीचे गिरे हुए धान के लच्छों से चावल के दानों को ले-लेकर तथा (अन्यान्य) शुकसमूहों द्वारा खण्डित किये गये फलों के टुकड़ों को बटोर कर, चलने-फिरने में असमर्थ, अत्यन्त परिपक्व अवस्था वाले (पिता जी) मुझको दिया करते थे और मेरे खाने के बाद बचे हुए भोजन को स्वयं प्रतिदिन ग्रहण करते थे।

संस्कृत-व्याख्या-एकस्मिश्च=अन्यतमे च, **जीर्णकोटरे**=पुरातनस्कन्धविवरे, **जायया सह**=पत्न्या साकं, **निवसतः**=निवासं कुर्वतः, **पश्चिमे**=अन्तिमे, **वयसि**=अवस्थायां, **वर्तमानस्य**=विद्यमानस्य, **कथमपि**=महता क्लेशेन **पितुः**=

जनकस्य, **विधिवशात्** = दैवयोगात्, **अहमेव** = केवलमहं (वैशम्पायनः), **एकः** = एकाकी, **सूनुः** = पुत्रः, **अभवम्** = अजनिषि, **मम** = वैशम्पायनस्य, **जायमानस्यैव** = उत्पद्यमानस्यैव, **अतिप्रबलया** = अत्यन्ततीव्रया, **प्रसववेदनया** = प्रसूतिपीडया, **अभिभूता** = पीडिता, **मे** = मम, **जननी** = माता, **लोकान्तरं** = परलोकम् **अगमत्** = अगच्छत् **अभिमतजायाविनाशदुःखितोऽपि** = अभिमताया अभीष्टायाः जायायाः पत्न्याः विनाशेन लोकान्तरगमनेन दुःखितोऽपि क्लेशितोऽपि, **खलु** = वस्तुतः, **तातः** = पिता, **सुतस्नेहात्** = पुत्रप्रेम्णः, **पटुप्रसरमपि** = स्पष्टवेगमपि, **शोकं** = क्लेशम्, **अन्तः** = हृदि, **निगृह्य** = निरुध्य, **एकाकी** = एककः, **मत्सम्वर्धनपर एव** = मम परिपोषणतत्पर एव, **अभवत्** = आसीत्, **अतिपरिणतवयाश्च** = अतिपरिणतम् अत्यन्तपरिपक्वम् अतिवृद्धमित्याशयः वयोऽवस्था यस्य स तादृशः, **कुशचीरानुकारिणीं** = कुशः दर्भः चीरं जीर्णवसनखण्डं तदनुकरोति या सा तां तादृशीम् **अल्पावशिष्टजीर्णपिच्छजालजर्जरां** = अल्पं स्तोकम् अवशिष्टम् उर्वरितं यत् जीर्णपिच्छजालं पुरातनवर्हसमुदायः तेन जर्जरां विशीर्णाम् । **अवस्रस्तांसदेशशिथिलां** = अवस्रस्ते गलिते अंसदेशे स्कन्धप्रदेशे शिथिलां प्रशिथिलाम्, **अपगतोत्पतनसंस्कारां** = अपगतो दूरीभूत उत्पतने आकाशविचरणे संस्कारः सामर्थ्यविशेषो यस्याः सा तां तथोक्ताम् एतादृशीं, **पक्षसन्ततिं** = पत्रसमुदायम् **उद्वहन्** = धारयन् सन्, **उपारूढकम्पतया** = उपारूढः आविर्भूतः कम्पः देहसञ्चलनं यत्र सा तादृशी तस्या भावस्तया, **सन्तापकारिणीं** = दुःखकारिणीम् **अङ्गलग्नां** = अङ्गे शरीरे लग्नां विद्यमानां, **जरामिव** = वृद्धावस्थामिव, **विधुन्वन्** = कम्पयन्, **अकठोरशेफालिकाकुसुमनालपिञ्जरेण** = अकठोर मृदुलं यच्छेफालिकाकुसुमं निर्गुण्डीपुष्पं तस्य यनं नाल वृन्तं तद्वत् पिञ्जरेण पिङ्गलवर्णेन, **कमलमञ्जरीदलनमसृणितक्षीणोपान्तलेखेन** = कलमस्य धान्यविशेषस्य या मञ्जर्यः शिखाः तासां दलनेन विदारणेन मसृणिता चिक्कणा क्षीणा क्षयं प्राप्ता च उपान्तलेखा प्रान्तसमीपस्थायिनी रेखा यस्य स तेन तादृशेन तथा **चञ्चुपुटेन** = पञ्चाङ्गुलेन, **स्फुटिताग्रकोटिना** = स्फुटिता क्षयं प्राप्ता अग्रकोटिः अग्रिमप्रदेशो यस्य तेन तादृशेन, **परनीडनिपतिताभ्यः** = परेषाम् अन्येषां शकुनीनां नीडानि कुलायाः तेभ्यः निपतिताः स्रस्ताः ताभ्यः, **शालिवल्लरीभ्यः** = शालीनां

धान्यविशेषाणां वल्लर्यः मञ्जर्यः ताभ्यः, **तण्डुलकणान्**=तण्डुलानां शालीनां कणान बीजानि, **आदायादय**=गृहीत्वा गृहीत्वा, **तरुमूलनिपतितानि**=वृक्षमूल-च्युतानि, **शुककुलावदलितानि**=शुकानां कीराणां कुलेन समूहेन अवदलितानि विदारितानि, **फलशकलानि च**=फलानां सस्यानां शकलानि खण्डानि, **समाहृत्य** =एकीकृत्य, **परिभ्रमितुं**=दूरे सञ्चरितुम्, **अशक्तः**=असमर्थः, **मह्यं**=वैशम्पा-यनाय, **अदात्**=ददौ, **प्रतिदिवसं च**=प्रतिदिनं च, **आत्मना**=स्वयं, **मदुपभुक्त-शेषं**=मया उपभुक्तस्य अशितस्य शेषम् अवशिष्टम्, **अशनं**=भोजनम्, **अकरोत्** =कृतवान् ।

टिप्पणी—**जायया सह**—यहाँ 'सहयुक्तेऽप्रधाने' से तृतीया । **पश्चिमे वयसि**—वृद्धावस्था में । '**मम जायमानस्य एव**' यहाँ 'षष्ठी चानादरे' से षष्ठी; मेरे पैदा होते ही । **सूनुः**=पुत्र । **निगृह्य**=रोककर—नि√ग्रह्+क्त्वा√ल्यप् । **पिच्छ**—जालपंखों का समूह । **अवस्रतांशदेश**—ढीले पड़े हुए कन्धे । '**उपारूढ-विधुन्वन्**' यहाँ '**जरामिव**' में उत्प्रेक्षालङ्कार है । **विधुन्वन्**=हिलाकर दूर करते हुए, वि√धु+शतृ । **मसृणित**—चिकनी । **शालि**—साठि के चावल जो कि साठ दिन में पक जाते हैं । सम+आङ्+हृ+क्त्वा—ल्यप्=समाहृत्य । **अशनम्**—अश्+ल्युट्=अशनम् ।

एकदा तु प्रभातसन्ध्यारागलोहिते गगनतलकमलिनीमधुरक्तपक्ष-सम्पुटे वृद्धहंस इव मन्दाकिनीपुलिनादपरजलनिधितटमवतरति चन्द्र-मसि, परिणतरङ्कुरोमपाण्डुनि व्रजति विशालतामाशाचक्रवाले, गजरुधिर रक्तहरिसटालोहिनीभिः प्रतप्तलाक्षिकतन्तुपाटलाभिरायामिनीभिः अशिशिरकिरणदीधितिभिः पद्मरागशालकासम्मार्जनीभिरिव समुत्सार्यमाणे गगनकुट्टिमकुसुमप्रकरे तारागणे, सन्ध्यामुपासितुमुत्तरा-शावलम्बिनि मानसरस्तीरमिवावतरति सप्तर्षिमण्डले, तटगतविघ-टितशुक्तिसम्पुटविप्रकीर्णमरुणकरप्रेरणाधोगलितमुडुगणमिव मुक्ता-फलनिकरमुद्वहति धवलितपुलिनमुदन्वति पूर्वेतरे ।

हिन्दी-अनुवाद—एक बार-जब कि प्रभातकालीन सन्ध्या (रात्रि एवं प्रातः वेला की सन्धि) की लाली से लोहितवर्ण वाले, गगनमण्डलरूपी कमलिनी के (लाल) मधुरस से रँगे हुए पक्षपुटों वाले तथा मन्दाकिनी (गंगा) के तट से द्वितीय जलनिधि (अर्थात् मानसरोवर) के तट पर उतरे हुये वृद्ध कहहंस की भाँति प्रातःकालीन (रात और दिन की) सन्ध्या की लाली से अरुणायमान, कमलिनी सदृश नभोमण्डल के मधुरस (लक्षणया कान्ति) से रञ्जित उभय-पार्श्वों वाला चन्द्रमा आकाशगङ्गा के तट से पश्चिमी सागर तट पर उतर रहा था, जबकि परिणत (परिपक्क) अवस्था वाले रङ्कुमृग की रोमराजि के समान श्वेतपीतदिङ्मण्डल (शनैः-शनैः अन्धकार कटने के कारण) विस्तीर्णता प्राप्त कर रहा था, जबकि (मारे गये) हाथियों के रक्त से अरुणीकृत सिंह के स्कन्धकेसों के समान लोहितवर्ण वाली-दहकी हुई लाख के रेशों की भाँति पाटल (श्वेतरक्त) वर्णवाली, विस्तारयक्त अतएव पद्मराग मणियों की सींकों से निर्मित सम्मार्जनी (झाड़ू) प्रतीत होने वाली, 'अशिशिरकिरण' अर्थात् सूर्य की किरणों से गगनमण्डलरूपी फर्श पर (बिखरे हुए) पुष्पसमूह सरीखे नक्षत्र समूह दूर किये जा रहे थे, जबकि उत्तर दिशा का आश्रय लेने वाले सप्तर्षिगण (नक्षत्रमण्डल विशेष) मानो सन्ध्योपासना (सायन्तन विधि) सम्पन्न करने के लिए मानसरोवर के तट पर अवतीर्ण हो रहे थे, जबकि तटवर्ती प्रदेशों में प्राप्त-चिटकी हुई सीपियों के संपुटों (कटोरों) से छिटके हुए तथा बालुकामय (सागर) तट को शुभ्र बना देने वाले अतएव सूर्य की प्रेरणा से नीचे गिरे हुए तारकसमूह सीरखे प्रतीत होने वाले मुक्ताफलसमूह 'पूर्वेतर' अर्थात् पश्चिमी समुद्र द्वारा धारण किये जा रहे थे।

संस्कृत व्याख्या–एकदा तु=एकस्मिन् काले तु प्रत्यूषे जाते मृगया-कोलाहलध्वनिरुदचरदिति दूरेणान्वयः। **प्रभातसन्ध्यारागलोहिते**=प्रभातस्य प्रत्यूषस्य या सन्ध्या तत्सम्बन्धी यो रागो रक्तिमा तेन लोहिते रक्तवर्णे, **गगन-तलकमलिनीमधुरक्त-पक्षसम्पुटे**=गगनलम् आकाशमण्डलमेव कमलिनी नलिनी तस्या मधुना लोहितवर्णपुष्परसेन रक्तम् अनुरञ्जितं पक्षसम्पटं पतत्र-युगलं यस्य तस्मिन्, **वृद्धहंस इव**=पुरातनकलहंस इव; **चन्द्रमसि**=हिमांशौ,

मन्दाकिनीपुलिनात्=वियद्गङ्गासैकतात्, **अपरजलनिधितटं**=अपर: पश्चिमो यो जलनिधि: समुद्र: तस्य तट तीरम्, **अवतरति** = उत्तीर्णे सति, **परिणतरङ्कुरोमपाण्डनि**=परिणतस्य पुरातनस्य रङ्को: मृगविशेषस्य रोमाणि लोमानि तद्वत् पाण्डुनि पीतशुभ्रे, **आशाचक्रवाले**=आशानां दिशां चक्रवाल मण्डलं तस्मिन्, **विशालतां**=विस्तृतत्वं, **व्रजति**=प्राप्नुवति सति, **गजरुधिररक्तहरिसटालोहिनीभि:**=गजानां हस्तिनां यद्रुधिरं शोणितं तेन रक्ता: लोहिता: या: हरिसटा: तद्वत् लोहिनीभि: रक्तवर्णाभि:, **प्रतप्तलाक्षिकतन्तुपाटलाभि:**=प्रतप्ता: उष्णीकृता: ये लाक्षिका: जतुसम्बन्धिन: तन्तव: सूत्राणि तद्वत् पाटलाभि:, **आयामिनीभि:**=विस्तारवर्ताभि:, **अशिशिरकिरण-दीधितिभि:**=अशिशिरा: उष्णा: किरणा: रश्मय: यस्य तस्य सूर्यस्य दीधितिभि: कान्तिभि: रश्मिभिर्वा, **पद्मरागशलाकासम्मार्जनीभिरिव**=पद्मरागा: लोहितकमणय: तेषां या: शलाका: इषीका: ताभि: संमार्जनीभिरिव शोधनीभिरिव, **गगनकुट्टिमकुसुमप्रकरे**=गगनम् आकाशमेव कुट्टिम् बद्धभूमि: तस्य कुसुमप्रकर: पुष्पसमुदाय: तस्मिन्, **तारागणे**=नक्षत्रमण्डले, **समुत्सार्यमाणे**=दूरीक्रियमाणे सति, **उत्तराशावलम्बिनि**=उत्तराशा उदीची दिक् तदवलम्बिनि तदवस्थिते, **सप्तर्षिमण्डले**=मरीच्यादि-सप्तदेवर्षिसमूहे, **सन्ध्यां**=प्रात: सन्ध्याम्, **उपासितुं**=विधातुमिव, **मानससरस्तीरं**=मानसरोवरतटम्, **अवतरति**=अवरोहति सति, **पूर्वेतरे**=पूर्वात् पूर्वसमुद्रात् इतर: अन्य: पश्चिम: तस्मिन्, **उदन्वति**=समुद्रे, **तटगतविघटितशुक्तिसम्पुटविप्रकीर्णं**=तटगतानि तीरस्थितानि विघटितानि स्फुटितानि यानि शुक्तिसम्पुटानि समुद्रमण्डूकपुटानि तेभ्य: विप्रकीर्ण विपर्यस्त, **धवलितपुलिनं**=धवलितं श्वेतीकृतं पुलिनं सैकतं येन तं तथोक्तम्, **अरुणकरप्रेरणाधोगलितं**=अरुणस्य सूर्यस्य करा: किरणा: तेषां प्रेरणया नोदनया अधोगलित भूमिपतितम्, **उडुगणमिव**=नक्षत्रमण्डलमिव, **मुक्ताफलनिकरं**=मौक्तिकसमूहम्, **उद्वहति**=धारणं कुर्वति सति ।

टिप्पणी-प्रभातसन्ध्या—प्रात:कालीन सन्धिवेला । सन्ध्यायें तीन हैं—प्रात:सन्ध्या, मध्याह्नसन्ध्या तथा सायंसन्ध्या । 'वृद्धहंस इव' यहाँ उपमालङ्कार

है । **पुलिन**—किसी नदी आदि का वह बालुकामय प्रदेश जहाँ शीघ्र ही में जल उतरने से अभी गीलापन विद्यमान हो। **परिणतरङ्कु**-वृद्ध रङ्कु मृग जिसकी पीठ पर सफेद चित्तियाँ होती हैं । **पाण्डु**–पीला तथा सफेद, 'पाण्डुस्तु पीतभागार्धः केतकीधूलिसन्निभः' इति शब्दार्णवः । **आशाचक्रवाल**–दिशाओं का मण्डल, 'दिशस्तु ककुभः काष्ठा आशाश्च हरितश्च ताः' 'चक्रवालं तु मण्डलम्' इति चामरः । **'परिणत······चक्रवाले'** में 'लुप्तोपमालङ्कार है। **गजरुधिर······लोहिनीभिः'**–यहाँ 'रुधिररक्त' में पुनरुक्त-वदाभास अलङ्कार है । **'हरितसटावत्**– में लुप्तोपमालकार । इन दोनों का अङ्गाङ्गिभाव सङ्कर । **लाक्षिकतन्तुपाटला**–यहाँ लुप्तोपमा है। **आयामिनी**—विस्तृत, लम्बी । **सम्मार्जनी**—गृहशोधिनी, झाड़ू । 'सम्मार्जनी शोधिनी स्यात्' इत्यमरः। **'सम्मार्जनीभिरिव'**—में जात्युत्प्रेक्षा है। **'गगन तारागणे'** यहाँ परम्परितरूपकालंकार है। **सप्तर्षिमण्डल**—मरीचि आदि सात नक्षत्र सप्तर्षिमण्डल के नाम से अभिहित है। कहा भी गया है—'मरीचिरङ्गिरां अत्रि पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः । वसिष्ठश्चेति सप्तैते ज्ञेयाश्चित्रशिखण्डिनः' ।। **उदन्वति**—सागर में, उदक=मतुप् उदक को उदनादेश । **'उडुगणमिव'**—में जात्युत्प्रेक्षालंकार है ।

तुषारबिन्दुवर्षिणि विबुद्धशिखिकुले विजृम्भमाणकेसरिणि करिणीकदम्बकप्रबोध्यमानसमदकरिणि क्षपाजलजडकेसरकुसुमनिकरमुदयगिरिशिखरस्थितं सवितारमिवोद्दिश्य पल्लवाञ्जलिभिः समुत्सृजति कानने, रासभरोमधूसरासु वनदेवताप्रासादानां तरूणां शिखरेषु पारावतमालायमानासु धर्मपताकास्विव समुन्मिषन्तीषु तपोवनाग्निहोत्रधूमलेखासु, अवश्यायशीकरिणि लुलितकमलवने रतिखिन्नशबरसीमन्तिनीस्वेदजलकणापहारिणि वनमहिषरोमन्थफेनबिन्दुवाहिनि चलितपल्लवलतालास्योपदेशव्यसनिनि विघटमानकमलषण्डमधुशीकरासारवर्षिणि कुसुमामोदतर्पितालिजाले निशावसानजातजडिम्नि

मन्दमन्दसञ्चारिणि प्रवाति प्राभातिके मातरिश्वनि ।

हिन्दी-अनुवाद—जबकि ओसकणों की वर्षा से युक्त–जगे हुये मयूरों वाले जँभाई लेते हुए सिंहों से संकुल हथिनियों के दल द्वारा जगाये जाते हुए मदोत्कट गजों वाले कानन द्वारा मानों उदयाचलचूडचुम्बी (भगवान्) सूर्य को लक्ष्य बनाकर पल्लवरूपी (प्रणाम) अञ्जलियों से तुषारपात के कारण स्तम्भित (जमे हुए) परागवाला पुष्पसमूह समर्पित किया जा रहा था, जबकि गर्दभ-लोम की भाँति धूम्रवर्ण (धौरेरंग) वाली वनदेवियों के प्रासाद (राजभवन) स्वरूप वृक्षों के शिखरों पर कपोतमाला के समान आचरण करने वाली तथा (फहराती हुई) धर्मध्वजाओं के समान तपोवन में होने वाले अग्निहोत्रों की धूमावलियाँ ऊपर उठ रही थीं, जबकि बर्फीली जलकणिकाओं वाला कमलवन को प्रकम्पित कर देने वाला–रतिक्रीडा से थकी हुई भीलवधुओं की (आभास-जनित) स्वेदजलबिन्दुओं का अपहरण करने वाला–जंगली भैंसों के रोमन्थन (चर्वितचर्वण अथवा पागुर) से उत्पन्न फेन की बिन्दुओं को वहन करने वाला–चञ्चल किसलयों वाली लताओं के नृत्य-शिक्षण (दान) रूपी व्यसनवाला–प्रस्फुटित होते हुए कमकवनों के मधुरस–फुहारों की वेगमयी वर्षा करनेवाला–पुष्पों की सुरभि से मधुकर गणों को सन्तप्त कर देनेवाला तथा रात्रि की समाप्ति से उत्पन्न (अर्थात् प्रातःकालीन) जड़तावाला अतएव शनैः-शनैः सञ्चरण करने वाला प्रत्यूषकालीन पवन प्रवर्तित हो रहा था।

संस्कृत-व्याख्या–तुषारबिन्दुवर्षिणि=तुषारस्य तुहिनस्य बिन्दवः कणाः तान् वर्षति पातयतीति तस्मिन् तथोक्ते, **विबुद्धशिखिकुले**=विबुद्धानि जापरि-तानि शिखिकुलानि मयूरकुटुम्बानि मयूरगणाः व यत्र तस्मिन् तथोक्ते, **विजृम्भ-माणकेसरिणि**=विजृम्भमाणाः जृम्भाविधायिनः केसरिणः सिंहाः यत्र तस्मिन् तादृशे, **करिणीकदम्बकप्रबोध्यमानसमदकरिणि**=करिणानां हस्तिनीनां कदम्बकं समूहः तेन प्रबोध्यमानाः जागरणं कुर्वाणाः समदाः दानजलस्यन्दिनः करिणो गजाः यस्मिन् तस्मिन् तादृशे, **कानने**=वने, **क्षपाजलजडकेशरं**=क्षपायाः रात्रेः जलेन सलिलेन जडाः स्तिमिताः केशराः किञ्जल्काः यस्य तं तथोक्तं, **कुसुम-**

निकरं=पुष्पसमूहम्, **उदयगिरिशिखरस्थितं**=उदयगिरिःउदयाचलः तस्य शिखरे शृंगे स्थितं विद्यमानं, **सवितारं**=सूर्यम्, **उद्दिश्येव** =उद्देश्यं कृत्वेव, **पल्लवाञ्जलिभिः**=पल्लवानि किसलयानि एव अञ्जलयः तैः, **समुत्सृजति**=समर्पयति सति, **रासभरोमधूसरासु**=रासभस्य गर्दभस्य रोमाणि लोमानि तद्वत् धूसराम् धूम्ररूपासु, **वनदेवताप्रासादानां**=वनदेवतानाम्, अरण्याधिष्ठात्रीणां प्रासादाः भवनानि तेषां भवनरूपणां तरूणां-वृक्षाणां, **शिखरेषु**=शृङ्गेषु, **पारावतमालायमानासु**=परावतानां कपोतानां माला पङ्क्तिः तद्वत् आचरन्तीषु तथोक्तासु, **तपोवनाग्निहोत्रधूमलेखासु**=तपोवनेषु मुन्याश्रमेषु यानि अग्निहोत्राणि अग्निहोत्रहोमाः तेषां धूमलेखासु धूमपंक्तिषु, **धर्मपताकास्विव**=धर्मोद्घोषणाय वैजयन्तीष्विव, **समुन्मिषन्तीषु** =समुत्सर्पन्तीषु, **अवश्यायशीकरिणि**=अवश्यायः तुषारः तस्य शीकराः अम्बुकणाः ते अस्य सन्तीति तस्मिन् तथोक्ते, **लुलितकमलवने** =लुलितम् आन्दोलितं कमलवनं पद्मवनं येन तस्मिन् यथोक्ते, **रतिखिन्नशबरसीमन्तिनीस्वेदजलकणापहारिणि**=रतिखिन्नानां निधुवनश्रान्तानां शबरसीमन्तिनीनां किरातवधूनां यत् स्वेदजलं धर्मवारि तस्य कणाः बिन्दवः तेषाम् अपहारिणि नाशविधायिनि तस्मिन् तादृशे, **वनमहिषरोमन्थफेनबिन्दुवाहिनि**= वनमहिषाणां काननसैरिभणां रोमन्थः चर्वितचर्वणं तत्र ये फेनबिन्दवः फेनकणाः तान् वहति धारयतीति तस्मिन् तथोक्ते, **चलितपल्लवलतालास्योपदेशव्यसनिनि** =चलितानाम् आन्दोलितानां पल्लवानां किसलयानां लतानां वल्लीनाञ्च यत् लास्यं चाञ्चल्यरूपं नृत्यं तस्य उपदेशे शिक्षणे व्यसनम्, तत्र आसक्तिरस्यास्तीति तस्मिन् तथोक्ते, **विघटमानकमलषण्डमधुशीकरासारवर्षिणी**=विघटमानानि विकाशं प्राप्यमाणानि यानि कमलषण्डानि पद्मवनानि पेषां मधु पुष्परसः तस्य शीकराणां बिन्दूनाम् आसारं धारासम्पातं वर्षति क्षिपति इति तस्मिन् तथोक्ते, **कुसुमामोदतर्पितालिजाले**=कुसुमानां पुष्पाणाम् आमोदः सौरभः तेन तर्पितं प्राणितम् अलिजालं भ्रमरसमूहः येन तस्मिन् तथोक्ते, **निशावसानजातजडिम्नि** =निशावसाने रात्रिशेषे जातः उत्पन्नः जडिमा जाड्यं यस्य तस्मिन् तथोक्ते, **मन्दमन्दसञ्चारिणि**=शनैः-शनैः प्रवहति, **प्राभातिके** = प्रातःकालिके, **मातरिश्वनि**=वायौ, **प्रवाति**=प्रवहति सति ।

टिप्पणी—तुषार—तुहिन, 'तुषारस्तुहिनं हिमम्' इत्यमरः । 'सवितारमिवोद्दिश्य' में क्रियोत्प्रेक्षालकार है । 'पल्लवाञ्जलयः' में निरङ्गकेवलरूपक है । इनके अतिरिक्त समासोक्ति भी है । इनका परस्पर अङ्गाङ्गिभाव संकर है । पारावत-कबूतर । 'रासभ............धूमलेखासु' यहाँ रासभरोमधूसरासु में लुप्तोपमा, पारावतमालायमानासु में वयङ्गतोपमा तथा धर्मपताकासु में जाति स्वरूपोत्प्रेक्षा । इनका परस्पर अङ्गाङ्गिभाव संकर । अवश्याय—तुषार 'अवश्यायस्तु नोहारस्तुषारस्तुहिनं हिमम्' इत्यमरः । आसार—धाराऱूप में वर्षा 'धारासम्पात आसारः' इत्यमरः । मातरिश्वा—वायु 'मातरिश्वा सदागतिः' इत्यमरः ।

...कमलवनप्रबोधमङ्गलपाठकानामिभगण्डडिण्डिमानां मधुलिहां कुमुदोदरेषु घनघटमानदलपुटनिरुद्धपक्षसंहतीनामुच्चरत्सु हुङ्कारेषु, प्रभातशिशिरवाय्वाहृतमुत्तप्तजतुरसाश्लिष्टपक्ष्ममालमिव सशेषनिद्राजिह्मतारं चक्षुरुन्मीलयत्सु शनैः शनैरूषरशय्याधूसरक्रोडरोमराजिषु वनमृगेषु, इतस्ततः संचरत्सु वनचरेषु, विजृम्भमाणे श्रोत्रहारिणि पम्पासरः कलहंसकोलाहले समुल्लसति नर्तितशिखण्डिमण्डले मनोहरे वनगजकर्णतालशब्दे, क्रमेण च गगनतलमवतरतो दिवसकरवारणस्यावचूडचामरकलाप इवोपलक्ष्यमाणं मञ्जिष्ठारागलोहिते किरणजाले, शनैः शनैरुदिते भगवति सवितरि, पम्पासरः पर्यन्ततरुशिखरसंचारिण्याध्यासितगिरिशिखरे दिवसकरजन्मनि हततारे पुनरिव कपीश्वरे वनमभिपतति बालातपे, स्पष्टे जाते प्रत्युषसि, नचिरादिव दिवसाष्टमभागभाजि स्पष्टभासि भास्वतिभूते, प्रयातेषु यथाभिमतानि दिगन्तराणि शुककुलेषु, कुलायनिलीननिभृतशुकशावकसनाथेऽपि निःशब्दतया शून्य इव तस्मिन् वनस्पतौ, स्वनीडावस्थित एव ताते, मयि च शैशवादसंजातबलसमुद्भिद्यमानपक्षपुटे पितुः समीपवर्तिनि कोटरगते... ।

हिन्दी-अनुवाद—जबकि कमलकाननों को जगाने के लिए मंगलपाठ (स्वस्त्ययन) करने वाले हाथियों के गण्डस्थल रूपी डिण्डिम (नगाडों) वाले तथा कुमुदपुष्पों के भीतर सघनरूप से अर्थात् कसकर बन्द हुए दलपटों

(पत्रसमूहों) में अवरुद्ध पक्षसमूहों वाले भ्रमरों की हुंकारें (भनभनाहटें) प्रकट हो रही थीं, जबकि ऊसर (तृणरहित) भूमि पर शयन करने के कारण धूम्रवर्णी वक्षःस्थल की रोमावलियों वाले वनमृग प्रातःकालीन शीतल पवन से पीड़ित-दहकी हुयी लाख के रस से चिकपी हुई नेत्र की रोमपंक्तियों (बरौनियों) वाली प्रतीत होती हुई तथा उखड़ी हुई नींद के कारण ऊपर चढ़ी हुई पुतलियों वाली आँख को धीरे-धीरे खोल रहे थे, जबकि अरण्यचारी (जीव-जन्तु) इधर-उधर सञ्चरण कर रहे थे, जबकि श्रवणसुखद पम्पासरोवर में रहने वाले कलहंसमण्डल का कोलाहल फैल रहा था, जबकि मयूरपक्षियों के समूह को नर्तनप्रवृत्त बनाने वाली मनोहर—जंगली हाथियों के कानों का 'करतल ध्वनि' जैसा शब्द उठ रहा था, जबकि क्रमशः आकाश-मण्डल में (ऊपर) चढ़ते हुए सूर्य रूपी गजराज के मंजीठी के रंग की तरह लाल अधोमुख कूर्चको (चूड़ा) वाले चामर-समूह की भाँति मंजीठी के रंग की तरह लाल रंगवाली किरणों का जाल दृष्टिगोचर हो रहा था, जबकि भगवान् सूर्य धीरे-धीरे उदित हो चले थे, जबकि पम्पासरोवर की चौहद्दियों पर विद्यमान वृक्षों के शिखरों पर सञ्चरण करने वाले (ऋष्यमूक) गिरि-शिखर का आश्रय लेने वाले (बड़े भाई बालि की पत्नी) तारा का अपहरण करने वाले तथा बालि से हारकर) पुनः बन की ओर पलायन करने वाले सूर्यजन्मा वानरराज सुग्रीव का भाँति पम्पासरोवर की चौहद्दियों पर विद्यमान वृक्षों के शिखरों पर सञ्चरण करने वाला, (उदय) गिरि-शिखर का आश्रय लेने वाला, सूर्य से उत्पन्न होने वाला, तारक मण्डल अपहरण (विनाश) करने वाला, अभिनव आलोक (प्रकाश) पुनः वन को व्याप्त कर रहा था, जबकि प्रत्यूष (प्रभातवेला) स्पष्ट हो चुका था, जबकि थोड़ी देर में दिन के आठवें भाग अर्थात् आधे पहर का भागी बनकर सूर्य स्पष्ट प्रकाश वाला हो चुका था, जबकि शुक (पक्षियों के) समूह मनचाहे दिग्विभागों में (भोजनार्थ) प्रस्थान कर चुके थे, जबकि घोसलों में छिपे बैठे—चुप्पी साधे हुए शुकशावकों से संकुल होने पर भी वह सेमर का पेड़ (अकेला होने के कारण बच्चों की) निरशब्दता के कारण सुनसान प्रतीत हो रहा था, जबकि पिताजी अपने नीड में ही विद्यमान थे, जबकि उगते हुए पक्ष समूहवाला (किन्तु) बाल्यावस्था के कारण असमर्थ मैं पिता जी के ही निकटवर्ती कोटर में चला गया था ।

संस्कृत-व्याख्या—**कमलवनप्रबोधमङ्गलपाठकानाम्**=कमलानां नलिनानां वनं विपिनं तस्य प्रबोधे जागरणे विकसने वा मङ्गलपाठकाः प्रशस्तिवाचकाः तेषाम्, **इभगण्डडिण्डिमानाम्**=इभानां हस्तिनां गण्डः यः कपोलभागः सः एव डिण्डिमः पटहः येषां तेषाम्, **कुमुदोदरेषु**=कुमुदानां कैरवाणाम् उदरेषु मध्येषु, **विघटमानदलपुटनिरुद्धपक्षसंहतीनाम्**=विघटमानानि संकुचन्ति यानि दलपुटानि पत्रसंपुटानि तेषु निरुद्धा अवरुद्धा पक्षसंहतिः छदसमूहः येषां तेषाम्, **मधुलिहाम्**=मधु पुष्परसं लिहन्ति स्वदन्ते इति मधुलिहः मधुकराः तेषाम्, **हुंकारेषु**=क्रोधवशात् हुंकृतिषु, **उच्चरत्सु**=उत्सर्पत्सु सत्सु, **ऊषरशय्याधूसरक्रोडरोमराजिषु**=ऊषरा अतृणा या शय्या शयनस्थलो तस्य धूसरा धूम्रवर्णा क्रोडस्य उदरस्य रोम्णां लोम्नां राजिः पङ्क्तिः येषां तेषु, **वनमृगेषु**=वनानां विपिनानां मृगेषु हरिणेषु, **शनैः शनैः**=मन्दं मन्दम्, **प्रभातशिशिरवाय्वाहतम्**=प्रभातस्य प्रातः कालस्य यः शिशिरः शीतलः वायुः पवनः तेन आहतम् पीडितम्, **उत्तप्तजतुरसाश्लिष्टपक्ष्ममालम् इव**=उत्तप्तस्य उष्णीकृतस्य जतुनः लाक्षायाः रसः द्रवः तेन आश्लिष्टा लिप्ता पक्ष्मणां नेत्ररोम्णां माला पंक्तिः यस्य तद् इव, **सशेषनिद्राजिह्मतारम्**=सशेषा अवशिष्टा या निद्रा स्वापः तया जिह्मा वक्रा तारा कनीनिका यस्य तत्, **चक्षुः**=नेत्रम्, **उन्मीलयत्सु**=उद्‌घाटयत्सु सत्सु, **वनचरेषु**=वनेषु विपिनेषु चरन्ति विहरन्तीति तेषु वनजीवेषु, **इतस्ततः**=चतुर्दिक्षु, **संचरत्सु**=विहरत्सु, **श्रोत्रहारिणि**=श्रोत्रं कर्णं हरति आकर्षतीति तच्छीलं तस्मिन् आकर्षके, **पम्पासरःकलहंसकोलाहले**=पम्पासरसः पम्पाभिधानस्य सरोवरस्य ये कलहंसाः कादम्बाः तेषां कोलाहलः कलकलः तस्मिन्, **विजृम्भमाणे**=विवर्धमाने सति, **नर्तितशिखण्डिमण्डले**=नर्तितं नृत्यं प्रापितं (उल्लासितम्) शिखण्डिनां मयूराणां मण्डलं समूहः येन तस्मिन् । **मनोहरे**=चित्ताकर्षके, **वनगजकर्णतालशब्दे**=वनगजानां जङ्गलहस्तिनां कर्णतालस्य कर्णः ताल इव तस्य अथवा कर्णयोः तालः ध्वनिविशेषः गीतवाद्यपादन्यासानां कालक्रिययोः नियमहेतुः यस्य शब्दः निनादः तस्मिन्, **समुल्लसति**=प्रसरति सति, **क्रमेण च**=क्रमशः च, **गगनतलम्**=आकाशतलम्, **अवतरतः**=अवरोहतः, **दिवसकरवारणस्य**=दिवसकरः सूर्यः स एव वारणः हस्ती तस्य, **अवचूडचामरकलापे इव**=अवगता अधोगता चूडा शिखा यस्य तादृशः चामरकलापः

चमरीरोमगुच्छकं तस्मिन् इव, उपलक्ष्यमाणे = विलोक्यमाने, **किरणजाले** = किरणानां रश्मीनां जालं समूहः तस्मिन्, **मञ्जिष्ठारागलोहिते** = मञ्जिष्ठा ओषधिविशेषः तस्या रागः रक्तिमा तेन लोहिते तद्वद् वा लोहिते रक्तवर्णे जाते सति, **भगवति** = ऐश्वर्यशालिनि, **सवितरि** = भास्करे, **शनैः-शनैः** = मन्दं मन्दम्, **उदिते** = उदयं प्राप्ते सति, **पम्पासरःपर्यन्ततरुशिखरसंचारिणि** = पम्पासरसः तन्नाम्नो जलाशयस्य पर्यन्ततरवः प्रान्तवृक्षाः तेषां शिखरेषु शृङ्गेषु संचरतीति तच्छीलः तस्मिन्, **अध्यासितगिरिशिखरे** = अध्यासितं पूर्वम् आश्रितं गिरेः उदयाचलस्य किष्किन्धस्य च शिखरं शृङ्गं येन तस्मिन्, **दिवसकरजन्मनि** = दिवसकरः भास्करः तस्मात् उत्पत्तिः यस्य तस्मिन्, **हृततारे** = हृताः अस्तंगमिताः ताराः नक्षत्राणि येन तस्मिन्, सुग्रीवपक्षे हृताः गृहीता तारा बालिपत्नी येन तस्मिन्, **बालातपे** = बालः प्रभातकालिक आतपः सूर्यप्रकाशः तस्मिन्, **कपीश्वरे इव** = कपीनां वानराणाम् ईश्वरः स्वामी सुग्रीवः तस्मिन् इव, **पुनः** = भूयः, **गगन** = काननम्, **अभिपतति** = अभिगच्छति सति, **प्रत्यूषसि** = प्रातःकाले, स्पष्टे जाते = व्यक्ते भूते, **नचिरादिव** = क्षणानन्तरमिव, **भास्वति** = सूर्ये, **दिवसाष्टमभागभाजि** = दिवसस्य अहोरात्रस्य अष्टमः प्रहरात्मकः भागः अंशः तं भजति आश्रयति इति तस्मिन्, **भूते** = जाते सति, **शुककुलेषु** = कीरवृन्देषु, **यथाभिमतानि** = यथेप्सितानि, **दिगन्तराणि** = दिशाम् आशानाम् अन्तराणि मध्यानि दिग्विभागान् इत्याशयः, **प्रयातेषु** = प्रस्थितेषु, **तस्मिन्** = पूर्वोक्ते, **वनस्पतौ** = शाल्मलीवृक्षे, **कुलायनिलीननिभृतशुकशावकसनाथेऽपि** = कुलायेषु नीडेषु निलीनाः निविष्टाः निभृताः शान्ताः शुकशावकाः कीरशिशवः तैः सनाथेऽपि अलङ्कृतेऽपि, **निःशब्दतया** = निर्गतः शब्दः कोलाहलः यस्मात् स निःशब्दः तस्य भावः तत्ता: तया नीरवतया, **शून्ये इव** = प्राणिरहिते इव, **ताते** = मम जनके, **स्वनीडावस्थिते एव** = स्वस्य आत्मनः नीडे कुलाये एव अवस्थिते विनिष्टे सति, **शैशवात्** = बाल्यात्, **असंजातबलसमुद्भिद्यमानपुटे** = असंजातम् अनुत्पन्नं बलम् उत्पतनशक्तिः यस्य तादृशं समुद्भिद्यमानं प्रस्फुटत् पक्षपुटं पतत्रयुगलं यस्य तस्मिन्, **मयि** = वैशम्पायने च, **पितुः** = जनकस्य, **समीपवर्तिनि** = समीपं वर्तते इति तच्छीलः तस्मिन् निकटवर्तिनि, **कोटरगते** = वृक्षस्कन्धविवरस्थिते ।

टिप्पणी—इभगण्डडिण्डिमानाम्=हाथियों के गण्डस्थल को नगाड़ा समझकर उन पर चोंच लगाने वाले नक्कारचियों की भाँति गुंजार करने वाले। विघटमान—संकुचित होते हुए; वि+घट्+शानच्। सशेषनिद्रा-जिह्मतारम्—निद्रा न पूरी होने के कारण तिरछी पुतलियों वाला नेत्र, नींद पूरी न होने पर अलसाई हुई आँखें बाँकी पुतलियों से देखा करती हैं। विजृम्भमाणे—शनैः-शनैः उभरने लगा, जागने लगा। दिवसकरजन्मनि—दिनकर से जन्म लेने वाले आतप तथा सुग्रीव, रामायण के अनुसार सुग्रीव सूर्य का पुत्र था। योगध्यान में मग्न सुमेरुपर्वत पर स्थित भगवान् ब्रह्मा के नेत्रों से एक बार अकस्मात् अश्रुपात हुआ उससे एक सुन्दर वानरी उत्पन्न हुयी। उसी के द्वारा सूर्यदेव का औरस पुत्र सुग्रीव तथा इन्द्रदेव का औरस पुत्र बाली हुआ। प्रत्युषसि—उषाकाल, दिन का आरम्भकाल (प्रत्यूषोऽहर्मुखं कल्यमुषः प्रत्युषसी अपि, अमरकोष) सूर्योदय से पूर्व की छः घड़ियों का नामकरण इस प्रकार है—'पञ्चपञ्च' उषः कालः षट्पञ्चारुणोदयः। सप्तपञ्च प्रभातः स्यात् शेषे सूर्योदयः स्मृतः' ॥ दिवसाष्टमभाग—दिन का आठवाँ भाग जिसे प्रहर कहते है। इसमें तीन घण्टे या ७॥ घड़ी होती है। यहाँ पहले ६० घड़ी के अहोरात्र के अन्तिम भाग को आठवाँ भाग कहा गया है। इसी में सूर्योदय की ३ घड़ियाँ भी आ जाती हैं। असंजात········पक्षपुटे—मेरे (वैशम्पायन) के पंख अभी फूट रहे थे, उनमें उड़ने की शक्ति नहीं आ पाई थी। समुद्भिद्यमान—सम+उद्+शानच्। 'इभगण्डडिण्डिम' यहाँ निरङ्गकेवलरूपकालङ्कार। तालशब्दे में उपमालङ्कार तथा 'शून्य इव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है।

सहसैव तस्मिन् महावने संत्रासितसकलवनेचरः सरभससमुत्पतत्पतत्रिपक्षपुटशब्दसंततः भीतकरिपोतचीत्कारपीवरः प्रचलितमत्तालिकुलक्वणितमांसलः परिभ्रमदुद्घोणवनवराहरवघर्घरो गिरिगुहासुप्तप्रबुद्धसिंहनिनादोपबृंहितः, कम्पयन्निव तरून् भगीरथावतार्यमाणगङ्गाप्रवाहकलकलबहलो भीतवनदेवताकर्णितो मृगयाकोलाहलध्वनिरुदचरत्। आकर्ण्य च तमहमश्रुतपूर्वमुपजातवेपथुरर्भकतया जर्जरितकर्णविवरो भयविह्वलः समीपवर्तिनः पितुः प्रतीकारबुद्ध्या जराशिथिलपक्षपुटान्तरमविशम्।

हिन्दी-अनुवाद–(कि तभी) अचानक ही उस महावन में–समस्त वनचरों को भयभीत कर देने वाली, वेगपूर्वक उड़ते हुये पक्षियों के पक्ष-समूह से विस्तीर्ण (फैलायी गई), डरे हुए गजशावकों की चीत्कार से परिपुष्ट, (भयवश) उड़े हुए मदमत्त भ्रमर समुदाय की 'भनभनाहट' से भरी पूरी, इधर-उधर सञ्चारण करते हुए ऊँचे थूथनों (नासिकाओं) वाले वनैले सूकरों की 'घरघराहट' से कठोर, पर्वत की गुफा में सोये (तथा बाद में) उठे वनकेसरी की दहाड़ से बढ़ी हुई, वृक्षों को कँपाती हु -सी, (महाराज) भगीरथ द्वारा (भूलोक पर) उतारी जाती हुई भगवती गङ्गा के धाराकोलाहल की भाँति प्रचुर (कोलाहल वाली) तथा डरी हुई वनदेवियों द्वारा सुनी गई—मृगया कोलाहल की ध्वनि फूट पड़ी।

पहले कभी न सुनी गई उस (भयावह) ध्वनि को सुनकर, उत्पन्न हुई कँपकँपी वाला, बच्चा होने के कारण (उस प्रकार का कोलाहल सुनकर ही) बधिरीभूत कर्णकुहरों वाला भयविह्वल मैं प्रतिकार बुद्धि अर्थात् भय से छुटकारा पाने के विचार से समीपवर्ती पिता जी की वृद्धावस्था के कारण ढीले-ढाले पंखों के भीतर घुस गया।

संस्कृत-व्याख्या–**तस्मिन्** = पूर्वोक्ते, **महावने** = महारण्ये, **सहसा एव** = अकस्मात् एव, **संत्रासितसकलवनेचरः** = संत्रासिताः भयं प्रापिता सकलाः संपूर्णाः वनेचराः काननचारिणो जीवाः येन सः, **सरभससमुत्पतत्पतत्रिपक्षपुटशब्दसंततः** = रभसेन सह सरभसं संवेगं समुत्पतन्तः उड्डीयमानाः पतत्रिणः खगाः तेषां पक्षपुटानि पतत्रसंपुटानि तेषां शब्दः ध्वनिः तेन, **संततः** = अधिकं विस्तृतः, **भीतकरिपोतचीत्कारपीवरः** = भीताः त्रस्ताः ये करिपोतः गजशावकाः तेषां चीत्कारेण व्यथाशब्देन पीवरः संपुष्टः, **प्रचलितलताकुलमत्तालिकुलक्वणितमांसल** = प्रचलिताः आन्दोलिताः लताः वल्लर्यः तासु अकुलाः उद्विग्नाः मत्ताः क्षीबाः अलयः मधुपाः तेषां कुलं समूहः तस्य क्वणितेन गुञ्जितेन मांसलः पुष्टः, **परिभ्रमदुद्घोणवनवराहरवघर्घरः** = परिभ्रमन्तः परिभ्रमणं कुर्वन्तः उद्घोणाः उद्गता घोणाः येषां ते उच्चनासिकाः वनवराहाः विपिनसूकराः तेषां रवेण शब्देन घर्घरः कठोरः, **गिरिगुहासुप्तप्रबुद्धसिंहनिनादोपबृंहितः** = गिरीणां पर्वतानां गुहाः कन्दराः तासु सुप्ताः शयिताः पश्चाच्च प्रबुद्धाः जागरिताः सिंहा मृगेन्द्राः तेषां

निनादेन ध्वनिना उपबृंहितः वृद्धि प्राप्तः, तरून्=पादपान् कम्पयन् इव=आन्दोलयन् इव, भगीरथावतार्यमाणगङ्गाप्रवाहकलकलबहुलः=भगीरथेन सगरवंशजेन राज्ञा अवतार्यमाणा अवरोह्यमाणा या गङ्गा जाह्नवी तस्याः प्रवाहः स्रोतः तस्य कलकलः प्रवाहध्वनिः तद्वत् बहलः बहुलीभूतः अनेकध्वनिमिश्रणादिति भावः, भीतवनदेवताकर्णितः=भीताः त्रस्ता वनदेवताः अरण्याधिष्ठात्रीदेव्यः ताभिः आकर्णितः श्रुतः, मृगयाकोलाहलध्वनिः=मृगया आखेटः तस्याः कोलाहलः कल्लोलः तस्य ध्वनिः स एव वा ध्वनिः शब्दः, उदचरत्=उदतिष्ठत्, अहं च तम्=पूर्वोक्तम्, अश्रुतपूर्वम्=पूर्वं श्रुतं श्रुतपूर्वम् न श्रुतपूर्वम् अश्रुतपूर्वम् नवीनं शब्दम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, उपजातवेपथुः=उपजातः उत्पन्नः वेपथुः कम्पनं यस्य सः, अर्भकतया=शिशुत्वेन, जर्जरितकर्णविवरः=जर्जरिते विदीर्णे कर्णयोः श्रोत्रयोः विवरे छिद्रे यस्य सः, भयविह्वलः=भयेन भीत्या विह्वलः व्याकुलः, प्रतीकारबुद्ध्या=प्रतीकारः रक्षणोपायः तस्य बुद्ध्या विचारेण, समीपवर्तिनः=निकटस्थितस्य, पितुः=तातस्य, जराशिथिलपक्षपुटान्तरम्=जरया परिणतवयसा शिथिलं श्लथम् अदृढं पक्षपुटं पतत्रसंपुटं तस्य अन्तरम् अभ्यन्तरम्, अविशम्=प्रविष्टोऽभवम् ।

टिप्पणी—महच्च तद्वनं चेति महावनं तस्मिन्=महावने । पतत्री–पक्षी, पतन्तं त्रायते इति पत्रम् पक्षः तद् अस्य अस्तीति पतत्री । करिपोत—हाथी का बच्चा । उद्घोण–ऊपर को थूथ किये हुए जंगली सूअर । घोणा–नासिका 'क्लीबे घ्राणं गन्धवहा घोणा नासा च नासिका' (अमरकोष) । भगीरथ······बहुलः—भगीरथ के द्वारा लायी हुई गङ्गा के प्रवाह की कलकल ध्वनि के तुल्य सघन पुञ्जीभूत ध्वनि । पौराणिक मान्यता है कि कपिलमुनि के शाप से दग्ध सगर के साठ हजार पुत्रों के मोक्ष के लिए राजा भगीरथ गङ्गा जी को ब्रह्मलोक से पृथ्वीलोक पर लाये थे । आते समय गङ्गा के प्रवाह की भयंकर कलकल ध्वनि से मृगया के भयकारी कोलाहल की तुलना की गई है । प्रतीकारबुद्ध्या--रक्षा की भावना से, (प्रति √ कृञ् + घञ्) । 'कम्पयन्निव तरून्' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है । अविशम्–विश् धातु लङ् उ० पु० ए० व० ।

अनन्तरं च सरभसमितो गजयूथपतिलुलितकमलिनीपरिमलः, इतः क्रोडकुलदश्यमानभद्रमुस्तारसामोदः, इतः करिकलभभज्यमान-

सल्लकीकषायगन्धः, इतो निपतितशुष्कपत्रमर्मरध्वनिः इतो वनमहिषविषाणकोटिकुलिशभिद्यमानवाल्मीकधूलिः, इतो मृगकदम्बकम्, इति वनगजकुलम्, इतो वनवराहयूथम्, इतो वनमहिषवृन्दम्, इतः शिखण्डिमण्डलविरुतम्, इतः कपिञ्जलकुलकलकूजितम्, इतः कुररकुलक्वणितम्, इतो मृगपतिनखभिद्यमानकुञ्जररसितम्, इयमार्द्रपङ्कमलिना वराहपद्धतिः, इयमभिनवशष्पकवलरसश्यामला हरिणरोमन्थफेनसंहतिः इयमुन्मदगन्धगजगण्डकण्डूयनपरिमलनिलीमुखरमधुकरविरुतिः, एषा निपतितरुधिरबिन्दुसिक्तशुष्कपत्रपाटला रुरुपदवी, एतद् द्विरदचरणमृदितविटपपल्लवपटलम्, एतत् खड्गिकुलक्रीडितम, एष नखकोटिविलिखितविकटपत्रलेखो रुधिरपाटलः करिमौक्तिकदलदन्तुरो मृगपतिमार्गः, एषा प्रत्यग्रप्रसूतवनमृगीगर्भरुधिरलोहिनी भूमिः, इयमटवीवेणिकानुसारिणी पक्षचरस्य यूथपतेर्मदजलमलिना संचारवीथी,..... ।

हिन्दी-अनुवाद—इसके अनन्तर मैंने शिकार में डूबे हुए, वृक्षों की सघनता के कारण अदृश्य शरीरों वाले विशाल जनसम्भर्द कानन को संक्षुब्ध कर देने वाला कोलाहल सुना, जो (लोग) कि यहाँ गजराज द्वारा विदलित कमलिनी की महक आ रही है, इधर सूकर-समूह द्वारा चबाए जाते हुए नागरमोथे के रस की गन्ध है, इस ओर करिशावकों द्वारा आमर्दित की जाती हुई सल्लकी की कसैली वास है, इस स्थान पर गिरे हुए सूखे पत्तों की 'मर्मराहट' है, यहाँ जंगली भैंसों के शृंगाग्रभाग रूपी वज्र से छिन्न-भिन्न की गई (दीमक की) बांबियों की धूल है, इधर हरिणों का झुण्ड है, इधर जंगली हाथियों का जत्था है, यहाँ बनैले सुअरों की टोली है, यहाँ बनैले भैंसों का समूह है, इस ओर मयूर मण्डली की 'पिहकन' (बोली) है; इस ओर सफेद तीतरों के दल का मधुर कूजन है, इस ओर टिटहरियों के समूह का कलरव है, यहाँ वन केसरी के नखों से विदीर्ण किये जाते हुए कुम्भमण्डल वाले हाथियों की चिग्घाड़ है, यह गीले कीचड़ से मैला बनाया गया वनसूकरों का मार्ग है, यह अचिरोत्पन्न नरम घास के कौरों के रस

से सँवराया हुआ हरिणों के रोममन्थन (पागुर) से उत्पन्न फेन-समूह है, यह मदोन्मत्त गन्धगजों के गण्डस्थल खुजलाने से उत्पन्न सुरभि में आसक्त वाचाल भ्रमरों की 'भनभनाहट' है, यह गिरे हुए रक्त बिन्दुओं से सींचे गये सूखे पत्र-समूह के कारण श्वेत-रक्त बनी हुई रुरु मृगों की सरणि है, यह हाथियों के पैरो से विदलित किये गये तरुपल्लवों का ढेर है; यह गैंडों के समूह द्वारा खेला गया (स्थान) है, यह नखराग्रभाग से चित्रित भयावह पत्राकार चिह्नों (छापों) वाला रक्त के कारण पाटलवर्णी तथा (मारे गये) हाथियों के मुक्तासमूह से उच्चावच वना हुआ मृगपति-सिंह का मार्ग है, यह अभी-अभी व्यायी हुई वनमृगी के गर्भ-रक्त से लाल रंगवाली जमीन है, यह दल से बिछुड़े हुये यूथपति-गजराज के मदजल से मलिन बनी हुई तथा वनस्थली की वेणी का अनुकरण करने वाली अर्थात् उच्चावच (उस गजराज की) सञ्चरणवीथी है।

संस्कृत व्याख्या—अनन्तरम् = पितुः पक्षपुटान्तरप्रवेशानन्तरम्, **च** = पूर्व-समुच्चयार्थकोऽयम् । अत्र लोकसमूहस्य कोलाहलमश्रृणवमिति दूरतरेण संबंधः। **सरभसम्** = सवेगम्, **इतः** = अस्मात् स्थानात्, **गजयूथपतिलुलितकमलिनीपरि-मलः** = गजानां हस्तिनां यूथस्य समूहस्य पतिः स्वामी तेन लुलिताः मर्दिताः कमलिन्यः नलिन्यः तासां परिमलः गन्धः, **इतः** = अस्मात् प्रदेशात्, **क्रोडकुलदश्य-मानभद्रमुस्तारसामोदः** = क्रोडानां वराहाणां कुलेन समूहेन दश्यमानाः भक्ष्य-माणाः भद्रमुस्ताः गुन्द्राः घासविशेषाः तासां रसस्य द्रवस्य आमोदः गन्धः, इतः **करिकलभभज्यमानसल्लकीकषायगन्धः** = करिणां हस्तिनां शलभाः शावकाः तैः भज्यमानाः मर्द्यमानाः सल्लक्यः गजप्रियाः घासविशेषाः तासां कषायः तूवरः गन्धः आमोदः, इतः **निपतितशुष्कपत्रमर्मरध्वनिः** = निपतितानि पतितानि शुष्क-पत्राणि नीरसपर्णानि तेषां मर्मरध्वनिः मर्मरध्वानः, इतः **वनमहिषविषाणकोटि-कुलिशभिद्यमानवल्मीकिधूलिः** = वनमहिषाः विपिनसैरिभाः तेषां विषाणयोः श्रृंगयोः कोटिः अग्रभागः सा एव कुलिशं भिदुरं तेन भिद्यमानानि विदार्यमाणानि वल्मीकानि मृत्तिकास्तूपाः तेषां धूलिः रेणुः, इतः **मृगकदम्बकम्** = मृगाणां हरि-णानां कदम्ब एव कदम्बकम् समूहः इतः **वनगजकुलम्** = वनगजानां विपिन-हस्तिनां कुलं समूहः, इतः **वनवराहयूथम्** = वनवराहाणां जङ्गलसूकराणां यूथं कादम्बकम्, **इतः वनमहिषवृन्दम्** = वनमहिषाणां जङ्गलसैरिभाणां वृन्दं कदम्बकं,

इतः शिखण्डिमण्डलविरुतम् = शिखण्डिनां मयूराणां, **मण्डलम्** = समूहः तस्य विरुतं केका, इतः **कपिञ्जलकुलकलकूजितम्** = कपिञ्जलानां गौरतित्तिराणां कुलं समूहः तस्य कलं सुमधुरं कूजितं स्वनितम्, **इतः कुररकुलक्वणितम्** = कुर-राणां मत्स्यनाशनानां कुलस्य समूहस्य क्वणितं रणनम् ,इतः **मृगपतिनखभिद्य-मानकुम्भकुञ्जररसितम्** = मृगपतिः सिंहः तस्य नखाः करजाः तैः भिद्यमानः विदार्यमाणः कुम्भः शिरस्थमांसपिण्डः येषां ते कुञ्जराः हस्तिनः तेषां रसितं चीत्कारः, **इयम्** = एषा पुरो दृश्यमाना, **आर्द्रपङ्कमलिना** = आर्द्रः क्लिन्नः पङ्कः कर्दमः तेन मलिना मलीमसा, **वराहपद्धतिः** = वराहाणां वनसूकराणां पद्धतिः मार्गः, **इयम् अभिनवशष्पकवलरसश्यामला** = अभिनवानि नवीनानि शष्पाणि वालतृणानि तेषां कवलाः ग्रासाः तेषां रसेन निर्यासेन श्यामला हरितवर्णा, **हरिणरोमन्थफेनसंहतिः** = हरिणानां मृगाणां रोमन्थः चर्वितस्य आकृष्य चर्वणं तेन तस्य वा फेनाः कफाः तेषां संहितः संघातः, **इयम्** = एषा प्रत्यक्षश्रूयमाणा, **उन्मदगन्धगजगण्डकण्डूयनपरिमलनिलीनमुखरमधुकरविरुतिः** = उन्मदाः मदो-त्कटाः गन्धगजाः मत्तमतङ्गजाः तेषां गण्डः कटः तस्य कण्डूयनं खर्जनं तेन यः परिमलः मदगन्धः तत्रनिलीनाः निविष्टाः मुखराः वाचालाः मधुकराःमधुपाः तेषां विरुतिः गुञ्जनम्, **एषा** = इयं पुरो दृश्यमाना, **निपतितरुधिरबिन्दुसिक्तशुष्क-पत्रपाटला** = निपतिताः पतिताः रुधिरबिन्दवः शोणितपृषताः तैः सिक्तानि आर्द्री-कृतानि यानि शुष्कपत्राणि नीरसपर्णानि तैः पाटला श्वेतरक्ता, **रुरुपदवी** = रुरुमृगमार्गः,**एतद्** = इदं पुरतः स्थितम्, **द्विरदचरणमृदितविटपपल्लवपटलम्** = द्वौ रदो दन्तौ येषां ते द्विरदाः करिणः तेषां चरणाः पादाः तैः मृदितानि लुलि-तानि विटपानां वृक्षशाखानां पल्लवानि किसलयानि तेषां पटलं समूहः, **एतत्** = इदं दृश्यमानम्, **खड्गिकुलक्रीडितम्** = खड्गिनां गण्डकानां, कुलस्य = समूहस्य क्रीडितं निह्नुनम्, **एषः** = अयं दृश्यमानः, **नखकोटिविलिखितविकटपत्रलेखः** = नखानां पुनर्भवानां कोट्यः अग्रभागाः ताभिः विलिखिताः चित्रिताः विकटाः भय-ङ्कराः पत्रलेखाः पत्ररचनाः यत्र सः, **रुधिरपाटलः** = रुधिरेण शोणितेन पाटलः श्वेतरक्तः, **करिमौक्तिकदलदन्तुरः** = करीणां गजानां मौक्तिकानि मुक्ताफलानि तेषां दलानि खण्डानि तैः दन्तुरः उन्नतावनतः, **मृगपतिमार्गः** = सिंहसञ्चरण-पथः **एषा** = पुरोदृश्यमाना, **प्रत्यग्रप्रसूतवनमृगीगर्भरुधिरलोहिनी** = प्रत्यग्रप्रसूता

नूतनप्रसूतवती या वनमृगी विपिनहरिणी तस्य: गर्भ: भ्रूण: तस्य रुधिरं शोणितं तेन लोहिनी रक्ता, **भूमिः**=पृथ्वी, **इयम् अटवीवेणिकानुसारिणी**=अटवी अरण्यानी तस्या: वेणिका ग्रथितचूडा ताम अनुसरति अनुकरोतीति तच्छीला, **पक्षचरस्य**=पक्षेण निजमण्डलेन सह चरति विहरति इति पक्षचर: मण्डलचारी तस्य, **यूथपतेः**=यूथस्य मण्डस्य पति: स्वामी तस्य गजेन्द्रस्य, **मदजलमलिना**=मदजलेन दानवारिणा मलिना कृष्णवर्णा, **संचारवीथी**=संचारस्य वीथी—संचारवीथी=विहरणमार्ग: ।

टिप्पणी—गजयूथपतिः—हाथियों, का यूथपति । यूथ शब्द पशु-पक्षियों के समूह के लिए प्रयुक्त होता है । (सजातीयै: कुलं यूथं तिरश्चां पुन्नपुंसकम्, अमरकोप) । **लुलित**—मसली हुई, झुलसी हुई । **परिमल**—गन्ध, किसी वस्तु के मसलने से उत्पन्न गन्ध का नाम परिमल है । (विमर्दोत्थे परिमलो गन्धे जनमनोहरे) । आमोद: सोऽतिनिर्हारी ...... ।। (अमरकोष) वह गन्ध अत्यन्त आकर्षक होने पर आमोद कही जाती है । **मुस्ता**—नागरमोथा, **कपिञ्जल**—चातकपक्षी:, 'कपिञ्जल: चातकपक्षी' इति शब्दकल्पद्रुम: । **कलभ**-हाथी का बच्चा (कलभ: करिशावक:, अमरकोप) । **खड्गकुलक्रीडितम्**—गैंडों के समूह के खेलने का स्थान, यहाँ क्रीडित शब्द मे अधिकरण अर्थ में क्त प्रत्यय हुआ है । **दन्तुर**—ऊंचा-नीचा । **प्रत्यग्रप्रसूता**—नयी जच्चा, तुरन्त व्यायी हुई । **वेणिका**—वेणी, गुथी हुयी चोटी । **पक्षचर**—मण्डल के साथ विचरण करने वाला सरदार । **सञ्चारवीथी**—गमनमार्ग । **वनमहिष**........ **धूलिः**—यहाँ लुप्तोपमा तथा रूपक का सन्देहसङ्कर है ।

चमरीपङ्क्तिरियमनुगम्यताम्, उच्छुष्कमृगकरीषपांसुला त्वरिततरमध्यास्यतामियं वनस्थली, तरुशिखरमारुह्यताम् आलोक्यतां दिगियम्, आकर्ण्यतामयं शब्द:, गृह्यतां धनु:, अवहितै: स्थीयताम् विमुच्यतां श्वान इत्यन्योन्यमभिवदतो मृगयासक्तस्य महतो जनसमूहस्य तरुगहनान्तरितविग्रहस्य क्षोभितकाननं कोलाहलमश्रृणवम् ।

हिन्दी-अनुवाद—चमरी गायों की इस टोली का पीछा करो, मृगों की सूखी मेंगनियों की रज से भरी गयी इस वनस्थली पर शीघ्र ही पड़ाव डाल दो, पेड़ों की चोटी पर चढ़ जाओ, इस दिशा की ओर देखो,

'यह शब्द सुनो, धनुष ले लो, सावधान हो जाओ, कुत्ते छोड़ दो, इस प्रकार आपस मे कहते हुए मृगया में आसक्त और वृक्षों के झुरमुट मे शरीर को छिपाये हुए महान् जनसमूह का वन मे खलबली मचा देने वाला कोलाहल मैंने सुना।

संस्कृत-व्याख्या—इयम् =प्रत्यक्षोपलक्ष्यमाणा, **चमरीपङ्क्तिः** =चमर्याख्य मृगराजिः, **अनुगम्यताम्**—अनुव्रज्यताम्। **इयं**—पुरो दृश्यमाना, **उच्छुष्कमृगकरीषपांसुला** =उच्छुष्का: अत्यन्तनीरसा: मृगकरीषा: हरिणपुरीषा: तैः पांसुला सधूलीका, **वनस्थली** =काननभूमि:, **त्वरिततरम्** =शीघ्रतरं, **अध्यास्यताम्** =अवलम्ब्यतां, **तरुशिखरम्** =तरूणां पादपानां शिखरं श्रृङ्गम्, **आरुह्यताम्** =आरोहणविषयीक्रियतां, **इयं दिक्** =एषा काष्ठा, **आलोक्यताम्** =विलोक्यतां, **अयं शब्दः** =ध्वनिः, **आकर्ण्यताम्** =श्रूयतां **धनुः** =चापः, **गृह्यताम्** =आदीयतां, **अवहितैः** =सावधानैः **स्थीयताम्** =अवस्थीयतां उपविश्यतां वा, **श्वानः** =कौलेयकाः, **विमुच्यन्ताम्** =विसृज्यन्तां, **इति** =एवं विधम्, **अन्योन्यम्** =परस्परम्, **अभिवदतः** =संलपतः, **मृगयासक्तस्य** =मृगया आखेटः तत्र सक्तस्य संलग्नस्य, **तरुगहनान्तरितविग्रहस्य** =तरूणां वृक्षाणां गहन निकुञ्जः तेन अन्तरिताः आच्छादिताः विग्रहाः शरीराणि यस्य तस्य, **महतः** =विशालस्य, **जनसमूहस्य** =जनानां लोकानां समूहः तस्य आखेटिकमण्डलस्य, **क्षोभितकाननम्** =क्षोभितं संचालितं काननं वनं येन तम्, **कोलाहलम्** =कलकलम्, **अश्रृणवम्** =अश्रौषम्।

टिप्पणी—चमरी =मृगविशेष, इसकी पूँछ के बालों से चामर बनाया जाता है। **अवहितैः**—सावधान [अव—धा+क्त, धा को हि आदेश]। **विग्रह**—शरीर। **अभिवदतः**—अभि+वद्+शतृ; ष० ए० व०।

अथ नातिचिरादेवानुलेपनार्द्रमृदङ्गध्वनिधीरेण गिरिविवरविजृम्भितप्रतिनिनादगम्भीरेण शबरशरताडितानां केसरिणां निनादेन, संत्रस्तयूथमुक्तानामेकाकिनां च संचरतामनवरतकरास्फोटमिश्रेण जलधररसितानुकारिणा गजयूथपतीनां कण्ठगर्जितेन सरभससारमेयविलुप्यमानावयवानामालोलकातरतरलतरतारकाणामेणकानां च करुणकूजितेन, निहितयूथपतीनां वियोगिनीनामनुगतकलभानां च स्थित्वा-

स्थित्वा समाकर्ण्य कलकलमुत्कर्णपल्लवानामितस्ततः परिभ्रमन्तीनां प्रत्यग्रपतिविनाशशोकदीर्घेण करिणीनां चीत्कृतेन, कतिपयदिवसप्रसूतानां च खड्गिधेनुकानां त्रासपरिभ्रष्टपोतकान्वेषिणीनामुन्मुक्तकंठमारसन्तीनां क्रन्दितेन, तरुशिखरसमुत्पतितानामाकुलाकुलचारिणां च पत्ररथानां कोलाहलेन,………।

हिन्दी-अनुवाद—इसके अनन्तर थोड़ी ही देर मे—(पिसान आदि का) अनुलेपन के कारण गीले मृदङ्ग की ध्वनि के समान गम्भीर, पर्वत-कन्दराओं में फैली हुई प्रतिध्वनियों के कारण मन्द्रता को प्राप्त हुई, किरातों के बाणों से व्यथित किये गये वनकेशरियों की दहाड़ से,संत्रस्त जत्थे से बिछुड़े हुए अकेले पड़े हुए—भागदौड़ करते हुए गजराजों के अनवरत शुण्डाघात से सचलित तथा मेघगर्जन का अनुकरण करने वाले कण्ठ गर्जन (चिग्घाड) से तीव्रगामी (शिकारी) कुत्तों द्वारा नोचे जाते हुए अंग-प्रत्यङ्गों वाले अतएव चञ्चल, कातर एवं अतिशय तरल (अश्रुपूर्ण) पुतलियों वाले हरिणों के करुण शब्द से, मारे गये (अपने स्वामिभूत) यूथपतियों वाली—बिछोहभरी—पीछे-पीछे चलते हुए कलभों (करिशावकों) से मुक्त—रुक—रुक कर (पूर्वोक्त) कोलाहल को सुनकर उठे हुए (उनरे हुए) कर्णपल्लवों वाली—चारो ओर परिभ्रमण करती हुई हथनियों की तात्कालिक पतिविनाश से उत्पन्न शोक के कारण दीर्घ बनी हुई चीत्कार से, कुछ ही पहले की व्यायी हुई संत्रास (भय) के कारण खोये हुए (स्तनन्धय) शावकों को खोजती हुई गैंडियों के उन्मुक्तकण्ठ (गलाफाड़) आक्रन्दन से, वृक्षों के शिखर से उड़े हुए तथा अत्यन्त व्याकुल होकर चलने वाले विहगों के कलकल शब्द से।

संस्कृत-व्याख्या—**अथ** = कोलाहलश्रवणानन्तरम्, **नातिचिरात् एव** = स्वल्पसमयेनैव,**शबरशरताडितानाम्** = शबराःकिराताः तेषां शराः बाणा तैः ताडिताः पीडिताः तेषाम्, **केसरिणाम्** = सिंहानाम् **अनुलेपनार्द्रमृदङ्गध्वनिधीरेण** = अनुलेपनं द्रवद्रव्यलेपनं तेन आर्द्रःस्विन्नः मृदङ्गः मुरजः तस्य ध्वनिः ध्वानः तद्वत् धीरेण गम्भीरेण,**गिरिविवरविजृम्भितप्रतिनिनादगम्भीरेण** = गिरिविवरेषु पर्वत कन्दरासु विजृम्भितः प्रसृतः प्रतिनिनादः प्रतिध्वनिः तेन हेतुना गम्भीरेण सान्द्रेण, **निनादेन** = हुंकारेण, **संत्रस्तयूथमुक्तानाम्** = संत्रस्तं भयभीतं यूथं

मंडलं तस्मात् मुक्तानां पृथग्भूतानाम्, **एकाकिनाम्**=यूथरहितानाम्, **संचरतां**=परिभ्रमताम्, **गजयूथपतीनां**=गजानां यूथपतयः तेषां हस्तिपक्षचरा–णाम्, **अनवरतकरास्फोटमिश्रेण**=अनवरतं निरन्तर यः करास्फोटः शुण्डाप्रहारः तेन मिश्रेण संमिलितेन, **जलधररसितानुकारिणा**=जलधराः मेघाः तेषां रसितं गर्जनम् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलः तेन, **कण्ठगर्जितेन**=कण्ठस्य गलस्य गर्जितं गर्जनं तेन, **सरभससारमेयविलुप्यमानावयवानाम्**=सरभसं सवेगं सारमेयैः कुक्कुरैः विलुप्यमानाः दश्यमानाः अवयवाः अङ्गानि येषां तेषाम्, **आलोलकातरतरलतरतारकाणां**=आलोला चञ्चलाः कातराः दीनाः तरल-तराः अश्रुव्याप्ततराः ताराः कनीनिकाः येषां तेषां, **एणकानाम**=मृगाणाम् **करुणाकूजितेन**=करुणोत्पादकक्रन्दनेन, **निहतयूथपतीनां**=निहिताः मृताः यूथपतयः पक्षस्वामिनः यासां तासां, **वियोगिनीनां**=पतिवियोगिनीनाम्, **अनुगतकलभानां**=अनुगताः अनुसृताः कलभाः करिपोताः यासां तासाम्, **स्थित्वास्थित्वा**=भूयो भूयो विरम्य, **कलकलं**=कोलाहलम्, **समाकर्ण्य**=सम्यक् श्रुत्वा, **उत्कर्णपल्लवानां**=उद् ऊर्ध्वीकृताः कर्णपल्लवाः श्रोत्रकिसल–यानि याभिः तासाम्, **इतस्ततः**=चतुर्दिक्षु, **परिभ्रमन्तीनां**=संचरन्तीनाम्, **करिणीनां**=हस्तिनीनां, **प्रत्यग्रपतिविनाशशोकदीर्घेण**=प्रत्यग्रः अभिनवः पतिविनाशः स्वामिमृत्युः तस्य शोकः करुणा तेन दीर्घेण विस्तृतेन, **चीत्कृतेन**=चीत्कारेण, **कतिपयदिवसप्रसूतानाम्**=कतिपये केचित् दिवसाः दिनानि तदा प्रसूताः कृतप्रसवाः तासाम्, **त्रासपरिभ्रष्टपोतकान्वेषिणीनाम्**=त्रासेन भयेन परिभ्रष्टाः यूथच्युताःपोतकाः अर्भकाः तान् अन्वेषयन्ति मार्गयन्ति इति तच्छीलाः तासाम्, **उन्मुक्तकण्ठं**=उन्मुक्तः कण्ठः यस्मिन् कर्मणि तत्, उन्मुक्तकण्ठं यथा स्यात् तथा अनिरुद्धगलं, तारस्वरेणेत्याशयः, **आरसन्तीनाम्**=आरटन्तीनां, **खड्गधेनुकानाम्**=खड्गिनः गण्डकाः तेषां धेनुकाः स्त्रियः तासा, **आक्रन्दि–तेन**=रोदनशब्देन, **तरुशिखरसमुत्पतितानाम्**=तरुणां वृक्षाणां शिखराणि शृंगाणि तेभ्यः समुत्पतिताम् उड्डीनाम्, **आकुलाकुलचारिणाम्**=आकुला-कुलं यथा स्यात् यथा चरन्तीति तच्छीलाः आकुलाकुलचारिणः अतिव्याकुलतया भ्रमणशीलाः तेषाम्, **पत्ररथानाम**=पक्षिणाम्, **कोलाहलेन**=कलकलध्वनिना ।

टिप्पणी–अनुलेपनार्द्रमृदङ्ग–मृदङ्ग या ढोल की ध्वनि को तीव्र करने के लिए उसके मुँह पर एक विशेष प्रकार का लेप किया जाता है–"मृदङ्गो मुखलेपेन करोति मधुरध्वनिम्" । ताजे लेप के कारण गीला मृदङ्ग और भी अधिक गम्भीर ध्वनि करता है । **करास्फोट**–सूँड फटकारना, हाथी पुन: पुन: सूँड मुख में देकर फिर झटके से बाहर फेंककर अपनी पीड़ा का प्राकट्य किया करते हैं । यहाँ वे अपने यूथ से बिछुड़ जाने के कारण करास्फोट द्वारा अपनी छटपटाहट प्रकट कर रहे है । **सारमेय**–कुत्ते, कश्यप प्रजापति की पत्नी सरमा की सन्तान होने से इन्हें सारमेय कहा जाता है । **खड्गिधेनुका**–गैंडों की मादायें, यद्यपि 'करिणी धेनुका वशा' तथा 'धेनुका तु करेण्वां च' अमरकोष के कथनानुसार केवल हथिनी को तथा चकारात् नवप्रसूता गौ को धेनुका कहा जाता है तथापि 'धयति लेढि नवजातं शिशुम् इति धेनु:, 'नवजात शिशु को चाटने वाली' इस सामान्य अर्थ में प्रत्येक जाति की नवप्रसूता मादा को धेनु या धेनुका शब्द के द्वारा व्यवहार मे बोला जाने लगा है–'खड्गिधेनु:, वडवधेनु:, ऐसे ही प्रयोग हैं । **पोतक**–शिशु । **पत्ररथ**–पक्षी, **'जलधर···गर्जितेन'** में लुप्तोपमालङ्कार है । **'सरभससारमेय'**–में वृत्त्यनुप्रास अलंकार है ।

रूपानुसारप्रधावितानां च मृगयूणां युगपदतिरभसपादपाताभिहतायाः भुवः कम्पमिव जनयता चरणशब्देन, कर्णान्ताकृष्टज्यानां च मदकलकुररकामिनीकण्ठकूजितकलशबलितेन शरनिकरवर्षिणां धनुषां निदानेन, पवनाहतिक्वणितधाराणामसीनां च कठिनमहिषस्कन्धपीठपातिनां रणितेन, शुना च सरभसविमुक्तघर्घरध्वनीनां वनान्तरव्यापिना ध्वानेन सर्वतः प्रचलितमिव तदरण्यमभवत् ।

हिन्दी-अनुवाद–वन्य पशुओं को (वधार्थ) अनुगमन हेतु वेगपूर्वक दौड़े हुए शिकारियों के एक ही साथ अतिशय वेग पूर्वक (किये गये) पादविक्षेप से प्रताड़ित की गई पृथ्वी की मानों कँपकँपी उत्पन्न कर देने वाले चरणों के शब्द से, कानों के छोर तक खींची हुई डोरियों वाले तथा मद के कारण मनोज्ञभूत

कुररी (टिटहिरी) के मधुर कूजन के समान रसपगी शरसमूह की वर्षा करने वाले धनुषों की 'सनसनाहट' से, पवन के आघातवश शब्दायमान धारवाली तथा कठोर वनमहिष के स्कन्ध प्रदेश पर गिरने वाली तलवारों के शब्द से तथा वेगपूर्वक घर्घरध्वनि (गुर्राहट) उत्पन्न करने वाले (शिकारी) कुत्तों के वनान्तरव्यापी ध्वनि (शब्द) से वह वन डाँवाडोल-सा हो उठा।

संस्कृत-व्याख्या—रूपानुसारप्रधावितानां=रूपा: मृगा: तेषाम् अनुसारेण गगनक्रमेण प्रधावितानां चलितानाम्, **मृगयूणां**=मृगयन्ते पशून् इति मृगयव: किराता: तेषाम्, **युगपत्**=एकस्मिन् समये, **अतिरभसपादपातभिहतायाः**= अतिरभसेन अत्यन्तवेगेन य: पादपात: चरणविक्षेप: तेन अभिहता प्रताडिता यस्या:, **भुवः**=पृथिव्या:, **कम्पमिव**=वेपथुम् इव, **जनयता**=उत्पादयता, **चरणशब्देन**=पादध्वनिना, **कर्णान्ताकृष्टज्यानां**=कर्णान्तं श्रोत्रपर्यन्तम् आकृष्टा आहिता ज्या मौर्वी येषां तेषाम्, **शरनिकरवर्षिणां**=शराणाम् इषूणां निकर: समूह: तं वर्षन्ति मुञ्चन्ति इति तच्छीला: तेषाम्, **धनुषां**= चापानाम्, **मदकलकुरकामिनीकण्ठकूजितकलशबलितेन**=मदेन उन्मादेन कला: सुमनोहरा: या: कुररकामिन्य: मत्स्यनाशनसुन्दर्य: तासां कण्ठकूजितं गलकूजनं तस्य कल: मधुरध्वनि: तेन शवलित: मिश्रित: तेन, **निनादेन**=ध्वनिना, **पवनाहतिक्वणितधाराणां**=पवनस्य वायो: आहति: आघात: तया क्वणिता शब्दिता धारा तीक्ष्णाग्रभाग: यासां तासाम्, **कठिनमहिषस्कन्धपीठपातिनां**= कठिन: कठोर: महिषाणां सैरिभाणां स्कन्ध: बाहुशिर: स एव पीठं स्थलं तत्र पतन्तीति तच्छीला: तेषाम् **असीनां**=खडगानाम् **रणितेन**=शब्दितेन, **सरभसविमुक्तघर्घरध्वनीनां**=सरभसं सवेगं विमुक्ता नि:सारिता: (विहिता इत्यर्थ:) घर्घरध्वनय: घर-घरध्वाना: यै: तेषाम्, **शुनां**=सारमेयाणां, **वनान्तरव्यापिना**=यद् वन वनान्तरं अपरकाननं तद्व्याप्नोति इति तच्छील: काननान्तरप्रसारी तेन, **ध्वानेन**=शब्देन, **च**=समुच्चयार्थकमिदं अव्ययपदं **तद्**=पूर्वोक्तम्, **अरण्यं**=काननं, **सर्वतः**=समन्तात्, **प्रचलितम् इव**= कम्पितम् इव, **अभवत्**=अभूत।

टिप्पणी—रूपानुसार—वन्य पशुओं अर्थात् हरिणों की गति के अनुसार,

जिस ओर पशु गये थे उसी दिशा में। 'रूप स्वभावे सौंदर्यें नामगे पशु-शब्दयोः' (मेदिनीकोष) **मृगयु**–शिकारी पशुओं को ढूँढ़-ढूँढ कर मारने वाला। **शबलित**–मिश्रित, मिला हुआ। मदकल······यहाँ **लुप्तोपमा** अलंकार है। **'प्रचलितमिव' में क्रियोत्प्रेक्षालंकार है**।

अचिराच्च प्रशान्ते तस्मिन् मृगयाकलकले निर्वृष्टमूकजलधर-वृन्दानुकारिणि मथनावसानोपशान्तवारिणि सागर इव स्तिमि-ततामुपगते कानने, मन्दीभूतभयोऽहमुपजातकुतूहलः पितुरुत्सङ्गा-दीषदिव निष्क्रम्य कोटरस्थ एव शिरोधरां प्रसार्य संत्रास तरल-तारकः शैशवात् किमिदमित्युपजातदिदृक्षस्तामेव दिशं चक्षुः प्राहिणवम्।

हिन्दी-अनुवाद–थोड़ी ही देर में उस मृगया-कोलाहल के शान्त हो जाने पर तथा भली-भाँति बरस चुके हुए अतएव निश्शब्द मेघमण्डल का अनुकरण करने वाले एवं मन्थन की समाप्तिवश प्रशान्त जल वाले सागर की भाँति वन के सुस्थिर हो जाने पर, मन्द पड़े हुये भय वाले तथा आश्चर्य से अभिभूत मैंने पिता जी की गोदी से थोड़ा-सा ही उचक कर कोटर में ही बैठे-बैठे गर्दन बढ़ाकर, भय के कारण चंचल पुतलियों वाला होकर लड़कपन के कारण "यह क्या है ?" इस उत्कण्ठावश उत्पन्न हुई देखने की आकांक्षा से युक्त होकर, उसी दिशा की ओर आँखें फेरी।

संस्कृत व्याख्या–**अचिरात् च**=शीघ्रमेव च, **तस्मिन्**=पूर्वोक्ते, **मृगया-कलकले**=मृगया आखेटः तस्य कलकलः कोलाहलः तस्मिन्, **प्रशान्ते**=पूर्ण-रूपेण शान्ति प्राप्ते सति, **निर्वृष्टमूकजलवृन्दानुकारिणि**=निर्वृष्टाःपूर्णतः कृतवर्षा अतएव मूकाः शान्ताः जलधाराः मेघाःतेषां वृन्दं समूहः तम् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलं तस्मिन् वर्षान्ते शान्तमेघमण्डलसदृशे, **मथनावसा-नोपशान्तवारिणि**=मथनं सुधार्थं बिलोडनं तस्य अवसानं समाप्तिः तस्मिन् उपशान्तं प्रकृतावस्थं वारि सलिलं यस्य तस्मिन्, **सागरे इव**=समुद्रे इव, **कानने**=विपिने, **स्तिमिताम्**=निश्चलताम्, **उपगते**=प्राप्ते सति, **अहम्**=

वैशम्पायनः, **मन्दीभूतभयः**=अमन्दं मन्दं भूतम् इति मन्दीभूतः न्यूनीभूतं भयंदरः तस्य तादृशः अतएव **उपजातकुतूहलः**=उपजातम् उत्पन्नं कुतूहलं कौतुकम्, **पितुः**=जनकस्य, **उत्सङ्गात्**=क्रोडात् **ईषदिव**=अल्पमिव, **निष्क्रम्य**=उन्नमय्य, **कोटरस्थ एव**=स्कन्धविवरस्थित एव, **शिरोधराम्**=ग्रीवाम्, **प्रसार्य**= विस्तार्य, **संत्रासतरलतारकः**=संत्रासः भयं तेन तरले अश्रुव्याप्ते चञ्चले वा तारके कनीनिके यस्य तादृशः, **शैशवात्**=बाल्यात्, **इदम्**=अनुभूयमानम्, **किम्**=किंस्वरूपम्, **इति**=एवम्, **उपजातदिदृक्षः**=उपजाता समुत्पन्नो दिदृक्षा दर्शनेच्छा यस्य तादृशः **ताम् एव**=घटनाचक्राश्रयभूताम् एव, **दिशम्**=आशाम्, **चक्षुः**=नेत्रम्, **प्राहिणवम्**=अपातयम् ।

टिप्पणी-निर्वृष्ट=पूर्णरूप से बरस चुकने वाला निर्+वृष्+क्त= निवृष्ट। **मथना·····सागरे**=मन्थन के पश्चात् शान्त जल वाला समुद्र। पौराणिक परम्परा के अनुसार विष्णु की आज्ञा से देवों ने दैत्यों से सन्धि करके अमृत प्राप्ति के लिये क्षीरसागर का मन्थन किया था। उसमें से चौदह रत्न निकले थे। **स्तिमितता**=निश्चलता, स्तब्धता शान्तिः।-स्तिम्+क्त, तल प्रत्यय। **तरलतारक**=चञ्चल पुतलियों वाला। **दिदृक्षा**=देखने की इच्छा (द्रष्टुम् इच्छा दिदृक्षा)-दृश्+सन्, टाप्। यहाँ **उपमा** तथा **लुप्तोपमा** की निरपेक्ष स्थिति होने से **संसृष्टि** है।

अभिमुखमापतच्च तस्माद् वनान्तरादर्जुनभुजदण्डसहस्रविप्रकीर्णमिव नर्मदाप्रवाहम्, अनिलचलितमिव तमालकाननम्, एकीभूतमिव कालरात्रीणां यामसंघातम्, अञ्जनशिलास्तम्भसंभारमिव क्षितिकम्पविघूर्णितम्, अन्धकारपूरमिव रविकिरणाकुलितम्, अन्तकपरिवारमिव परिभ्रमन्तम्, अवदारितरसातलोद्भूतमिव दानवलोकम्, अशुभकर्मसमूहमिवैकत्र समागतम्, अनेकदण्डकारण्यवासिमुनिजनशापसार्थमिव संचरन्तम् अनवरतशरनिकरवर्षिरामनिहतखरदूषणबलनिवहमिव तदपध्यानात् पिशाचातामुपगतम्, कलिकालबन्धुवर्गमिवैकत्र संगतम्, अवगाहप्रस्थितमिव वनमहिषयूथम्, अचल-

शिखरस्थितकेसरिकराकृष्टिपतनशीर्णमिव कालाभ्रपटलम्, अखिल-रूपविनाशाय धूमकेतुजलमिव समुद्गतम्, अन्धकारितकाननम्, सहस्र संख्यम्, अतिभयजनकमुत्पातवेतालव्रातमिव शबरसैन्यमद्राक्षम् ।

हिन्दी-अनुवाद-(और) उस वनान्तराल से अपनी ओर आती हुई शबर-सेना को (मैंने) देखा-जो (राजा कार्तवीर्य) सहस्रार्जुन की हजारों भुजाओं द्वारा (इधर-उधर) बिखराई गई नर्मदा नदी की जलधारा के समान थी, जो प्रभञ्जन (वायु) द्वारा आन्दोलित तमालवन के समान थी, जो कालरा-त्रियों के पुञ्जीभूत प्रहरसमूह सी प्रतीत होती थी, जो पृथ्वी के प्रकम्प (भूचाल) वश मूच्छित बनाये गए काली चट्टानों के स्तम्भों के समुदाय सरीखी थी, जो रविरश्मियों से व्याकुल बनाई गई अन्धकारराशि प्रतीत होती थी, जो इतस्ततः पर्यटन करते हुए यमराज के परिवार-सी प्रतीत होती थी, जो विदीर्ण किये गये रसातल (पृथ्वी) से प्रकटी-भूत दानवगण-सी प्रतीत होती थी, जो एक स्थान पर इकट्ठे हुये पापकर्मों का समुदाय प्रतीत होती थी, जो संचरण करते हुए-अनेक दण्डकारण्यवासी मुनिजनों के (द्वारा दिये गये) शापसमूह-सी प्रतीत होती थी, जो निरन्तर बाणवर्षा करने वाले श्रीराम द्वारा मारी गई तथा उन (श्रीराम) के प्रति अपध्यान (दुर्भावना) होने के कारण (पुनः) पिशाचभाव प्राप्त करने वाली खरदूषण की सेना प्रतीत होती थी, जो परस्पर मिले हुए कलिकाल के बन्धुसमुदाय-सी प्रतीत होती थी, जो जलावगाहनार्थ चले हुये जंगली भैंसों के समूह जैसी थी, पर्वत-शिखरों पर विद्यमान वनकेसरियों के पंजों द्वारा (हाथी समझकर) बालादाकृष्ट अत-एव गिरने के कारण छिन्न-भिन्न हुए प्रलयकालीन मेघमण्डल-सी प्रतीत होती थी, जो समस्त (अरण्यचारी) जीव-जन्तुओं के विनाशार्थ उदित हुए पुच्छल-तारों का समूह प्रतीत होती थी, जिसने सम्पूर्ण वन को अन्धकारमय कर दिया था, जो कई हजार संख्या वाली थी, जो अत्यन्तभयावह थी और जो अमंगल-जनक वेताल (प्रेत) समूह-सी प्रतीत होती थी।

संस्कृत-व्याख्या-च अभिमुखम्=समक्षम्, तस्मात्=पूर्वोक्तात्, वनान्तरात्

=विपिनमध्यात्, **आपतत्**=आगच्छत्, **अर्जुनभुजदण्डसहस्रविप्रकीर्णम्**= अर्जुन: कार्तवीर्य: हैहयवंशयो नृप: तस्य भुजदण्डानां सहस्रं सहस्रसंख्याका: बाहव: तेन विप्रकीर्णम् विक्षिप्तम्, **नर्मदाप्रवाहम् इव**=नर्वदा रेवानदी तस्या: प्रवाह: स्रोत, तम् इव, **अनिलचलितम्**=पवनान्दोलितम्, **तमालकाननम् इव**=तमालानां तापिच्छानां काननं गहनम् इव, **कालरात्रीणाम्**=प्रलयनिशानाम्, **एकीभूतम्**=पञ्जीभूतम्, **यामसंघातम् इव**=यमानां प्रहराणां संघात: समुदाय: तम् इव, **क्षितिकम्पविघूर्णितम्**=क्षिते: कम्प: क्षितिकम्प: भूकम्प: तेन विघूर्णितम् मूर्छितम्, **अञ्जनशिलास्तम्भसंभारम् इव**=अञ्जनवत् कज्जलवत् शिला: पाषाणखण्डानि तासां स्तम्भा: स्थूणा: तेषां संभार: समूह: तम् इव, **रविकिरणाकुलितम्**=रवे: सूर्यस्य किरणा: करा: तै: आकुलितम् पर्यस्तम्, **अन्धकारपूरम् इव**=अन्धकारस्य तिमिरस्य पूरं प्रवाहम् इव, **परिभ्रमन्तम्**=पर्यटन्तम्, **अन्तकपरिवारम् इव**=यमकुटुम्बम् इव, **अवदारितरसातलोद्भूतम्**=अवदारितं विदारितं यद् रसातलं धरातलं तस्माद् उद्भूतम् **दानवलोकम् इव**= दानवानां दैत्यानांलोक: जगत् तम् इव, **एकत्र**=एकस्मिन् स्थाने, **समागतम्**= समायातम्, **अशुभकर्मसमूहम् इव**=अशुभकर्माणि पापकर्माणि तेषां समूह: तम् इव, **संचरन्तम्**=भ्रमन्तम्, **अनेकदण्डकारण्यवासिमुनिजनशापसार्थम् इव**= अनेके असंख्या ये दन्डकारण्यवासिन: दण्डकवननिवासिन: मुनिजना: ऋषिजन: तेषां शापा: दुर्वचनानि तेषां सार्थ: समूह: तम् इव **अनवरतशरनिकरवर्षिरामनिहतखरदूषणबलनिवहम्**=अनवरतं सततं शरनिकरं बाणसमूहं वर्षति मुञ्चति इति तच्छील: राम: राघव: तेन निहितानि व्यापादितानि खरदूषणयो: पाताललङ्काधिपत्यो: बलानि सैन्यानि तेषां निवह: समूह: तम् इव, **तदपध्यानात्**= तस्मिन् रामे अपध्यानं दुश्चिन्तनम् तस्माद्हेतो:, **पिशाचताम्**=भूतभावम्, **उपगतम्**=प्राप्तम्, **एकत्र**=एकस्थाने, **संगतम्**=सम्मिलितम्. **कलिकालात्-वर्गम् इव**=कालिकालस्य कलियुगस्य, **बन्धुवर्ग**=मित्रमण्डलम् तम् इव, **अवगाहप्रस्थितम्**=अवगाह: स्नानं तदर्थं प्रस्थितं प्रचलितम्, **वनमहिषयूथम् इव**= वनमहिषा: अरण्यसैरिभा: तेषां यूथ: समूह: तम् इव, **अचलशिखरस्थितकेसरकराकृष्टपतनशीर्णम्**=अचलस्य पर्वतस्य शिखरे शृंगे स्थित: विद्यमान: केसरी सिंह:

तस्य करौ पाणी ताभ्याम् आकृष्टि: आकर्षणं तया यत् पतनं भ्रंश: तेन शीर्ण चूर्णितम्, **कालाभ्रपटलम् इव**=श्याममेघमण्डलम् इव, **अखिलरूपविनाशाय**= अखिला: सम्पूर्णा: रूपा: जङ्गलपशव: मृगा: वा तेषां विनाशाय व्यापादनाय, **समुद्गतम्**=उदितम्, **धूमकेतुजालम् इव**=उत्पातग्रहमण्डलम् इव, **अन्धकारितकाननम्**=अन्धकारितम् अन्धकार: संजातोऽस्मिन् इति संजाततमस्कं काननं विपिनं येन तत्, **अनेकसहस्रसंख्यम्**=अनेकानि बहूनि सहस्राणि दशशतात्मकानि संख्या गणना यस्य तत् असंख्यमित्यर्थ:, **उत्पातवेतालव्रातम् इव**= उत्पाताय उपद्रवाय यो बेतालव्रात: भूतसमूह: तम् इव अतिभयजनकम् अत्यन्तभयङ्करम्, **शबरसैन्यम्**=किरातदलम्, **अद्राक्षम्** =अपश्यम् ।

टिप्पणी–अर्जुन···प्रवाहमिव (कार्तवीर्य) सहस्रबाहु अर्जुन, इसने एक समय अपनी हजार भुजाओं से नर्मदा के प्रवाह को रोककर जलक्रीड़ा की थी । इसकी नगरी का नाम माहिष्मती था । **अञ्जलशिला**–काजल के सदृश पत्थर, काला पत्थर । **अन्तक**–यमराज विवस्वान् का पुत्र (वैवस्वतोऽन्तक:, अमरकोष), विवस्वान् ने प्रसन्न होकर इन्हें मृत जीवों के धर्माधर्म विवेचन का अधिकार दे रखा है, इसलिये इन्हें धर्मराज भी कहा जाता है । दण्ड देने के कारण ये यमराज कहलाते हैं (यमो यमयतामस्मि, गीता) **अवदारित दानवलोकम्**–पौराणिक मान्यता है कि भूतल के नीचे के लोकों में दानवादियोनियों का निवास-स्थान है । प्रह्लाद के पौत्र विरोचन के पुत्र राजा बलि को भगवान् वामन ने तीन पैरों में उसकी पृथ्वी लेकर पाताल लोक में ही रहने का आदेश दिया । **दण्डक:···सार्थमिव**–दण्डक वन में एक बार दुर्भिक्ष पड़ने पर दण्डकारण्यनिवासी मुनि लोग गौतम ऋषि के आश्रम में पहुँचे । ऋषि ने तपोबल से उनकी पर्याप्तकाल तक रक्षा की । इसके बाद ऋषिजन पुन: दण्डकारण्य जाने की इच्छा करने लगे, किन्तु गौतम ऋषि के भय से आज्ञा लेने में संकोच करते रहे । उन्होंने छल से एक गौ की रचना की और उसे गौतम के धान्यागार में छोड़ दिया । गौतम ने जैसे ही उसका हाथ से स्पर्श किया उसने प्राण त्याग दिये । ऋषि लोग गोहत्या से गौतम जी को कलंकित होने का बहाना लेकर वहाँ से चले गये । बाद में जब इस छल का पता चला तो गौतम ऋषि ने शाप

दे दिया कि जिस दण्डकारण्य के लोभ से तुम मेरे आश्रम को छल से त्याग कर गये हो वह दण्डकारण्य भस्म हो जाये। इस शाप के कारण सभी मुनियों को अत्यधिक कष्ट उठाने पड़े और भगवान् राम के वहाँ जाने पर वह शाप समाप्त हुआ। **धूमकेतुजाल**–पुच्छलताराओं का समूह–ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जहाँ पुच्छलतारा दिखाई देता है वहाँ के लोगों के अनिष्ट की कल्पना की जाती है। 'धूमकेतुः स्मृतो वह्नावुत्पातग्रहभेदयोः' इतिविश्वः। यहाँ **एकीभूतमिव** से लेकर **वेतालव्रातमिव** तक सर्वत्र जात्युत्प्रेक्षालङ्कार है।

मध्ये च तस्यातिमहतः शबरसैन्यस्य प्रथमे वयसि वर्तमानम्, अतिकर्कशत्वादायसमयमिव, एकलव्यमिव जन्मान्तरागतम्, उद्भिद्यमानश्मश्रुराजितया प्रथममलेखामण्ड्यमानगण्डभित्तिमिव गजयूथपतिकुमारकम्, असितकुवलयश्यामलेन देहप्रभाप्रवाहेण कालिन्दीजलेनेव पूरितारण्यम्, आकुटिलाग्रेण स्कन्धावलम्बिना कुन्तल भारेण केसरिणमिव गजमदमलिनीकृतेन केसरकलापेनोपेतम्, आयतललाटम्, अतितुङ्गघोरघोणम्, उपनीतस्यैककर्णाभरणतां भुजगफणामणेरापाटलैरंशुभिरालोहितीकृतेन पर्णशयनाभ्यासाल्लग्नपल्लवरागेणेव वामपार्श्वेन विराजमानम्, अचिरप्रहतगजकपोलगृहीतेन सप्तच्छदपरिमलवाहिना कृष्णागुरुपङ्केनेव सुरभिणा मदेन कृताङ्गरागम्, उपरि तत्परिमलान्धेन परिभ्रमता मायूरपिच्छातपत्रानुकारिणा मधुकरकुलेन तमालपल्लवेनेव निवारितातपम्, आलोलपल्लवब्याजेन भुजबलनिर्जितया भयप्रयुक्तसेवया विन्ध्याटव्येव करतलेनापमृज्यमानगण्डस्थलस्वेदलेखम्,……।

हिन्दी-अनुवाद—उस अत्यन्त विशाल शबरसेना के बीच मैंने 'मातङ्ग' नामवाले भील सेनापति को देखा—जो पहली अवस्था (यौवन) में विद्यमान था, (शरीर की) अतिशय कठोरता के कारण जो लौहनिर्मित प्रतीत होता था, (एक जन्म से) दूसरे जन्म में आया हुआ एकलव्य प्रतीत होता था,

जो उत्पन्न होती हुई श्मश्रुपंक्ति (दाढ़ी की रोमराजि) के कारण प्रथम मदलेखा से शोभायमान कपोलमण्डल वाले गजराज के बच्चे के समान था, जो नील-कमल की भाँति श्यामल-देहप्रभा के प्रवाह से वनप्रदेश को मानो (श्यामल) यमुनाजल से आप्लावित कर रहा था, जो कुछ कुछ घुँघराले अग्रभागों वाले तथा स्कन्धदेश तक लटके हुए चूर्णकुन्तलसमूह (घुँघराली अलकों) के कारण (मारे गये) गजराज के मद से मलिनीकृत सटाभार से सुशोभित वनकेसरी के समान था, जो चौड़े मस्तक वाला था, जो अत्यन्त उन्नत तथा रौद्रनासिका वाला था, जो एक कर्णप्रान्त (अर्थात् बाएँ) में आभरण बनाई गयी सर्प की फणामणि की श्वेत-रक्त मयूखों द्वारा कुछ-कुछ लाल बनाये गये अतएव मानो पर्णशय्या पर शयन करने के अभ्यासवश पल्लवों की अरुणाई संवलित वाम-पार्श्व से शोभायमान था, जो सद्यः व्यापादित (मारे गये) गजराज के गडस्थल से गृहीत अतएव सप्तवर्ण (सतौना) वृक्ष की गन्ध को वहन करने वाले तथा कालागुरु के उबटन की भाँति सुरभियुक्त मदजल से चर्चित (शरीर वाला) था, जो मदजल की महक से विकलीभूत (अतएव सिर के) ऊपर संचरण करने वाले मयूरपंखी आतपत्र (छत्ते) का अनुकरण करने वाले तथा तमालपल्लव के समान (श्यामवर्णी) भ्रमरसमुदाय द्वारा अवरुद्ध सूर्यातप (धूप) वाला था, जो (कर्णा-वतंसीकृत) चञ्चल पल्लवों के बहाने मानो भुज पराक्रम से वशीकृत अतएव भय के कारण परिचर्या में लगी हुई विन्ध्यवनस्थली द्वारा (अपनी) हथेलियों से पोंछे जाते हुए कपोलमण्डल के स्वेद-बिन्दुओं वाला था।

संस्कृत-व्याख्या–तस्य पूर्वोक्तवर्णितस्य, **अतिमहतः**=अत्यन्तविशालस्य, **शबरसैन्यस्य**=किरातदलस्य च, **मध्ये**=अन्तः, **प्रथमे**=वार्धकापेक्षया पूर्वोत्तरे, **वयसि**=अवस्थायाम्, **वर्तमानम्**=विद्यमानम्, **अतिकर्कशत्वात्**=अतिकठिन-त्वात्, **आयसमयमिव**=आयसं लौहं तेन निर्मितम् इव, **लोहमयमिव**, **जन्मान्त-रागतम्**=अन्यद् जन्म जन्मान्तरम् अपरजन्म तस्मिन् आगतम् आयातम्, **एकल-व्यम् इव**=द्रोणशिष्यभूतं भिल्लकुमारम् इव, **उद्भिद्यमानश्मश्रुराजितया** =उद्भिद्यमाना श्मराजिः मुखलोमपंक्तिः यस्यः सः तस्य भावः तत्ता तया

उत्पद्यमानमुखलोमश्रेणितया, **प्रथममदलेखामण्ड्यमानगण्डभित्तिम्**—प्रथमा नवीना या मदलेखा तया मण्ड्यमाना अलङ्क्रियमाणा गण्डभित्ति: कपोलप्रदेश: यस्य तम्, **गजयूथपतिकुमारकम्**=गजानां हस्तिनां यूथपति: मण्डलाधिपति: गजेन्द्र: तस्य कुमारक: शावक: तम् इव, **असितकुवलयश्यामलेन**=असितं कृष्ण-वर्णं यत् कुवलयम् उत्पलं तद्वत् श्यामल: कृष्णवर्ण: तेन, **देह प्रभाप्रवाहेण**=देहस्य शरीरस्य प्रभाद्युति: तस्या: प्रवाह: स्रोत: तेन, **कालिन्दीजलेन इव**=यमुना-जलसदृशेन, **पूरितारण्यम**=पूरितं भृतम् अरण्यं काननं येन तम्, **गजमदमलिनी कृतेन**=गजमद: हस्तिदानवारि तेन मलिनीकृत: अमलिन: मलिन: कृत: इति कृष्णीकृत: तेन, **केसरकलापेन**=केसराणां जटानां कलाप: समूह: तेन युक्तम्, **केसरिणम् इव**=सिंहम् इव, **आकुटिलाग्रेण**=आ ईषत् कुटिलं कुञ्चितम् अग्रं प्रान्तभाग: यस्य तेन, **स्कन्धावलम्बिना**=स्कन्धयो: अंसदेशयो: अवलम्बते विराजते इति तच्छील:तेन, **कुन्तलभारेण**=कुन्तलनां बालानां भार: कलाप: तेन केशकलापेन, **उपेतम्**=युक्तम्, **आयतललाटम्**=आयत विशाल ललाटं भालं यस्य तम्, **अतितुङ्गघोरघोणम्**=अतितुङ्गा अत्युच्चा घोरा भयंकरो घोणा नासा यस्य तम्, **एककर्णाभरणताम्**=एककर्णस्य एकश्रोत्रस्य आभरणताम् आभूषणताम्, **उपनीतस्य**=प्रापितस्य, **भुजगफणामणे**=भुजग: सर्प: तस्य फणा फटा तस्या: मणि: रत्नं तस्य, **आपाटलै:**=आ ईषत् पाटला: श्वेत-रक्ता: तै:, **अंशुभि**=दीप्तिभि:, **आलोहितीकृतेन**=आ ईषत् लोहितं लोहितं कृतम् इति लोहितीकृतम् ईषल्लोहितीकृतम् आलोहितीकृतम् किञ्चिद् अरुणीकृतं तेन, अतएव, **पर्णशयनाभ्यासात्**=पर्णेषु पत्रेषु यत् शयनं स्वाप: तस्य अभ्या-सात् पुन: अनुष्ठानात्, **लग्नपल्लवरागेण इव**=लग्न: आश्लिष्ट: पल्लवानां किसलयानां राग: आरुण्यं यस्मिन् तथाभूतेन इव, **वामपार्श्वेन**=सव्यपक्षेण, **विराजमानम्**=शोभमानम्, **अचिरप्रहतगजकपोलगृहीतेन**—अचिरम् अविलम्बं प्रहत: व्यापादित: य: गज: करि: तस्य कपोलौ गण्डौ ताभ्यां गृहीतेन आदत्तेन, **सप्तच्छदपरिमलवाहिन:**=सप्त सप्तसंख्याया: छदा: पर्णानि यस्य स: सप्तपर्ण-वृक्ष: तस्य परिमल: गन्ध: तम् इव परिमलं वहति धारयति इति तच्छील: तेन, **कृष्णागुरुपंकेन इव**=कृष्णागुरु: काकतुण्ड: सुगन्धिद्रव्यविशेष: तस्य पङ्क: कर्दम:

तेन इव तत्सदृशेन, **सुरभिणा**=घ्राणतर्पणेन, **मदेन**=दानवारिणा, **कृताङ्ग-रागम्**=कृतः विहित अगरागः शरीरलेपनं येन तम्, **उपरि**=शिरोभागे, **तत्परिमलगन्धेन**=तस्य मदस्य परिमलः गन्धः तेन अन्धः मत्तः तादृशेन, **परि-भ्रमता**=पयर्टता, **मायूरपिच्छातपत्रानुकारिणा**=मयूरस्य इमानि मायूराणि मयूरसम्बन्धीनि पिच्छाणि बर्हाणि तेषाम् आतपत्रं छत्रं तद् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलं तेन, **मधुकरकुलेन**=मधुकराणां भ्रमराणां कुलं समूहः तेन, **तमालपल्लवेन इव**=तापिच्छकिसलयेन इव, **निवारितातपम्**=निवारितः दूरीकृत. आतपः उष्णता येन तम्, **भुजबलनिर्जितया**=भुजयोः बाह्वोः बलं शक्तिः तेनः निर्जिता पराजित तया, **अतएव भयप्रयुक्तसेवया**=भयेन भीत्या प्रायुक्ता आरब्धा सेवा परिचर्या यया तया, **आलोलपल्लवव्याजेन**=आलोलाः चञ्चलाः पल्लवाः किसलयानि तेषां व्याजः छद्म तेन, **करतलेन इव**=पाणि-तलेन इव, **अपमृज्यमानगण्डस्थलस्वेदलेखम्**=अपमृज्यमाना प्रोञ्छ्यमाना गण्ड-स्थलयोः कपोलस्थलयोः स्वेदलेखा घर्मबिन्दुपङ्क्तिः यस्य तं तादृशम् ।

टिप्पणी–प्रथमे वयसि–युवा अवस्था में। **आयसमयम्**=लोहे का बना हुआ; (अयः एव आयसम् स्वार्थ में अण्) अयः और आयस दोनों शब्द लोहे के अर्थ में चलते हैं। **एकलव्य**=भीलकुमार, जिसने द्रोणाचार्य की प्रतिमा को गुरु बना कर बाणविद्या का अभ्यास करके अर्जुन को भी आश्चर्यान्वित कर दिया था। **श्मश्रुराजि**–दाढ़ी की रेखा। **सुरभि**–नासिका को तृप्त करने वाली गन्धवाला (सुरभिर्घ्राणतर्पणः, अमरकोष) **परिमल**–गन्ध; पत्र पुष्प आदि को मसलने से उत्पन्न गन्ध के लिये प्रयुक्त होने वाला यह शब्द अब सामान्य गन्धमात्र के लिये प्रचलित हो गया है। **'असित···अरण्यम्'** यहाँ **लुप्तोपमा द्रव्योत्प्रेक्षा** तथा **अतिशयोक्ति** का **संकर** है। **करतलेन इव** में **अपन्हवोत्प्रेक्षा** है।

आपाटलया हरिणकुलकालरात्रिसन्ध्यायमानया शोणितार्द्रयेव दृष्ट्या रञ्जयन्तमिवाशाविभागान्, आजानुलम्बिना कुञ्जरकरप्रमाण-मिव गृहीत्वा निर्मितेन चण्डिकारुधिरबलिप्रदानायासक्तनिशितशस्त्रो-ल्लेखविषमितशिखरेण भुजयुगलेनोपशोभितम्, अन्तरान्तरालग्नाश्यान-

हरिणरुधिरबिन्दुना स्वेदजलकणिकाचितेन गुञ्जाफलमिश्रैः करिकुम्भमुक्ताफलैरिव रचिताभरणेन विन्ध्यशिलातलविशालेन वक्षःस्थलेनोद्भासमानम्, अविरतश्रमाभ्यासादुल्लिखितोदरम्, इभमदमलिनमालानस्तम्भयुगलमुपहसन्तमिवोरुदण्डद्वयेन, लाक्षालोहितकौशेयपरिधानम्, अकारणेऽपि क्रूरतया बद्धत्रिपताकोदग्रभ्रुकुटिकराले ललाटफलके प्रबलभक्त्याराधितया मत्परिग्रहोऽयमिति कात्यायन्या त्रिशूलेनेवाङ्कितम्...।

हिन्दी-अनुवाद–जो कुछ-कुछ पाटलवर्ण (श्वेत-रक्त) वाली अतएव मृग-समुदाय की कालरात्रि (मरणयामिनी) की (रक्तवर्णा) पूर्वसन्ध्या प्रतीत होने वाली तथा मानो (उनके) रक्त से गीली हुई (अपनी) दृष्टि से दिग्विभागों को रंग रहा था, जो घुटनों तक लटकने वाले अतएव मानो दिग्गजों शुण्डादण्डों की नाप लेकर (विधाता द्वारा) बनाये गये तथा महाकाली को रक्तबलि देने के लिये बारम्बार तीक्ष्ण किये गये (खड्गादि) शस्त्रों के संघर्षण वश क्षत-विक्षत हुये अग्रभागों वाले बाहु-युगल से अलंकृत था, जो बीच बीच में लगे हुये कुछ-कुछ सूखे हुये (मृत) हरिण को रक्तबिन्दुओं वाले स्वेद जलकणों से परि-व्याप्त अतएव मानो गुञ्जाफलों से सम्मिश्रित गजकुम्भों से उत्पन्न मुक्ताफलों से अलंकरण सम्पन्न किये हुये तथा विन्ध्य-शिलातल के समान विस्तीर्ण वक्षः-स्थल से शोभायमान था, जो निरन्तर किये जाने वाले श्रम की पौनः पुन्येन आवृत्ति होने के कारण उल्लिखित (कृश अथवा चिन्हित) उदरवाला था, जो स्तम्भसदृश ऊरुयुगल (दोनों जाँघों) से मानों गजमद से मलिन हुये आलान (गजबन्धनार्थ) स्तम्भयुगल का उपहास कर रहा था, जो लाक्षारस से रंगे हुये रेशमी वस्त्रों वाला था, जो (क्रोध का) कारण न होने पर भी निष्करुण जाति का होने के कारण त्रिवलियों से संवलित ऊँची भौंहों के कारण विकराल भाल-फलक पर मानो उत्कृष्ट भक्ति से वशीभूत भगवती दुर्गा द्वारा यह (मातङ्ग) मेरा प्रियजन है'–ऐसा समझकर त्रिशूल से चिन्हित कर दिया गया था।

संस्कृत-व्याख्या-आपाटलया=ईषच्छ्वेतरक्तया, हरिणकुलकालरात्रिसंध्या

यमानया=हरिणानां मृगाणां कुलं वृन्दं तस्य काल रात्रि: विनाशनिशा तस्या: सन्ध्यायमाना सन्ध्यावद् आचरतीति सन्ध्यायमाना सन्ध्यासदृशी तया, **शोणिताद्रया इव**=शोणितं रक्तं तेन आर्द्रा क्लिन्ना तया इव रक्तस्नातया इव, **दृष्ट्या**=नेत्रेण, **आशाविभागान्**=दिग्भागान्, **रञ्जयन्तम् इव**=रक्तीकुर्वन्तम् इव, **आजानुलम्बिना**=आजानु ऊरुपर्वपर्यन्तं लम्बते इति तच्छीलम् तेन, अतिदीर्घेण इति भाव:, **कुञ्जरकरप्रमाणमिव**=कुञ्जर: करी तस्य कर: शुण्डा तस्य प्रमाणम् इव परिमाणम् इव, **गृहीत्वा**=आदाय, **निर्मितेन**=विरचितेन, **चण्डिकारुधिरबलिप्रदानाय**=चण्डिका दुर्गा तस्यै रुधिरबले: रक्तोपहारस्य प्रदानं समर्पणं तस्मै, **असकृत्**=वारं वारम्, **निशितशस्त्रोल्लेखविषमितशिखरेण**=निशितानि तीक्ष्णानि शस्त्राणि खड्गादीनि तेषाम् उल्लेख:-शाणघर्षणं तेन विषमितम् उन्नतानतं शिखरं भुजशिर: यस्य तेन, **भुजयुगलेन**=बाहुद्वन्द्वेन, **उपशोभितम्**=विराजमानम्, **अन्तरान्तरा**=मध्ये-मध्ये, **लग्नाश्यानहरिणरुधिरबिन्दुना**=लग्ना: आश्लिष्टा: अश्याना: अशुष्का: हरिणानां मृगाणां रुधिर-बिन्दव: रक्तकणा: यत्र तेन, **स्वेदजलकणिकाचितेन**=स्वेदजलं घर्मजलं तस्य कणिका: बिन्दव: ताभि: चितेन व्याप्तेन, अतएव **गुञ्जाफलमिश्रै:**=गुञ्जाफलानि काकचिञ्चाफलानि तै: मिश्रै: संयुक्तै:, **करिकुम्भमुक्ताफलै:**=करिणां हस्तिनां कुम्भेषु शिर:पिण्डेषु यानि मौक्तिकानि तै:, **रचिताभरणेन इव**=रचितं निर्मितम् आभरणम् आभूषणम् यस्य तेन इव, **विन्ध्यशिलातलविशालेन**=विन्ध्यस्य विन्ध्याख्यपर्वतस्य शिलातलं प्रस्तर:तद्वत् विशालेन आयतेन, **वक्ष:-स्थलेन**=उर:स्थलेन, **उद्भासमानम्**=देदीप्यमानम्, **अविरतश्रमाभ्यासात्**=अविरतं निरन्तरं य: श्रम: व्यायाम: तस्य अभ्यासात् पुन: पुन: अनुष्ठानात्, **उल्लिखितोदरम्**=उल्लिखितं कृशम् उदरं जठरं यस्य तम्, **ऊरुदण्डद्वयेन**=ऊर्वौ दण्डौ इव इति ऊरुदण्डौ तयो: द्वयं तेन जङ्घायुगलेन, **इभमदमलिनम्**=इभानां हस्तिनां मदेन दानवारिणा मलिनं श्यामवर्णम्, **आलानस्तम्भयुगलम्**=आलानं गजबन्ध: तदेव स्तम्भ: स्थूण: तयो: युगलं द्वन्द्वम् तद् उपहसन्तम् इव=तिरस्कुर्वन्तम् इव, **लाक्षालोहितकौशेयपरिधानम्**=लाक्षालोहितं लाक्षारस-रञ्जितं कौशेयं क्षौमं परिधानम् अधोंऽशुकं यस्य तम्, **अकारणेऽपि**=हेतु-

विरहेऽपि, **क्रूरतया**=घातकतया, **बद्धत्रिपताकोदग्रभ्रुकुटिकराले**=बद्धा रचिता त्रिपताका त्रिवलिः या सा चासौ उदग्रा उन्नता भ्रकुटिः कुटिलभ्रूलता तया कराले कुटिले, **ललाटफलके**=ललाटं फलकम् इव इति तस्मिन् भालपट्टे **प्रबलभक्त्याराधितया**=प्रबला उत्कृष्टा या भक्तिः आराधना तया आराधिता पूजिता तया, **कात्यायन्या**=दुर्गया, **अयम्**=एष मातङ्गः, **मम**=दुर्गायाः, **परिग्रहः** कृपापात्रम्, **त्रिशूलेन**=त्रिशूलाख्यास्त्रविशेषेण, **अंकितम् इव**=चिन्हितमिव ।

टिप्पणी-आशाविभागान्–दिग्भाग, सभी दिशायें ; दिशाओं के नाम इस प्रकार हैं–पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ऊर्ध्व अधः । **अविरत···उदरम्**–सर्वदा व्यायाम करने से जिसका पेट (पेट की चर्बी) छट गया था और इसीलिये जो बीच से खरादा गया–सा लगता था । गुप्त-कालीन कला के आदर्श रूप में शारीरिक सौन्दर्य के लिए मध्यभाग का उल्लिखित होना आवश्यक था । **आलान**–हाथी बांधने का खूंटा, 'आलानं बन्धस्तम्भे' (अमरकोष) के अनुसार आलान का अर्थ स्वयं बन्धस्तम्भ है फिर भी बाण ने आलानस्तम्भ लिखा है इससे ज्ञात होता है कि उस समय आलान केवल 'बन्धन' के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा था इसलिये बाद में कोशों में 'आलानं गजबन्धनम्' पाठ भी दिखाई देता है । **बद्धत्रिपताका···कराले**–त्रिपताका युक्त उग्र भौंहों से विकराल लगने वाला माथा । अहिच्छत्रा से प्राप्त मिट्टी के खिलौनों में एक गुप्तकालीननृसिंहमूर्ति में भी त्रिशूल से अंकित जैसी त्रिपताक भृकुटी का सुन्दर चित्रण पाया जाता है । **उपहसन्तमिव** में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है । **'अंकितमिव'** मे भी **क्रियोत्प्रेक्षा है ।**

उपजातपरिचयैरनुगच्छद्भिः श्रमवशाद् दूरनिर्गताभिः स्वभाव-पाटलया शुष्काभिरपि हरिणशोणितमिव क्षरन्तीभिर्जिह्वाभिरावेद्य-मानखेदैर्विवृतमुखतया स्पष्टदृष्टदन्तांशून् दंष्ट्रान्तराललग्नकेसरि-सटानिव सृक्कभागानुद्वहद्भिः स्थूलवराटकमालिकापरिगतकण्ठै-र्महावराहदंष्ट्राप्रहारजर्जरैरल्पकायैरपि महाशक्तित्वादनुपजातकेस-

रीव केसरिकिशोरकैर्मृगवधवैधव्यदीक्षादानदक्षैरनेकवर्णैः श्वभिरति-प्रमाणाभिश्च केसरिणामभयप्रदानयाचनार्थमागताभिः सिंहीभिरिव कौलेयककुटुम्बिनीभिरनुगम्यमानम्…।

हिन्दी-अनुवाद–जो परिचय उत्पन्न हो जाने के कारण अनुगमन करने वाले (आखेटजन्य) परिश्रम के कारण दूर तक (मुँह से बाहर) निकली हुई स्वभावतः पाटलवर्णी (श्वेतरक्त) होने के कारण सूखी हुई होने पर भी मानो मृगरुधिर का क्षरण (वमन) करती हुई जीभों से (अपनी) विषण्णता का ज्ञापन करने वाले-मुख खुले होने के कारण स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती हुई दन्त-दीप्तियों वाले अतएव मानो दाढों के बीच में लगी हुई वनकेसरी की सटाओं (स्कन्धकेसरों) वाले ओष्ठप्रान्त को वहन करते हुए–बड़ी-बड़ी कौड़ियों की माला से घिरे हुए कण्ठदेशों वाले-विशाल वनशूकरों की मार से शिथिल अङ्गों वाले छोटा आकार होने पर भी प्रौढ़पराक्रम वाला होने के कारण अनुत्पन्न स्कन्धकेशों वाले वनकेसरी के बच्चों जैसे प्रतीत होते हुए तथा हरिणाङ्गनाओं को वैधव्यव्रत प्रदान करने में निपुण-अनेक रंगों वाले (शिकारी) कुत्तों एवं विशालकाय अथच (अपने पतियों) वनकेसरियों के लिए अभयदान (प्राणरक्षा) की अभ्यर्थना करने के लिए आई हुई सिंहनियों–सी प्रतीत होने वाली कुतियो द्वारा अनुसरण किया जा रहा था।

संस्कृत-व्याख्या–**उपजातपरिचयैः**=उपजातः परिचयः संस्तवः येषां तैः, अतएव **अनुगच्छद्भिः**=अनुसरद्भिः, **श्रमवशात्**=श्रमः गमनखेदः तस्य वशात्, **स्वभावपाटलतया**=स्वभावेन प्रकृत्या पाटलाः श्वेतरक्ताः तासां भावः तत्ता तया, **शुष्काभिः अपि**=नीरसाभिः अपि, **हरिणशोणितम्**=हरिणानां मृगाणां शोणितं रुधिरम्, **क्षरन्तीभिः इव**=स्रवन्तीभिः इव, **जिह्वाभिः**=रसनाभिः, **आवेद्यमानखेदैः**=आवेद्यमानः प्रकटीक्रियमाणः खेदः श्रमः यैः तैः, **विवृतमुखतया**=विवृतं व्यात्तं मुखं लपनं येषां ते विवृतमुखाः तेषां भावः तत्ता तया, **स्पष्टदृष्टदन्तांशून्**=स्पष्टं सुस्फुटं दृष्टाः अवलोकिताः दन्तानां रदानां अंशवः किरणाः तान्, **अत एव दंष्ट्रान्तराललग्नकेसरिसटान् इव**=दंष्ट्राणां दशनानाम् अन्तराले मध्ये

लग्नाः सक्ताः केसरिणां सिंहानां सटाः केसराः येषु तान् इव, **सृक्कभागान्**=ओष्ठप्रान्तान्, **उद्वहद्भिः**=धारयद्भिः, **स्थूलवराटकमालिकापरिगतकण्ठैः**=स्थूलाः पीवराः वराटकाः कपर्दकाः तेषां मालिकाः स्रजः ताभिः परिगताः वेष्टिताः कण्ठाः गलप्रदेशाः येषां तैः, **महावराहदंष्ट्राप्रहारजर्जरैः**=महावराहाः वनशूकरा तेषां दंष्ट्राः दाढ़ाः तासां प्रहाराः आघाताः तैः, जर्जराः क्षतविक्षताः तैः, **अल्पकायैः अपि**=स्वल्पशरीरैः अपि सद्भिः, **महाशक्तित्वात्**=महती प्रबला शक्तिः सामर्थ्यं येषां ते महाशक्तयः तेषां भावः तत्त्व तस्मात्, **अनुपजातकेसरैः**=अनुपजाता अनुत्पन्नाः केसराः सटाः येषां तैः, **केसरिकिशोरकैः इव**=केसरिणां सिंहानां किशोरकाः शिशवः तैः इव सिंहशिशुसदृशैरित्यर्थः **मृगवधूवैधव्यदीक्षादानदक्षैः**=मृगाणां हरिणानां बध्वः स्त्रियः हरिण्यः ताभ्यः यत् वैधव्यदीक्षादानं वैधव्यं विनष्टभर्तृकता तस्य दीक्षा व्रतशिक्षा तस्याः दानं शिक्षणं तस्मिन् दक्षैः कुशलैः, **अनेकवर्णैः**=अनेके बहवः वर्णाः रक्तपीतादयः येषां तैः, **श्वभिः**=कौलेयकैः, **अतिप्रमाणाभिः**=विशालाकाराभिः, **केसरिणाम्**=सिंहानाम्, **अभयप्रदानयाचनार्थम्**=अभयस्य मरणभयविरहस्य प्रदानम् आश्वासनं तस्य याचनार्थं प्रार्थनार्थम्, आगताभिः=आयताभिः, **सिंहीभिः इव**=सिंहिनीभिः इव, **कौलेयककुटुम्बिनीभिः**=सारमेयभार्याभिः, **च**=समुच्चयार्थकोऽयम्, **अनुगम्यमानम्**=अनुव्रज्यमानम् ।

टिप्पणी–सृक्कभाग–जबड़े, ओष्ठों के दोनों प्रान्त भाग । **क्षरन्तीभिरिव में क्रियोत्प्रेक्षा है । सिंहीभिरिव में जात्युत्प्रेक्षा है ।**

कैश्चिद्-गृहीतचमरबालगजदन्तभारैः, कैश्चिदच्छिद्रपर्णबद्धमधुपुटैः कैश्चिन्मृगपतिभिरिव विभिन्नगजकुम्भमुक्ताफलनिकरसनाथपाणिभिः, कैश्चिद्यातुधानैरिव गृहीतपिशितभारैः, कैश्चित् प्रमथैरिव केसरिकृत्तिधारिभिः, कैश्चित् क्षपणकैरिव मयूरपिच्छवाहिभिः, कैश्चिच्छिशुभिरिव काकपक्षधरैः, कैश्चित् कृष्णचरितमिव दर्शयद्भिः समुत्खातविधृतगजदन्तैः, कैश्चिज्जलदागमदिवसैरिव जलधरच्छायामलिनाम्बरैरनेकवृत्तान्तैः शबरवृन्दैः परिवृतम्....।

हिन्दी अनुवाद--जो चमरमृगों के केश तथा हाथी दाँतों का गट्ठर लिए हुए कुछ लोगों से–छिद्रविहीन पर्णों से मधु (रखने के लिए) का दोना बाँधे हुए कुछ लोगों से–हाथियों के कुम्भस्थल से उत्पन्न मुक्ताफल-समूह से भरे हुए पञ्जों वाले वनकेसरियों की भाँति हाथियों के ललाट प्रदेश से उद्भूत मुक्ताफल समूह से अलंकृत हाथों वाले कुछ लोगों से–मांस का भार लिए हुए राक्षसों की भाँति मास का भार ढोते हुए कुछ लोगों से–सिंहचर्म धारण करने वाले प्रमथों (भगवान् शङ्कर के पार्षदों) की भाँति सिंहचर्म धारण करने वाले कुछ लोगों से–मयूरपंख लिए रहने वाले दिगम्बरों (नागा संन्यासियों) की भाँति मयूरपंख धारण किए हुए कुछ लोगों से काकपक्ष (शिखण्डक अथवा जूड़ा) धारण करने वाले शिशुओं की भाँति कौओं के पंख धारण करने वाले कुछ लोगों से–(पहले) सम्यक् प्रकार से उत्पादित (तथा बाद में) विशिष्ट रूप से धारण किये गये हाथी दातों वाले अतएव (कंस के यज्ञमण्डप में) सम्यकरूप से उखाड़ कर धारण किये गये (कुवलयापीड नामक) हाथी के दातों वाले भगवान् कृष्ण की लीला को मानों प्रकाशित करने वाले कुछ लोगों से–बादलों की छाँह से मलिनीभूत गगनमण्डल वाले वर्षाकालीन दिनों की भाँति (काली) मेघों की कान्ति के समान मलिन वस्त्रों वाले कुछ लोगों से तथा बहुविध चरित्रों वाले भील-समुदाय से घिरा हुआ था······

संस्कृत-व्याख्या–**कैश्चित्**=कतिपयैः, **गृहीतचमरबालगजदन्तभारैः**=गृहीताः आत्ताः चमरबालानाम् एतन्नामकमृगपुच्छकेशानां गजदन्तानां हस्तिदशनानां च भाराः परिमाणविशेषाः यैः तैः, **कैश्चिदच्छिद्रपर्णबद्धमधुपुटैः**=अच्छिद्राणि रन्ध्ररहितानि यानि पर्णानि पत्राणि तैः बद्धानि निर्मितानि मधुपुटानि पुष्परस-पुटानि यैः तैः, **कैश्चित् मृगपतिभिरिव**=सिंहैरिव, **विभिन्नगजकुम्भमुक्ताफल-निकरसनाथपाणिभिः**=विभिन्नाः विदीर्णाः ये गजकुम्भाः हस्तिशिराः पिण्डाः तेषां यानि मुक्ताफलानि मौक्तिकानि तेषां निकरः समूहः तेन सनाथाः सहिताः पाणयः कराः येषां तैः, **कैश्चिद्यातुधानैरिव**=पिशाचैः इव, **गृहीतपिशितभारैः**=गृहीतः धृतः पिशितस्य मांसस्य भारः परिमाणविशेषः यैः तैः, **कैश्चित्प्रमथैः इव**=रुद्रगणैः इव, **केसरिकृत्तिधारिभिः**=केसरिणां सिंहानां कृत्तयः चर्माणि ताः

धारयन्ति बिभ्रति इति तच्छीला: तैः, **कैश्चित् क्षपणकैः इव**=जैनैः दिगम्बरैः इव, **मयूरपिच्छवाहिभिः**=मयूराणां शिखिनां पिच्छानि कलापान् वहन्ति धारयन्ति इति तच्छील: तैः, **कैश्चित् शिशुभिः इव**=शावकैः इव, **काकपक्षधरैः**= काकानां वायसानां पक्षाः पतत्राणि तान् धरन्ति वहन्ति इति तैः शिशुपक्षे काकपक्षा: कुञ्चितकेशा: तान् वहन्ति इति तैः, **कैश्चित् कृष्णचरितम्**=वासुदेवचरित्रं **दर्शयद्भिः इव**=प्रकटयद्भिरिव, **समुत्खातविधृतगजदन्तैः**=पूर्वं समुत्खाता: उत्पाटिता: पश्चात् विधृता: गृहीता: गजदन्ताः हस्तिरदाः तैः, कृष्णोऽपि पूर्वसमुत्खातं पश्चात् विधृतं गजदन्तं गजस्य कंसप्रेरितस्य कुवलयापीडस्य करिणः दन्तं धारितवान् इति श्रीमद्भागवतकथा । **कैश्चित् जलदागमदिवसैः इव**=जलदागमः वर्षर्तुः तस्य दिवसाः दिनानि तैः इव, **जलधरच्छायामलिनाम्बरैः**=जलधराः जलदाः तेषां छाया कान्तिः तद्वत् मलिनानि कृष्णानि अम्बराणि वस्त्राणि येषां तैः जलदागमदिवसपक्षे–जलधराणां मेघानां छायया घटया मलिनं कृष्णवर्णं अम्बरं नभः यत्र तैः, **अनेकवृत्तान्तैः**=अनेके बहुप्रकाराः वृत्तान्ताः आचरणानि येषां तैः, **शबरवृन्दैः**=भिल्लगणैः, **परिवृतम्**=परिवेष्टितम् ।

टिप्पणी-गृहीत–ग्रह+क्त=गृहीत । **यातुधान**–राक्षस, पिशाच, हिंसा करने वाला, जादू या माया दिखाने वाला (यातुः हिंसा माया वा धीयते पात्रत्वेन यस्मिन्) । **पिशित मांस** । **प्रमथ**–शिव के गण । शास्त्रों में देवताविशेष के गणों या सेवकों का वेष भी देवतानुसार ही लिखा गया है । शिव की भाँति प्रमथ भी बाघम्बर धारण करते हैं । **कृत्ति**–खाल चर्म; कृत्+क्तिन् । **क्षपणक**––जैन साधु जो वस्त्र नहीं पहनते, दिगम्बर रहते हैं । मोरपंख लिए रहा करते हैं । (क्षपयति वस्त्रं दूरीकरोति इति क्षपणः–क्षप्+णिच्+ल्यु, स एव क्षपणकः स्वार्थे कन्) । **काकपक्ष**=कौए के पंख, बच्चों के घुंघराले बाल । **गजदन्त**=हाथीदाँत, कुवलयापीड नामक हाथी का दाँत, जिसे कृष्ण ने कंस की मल्लशाला में प्रवेश करते समय सूँड को पकड़ कर पटका था और उसका दाँत उखाड़कर उसी से कुवलयापीड तथा उसके महावत अम्बष्ठ को मारा था । यहाँ प्रायः उपमालंकार है । **दर्शयद्भिरिव** में क्रियोत्प्रेक्षालंकार है ।

अरण्यमिव सखड्गधेनुकम्, अभिनवजलधरमिव मयूरपिच्छ-चित्रचापधारिणम्, बकराक्षसमिव गृहीतैकचक्रम्, अरुणानुजमिवो-द्धृतानेकमहानागदशनम्, भीष्ममिव शिखण्डिशत्रुम्, निदाघदिवसमिव सततविभूतमृगतृष्णम्, विद्याधरमिव मानसवेगम्, पराशरमिव योज-नगन्धानुसारिणम्, घटोत्कचमिव भीमरूपधारिणम्, अचलराज-कन्यका केशपाशमिव नीलकण्ठचन्द्रकाभरणम्, हिरण्याक्षदानवमिव महावराह-दंष्ट्राविभिन्नवक्षःस्थलम्, अतिरागिणमिव कृतबहुबन्दोपरिग्रहम्, पिशि-ताशनमिव रक्तलुब्धकम्, गीतकलाविन्यासमिव निषादानुगतम्, अम्बि-कात्रिशूलमिव महिषरुधिरार्द्रकायम्……।

हिन्दी-अनुवाद—जो गैंडों तथा वनकरिणियों से सङ्कुल वनप्रदेश की भाँति खड्ग (अर्थात् कौक्षेयक, कटार) तथा धेनुका (कृपाणिका, छुरी) से युक्त था जो मोरपंख के समान चित्र-विचित्र (रङ्गों वाले) इन्द्रधनुष को धारण करने वाले मेघ की भाँति मोरपङ्खों के कारण विविधवर्णों वाले धनुष को धारण किये था, जो एकचक्रा नगरी को स्वायत्तीकृत (स्वाधीन) कर लेने वाले राक्षस बकासुर की भाँति एक चक्र (अस्त्रविशेष) लिये हुये था, जो असंख्य महानागों (सर्पों) के दाँत उखाड़ लेने वाले अरुणानुज (विनतानन्दन गरुड़) की भाँति अनेक विशालकाय हाथियों के दाँत उखाड़ चुका था, जो (पाञ्चालनरेश द्रुपद के पुत्र) शिखण्डी के वैरी भीष्मपितामह की भाँति शिखण्ड (कलगी या चूड़ा) धारी मयूरों का शत्रु था, जो निरन्तर उत्पन्न हुई मृगमरीचिका (के भ्रम) वाले ग्रीष्मकालीन दिन की भाँति निरन्तर (वनों से) आविर्भूत मृगों (के वध) के लालच वाला था जो मानसरोवर में (स्नानादिहेतु) शीघ्रतापूर्वक गमन करने वाले विद्याधर (आकाशचारी देवयोनिविशेष) की भाँति 'मान' अर्थात् अहंकार के कारण 'संवेग' अर्थात् तीव्रगति वाला था (अथवा मानस मन की भाँति तीव्र गति वाला था), जो (धीवरकन्या) योजनगन्धा का (कामोपभोगार्थ) अनुगमन करने वाले महर्षि पराशर की भाँति योजनगन्ध अर्थात् कस्तूरीमृग का पीछा

करने वाला था, जो (पुत्ररूप में) भीम का रूप धारण करने वाले (हिडिम्बा राक्षसी के पुत्र) घटोत्कच की भाँति भयावह रूप धारण करने वाला था, जो नीलकण्ठ अर्थात् भगवान शङ्कर की (ललाटस्थ) चन्द्रकला रूपी आभरण से संवलित पर्वतराज (हिमाचल) की पुत्री (पार्वती) के वेणीबन्धन की भाँति नीलकण्ठ अर्थात् मयूरों की पिच्छचन्द्रिकाओं रूपी अलङ्करण वाला था, जो महावराह (रूपधारी भगवान् विष्णु) की दाढ़ों द्वारा विदारित वक्षःस्थल वाले हिरण्याक्ष दानव की भाँति विशालकाय वनशूकर द्वारा घायल किये गये वक्षःस्थल वाला था, जो असंख्य वैतालिकों (स्तुतिगायकों) को अपनाने वाले उत्कृष्ट यशोऽभिलाषी अथवा अत्यन्त विलासी व्यक्ति की भाँति असंख्य बलादपहृत स्त्रियों को (पत्नीरूप मे) स्वीकार करने वाला था, जो रक्तलोलुप आमिषभोजी (राक्षस) की भाँति अनुरक्त (आज्ञापालक) व्याधों से युक्त था, जो (वीणातंत्री से उत्पन्न) निषाद नामक स्वरविशेष से अनुगत गायनकला की रचना के समान निषादों (भीलों) द्वारा अनुगत था, जो महिषासुर के रक्त से गीली आकृतिवाले सिंहवाहिनी दुर्गा के त्रिशूल की भाँति (मारे गये) वनमहिषों के रक्त से भीगे हुये शरीरवाला था···।

संस्कृत-व्याख्या–**अरण्यम् इव**=विपिनमिव, **सखड्गधेनुकम्**=खड्गधेनुका छुरिका तया सह विद्यमानम्, अरण्यपक्ष खड्गाः गण्डकाः करिण्यः धेनुका ताभिः सह विद्यमानम्, **अभिनवजलधरम्**=अभिनवः नवीनः जलधरः जलदःतम् इव, **मयूरपिच्छचित्रचापधारिणम्**=मयूरपिच्छैः शिखिकलापैः चित्रः विविधवर्णः चापः धनुः तं धारयति वहति इति तच्छीलः, तम्, **जलधरपक्षे**=मयूरपिच्छवत् चित्रं विविधवर्णं चापम् इन्द्रधनुः धारयतिइति तच्छीलः तम्, **बकराक्षसम् इव**=बकासुरम् इव, **गृहीतचक्रम्**=गृहीतं धृतम् एकम् अद्वितीयं चक्रं शस्त्रविशेषः येन यम्, बकपक्षे-गृहीता अधीनीकृता एकचक्रा एतन्नाम्नी नगरी येन तम्, **अरुणानुजम् इव**=अरुणस्य सूर्यसारथेः अनुजः लघुभ्राता गरुडः तम् इव, **उद्धृतानेकमहानागदशनम्**=उद्धृतानि उत्पाटितानि अनेकेषां बहूनां महानागानां वनहस्तिनां दशनानि दन्ताः येन तम्, **गरुडपक्षे**=उद्धृतानि अनेकेषां महानागानां महासर्पाणां दशनानि येन तम्, **भीष्मम् इव**=शान्तनुपुत्रम् इव, **शिखण्डिशत्रुम्**=

शिखण्डिनां मयूराणां शत्रुं रिपुम्, भीष्मपक्षे शिखण्डिनः द्रुपदपुत्रस्य शत्रुम्, **निदाघदिवसम् इव**=निदाघस्य ग्रीष्मस्य दिवसः वासरः तम् इव, **सततविर्भूतमृगतृष्णम्**=सततं निरन्तरम् आविर्भूताः प्रकटीभूता मृगाणां हरिणानां तृष्णा मारणाभिलाषः यस्य तम्, निदाघदिवसपक्षे सततम् आविर्भूता मृगतृष्णा सूर्यरश्मिषु जलभ्रान्तिः यस्मिन् तम्, **विद्याधरम् इव**=देवयोनिविशेषम् इव, **मानसवेगम्**=मानेन गर्वेण सवेगः तीव्रगतिमान् तम्, विद्याधरपक्षे मानसे एतन्नामके सरोवरे वेगः तीव्रता स्नानादिनिमित्तं यस्य तम्, **पराशरम् इव**=व्यासजनकम् इव, **योजनगन्धानुसारिणम्**=योजनंचतुष्कोशगन्धः सौरभं यस्याः सा योजनगन्धाकस्तूरी सा अस्यास्तीति योजनगन्धः कस्तूरीमृगः तम् अनुसरति अनुधावति इति तच्छीलः तम् पराशरपक्षे योजनगन्धा धीवरकन्या सत्यवती ताम् अनुसरतीति तच्छीलः तम्, **घटोत्कचम् इव**=हिडिम्बासुतम् इव, **भीमरूपधारिणम्**=भीमं भयङ्करं रूपं वेषं धारयति इति तच्छीलः तम्, घटोत्कचपक्षे भीमस्य मध्यमपाण्डवस्य स्वपितुः रूपम् आकृतिं धारयति इति तच्छीलः तम्, **अचलराजकन्याकेशपाशम् इव**=न चलन्तीति अचलाः पर्वताः तेषां राजा हिमालयः तस्य कन्यका पुत्री पार्वती तस्याः केशपाशः बालजालम् तम् इव, **नीलकण्ठचन्द्रकाभरणम्**=नीलकण्ठाः मयूराः तेषां चन्द्रकाः मेचकाः (चन्द्राकाराः शिखण्डका इत्यर्थः) ते एव आभरणानि आभूषणानि यस्य तम्, केशपाशपक्षे नीलकण्ठः शिवः तस्य चन्द्रः एव चन्द्रकः भालचन्द्रमा स एव आभरणं यस्य तम्, **हिरण्यक्षादानवम् इव**=हिरण्याक्षः हिरण्यकशिपुभ्राता स चासौ दानवः दैत्यः तम् इव, **महावराहदंष्ट्राविभिन्नवक्षःस्थलम्**=महावराहाणां वनसूकराणां दंष्ट्राभिः दशनैः विभिन्नं विक्षतं वक्षःस्थलम् उरःस्थलं यस्य तम्, हिरण्याक्षपक्षे महावराहस्य वराहावताररूपस्य विष्णोः दंष्ट्राभिः विभिन्नं विदीर्णं वक्षःस्थलं यस्य तम्, **अतिरागिणम् इव**=अतिरागी अत्यन्तं कीर्तिलोभी (यशोरागी इत्यर्थः) तम् इव, **कृतबहुबन्दीपरिग्रहम्**=कृतः विहितः बहूनां बहुसंख्यकानां बन्दीनां हठादपहृतनारीणां परिग्रहः संग्रहः पत्नीत्वेन स्वीकारो वा येन तम्, अतिरागिपक्षे कृतः बहूनां बन्दिनां चारणानां परिग्रहः येन तम्, **पिशिताशनम् इव**=पिशितं मांसः अशनं भोजनं यस्य सः पिशिताशनः पिशाचः

तम् इव, **रक्तलुब्धकम्** = रक्ताः अनुरक्ताः लुब्धकाः व्याधाः यस्मिन् तम् पिशिताशनपक्षे रक्तस्य रुधिरस्य लुब्धः एव लुब्धकः लोभी तम् **गीतकलाविन्यासम् इव** = गीतस्य गानस्य कला विद्या तस्याः विन्यासः स्थापना तम् इव, **निषादानुगतम्** = निषादैः शबरैः अनुगतः अनुसृतः तम् गीतकलापक्षे निषादेन एतदाख्येन स्वरेण अनुगतं सहितम्, **अम्बिकात्रिशूलम् इव** = अम्बिका पार्वती तस्याः त्रिशूलः शस्त्रविशेषः तम् इव, **महिषरुधिरार्द्रकायम्** = महिषाणां सैरिभाणां रुधिरेण शोणितेन आर्द्रः क्लिन्नः कायः शरीरं यस्य तम् त्रिशूलपक्षे महिषस्य महिषासुरस्य रुधिरेण शोणितेन आर्द्रः क्लिन्नः कायः शरीरं यस्य तम् ।

टिप्पणी-सखड्गधेनुकम्—छुरी के साथ (छुरिका खड्गधेनुका) छोटी तलवार के साथ, वनपक्ष में खड्गों = गैंडों और धेनुकाओं = हथिनियों से युक्त। **गृहीतैकचक्रम्** = जिसने एक चक्र धारण कर रखा था; बकराक्षस पक्ष में एकचक्रा नगरी को जिसने अपने अधीन कर रखा था इस नगरी का नाम एकचक्रा इसलिए था, क्योंकि इस नगरी के राजा ने बकासुर के भोजन की व्यवस्था के लिए एक-एक व्यक्ति का चक्र बना रखा था। इस चक्र के अनुसार एक बार एक ब्राह्मण पुत्र का क्रम आया जिसकी रक्षा के लिए पाण्डुपत्नी कुन्ती ने उसके स्थान पर भीम को भेज दिया था और भीम ने बकासुर का संहार किया था। **अरुणानुज**–अरुण का छोटा भाई गरुड, प्रजापति कश्यप की पत्नी विनता से इसका जन्म हुआ था, ये बड़े ही पराक्रमी थे। इन्होंने अपनी माता की दासता को अपने पराक्रम से ही समाप्त किया था, ये भगवान् विष्णु के वाहन हैं। अरुण सूर्य का सारथी है। **शिखण्डिशत्रु**—मोरों का विनाशक, शिखण्डी का शत्रु भीष्म। महाभारत की मान्यता है कि शिखण्डी की शत्रुता भीष्म से पूर्व जन्म की थी। पूर्वजन्म के काशीराज की कन्या अम्बालिका ने भीष्म से विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी। भीष्म से स्वीकृति न मिलने पर उसने प्राण त्याग दिए और उसने अगले जन्म में द्रुपद के यहाँ शिखण्डी कन्या के रूप में जन्म ग्रहण किया। बाद में स्थूणाकर्ण नामक यक्ष ने इसे पुंसत्व प्रदान कर दिया था, यही शिखण्डी भीष्म की मृत्यु का कारण बना क्योंकि अर्जुन ने इसी को आगे करके बाणप्रहार किया था। **योजनगन्धानुसारिणम्**—

जिसकी गन्ध एक योजन (अर्थात्) चार कोस तक जाती है ऐसी योजनगन्धा (कस्तूरी वाले मृगों का अनुसरण करने वाला, योजनभर तक गन्धवाली) धीवर, कन्या सत्यवती का अनुसरण करने वाले ऋषि पराशर ने इस योजनगन्धा के साथ समागम करके व्यास पुत्र को जन्म दिया था। **भीमरूपधारिणम्**—भयंकर (उग्र) रूप को धारण करने वाला, भीम के समान रूप धारण करने वाला घटोत्कच। हिडिम्बा राक्षसी से भीम के द्वारा इसकी उत्पत्ति हुई थी। पुत्र होने के कारण इसकी आकृति भीम से मिलती जुलती थी। **महावराहदंष्ट्रा०**—जंगली सुअरों से लड़ने के कारण उनकी दाढ़ों से घायल छाती वाला सेनापति, वराह अवतार के रूप में दाढ़ों से फाड़ी गई छाती वाला हिरण्याक्ष जो हिरण्यकशिपु का भाई था। जिसने समस्त पृथ्वी को जल में डुबो दिया था। भगवान् विष्णु ने वराह रूप धारण करके पृथ्वी का उद्धार किया और हिरण्याक्ष के वक्षःस्थल को विदीर्ण करके उसका बध किया। **निषादानुगतम्**—राक्षसों से अनुगत सेनापति, निषाद नामक स्वर से युक्त गानविद्या की रचना। अरण्यमिव—से लेकर **महिषरुधिरार्द्रकायम्**—तक सर्वत्र उपमा अलङ्कार है।

···अभिनवयौवनमपि क्षपितबहुवयसम्, कृतसारमेयसंग्रहमपि फलमूलाशनम्, कृष्णमप्यसुदर्शनम्, स्वच्छप्रचारमपि दुर्गकशरणम्, क्षितिभृत्पादानुवर्तनमपि राजसेवानभिज्ञम्, अपत्यमिव विन्ध्याचलस्य, अंगावतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलिकालस्य, भीषणमपि महासत्त्वतया गम्भीरमिवोपलक्ष्यमाणम्, अनभिभवनीयाकृतिं मातङ्गनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्। अभिधानं तु तस्य पश्चादहमश्रौषम्।

हिन्दी-अनुवाद—जो नूतन युवावस्था वाला होकर भी लम्बी उम्र काट चुका था जो, 'सार' (धन) 'मेय' (नापने योग्य) अर्थात् धान्यादि अन्नों का संग्रह कर लेने पर भी फलमूल (मात्र) खाने वाला था, जो कृष्ण होकर भी कृष्ण सुदर्शन (चक्र) विहीन था, जो अप्रतिहतगति (स्वेच्छाभ्रमण) वाला होकर भी दुर्ग (किले) सरीखे एकमात्र आश्रय वाला था, जो भूपतियों के

चरणों का आनुगामी होकर भी राज सेवा से अनभिज्ञ था, जो विन्ध्यपर्वत की सन्तति प्रतीत होता था, जो कृतान्त यमराज का अंशावतार प्रतीत होता था, जो पाप का सगा भाई प्रतीत होता था, जो कलिकाल का सर्वस्व प्रतीत होता था, जो भयावह होने पर भी महापराक्रमशाली होने के कारण मानों धीरगम्भीर दिखाई पड़ रहा था तथा जो (दूसरों द्वारा) तिरस्कृत न की जा सकने योग्य अर्थात् दुर्धर्ष आकृतिवाला था । उस (सेनापति) का नाम तो मैंने बाद में (दर्शनानन्तर) सुना ।

संस्कृत-व्याख्या–अभिनवयौवनम् अपि=अभिनवं नवीनं यौवनं तारुण्यं यस्यास्ति तादृशम् अपि, **क्षपितबहुवयसम्**=क्षपितानि यापितानि बहूनि शैशवादीनि वयांसि आयूंषि येन तम्, अत्र विरोधः तत्परिहाराय क्षपितानि नाशितानि बहूनि वयांसि पक्षिणः येन तम् इत्यर्थः, **कृतसारमेयसंग्रहम्** अपि= कृतः विहितः साराणां घनानां मेघानां परिमातुं योग्यानां धान्यानां संग्रहः स्वीकारः येन तादृशम् अपि, **फलमूलाशनम्**=फलमूलानि एव कन्दादीनि एवं अशनं भोजनं यस्य तम्, घनधान्यसंग्रहेऽपि फलमूलाशने विरोधः तत्परिहारस्तु कृतः सारमेयाणां शुनां संग्रहः येन तादृशमिति, **कृष्णम्** अपि= वासुदेवम् अपि, **असुदर्शनम्**=अविद्यमानं सुदर्शनं सुदर्शनचक्रं यस्य तम्, अत्र विरोधः तत्समाधानाय कृष्णं कालवर्णम् अत एव असुदर्शनम् असुन्दरम् इत्यर्थः । **स्वच्छन्दप्रचारम्** अपि=स्वच्छन्दः स्वतन्त्रः प्रचारः परिभ्रमणं यस्य तादृशम् अपि, **दुर्गैकशरणम्**=दुर्गः कोटः एव एकं केवलं शरणं आवासस्थानं यस्य तम्, अत्र विरोधः तत्परिहारः दुर्गा एव चण्डी एव एक शरणं रक्षिका यस्य तम्, तादृशमिति,**क्षितिभृत्पादानुवर्तिनम्** अपि=क्षितिभृतः राज्ञः पादौ चरणौ अनुवर्तते सेवते इति तच्छीलः तादृशम् अपि, **राजसेवानभिज्ञम्**= राज्ञः सेवा राजसेवा नृपपरिचर्या तस्याः अनभिज्ञः अपरिचितः तम्, अत्र विरोधः, तत्परिहारः–क्षितिभृत् पर्वतः तस्यः पादाः प्रत्यन्तप्रदेशाः तान् अनुवर्तते इति तच्छीलं तम् इत्यर्थः, **विन्ध्याचलस्य**=विन्ध्यपर्वतस्य, **अपत्यम् इव**= सन्तानम् इव, कठिनशरीरमित्याशयः, **कृतान्तस्य**=यमराजस्य, **अंशावतारम् इव**=अवतीर्णां कलाम् इव, संहारकमित्याशयः, **पापस्य**=अशुभस्य, **सहोदरम्**

इव=समानम् उदरं यस्य स सद्दोदरः सोदर्यः तम् इव, यातनाप्रदमित्याशयः, **कलिकालस्य**=कलियुगस्य, **सारम्** इव=सर्वस्वम् इव, **भीषणम्** अपि=भयंकरम् अपि **महासत्त्वतया**=महत् महनीयं सत्त्वं सामर्थ्यं यस्य सः महासत्वाः तस्य भावः तत्ता तया अतिबलशालितया इत्यर्थः, **गम्भीरम्** इव=गाम्भीर्यगुणयुक्तम् इव, **उपलक्ष्यमाणम्**=दृश्यमानम्, **अनभिभवनीयाकृतिम्**=अभिभवितु योग्या अभिभवनीया न अभिभवनीया अनभिभवनीया अतिरस्करणीया आकृतिः आकारः यस्य तम्, **मातङ्गनामानम्**=मातङ्गः नाम यस्य सः मातङ्गनामा तं मातङ्गाभिधानम्, **शबरसेनापतिम्**=शबराणां किरातानां सेना दलं तस्याः पतिः स्वामी तम्, किरातदलस्वामिनम् इत्यर्थः, **अपश्यम्**=अवलोकयम् तस्य नाम्नः संस्तवः कथं जात इति शङ्कानिवारणाय आह-तस्य-शबरसेनापतेः **अभिधानम्**=नाम, तु **अहम्**=वैशम्पायनः **पश्चात्**=तद्दर्शनानन्तरम्, **अश्रौषम्**=आकर्णयम् ।

टिप्पणी वयस् –(क) अवस्था, (ख) पक्षी । **सारमेयसंग्रहः**–(क) सार-धन, मेय नापने योग्य वस्तु धान्यादि (ख) सारमेय-कुत्ता, इनका संग्रह । **क्षितिभृत्पाद**–क्षितिभृत् राजा उसके पाद-चरण, **क्षितिभृत्**–पर्वत उसके पादनिकटस्थ प्रदेश । **अनभिभवनीयाकृति**–उस शबर सेनापति के चेहरे पर ऐसा तेज दिखाई देता था कि कोई उसका अपमान करने का साहस ही नहीं कर सकता था । '**अभिनव**' से '**राजसेवानभिज्ञम्**' तक **विरोधाभास अलंकार** है । '**अपत्यमिव**' इत्यादि में **उत्प्रेक्षालंकार** है ।

आसीच्च मे मनसि—'अहो मोहप्रायमेतेषां जीवितं साधुजनविगर्हितं च चरितम् । तथाहि–पुरुषपिशितोपहारे धर्मबुद्धिः आहारः साधुजनविगर्हितो मधुमांसादिः श्रमो मृगया शास्त्रं शिवारुतम्, उपदेष्टारः सदसतां कौशिकाः प्रज्ञा शकुनिज्ञानम्, परिचिताः श्वानः, राज्यं शून्याटवीषु आपानकमुत्सवः, मित्राणि क्रूरकर्मसाधनानि धनूंषि, सहाया विषदिग्धमुखा भुजङ्गा इव सायकाः, गीतमुत्सादकारि मुग्धमृगाणाम्, कलत्राणि वन्दीकृतः परयोषितः, क्रूरात्मभिः शार्दूलैः सह संवासः,

पशुरुधिरेण देवतार्चनम्, मांसेन बलिकर्म, चौर्येण जीवनम्, भूषणानि भुजङ्गमणयः, वनगजमदैरङ्गरागः, यस्मिन्नेव कानने निवसन्ति तदेवोत्खातमूलमशेषतः कुर्वते' इति चिन्तयत्येव मयि स शबरसेनापतिरटवीपरिभ्रमणसमुद्भवं श्रममपनिनीषुरागत्य तस्यैव शाल्मलीतरोरधश्छायामवतारितकोदण्डस्त्वरितपरिजनोपनीतपल्लवासने समुपाविशत् ।

हिन्दी-अनुवाद–(उस समय) मेरे मन में आया–आश्चर्य है ! इन (भीलों) का जीवन अज्ञान से परिपूर्ण और इनका आचरण (भी) साधु पुरुषों के द्वारा विनिन्दित है। क्योंकि ये (भगवती दुर्गा को) नरमांस के नैवेद्यार्पण को ही धर्म समझते हैं। सत्पुरुषों द्वारा विगर्हित मदिरा एवं मांस इत्यादि ही (इनका) भक्ष्य है। आखेट (ही) व्यायाम है। शृगाली का रोदन ही (इनका) शास्त्र (प्रबोधजनक सिद्धान्त) है। उल्लू पक्षी (इनके लिए) शुभ एवं अशुभ के उपदेशक हैं। पक्षियों का ज्ञान अर्थात् पक्षियों के शब्द से शुभाशुभनिरूपण कर लेना इनकी विवेकबुद्धि है। कुत्ते (ही इनके) विश्वासपात्र हैं। जनशून्य वनस्थलियों में स्वामित्व है। मद्यपान गोष्ठी (ही) उत्सव है। दारुणकर्मों में सहायक बनने वाले धनुष् (ही) मित्र हैं। विषव्याप्त मुखोंवाले सर्पों की भाँति विष बुझी नोकों वाले बाण (ही इनके) सहायक हैं। भोले-भोले मृगों को विनाश करने वाला (कर्म ही इनका) गीत है। बन्दिनी के रूप में बालादपहृत पराई नारियाँ (इनकी) गृहणियाँ हैं। निर्दय आत्मावाले बाघों के साथ (इनका) रहन-सहन है। पशुओं के रक्त से (इनकी) देवोपासना होती है। मांस से बलि प्रदान (चढ़ावा) होता है। परद्रव्यापहरण से (इनका) प्राणधारण होता है। सापों की मणियाँ अलङ्करण हैं। बनैले गजराज के मद से अंगविलेपन होता है। (ये कोलभील) जिस वन में टिकते हैं उसी को समग्रतः समूल उन्मीलित कर देते हैं। मेरे इस प्रकार ध्यानावस्थित रहने पर भी वह शबरसेनापति वनस्थली में (इतस्ततः) पर्यटन करने से उत्पन्न थकावट को दूर करने की इच्छा से, उसी सेमर के पेड़ की अधोवर्तिनी छाया में आकर, धनुष

को उतार कर (अनधिज्य करके) तत्काल अनुचरों द्वारा लाये गए पल्लवों के आसन पर बैठ गया।

संस्कृत-व्याख्या--**मे**=मम, **मनसि**=हृदये, **आसीत्**=अभवत् **अहो**=आश्चर्यम्, **एतेषाम्**=पुरोदृश्यमानानाम्, **जीवितम्**=जीवनम्, **मोहप्रायम्**=मोहः अविवेकः प्राचुर्येण यस्मिन् तत्, प्रायः विवेकशून्यम्, **चरितम्**=आचरणं च, **साधुजनविगर्हितम्**=साधुजनैः सज्जनैः विगर्हितं विनिन्दितम्, तथाहि-पूर्वोक्तमेव, यथा **पुरुषपिशितोपहारे**=पुरुषाणां नराणां पिशितस्य मांसस्य उपहारे समर्पणे, **धर्मबुद्धिः**=पुण्यभावना, **साधुजनविगर्हितः**=साधुजनाः सज्जनाः तैः विगर्हितः विनिण्दितः, **मधुमांसादिः**=मधु मद्यं मांसं पिशितं ते आदौ यस्य स सुरापिशितादिः, **आहारः**=अशनम्, **मृगया**=आखेटः, **श्रमः**=व्यायामः, **शिवारुतम्**=शिवानां शृगालीनां रुतं रोदनशब्दः, **शास्त्रम्**=शासनग्रन्थः तेनैव निर्देशोपलब्धे, **सदसताम्**=सन्ति शुभानि असन्ति अशुभानि तेषाम्, **उपदेष्टारः**=उपदेशकः, **कौशिकाः**=उलूकाः, तेषां नीतेरेव अनुसरणाद्, **शकुनिज्ञानम्**=शकुनीनां पक्षिणां ज्ञानं बोधः, **प्रज्ञा**=नवनवोन्मेषशालिनी बुद्धिः, **श्वानः**=कौलेयकाः, **परिचिताः**=आत्मीयाः, **शून्याटवीषु**=शून्याः निर्जनाः अटव्यः विपिनानि तासु, **राज्यम्**=आधिपत्यम्, **आपानकम्**=मद्यपानगोष्ठी, **उत्सवः**=प्रमोदावसरः, **क्रूरकर्मसाधनानि**=क्रूराणां नृशंसानां कर्मणां हिंसादिकृत्यानां साधनानि हेतुभूतानि, **धनूंषि**=चापाः, **मित्राणि**=सुहृदः, **भुजङ्गाः इव**=विषधरा इव, **विषदिग्धमुखा**=विषेण गरलेन दिग्धं लिप्तं मुखम् अग्रभागः येषां ते, भुजङ्गपक्षे विषदिग्धं मुखम् आननं येषां ते इत्यर्थः, **सायकाः**=बाणाः, **सहायाः**=सहाय्यसम्पादकाः, **मुग्धमृगाणाम्**=मुग्धाः, सरलहृदयाः मृगाः हरिणाः तेषाम्, **उत्सादकारि**=विनाशकारि, **गीतम्**=गानम्, **बन्दीगृहीताः**=बन्द्यः कारावासिन्यः तद्रूपेण गृहीताः धृताः, अपहृता इति, **परयोषितः**=परेषां शत्रूणाम् अन्येषां वा योषितः ललनाः, **कलत्राणि**=सुन्दर्यः भोग्या इत्यर्थः **क्रूरात्मभिः**=क्रूरः आत्मा येषां तैः दुष्टान्तःकरणैः, **शार्दूलैः**=व्याघ्रैः, **सह**=साकम्, **संवासः**=आवासः, **पशुरुधिरेण**=पशूनां चतुष्पादानां रुधिरं शोणितं तेन, **देवतार्चनम्**=देवतायाः अर्चनम् देवपूजनम्, **मांसेन**=पिशितेन, **बलिकर्म**=बलिः हन्तकारः तस्याः कर्म

क्रिया, **चौर्येण**=तस्करवृत्त्या, **जीवनम्**=प्राणधारम्, **भुजङ्गमणयः**=भुजङ्गानां सर्पाणां मणयः फणारत्नानि, **भूषणानि**=अलङ्काराः, **वनगजमदैः**=अरण्य-हस्तिदानवारिभिः, **अङ्गरागः**=शरीरलेपनम्, **यस्मिन् एव**=यत्रापि, **कानने**=विपिने, **निवसन्ति**=तिष्ठन्ति, **तद् एव**=तत्काननम् एव, **अशेषतः**=अविद्य-मानः शेषः यस्य तस्मात् समग्रतया, पूर्णतः इति वा, **उत्खातमूलम्**=उत्खातं समुत्पाटितं मूलं बुध्नभागः यस्य तादृशं सर्वथा विनष्टमित्यर्थः, **कुर्वते**=कुर्वन्ति **इति**=एवम्, **मयि**=वैशम्पायने **चिन्तयति एव**=विचारयति एव, **सः**=पूर्वोक्तः, **शबरसेनापतिः**=किरातदलपतिः, **अटवीभ्रमणसमुद्भवन्**=अटवीषु काननेषु भ्रमणं संचरणं तस्मात् समुद्भवम् समुत्पन्नम्, **श्रमम्**=खेदम्, **अपनिनीषुः**=अपनेतुम् इच्छुः दूरीकर्तुम् अभिलाषुकः **तस्य**=पूर्ववर्णितस्य, **शाल्मलीतरोः**=शालमलीवृक्षस्य **अधश्छायायाम्** अधःस्थेऽनातपे **आगत्य**=उपगम्य, **अवतारितकोदण्डः**=अवतारितं स्कन्धात् अवनामितं कोदण्डः चापः येन तादृशः, **त्वरितपरिजनोपनीतपल्लवासने**=त्वरा संजाता अस्य इति त्वरितः शीघ्रतावान् परिजनः सेवकः तेन उपनीतं समीपे प्रापितं यत् पल्लवासनं किसलय विष्टरः तस्मिन् तादृशे, **समुपाविशत्**=तस्थिवान् ।

टिप्पणी–मोहप्राय–प्रायः अज्ञान से भरा हुआ, अपने कार्य में शबर-लोग चतुरता रखते हैं और दुर्गापूजन—जैसा विवेकपूर्ण कार्य भी करते हैं इसलिए उनके जीवन को प्रायः अविवेकशील बताया गया है, पूर्णतः नहीं । **आपानकम्**—(आ समन्तात् आगत्य पिबन्ति यत्र तद् आपानम् आपानमेव आपानकम्) शराब पीने की गोष्ठी जिसमें सभी लोग मिलकर शराब पीते हैं । यही आयोजन शबरों के लिए उत्सव स्वरूप हैं । '**भुजंगा इव**' में उपमा अलं-कार है । **समुपाविशत्**–सम्+उप+विश् धातु लङ् प्र० पु० ए० व० ।

अन्यतमस्तु शबरयुवा ससंभ्रममवतीर्य तस्मात् करयुगलक्षोभिता-म्भसः सरसो वैदूर्यद्रवानुकारि, प्रलयदिवसकरकिरणोपतापादम्बरैक-देशमिव विलीनम्, इन्दुमण्डलादिव प्रस्यन्दितम्, द्रुतमिव मुक्ताफलनि करम्, अत्यच्छतया स्पर्शानुमेयं हिमजडम्, अरविन्दकोशरजः

कषायमम्भः कमलिनीपत्रपुटेन प्रत्यग्रोद्धृताश्च धौतपंकनिर्मला मृणालिकाः समुपाहरत् । आपीतसलिलश्च सेनापतिस्ता मृणालिकाः शशिकला इव सैंहिकेयः क्रमेणादशत् । अपगतश्रमश्चोत्थाय परिपीताम्भसा सकलेन तेन शबरसैन्येनानुगम्यमानः शनैः शनैरभिमतं दिगन्तरमयासीत् ।

हिन्दी अनुवाद-उनमें से एक दूसरा नवयुवक शबर वेगपूर्ण (पम्पा-सरोवर में) उतरकर दोनों हाथों से विलोडित जल वाले उस सरोवर से वैदूर्यमणि के द्रव का अनुकरण करने वाले अर्थात् अत्यन्त धवल तथा प्रलय-कालीन सूर्य की किरणों के उपताप (उष्णता) से पिघले हुए आकाशमण्डल के एक प्रविभाग (खण्ड) सदृश, चन्द्रबिम्ब से स्रवित हुए प्रतीत होने वाले, द्रवीभूत मुक्ताफल-समूह प्रतीत होने वाले, अत्यन्त निर्मल होने के कारण (शीतल) स्पर्श से अनुमान करने योग्य, बर्फ के समान शीतल तथा कमलपुष्प के कोश-जनित पराग से कसैले पड़े हुए—जल को कमलिनी के पत्तों से बने दोने में भरकर तथा तत्काल उखाड़ी गई एवं धुले हुए कीचड़ वाली अतएव निर्मल कमलनालों को ले आया । पानी पीकर सेनापति (मातङ्ग) ने उन कमलनालों को उसी प्रकार क्रमशः (अर्थात् जलपानानन्तर अथवा धीरे-धीरे) खाया जैसे सिंहिका-पुत्र राहु चन्द्र कलाओं को (निगलता है) । थकावट दूर हो जाने पर जलपान किये हुए उस सम्पूर्ण किरात-सैन्य से अनुसरण किया जाता हुआ धीरे-धीरे मनचाही दिशा की ओर चला गया ।

संस्कृत-व्याख्या–**तु**=पुनः, **अन्यतमः**=एकतमः, **शबरयुवा**=तरुणकिरातः **ससम्भ्रमम्**=सम्भ्रमः वेगः तेन सह सवेगम्, **अवतीर्य**=अन्तः प्रविश्य, **करयुगलक्षोभिताम्भसः**=करयोः हस्तयोः युगलं करयुगलं पाणिद्वन्द्वं तेन क्षोभितं विलोडितम् अम्भः वारि यस्य तस्मात्, **तस्मात्**=वर्णितपूर्वात्, **कमलिनपत्रपुटेन**=कमलिनी पद्मिनी तस्याः पत्रपुटं दलसंपुटं तेन, **वैदूर्यद्रवानुकारि**=वैदूर्यं हरितमणिः तस्य द्रवः द्रुतरसः तम् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलम्, **प्रलयदिवसकरकिरणोपतापात्**=प्रलये कल्पान्ते यः दिवसकरः सूर्यः (अत्यन्ततीक्ष्ण

इत्याशय:) तस्य किरणै: अंशुभि: उपतापात् उष्णतायाः, **विलीनम्**=विगलितम्, **अम्बरैकदेशम् इव**=अम्बरस्य आकाशस्य एकदेश: भाग: तम् इव, **इन्दुमण्डलात्**=इन्दो: मण्डलं तस्मात् चन्द्रमण्डलात्, **प्रस्यंदितम् इव**=क्षरितम् इव, **द्रुतम्**=द्रवीभूतम्, **मुक्ताफलनिकरम् इव**=मुक्ताफलानां मौक्तिकानां निकर: समूह: तम् इव, **अत्यच्छतया**=अत्यन्तं अच्छम् स्वच्छम् अत्यच्छं तस्य भाव: तत्ता तया अत्यन्तनिर्मलतया, **स्पर्शानुमेयम्**=स्पर्शेन एव शैत्यस्पर्शेन एव (न तु दृष्ट्या इति भाव:) अनुमेयम् अनुमातुं योग्यम्, **हिमजडम्**=हिमवत् तुहिनवत् जडं शीतलम्, **अरविन्दकोशरजः कषायम्**=अरविन्दानि कमलानि तेषां कोशा: कर्णिकाधारा: तेषां रजांसि परागा: तै: कषायम् कषायरसवत्, **अम्भ:**=सलिलम् **प्रत्यग्रोद्धृता:**=प्रत्यग्रं तत्क्षणं उद्धृता: उत्पाटिता:, **धौतपङ्कनिर्मला:**=धौत: क्षालित: पङ्क: कर्दम: यासां ता: धौतपङ्का: अतएव निर्मला: स्वच्छा:, **मृणालिका:**=कमलनालानि, **च**=समुच्चयार्थकोऽयम् **समुपाहरत्**=समानीतवान्, **आपीतसलिल:**=आ ईषत् पीतं पानविषयीकृतं सलिलं जलं येन स:, **सेनापतिश्च**=मातङ्गनामा सेनास्वामी च, **सैंहिकेय:**=सिंहिकापुत्र: राहु:, **शशिकला: इव**=शशिन: चन्द्रस्य कला: अंशव: ता: इव, **ता:**=पूर्वनिर्दिष्टा:, **मृणालिका:**=कमलनालानि, **क्रमेण**=क्रमश: एकैकम् इत्यर्थ: **अदशत्**=दशनै: अभक्षयत् । **अपगतश्रम:**=अपगत: दूरीभूत: श्रम: खेद: यस्य तादृश: च, **उत्थाय**=उद्गम्य, **परिपीताम्भसा**=परिपीतं तृप्तिपूर्वकं पानविषयीकृतम् अम्भ: सलिलं येन तेन **सकलेन**=समस्तेन, **तेन**=पूर्वोक्तेन, **शबरसैन्येन**=किरातदलेन, **अनुगम्यमान:**=अनुव्रज्यमान:, **शनै: शनै:**=मन्दं मन्दम्, **अभिमतम्**=अभीष्टम्, **दिगन्तरम्**=अन्यां दिशं प्रति, **अयासीत्**=अगच्छत् ।

टिप्पणी–अन्यतम:-उन शबरों में से एक । **अवतीर्य**–अव+तॄ+क्त्वा–ल्यप् । **स्पर्शानुमेय**–छूने से ही जिसे पहचाना जा सकता था । **शशिकला इव सैंहिकेय:**-जिस प्रकार सिंहिका पुत्र राहु चन्द्रकलाओं का भक्षण करता है । दक्ष प्रजापति की पुत्री तथा कश्यप की पत्नी सिंहिका से उत्पन्न राहु पूर्वकाल (पूर्णमासी व अमावस्या) पर चन्द्रमा का ग्रास करता है-यह पौराणिक मान्यता है । **परिपीताम्भसा**-पूरी तरह से जल पी चुकने वाले शबर दल के साथ ।

अनुगम्यमानः-अनु+गम्+यक्+शानच् । **'अम्बरैकदेशमिव'**-इत्यादि स्थलों में उत्प्रेक्षा है ।

एकतमस्तु जरच्छबरस्तस्मात्पुलिनवृन्दादनासादितहरिणपिशितः पिशिताशन इव विकृतदर्शनः पिशितार्थी तस्मिन्नेव तरुतले मुहूर्तमिव व्यलम्बत । अन्तरिते च तस्मिन् शबरसेनापतौ स जीर्णशबरः पिबन्निवास्माकमायूंषि रुधिरबिन्दुपाटलया कपिलभ्रूलतापरिवेषभीषणया दृष्ट्या गणयन्निव शुककुलकुलायस्थानानि श्येन इव विहगामिषास्वादलालसः सुचिरमारुरुक्षुस्तं वनस्पतिमामूलादपश्यत् । उत्क्रान्तमिव तस्मिन् क्षणे तदालोकनभीतानां शुककुलानामसुभिः ।

हिन्दी-अनुवाद-(किन्तु) हरिण का मांस न प्राप्त कर पाने वाला (अतएव) मांसार्थी, पिशिताशन-राक्षस की भाँति भयावह स्वरूपवाला उनमें से एक वृद्धशबर (खूसट भील) उसी सेमरवृक्ष के नीचे दो घड़ी भर ठहर गया। उस शबरसेनापति (मातङ्ग) के दृष्टि से ओझल हो जाने पर वह बुड्ढा भील मानों हम लोगों (पक्षियों) की अवस्था पीता हुआ, रक्तबिन्दुओं के समान पाटल-(श्वेतरक्त) तथा पिङ्गलवर्णी भ्रूलता की परिधि के कारण भयावह दृष्टि से मानो शुक परिवारों के घोसलों के स्थलविशेषों को गिनता हुआ, पक्षियों का मांसभक्षण करने के लिये लालायित बाज पक्षी की भाँति, चढ़ने की इच्छा से बड़ी देर तक उस सेमर के पेड़ को आमूलचूड देखता रहा। उस समय उसकी ताकझांक से संत्रस्त हुए शुकपरिवारों के प्राण मानों निकल गये ।

संस्कृत-व्याख्या-**तु**=पुनः, **तस्मात्**=पूर्वोक्तात्, **पुलिनवृन्दात्**=पुलिनाः शबराः तेषां वृन्दं सैन्यं तस्मात्, **एकतमः**=अन्यतमः, **जरच्छबरः**=जरन् वृद्धः शबरः किरातः, **अनासादितहरिणपिशितः**=अनासादितं न लब्धं हरिणपिशितं मृगपललं येन तादृशः, **पिशिताशन इव**=पिशितं मांसम् एव अशनं भोजनं यस्य सः, **पिशाचः इव**=व्याघ्र इव वा, **विकृतदर्शनः**=विकृतं असुन्दरं दर्शनं यस्य सः, **पिशितार्थी**=मांसार्थी, **तस्मिन्**=पूर्वोक्ते, **तरुतले एव**=वृक्षमूले एव, **मुहूर्तमिव**= किञ्चित्कालमिव, **व्यलम्बत**=विलम्बम् अकरोत्, **तस्मिन्**=पूर्वोक्ते,

सेनापतौ=दलस्वामिनि मातङ्गे, **अन्तरिते च**=वृक्षादिना व्यवहिते च, **सः**=असौ पूर्वोक्तः, **जीर्णशबरः**=वृद्धकिरातः, **अस्माकम्**=पक्षिणाम्, **आयूंषि**=वयांसि, **पिबन् इव**=विलोपयन् इव, **रुधिरबिन्दुपाटलया**=रुधिरस्य रक्तस्य बिन्दुः कणः तद्वत् पाटला श्वेतरक्ता तया, **कपिलभ्रूलतापरिवेषभीषणया**=कपिले पिङ्गलवर्णे ये भ्रूलते भ्रुकुट्यौ तयोः परिवेषः परिधिः तेन भीषणा भयङ्करी तया, **दृष्ट्या**=चक्षुषा, **शुककुलकुलायस्थानानि**=शुकाः कीराः तेषां कुलानि समूहाः तेषां कुलायाः नीडानि तेषां स्थानानि तानि, **गणयन् इव**=गणानां कुर्वन् इव, **श्येनः इव**=शशादः पक्षिविशेषः इव, **विहगामिषास्वादलालसः**=विहगाः पक्षिणः तेषाम् आमिषं मांसं तस्य आस्वादे भक्षणे लालसः लम्पटः, **तम्**=पूर्वोक्तम्, **वनस्पतिं**=शाल्मलीवृक्षम्, **आरुरुक्षुः**=आरोढुमिच्छुः, **आमूलात्**=मूलाद् आरभ्य, **सुचिरम्**=चिरकालं यावत्, **अपश्यत्**=विलोकयामास । **तस्मिन् क्षणे**=तस्मिन् काले, अवलोकनसमये, **तदालोकभीतानाम्**=तस्य जीर्णशबरस्य यत् अवलोकनं विलोकनं तेन भीतानां संत्रस्तानाम्, **शुककुलानाम्**=कीरगणानाम्, **असुभिः**=प्राणैः, **उत्क्रान्तम् इव**=निःसृतमिव ।

टिप्पणी–जरच्छबरः–बूढ़ा किरात । **श्येन**–बाज पक्षी । **आरुरुक्षुः**–चढ़ने की इच्छा वाला, आ+रुह्+सन्, उ प्रत्यय । **असुभिः उत्क्रान्तम् इव**–प्राण निकल-से गये । जीर्णशबर की दृष्टि पड़ते ही पक्षियों को अपनी मृत्यु दिखाई देने लगी थी । **'पिबन्निव'** तथा **'उत्क्रान्तमिव'** में **क्रियोत्प्रेक्षा** है ।

किमिव हि दुष्करमकरुणानाम् ? यतः सः तमनेकतालतुङ्गमभ्रंकषशाखाशिखरमपि सोपानैरिवायत्नेन पादपमारुह्यताननुपजातोत्पतनशक्तीन् कांश्चिदल्पदिवसजातान् गर्भच्छविपाटलाच्छाल्मलीकुसुमशङ्कामुपजनयतः, कांश्चिदुद्भिद्यमानपक्षतया नलिनसंवर्तिकानुसारिणः, कांश्चिदर्कफलसदृशान्, कांश्चिल्लोहितायमानचञ्चुकोटीनीषद्विघटितदलपुटपाटलमुखानां कमलमुकुलानां श्रियमुद्वहतः, कांश्चिदनवरतशिरःकम्पव्याजेन निवारयत इव प्रतीकारासमर्थानेककैकतया

फलानीव तस्य वनस्पतेः शाखासन्धिभ्यः कोटरान्तरेभ्यश्च शुकशावकानग्रहोत्, अपगतासूंश्च कृत्वा क्षितावपातयत् ।

हिन्दी-अनुवाद–क्योंकि अकरुणों (निर्दयों) के लिये भला क्या दुष्कर है (अर्थात् कुछ भी नहीं !)

तभी तो उसने (वृद्ध शबर ने एक दूसरे के ऊपर स्थापित) अनेक ताड़ वृक्षों के समान ऊँचे तथा गगनचुम्बी शाखाग्रभागों वाले भी उस (सेमर के) पेड़ पर बिना प्रयास के ही मानों सीढ़ियों के सहारे चढ़कर–अनुत्पन्न आकाश सञ्चरण (उड़ने) की सामर्थ्य वाले उन शुकशावकों को फलों की भाँति उस सेमरवृक्ष की शाखाओं के सन्धिस्थलों तथा कोटरों के भीतरी भागों से (बाहर) घसीट लिया तथा (उन्हें) निष्प्राण बनाकर जमीन पर फेंक दिया; (जिन शुकशावकों में) कुछ तो थोड़े दिन पहले की पैदाइश वाले अतएव गर्भावस्था की कान्ति के समान पाटलवर्ण वाले तथा सेमर के फूल की शङ्का उत्पन्न कर रहे थे, कुछ प्रादुर्भूयमान पंखों वाले होने के कारण कमल की नई कोपलों का अनुकरण कर रहे थे, कुछ मन्दारफल के समान थे, कुछ अरुणायमान चञ्चुओं के अग्रभाग वाले अतएव अल्पमात्र प्रस्फुटित पत्रसमूह के कारण पाटलवर्ण (श्वेतरक्त) मुखों वाले कमलकोरकों (कोयों) की शोभा वहन कर रहे थे और कुछ निरन्तर सिर की कँपकँपी के बहाने मानों (हम बच्चे हैं हम पर दया करो, मत मारो ! इस प्रकार) रोकते हुए तथा प्रतीकार (वधनिवृत्त्युपाय) करने में असमर्थ थे ।

संस्कृत-व्याख्या-हि=तस्माद्धेतोः **अकरुणानाम्**=निष्ठुराणाम्, **किमिव**=कतमत इव, **दुष्करम्**=कठिनम्, न किमपि इत्यर्थः, **यतः**=यस्माद् हेतोः, **सः**=जीर्णशबरः, **अनेकतालतुङ्गम्**=अनेके बहवः तालाः वृक्षविशेषाः, एकस्योपरि द्वितीय इति क्रमेण निहिताः तद्वत् तुङ्गम् अत्युच्चम्, **अभ्रंकषशाखाशिखरम् अपि**=अभ्रं मेघं कषन्ति विलिखन्ति (स्पृशन्ति इत्याशयः) इति अभ्रंकषाणि शाखानाम् पल्लवानां शिखराणि अग्राणि यस्य तम् अपि, **पादपम्**=शाल्मलीवृक्षम्, **सोपानैः इव**=आरोहणैः इव, **अयत्नेन एव**=प्रयासं विनैव, **आरुह्य**=

आरोहणं कृत्वा, **अनुपजातोत्पतनशक्तीन्**—न उपजाता अनुपजाता अनुत्पन्ना उत्पतनस्य उड्डयनस्य शक्तिःसामर्थ्यं येषु तान्, **तान्**=तादृशान्, **तेषु कांश्चित् अल्पदिवसजातान्**=कतिपयदिनोत्पन्नान्, अत एव, **गर्भच्छविपाटलान्**=गर्भस्य भ्रूणस्य या छविः शोभा तया पाटलान् श्वेतरक्तान्, **वर्णसाम्यात् शाल्मलीकुसुम शङ्काम्**=शाल्मलीकुसुमानां सप्तपर्णपुष्पाणां शङ्कां भ्रान्तिम्, **उपजनयतः**=उत्पादयतः, **कांश्चित् उद्भिद्यमानपक्षतया**=उद्भिद्यमानाःउत्पद्यमानः पक्षाःपत्राणि येषा ते उद्भिद्यमानपक्षाः तेषां भावः तत्ता यया, **नलिनसंवर्तिकानुकारिणः**=नलिनानां पद्मानां संवर्तिकाः वर्तिकारूपाणि नूतनदलानिताःअनुकुर्वन्तीति तच्छीला तान्, **कांश्चित् अर्कफलसदृशान्**=अर्काणां मन्दाराणां फलानि प्रसवाःतत्सदृशान् देहेन वर्णेन च मन्दारफलसमानान्, **कांश्चित् लोहितायमानचञ्चुकोटीन्**=लोहितायमानाः अलोहिताः लोहिताः सम्पद्यमाना इति रक्तायमानाः चञ्चूनां त्रोटीनां कोट्यः अग्रप्रदेशाः येषां तान्, **अत एव च ईषद्विघटितदलपुटपाटल-मुखानाम्**=ईषत् किञ्चित् विघटितैः विकसितैः दलपुटैः पत्रसंपुटैः पाटलानि श्वेतरक्तानि मुखानि अग्रभागाःयेषां तेषाम्, **कमलमुकुलानाम्**=पङ्कजकुड्मलानाम्, **श्रियम्**=शोभाम्,साम्यमित्यर्थः, **उद्वहतः**=धारयतः, **कांश्चित्अनवरत-शिरःकम्पव्याजेन**=अनवरतं सततं यः शिरः कम्पः बालतया उत्तमाङ्गनिधूननं तस्य व्याजेन मिषेण, निवारयतः, **इव**=स्ववधं प्रतिषेधतः इव, **प्रतीकारास-मर्थान्**=प्रतीकारः प्रत्याघातः उड्डीयरक्षणं वा तस्मिन् असमर्थान् अशक्तान्, **शुकशावकान्**=कीरशिशून्, **फलानि इव**=वृक्षप्रसवान् इव, **तस्यः**=पूर्वोक्तस्य, **वनस्पतेः**=शाल्मलीवृक्षस्य, **शाखासन्धिभ्यः**=शाखानां स्कन्धानां सन्धयः ग्रन्थयः ताभ्यः, **कोटरान्तरेभ्यश्च**=स्कन्धविवरमध्येभ्यश्च, **एकैकशः**=एकमेकं कृत्वा, **अग्रहीत्**=आदात्, **अपगतासून्**=विगतप्राणान्, **कृत्वा च**=विधाय च, **क्षितौ**=पृथिव्याम्, **अपातयत्**=अक्षिपत् ।

टिप्पणी-दुष्कर–कठिनाई से किये जाने योग्य, दुःखेन कर्तुं शक्यते (दुस्+कृञ्+खल्) । **अनेकतालतुङ्गम्**–कई ताड़ के वृक्षों को एक दूसरे के ऊपर खड़ा करके जितनी ऊँचाई हो उतना ऊँचा । **अभ्रंकष**--गगनचुम्बी । **संवर्तिका**-नया पत्ता, जिसका मुकुल अभी विकसित नहीं हो पाया है, वत्ती जैसा बना

हुआ है। (संवर्तिका नवदलम्-अमरकोष) मुकुल-कली कुड्मल (कुड्मलो मुकुलोऽस्त्रियाम्, अमरकोष) । **किमिव हि**···इत्यादि में **अर्थापत्ति**, **सोपानैरिव** में जात्युत्प्रेक्षा, शाल्मली···' में भ्रान्तिमान्, **नलिन**·**अर्कफल**···' में आर्थी उपमा, तथा कमलमुकुलानां ···' में निदर्शना अलङ्कार है।

तातस्तु तं महान्तमकाण्ड एव प्राणहरमप्रतीकारमुपप्लवमुपनतमवलोक्य द्विगुणतरोपजातवेपथुर्मरणभयादुद्भ्रान्ततरलतारकाँ विषादशून्यामश्रुजलप्लुतां दृशमितस्ततो विक्षिपन्, उच्छुष्कतालुरात्मप्रतीकाराक्षमस्त्रासस्रस्तसंधिशिथिलेन पक्षसम्पुटेनाच्छाद्य मां तत्कालोचितप्रतीकारं मन्यमानः स्नेहपरवशो मद्रक्षणाकुलः किंकर्त्तव्यताविमूढः क्रोडभागेन मामवष्टभ्य तस्थौ।

हिन्दी-अनुवाद–(मेरे) पिताजी तो बिना अवसर के (अर्थात् अकस्मात् ही) आए हुए उस प्राणघातक शमनोपायविहीन उपद्रव को देखकर (पहले की अपेक्षा) पैदा हुई दुगुनी कँपकपी से युक्त, मृत्युभय से अतिशय नाचती हुई चंचल पुतलियों वाले शोक के कारण निस्तेज (बुझी हुई) तथा अश्रुजल से प्लावित (डबडबाई हुई) दृष्टि को इधर-उधर दिशाओं में दौड़ाते हुए अत्यधिक शुष्क, तालुभाग वाले, अपनी विपत्ति मिटाने के उपाय में असमर्थ, भयवश विदीर्ण अस्थिबन्धों (हड्डियों के जोड़ों) के कारण शिथिल पड़े हुए दोनों पंखों से मुझे तिरोहित कर (तथा इसी को) उस समय के अनुकूल रक्षणोपाय मानते हुए, (मेरे प्रति) वात्सल्यप्रेम से परवश होकर, मेरे बचाव के लिए व्याकुल तथा किंकर्तव्यविमूढ़ (मतिभ्रष्ट) होकर मुझे (अपनी) गोदी से लगाये हुए बैठे रहे।

संस्कृत-व्याख्या-तु—पुनः, तातः=जनकः, अकाण्डे एव=असमये एव, **तम्**=पूर्वोक्तम्, प्राणहरम्=प्राणनाशनम्, **अप्रतीकारम्**=अविद्यमानः प्रतीकारः उपायः यस्य तम्, महान्तम्=अनल्पम् **उपप्लवम्**=उपद्रवम्, **उपनतम्**=आगतम्, **अवलोक्य**=दृष्ट्वा, **द्विगुणितरोपजातवेपथुः**=द्वौ गुणौ यस्य स द्विगुणः द्विरावृत्तः अयम् अनयोः अतिशयने द्विगुणः द्विगुणतरः पूर्वकम्पात् द्विगु-

णितः उपजातः उत्पन्नः वेपथुः यस्य सः अत्यन्तं कम्पित इत्यर्थः मरणभयात् =मरणस्य मृत्योः भयं भीतिः तस्मात् उद्भ्रान्ततरलतारकाम्=उद्भ्रान्ते उद्विग्ने तरले चंचले तारके कनीनिके यस्याः ताम् विषादशून्याम्=विषादेन दुःखेन कारणभूतेन शून्या दीना ताम्, अश्रुजलप्लुताम्=अश्रुजलेन वाष्पाम्बुना प्लुता आप्लाविता ताम् दृशम्=दृष्टिम्, इतस्ततोदिक्षु=सर्वासु दिशासु, सर्वतो दिशम्,विक्षिपन्=पातयन्, उच्छुष्कतालुः=उत् प्राबल्येन शुष्कम् अनार्द्रं तालु काकुदं यस्य तादृशः सन्, आत्मप्रतीकाराक्षमः=आत्मनः स्वस्य प्रतीकारे रक्षणोपाये अक्षमः असमर्थः सन्, त्रासस्रस्तसन्धिशिथिलेन=त्रासेन भयेन स्रस्ताः विदीर्णाः ये सन्धयः अस्थिबन्धाः तैः हेतुभूतैः शिथिलेन श्लथेन,पक्षपुटेन =पतत्रसंपुटेन, माम्=वैशम्पायनम्, आच्छाद्य=तिरोधाय, तत्कालोचितम् =तदवसरयोग्यम्, प्रतीकारम्=उपायम् मन्यमानः=जानानः,स्नेहपरवशः= प्रेमपराधीनः, मद्रक्षणाकुलः=मम वैशम्पायनस्य रक्षणे त्राणे आकुलः व्यग्रः, किंकर्त्तव्यताविमूढः=किंकर्त्तव्यं यस्य स· किंकर्त्तव्यः तस्य भावः तत्ता किंविधेयता तत्र विमूढः विवेकरहितः, क्रोडभागेन=उत्सङ्गप्रदेशेन, माम्=वैशम्पायनम्, अवष्टभ्य=अवलम्बनं कृत्वा, तस्थौ=तस्थिवान् ।

टिप्पणी-अकाण्ड एव-असमय में ही, अचानक ही । मन्यमानः-मन्+यक्+शानच्=मन्यमानः । क्रोड-गोद । अवष्टभ्य-सहारा देकर अव+स्तम्भ +क्त्वा-ल्यप् ।

असावपि पापः क्रमेण शाखान्तरैः संचरमाणः कोटरद्वारमागत्य जीर्णासितभुजङ्गभोगभीषणं प्रसार्य विविधवनवराहवसाविस्रगन्धिकरतलं कोदण्डगुणाकर्षणव्रणाङ्कितप्रकोष्ठमन्तकदण्डानुकारिणं वामबाहुमतिनृशंसो मुहुर्मुहुर्दत्तचञ्चुप्रहारमुत्कूजन्तमाकृष्य तातमपगतासुमकरोत् । मां तु स्वल्पशरीरत्वाद् भयसंपिण्डिताङ्गत्वात् सावशेषत्वाच्चायुषा कथमपि तत्पक्षपुटान्तरगतं नालक्षयत् । उपरतं च तमवनितले शिथिलशिरोधरमधोमुखममुञ्चत् । अहमपि तच्चरणान्तरे निवेशितशिरोधरोनिभृतमङ्कनिलीनस्तेनैव सहापतम् । अवशिष्टपुण्यतया

तु पवनवशात् पुञ्जितस्य महतः शुष्कपत्रराशेरुपरि पतितमात्मान-मपश्यम् । अङ्गानि येन मे नाशीर्यन्त ।

हिन्दी-अनुवाद–वह पापिष्ठ (बुड्ढा भील) भी क्रमशः अन्यान्य शाखाओं पर डोलता-टहलता हुआ (मेरे भी) कोटर द्वार पर आकर-पुरायठ कराइत साँप की कुण्डली के समान भयावह-अनेक बनैले सुवरों की चर्बी (लगने) से कच्चे मांस की गन्ध से युक्त हथेलीवाली निरन्तर (पशुवधार्थ) धनुष की डोरी खींचने के कारण रगड़ के चिह्न से युक्त प्रकोष्ठ (मणिबन्ध-कलाई) वाली तथा यमराज के दण्ड का अनुकरण करने वाली बाईं भुजा को बढ़ाकर बारम्बार चोंच से प्रहार करने वाले, अतिशय कूजन (रोदन) करते हुए पिताजी को (कोटरान्तराल से बाहर) खींचकर (उस) अतिक्रूर ने प्राणहीन कर दिया ।

बहुत छोटे डीलडौल वाला होने के कारण, भयवश अत्यधिक सिकुड़े हुए अंगों वाला होने के कारण तथा आयुष्य के अवशिष्ट होने के कारण, बड़े कष्ट से पिताजी के पक्षपुटों के भीतर घुसे हुए मुझे तो (उसने) देखा नहीं । और मृत शरीर वाले तथा शिथिल ग्रीवाभाग वाले,उन्हें (पिताजी को) मुँह के बल पृथ्वी पर फेंक दिया । मैं भी पिताजी के चरणों के बीच ग्रीवाभाग स्थापित किए हुए, चुपचाप गोदी में छिपा हुआ उन्हीं के साथ (जमीन पर) आ गिरा । पुण्य अवशिष्ट रहने के कारण, हवा के प्रभाव से पुञ्जीभूत विशाल सूखे पत्तों की ढेरी पर, मैंने स्वयं को गिरा हुआ देखा, जिससे कि मेरे अङ्ग विशीर्ण (छिन्न-भिन्न) नहीं हुए ।

संस्कृत-व्याख्या-**असौ**=वृद्धचाण्डालोऽपि, **अतिनृशंसः**=अत्यन्तक्रूरः,**पापः**=पापम् अस्य अस्तीति पापः पापी जीर्णशबरः, **क्रमेण**=पर्यायेण, **शाखान्तरैः**=अन्याः शाखः शाखान्तराणि तैः स्कन्धान्तरैः साधनभूतैः, **संचरमाणः**=संचलन्, **कोटरद्वाराम्**=स्कन्धबिवरमुखम्, **आगत्य**=उपेत्य, **जीर्णासितभुजङ्गभोगभीषणम्**=जीर्णः पुरातनः असितः कृष्णः यो भुजङ्गः सर्पः तस्य भोगः शरीरं तद्वत् भीषणम् भयंकरम्, **विविधवनवराहवसाविस्रगन्धिकरतलम्**=विविधाः अनेके ये वनवराहाः जंगलसूकराः तेषां वसा स्नायुः तस्याः यत् विस्रम् गन्धः अस्यास्तीति तादृशं करतलं पाणितलं यस्य तम्, **कोदण्डगुणाकर्षणाङ्कि-**

तप्रकोष्ठम्=कोदण्डस्य धनुषः यः गुणः ज्या तस्य आकर्षणेन यः व्रणः किणः तेन अङ्कितः चिह्नितः प्रकोष्ठः मणिबन्धः यस्य तम्, अन्तकदण्डानुकारिणम्=अन्तकः शमनः तस्य दण्डः लगुडः तम् अनुकरोति सादृश्य भजते इति तच्छीलः तम्, वामबाहुम्=सव्यभुजम्, प्रसार्य=विस्तार्य, मुहुर्मुहुः=भूयोभूयः, दत्तचञ्चुप्रहारम्=दत्तः कृतः चञ्च्वा: त्रोट्याः प्रहारः आघातः येन तम्,उत्कूजन्तम् =उच्चस्वरेण क्रन्दन्तम्, तातम्=पितरम्, आकृष्य=कोटराद् बहिः आनीय अपगतासुम्=अपगताः विनष्टः असवः प्राणः यस्य तादृशम् विगतप्राणम्, अकरोत्=कृतवान् स्वल्पशरीरत्वात्=स्वल्पं अति लघुतमं शरीरं वर्ष्म यस्य सः स्वल्पशरीरः तस्य भावः तत्त्वं तस्मात्, भयसंपिण्डिताङ्गत्वात्=भयेन भीत्या संपिण्डितानि संकुचितानि अङ्गानि अवयवाः यस्य सः तस्य भावः तत्त्वं तस्मात्, आयुषः=जीवितव्यस्य सावशेषत्वात्=अवशिष्टत्वात्, च=समुच्चयार्थकमिदम् तत्पक्षपुटान्तरगतम्=तस्य अपगतप्राणस्य पितुः पक्षपुटं छदसंपुटं तस्य अन्तरे मध्ये गतं निलीनम्, माम्=वैशम्पायनम्, कथमपि=केनापि अज्ञातेन हेतुना, दैववशादित्यर्थः, न अलक्षयत्=न अपश्यत्, उपरतम्=मृतम् अतएव च शिथिलशिरोधरम्=शिथिला श्लथा शिरोधरा ग्रीवा यस्य तं तादृशम्, अधोमुखम्=अधः अवाक्मुखम् आननं यस्य तम्, तम्=पितरम्, च, अवनितले=भूतले, अमुञ्चत्=अत्यजत्, अहम् अपि=वैशम्पायनोऽपि, तच्चरणान्तरे=तस्यः पितुः चरणयोः पादयोः अन्तरे मध्ये, निवेशितशिरोधरः=निवेशिता स्थापिता शिरोधरा ग्रीवा येन तादृशः स्थापितग्रीवः, निभृतम्=निःशब्दम्, अङ्कनिलीनः उत्सङ्गान्तर्हितः तेनैव=पित्रा एव, सह =समम् अपतम्=पतितवान्, तु=किन्तु, अवशिष्टपुण्यतया=अवशिष्टानि सावशेषाणि पुण्यानि सुकृतानि यस्य सः तस्य भावः तत्ता तया, पवनवशात् =वायुवशात्, पुञ्जितस्य=संहतस्य, महतः=विशालस्य, शुष्कपत्रराशेः=नीरसदलसमूहस्य विगलितानि नाभवन्, उपरि=ऊर्ध्वम्, पतितम्=स्रस्तम्, आत्मानम्=स्वम्, अपश्यम्=अवलोकयम्, येन=पत्रराशेः उपरिपतनेन हेतुना, मे=मम, अङ्गानि=अवयवाः, न अशीर्यन्त=विगलितानि नाभवन् ।

टिप्पणी-पापः—पापकर्म करने वाला पापी शबर। पापम् अस्यास्तीति पापः (अर्श आदिभ्योऽच्) इत्यादि व्युत्पत्ति से इसकी विशेषणता सिद्ध होती है। **सञ्चरमाणः**—घूमता हुआ, तृतीयान्त पद के साथ चर् धातु से पूर्व सम उपसर्ग होने पर आत्मनेपद होता है। (समश्च तृतीयायुक्तात्,) । सम्+चर्+शानच् । **भोग**—सर्प का शरीर (भोगः सुखे स्त्र्यादिभृतावहेश्च फणकाययोः—अमरकोष) **आकृष्य**—आङ्+कृष+क्त्वा—ल्यप् । **कोदण्ड**—धनुष । **गुण**—डोरी **उपरत**—मृत । **निभृत**—चुपचाप निःशब्द । **पुञ्जित**—एकत्रित । **नाशीर्य्यन्त**—टूटने से बच गये थे ।

यावच्चासौ तस्मात् तरुशिखरान्नावतरति तावदहमवशीर्णपर्णसवर्णत्वादस्फुटोपलक्ष्यमाणमूर्तिः पितरमुपरतमुत्सृज्य नृशंस इव प्राणपरित्यागयोग्येऽपि काले बालतया कालान्तरभुवः स्नेहरसस्यानभिज्ञो जन्मसहभुवा भयेनैव केवलमभिभूयमानः किञ्चिदुपजाताभ्यां पक्षाभ्यामीषत्कृतावष्टम्भो लुठन्नितस्ततः कृतान्तमुखकुहरादिव विनिर्गतमात्मानं मन्यमानो नातिदूरवर्तिनः शबरसुन्दरीकर्णपूररचनोपयुक्तपल्लवस्य संकर्षणपटनीलच्छाययोपहसत इव गदाधरदेहच्छविम् अच्छैः कालिन्दीजलच्छेदैरिव विरचितच्छदस्य, वनकरिमदोपसिक्तकिसलयस्य, विन्ध्याटवीकेशपाशश्रियमुद्वहतः, दिवाप्यन्धकारितशाखान्तरस्य, अप्रविष्टसूर्यकिरणमतिगहनमपरस्येव पितुरुत्सङ्गमतिमहतस्तमालविटपिनो मूलदेशमविशम् ।

हिन्दी—अनुवाद—जब तक वह (वृद्ध शबर) उस सेमर-वृक्ष के शिखर से उतरा नहीं कि इसी बीच (तब-तक) नीचे गिरे हुए पत्तों के समान रंग वाला होने के कारण ठीक-ठीक न दिखाई पड़ने वाली आकृति से युक्त मैं क्रूर की भाँति विवंगत पिताजी को छोड़कर (वृद्ध पिता की मृत्यु के कारण) प्राण त्याग कर देने योग्य समय में भी लड़कपन के कारण 'कालान्तर' अर्थात् प्रबुद्ध युवावस्था में उत्पन्न होने वाले (शयन, आसन एवं भोजनादिविषयक) स्नेह के रस को न जानने वाला (प्रत्युत) जन्म के समय से ही उत्पन्न होने वाले एक

मात्र भय से ही पीड़ित होता हुआ, कुछ-कुछ उगे हुए पक्षद्वय से थोड़ी सहायता लेता हुआ, इधर-उधर लुढ़कता हुआ तथा स्वयं को यमराज के मुखविवर से मानों (सकुशल) निकला (विमुक्त) मानता हुआ अत्यन्त ऊँचे समीपस्थ तमाल-वृक्ष के अप्रविष्ट सूर्यकिरणों वाले, अत्यन्त सघन तथा द्वितीय पिता की गोदी के समान मूलदेश (जड़) में घुस गया जो कि किरात कामिनियों के कर्णाभरण-निर्माण में काम आने लायक पल्लवों वाला था, जो कि कृष्णाग्रज बलराम के वस्त्रों की नील प्रभा के समान अपनी नीलप्रभा से (कौमोदकी) गदा धारण करने वाले अर्थात् विष्णु (=कृष्ण) की देह प्रभा का मानों उपहास कर रहा था, जो मानों निर्मल यमुनाजल-खण्डों से विरचित पत्तियों वाला था, जो मानों वनैले हाथियों के मदजल से सींची गई नई कोपलों वाला था जो विन्ध्यवनस्थली के केशपाश की शोभा को वहन कर रहा था तथा जो दिन में भी अन्धकाराच्छादित शाखाओं के अवकाश (मध्यभाग) वाला था।

संस्कृत-व्याख्या—यावत्=यावत्कालपर्यन्तम्, असौ=स जीर्णशबरः, तस्मात्=पूर्वोक्तात्, तरुशिखरात्=तरोः शाल्मलीवृक्षस्य शिखरम् अग्रभागः तस्मात्, न अवतरति=न अवरोहति स्म, तावत्=तावता कालेन, अहम्=वैशम्पायनः, अवशीर्णपर्णसवर्णत्वात्=अवशीर्णानां तत्कालपतितानां पर्णानां पत्राणां सवर्णः तुल्यवर्णः तस्य भावः तत्त्वं तस्मात्, अस्फुटोपलक्ष्यमाणमूर्तिः=न स्फुटं सुस्पष्टम् उपलक्ष्यमाणा अवलोक्यमाना मूर्तिः वर्ष्म यस्य तादृशः, नृशंसः इव=क्रूरः इव, उपरतम्=मृतम्, पितरम्=तातम्, उत्सृज्य=त्यक्त्वा, प्राण-परित्यागयोग्ये=जीवतोत्सर्गोचिते, कालेऽपि=समयेऽपि, बालतया=शिशुतया कालान्तरभुवः=अन्यः कालः कालान्तरं, यौवनादि तत्र भवतीति तस्य यौव-नादिवयोभाविनः, स्नेहरसस्य=प्रेम्णः, अनभिज्ञः=अज्ञाता, केवलम्=एक मेव, जन्मसहभुवः=उत्पत्तिसहसमुत्पन्नेन, भयेनैव=भीत्या एव, अभिभूयमानः स्वाधीनीक्रियमाणः, किञ्चित्=ईषत्, उपजाताभ्याम्=उत्पन्नाभ्याम्, पक्षा-भ्याम्=पतत्राभ्याम्, ईषत्कृतावष्टम्भः=ईषत् स्वल्पमात्रं कृतः विहितः अवष्-टम्भः आश्रयः यस्य तादृशः, इतस्ततः=उभयोः पार्श्वयोः, लुठन्=निपतन्, कृतान्तमुखकुहरात्=कृतान्तः यमःतस्य मुखम् लपनम् एव कुहरं विवरं तस्मात्,

विनिर्गतम् इव=विनिर्यातम् इव, **आत्मीयम्**=निजम्, **मन्यमानः**=बुध्यमानः, **नातिदूरवर्तिनः**=समीपवर्तिनः, **शबरसुन्दरीकर्णपूररचनोपयुक्तपल्लवस्य**=शबरसुन्दर्यः भिल्लरमण्यः तासां कर्णपूराणि श्रुतिभूषणानि तेषां रचनाया विनिर्मितौ उपयुक्ताः उपयोगिनः पल्लवाः किसलयानि यस्य तस्य तादृशस्य **संकर्षणपटनीलच्छायया**=संकर्षणः बलभद्रः तस्य पटः नीलवस्त्रं तस्य नीला नीलवर्णा छाया कान्तिः तया, **गदाधरदेहच्छविम्**=गदाधरः कृष्णः तस्य देहः शरीरं तस्य छविं शोभाम्, **उपहसतः इव**=उपहासं कुर्वतः इव, **अच्छैः**=स्वच्छैः, **कालिन्दीजलच्छेदैः इव**–कालिन्दी यमुना तस्याः जलं पयः तस्य छेदाः खण्डानि तैः इव, **विरचितच्छदस्य**=विरचिताः निर्मिताः छदाः पत्राणि यस्य तस्य, **वनकरिमदोपसिक्तकिसलयस्य**=वनकरिणां काननहस्तिनां मदेन दानवारिणा उपसिक्तानि कृतसेचनानि किसलयानि पल्लवाः यस्य तस्य, **विन्ध्याटवीकेशपाशश्रियम्**=विन्ध्याटव्याः केशपाशः बालजालं तस्य श्रियं शोभाम्, **उद्वहतः**=धारयतः, **दिवा अपि**=दिवसेऽपि, **अन्धकारितशाखान्तरस्य**=अन्धकारः संजात अस्य इति अन्धकारितं जातान्धकारं शाखान्तरं स्कन्धान्तरालप्रदेशः यस्य तस्य, **अतिमहतः**=अत्यन्तं विशालस्य, **तमालविटपिनः**=तापिच्छपादपस्य, **अप्रविष्टसूर्यकिरणम्**=अप्रविष्टाः अनन्तर्गताः सूर्यस्य दिनकरस्य किरणाः अंशवः यत्र तम्, **अतिगहनम्**=अत्यन्तगहनम्, **मूलदेशम्**=बुध्नभागम्, **अपरस्य**=द्वितीयस्य, **पितुः**=तातस्य, **उत्सङ्गम् इव**=क्रोडम् इव, **अविशम्**=प्रविष्टवान् ।

टिप्पणी–**यावत्**–जब तक, इसका तावत् से नित्य-सम्बन्ध है (यत्तदोः नित्यसम्बन्धः) । **अवशीर्ण**–अव + शॄ + क्त=अवशीर्ण । **उत्सृज्य**–उत् + सृज् + क्त्वा–ल्यप्, **अभिभूयमान**–अभि + भू + यक् + शानच्, **लुठन्**–लुठ + शतृ । **कृतान्तमुखकुहरात्**–यमराज के मुखरूपी विवर से । **केशपाशश्रियम्**-केशपाश की शोभा । यहाँ 'केशपाशश्रियमिव श्रियम्' में निदर्शना तथा 'उत्सङ्गमिव' में क्रियोत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

अवतीर्य च स तेन समयेन क्षितितलविप्रकीर्णान् संहृत्य तान् शुकशिशूननेकलतापाशसंयतानाबध्य पर्णपुटेऽतित्वरितगमनः सेनापति-

गतेनैव वर्त्मना तामेव दिशमगच्छत् । मां तु लब्धजीविताशं प्रत्यग्रपितृमरणशोकशुष्कहृदयमतिदूरपातादायासितशरीरं संत्रासजातवेपथुं सर्वाङ्गोपतापिनी बलवती पिपासा परवशमकरोत् । अनया च कालकलया सुदूरमतिक्रान्तः स पापकृदिति परिकलय्य किंचिदुन्नमितकन्धरो भयचकितया दृशा दिशोऽवलोक्य तृणेऽपि चलति पुनः प्रतिनिवृत्त इति तमेव पदे पदे पापकारिणमुत्प्रेक्षमाणो निष्क्रम्य तस्मात् तमालतरुमूलात् सलिलसमीपमुपसर्तुं प्रयत्नमकरवम् ।

हिन्दी अनुवाद–उस समय वह वृद्धशबर पेड़ से नीचे उतर कर पृथ्वीतल पर छिटके हुए उन शुकशावकों को बटोर कर, अनेक लताबन्धनों से उन्हें संयत कर, पत्तों से बने दोनों में बांधकर अत्यन्त तीव्रगति से, सेनापति द्वारा पकड़े गए मार्ग से ही उसी दिशा की ओर चल पड़ा । और इधर जीवन की आशा प्राप्त कर लेने वाले, पिता जी की तात्कालिक मृत्यु से उत्पन्न शोक के कारण शुष्क हृदय वाले (पेड़ की) अत्यधिक ऊँचाई से गिरने के कारण पीड़ित शरीर वाले, भय के कारण पसीने से लथपथ मुझे अंग-प्रत्यंग को सन्तप्त कर देने वाली तीखी प्यास ने परवश बना दिया । 'इस घड़ी (समय) तक वह नृशंस काफी दूर चला गया होगा' यह समझ कर (अपने) कन्धे को थोड़ा ऊपर उठाकर, भय के कारण सकपकाई हुई दृष्टि से दिशाओं को देखकर, पत्ता खड़कने पर भी 'फिर लौट आया !' इस प्रकार पग पग पर उसी पापिष्ठ शबर की आशङ्का करता हुआ, उस तमाल वृक्ष की जड़ से (बाहर) निकल कर जल के समीप पहुँचने का (मैंने) प्रयत्न किया ।

संस्कृत-व्याख्या–तेन समयेन=तत्कालेन, सः=जीर्णशबरः, अवतीर्य=उत्तीर्य, क्षितितलविप्रकीर्णान्=क्षितितले भूतले विप्रकीर्णान्—विक्षिप्तान्, तान्=वृक्षपातितान्, शुकशिशून=कीरशिशून, संहृत्य=एकीकृत्य, अनेकलतापाशसंयतान्=अनेकानां बहूनां लतानां प्रततीनां पाशेन बन्धनेन संयतान् बद्धान्, पर्णपुटे=छदपुटके, आबध्य=प्रपूर्य, अतित्वरितगमनः=अतित्वरितम् अतिशीघ्रं गमनं गतिः यस्य तादृशः, सेनापतिगतेन=सेनापतिना

सैन्यनायकेन मातङ्गेन गतं यातं तेन, वर्त्मना एव=पथा एव, ताम्=सेनापति-गताम्, दिशम् एव=ककुभम् एव, अगच्छत्=अगमत्, तु=पुनः, लब्धजीविताशम्=लब्धा प्राप्ता जीवितस्य प्राणधारणस्य आशा सम्भावना येन तादृशम्, प्रत्यग्रपितृमरणशोकशुष्कहृदयम्=प्रत्यग्रः नूतनः यः पितृमरणस्य तातमृत्योः शोकः विषादः तेन शुष्कम् अक्लिन्नं हृदयं मनः यस्य तादृशम्, अतिदूरपातात्=अतिदूरात् अत्युच्चकोटरात् पातः पतनं तस्माद् हेतोः, आयासितशरीरम्=आयासितं क्लेशितं शरीरं विग्रहः यस्य तादृशम्, संत्रासजातवेपथुम्=संत्रासेन-अतिभयेन जातः उत्पन्नः वेपथुः कम्पः यस्य स तादृशः तम्' माम्=वैशम्पायनम्, सर्वाङ्गोपतापिनी=सर्वाणि-समस्तानि अङ्गानि अवयवान् उपतापयति क्लेशयति इति तच्छीला, बलवती=शक्तिशालिनी, पिपासा=तृट्, परवशम्=पराधीनम्, अकरोत्=कृतवती, च=तथा, अनया कालकलया=अमुया घटिकया, सः=पूर्वोक्तः पापकृत्=पापी जीर्णशबरः, सुदूरम्=अतिदूरदेशम्, अतिक्रान्तः=अतीतः, इति=एवम्, परिकलय्य=विचार्य, किंचित्=ईषत्, उन्नमितकन्धरः=उन्नमिता ऊर्ध्वीकृता कन्धरा ग्रीवा येन स तादृशः सन्, भयचकितया=भीतिचंचलया, दृशा=नेत्रेण, दिशाः=आशाः, चतुर्दिशम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा तृणेऽपि=यवसेऽपि, चलति=कम्पमाने, स पुनः=भूयः, प्रतिनिवृत्तः=प्रत्यावृतः, इति पदे पदे=प्रतिपदम् तम् एव=अमुम् एव, पापकारिणम्=पापविधायिनं शबरम्, उत्प्रेक्षमाणः=उत्पश्यन्,तस्मात्=पूर्वोक्तात्, तमालतरुमूलात्=तापिच्छवृक्षमूलभागात्, निष्क्रम्य=निःसृत्य, सलिलसमीपम्=जलनिकटम्, उपसर्तुम्=उपगन्तुम्, प्रयत्नम्=उद्योगम्, अकरवम्=कृतवान् ।

टिप्पणी–अवतीर्य–अव+तृ+क्त्वा=ल्यप्=अवतीर्य । विप्रकीर्ण–बिखरे हुए (वि+प्र+कृ+क्त) । संहृत्य–सम्+हृ+क्त्वा–ल्यप् । वेपथु–वेप+अथुच् । बलवती–बल+मतुप्; म को व तथा ङीप् । अतिक्रान्तः-अति+क्रम्+क्त । पापकृत्–पाप+कृ+क्विप् तथा तुक् का आगम । परिकलय्य–परि+कल+क्त्वा—ल्यप् । अनया कालकलया–इस समय में, इस बीच में, यहाँ 'अपवर्गे तृतीया' से तृतीया विभक्ति होती है । उत्प्रेक्षमाणः=सम्भावना करते हुए, घबराहट के कारण उसी पापी को ही हर समय, प्रत्येक स्थान पर

देखते हुए । उत्+प्र+ईक्ष्+शानच् । उपसर्तुं–उप+सृ+तुमुन् ।

अजातपक्षतया नातिस्थिरतरचरणसंचारस्य मुहुर्मुहुर्मुखेन पततो मुहुस्तिर्यङ् निपतन्तमात्मानमेकया पक्षपाल्या संधारयतः क्षिति-तलसंसर्पणश्रमातुरस्यानभ्यासवशादेकमपि दत्त्वा पदमनवरतमुन्मु-खस्य स्थूलस्थूलं श्वसतो धूलिधूसरस्य संसर्पतो मम समभून्मनसि–अति-कष्टास्ववस्थावपि जीवितनिरपेक्षा न भवन्ति खलु जगति प्राणिनां वृत्तयः । नास्ति जीवितादन्यदभिमततरमिह जगति सर्वजन्तूनाम् । एवमुपरतेऽपि सुगृहीतनाम्नि ताते यदहमविकलेन्द्रियः पुनरेव प्राणिमि । धिङ् मामकरुणमतिनिष्ठुरमकृतज्ञम् । अहो! सोढपितृमरणशोकदारुणं येन मया जीव्यत, उपकृतमपि नापेक्ष्यते । खलं हि खलु मे हृदयम् ।

हिन्दी-अनुवाद–(पूर्ण रूप से) पंखे न जमे रहने के कारण डग-मगाते हुए पैरों से सञ्चरण करने वाले, बारम्बार मुँह के बल गिरते हुए, अनेकशः तिरछे होकर गिरते हुए अपने को एक पक्षपाली (पंखों की पंक्ति) से संभालते हुए भूतल पर घिसटने से उत्पन्न थकावट से चूर-चूर अनभ्यास के कारण एक भी डग आगे रख कर निरन्तर ऊपर की ओर मुँह उठाए रहने वाले, लम्बी-लम्बी साँसें लेने वाले तथा धूल से लिपटे हुए, सञ्चरण करने वाले मेरे मन में आया–(हाय !) 'अत्यन्त कष्टमयी दशाओं में भी लोग अपने प्राणों का मोह नहीं छोड़ पाते' निश्चय ही संसार में प्राणियों की यही प्रवृत्तियां हैं । इस संसार में समस्त प्राणियों के लिए जीवन से बढ़कर अधिक प्रियवस्तु और कुछ नहीं है । तभी तो मैं इन्द्रियों की विकलता से हीन होकर (अर्थात् स्वस्थ चित्तवाला) सुगृहीत नाम वाले पितृचरण के इस प्रकार (क्रूरशबर द्वारा अकालहत) स्वर्गवासी हो जाने पर भी जी ही रहा हूं ! धिक्कार है मुझ जैसे निर्दय, अत्यन्त क्रूर एवं कृतघ्न (व्यक्ति) को ! ! ओह, पिता जी के मृत्युशोक को सह्य कर जो कि मैं यातनापूर्वक (अर्थात् बेबसी में) जी रहा हूं, (उनके द्वारा किए गए) उपकार की भी मुझे लाज नहीं है (कि मर जाऊं !) । निश्चय ही मेरा हृदय दुष्ट (उपकारानभिज्ञ) है ।

संस्कृत-व्याख्या—अजातपक्षतया = अनुत्पन्नच्छदतया, नातिस्थिरतर-चरणसंचारस्य=नातिस्थिरतरः अल्पस्थिरः चरणयोः पादयोः संचारः यस्य तादृशस्य, अत एव मुहुर्मुहुः=पुनः पुनः, मुखेन=लपनेन, पततः=लुण्ठतः, मुहुः =पुनः, तिर्यक्=तिरश्चीनम्, निपतन्तम्=लुठन्तम् आत्मानम्=स्वम्; एकया=केवलया, पक्षपाल्या=पक्षप्रदेशेन, संधारयतः=संदधतः, क्षितितल-संसर्पणश्रमातुरस्य=क्षितितले भूतले यत् संसर्पणं रिङ्गणं तेन यः श्रमः खेदः तेन आतुरस्य पीडितस्य, अनभ्यासवशात्=चलनाभ्यासाभावात्, एकम् अपि, = केवलम् अपि, पदम्=चरणम् दत्त्वा=निधाय, अनवरतम्=सततम्, उन्मु-खस्य=उत् ऊर्ध्वीकृतं मुखं लपनं येन तादृशस्य, स्थूलस्थूलम्=दीर्घदीर्घम्, श्वसतः=प्राणतः, धूलिधूसरस्य=धूलिभिः भूरजोभिः धूसरस्य धूम्रवर्णस्य, संसर्पतः=रिङ्गतो भूम्याम्, मम=वैशम्पायनस्य, मनसि=हृदये, समभूत्= समुत्पन्नः, अयं विचार इति शेषः। विचारं स्पष्टयति–खलु=निश्चयेन, जगति =लोके, अतिकष्टासु=अत्यन्तक्लेशकारिणीषु, अवस्थासु अपि=दशासु अपि, प्राणिनाम्=जीवानाम्, वृत्तयः=व्यापाराः मनोवृत्तयो वा, जीवितनिरपेक्षा= जीवितात्प्राणधारणात् निरपेक्षाः उदासीनाः, न भवन्ति=न विद्यन्ते, इह जगति=अस्मिन् भुवने, सर्वजन्तूनाम्=समस्तजीवानाम्, जीवितात्=प्राण-धारणात्, अन्यत्=इतरत्, अभिमततरम्=प्रियतरम् नास्ति=न विद्यते, तदेव समर्थयन्नाह-यत=यस्मात् कारणात्, सुगृहीतनाम्नि=सुगृहीतं नाम यस्य तस्मिन् प्रातः स्मरणीये ताते=जनके, एवम्=उक्तरूपेण, उपरतेऽपि =मृतेऽपि, अहम्=वैशम्पायनः, अविकलेन्द्रियः=अविकलानि स्वस्थानि (विषयग्रहणे समर्थानीत्यर्थः) इन्द्रियाणि श्रोत्रादीनि यस्य तादृशः सन्, पुनरेव =भूयोऽपि, प्राणिमि=श्वसिमि, अकरुणम्=निर्दयम्, अतिनिष्ठुरम्=अति-कठोरम्, अकृतज्ञम्=अकृतज्ञम् अनुपकारज्ञम्, माम्=वैशम्पायनम्, धिक्= धिक्कारः, अहो=आश्चर्यम्, येन=येन हेतुना, अतः मया=वैशम्पायनेन, सोढपितृमरणशोकदारुणम्=सोढः मर्षितः यः पितुः तातस्य मरणस्य मृत्योः शोकः विषादः तेन दारुणं भयङ्करं यथा स्यात् तथा, जीव्यते=जीवनानि धार्यते, उपकृतमपि=तातविहित उपकारोऽपि, नापेक्ष्यते=अपेक्षा न क्रियते, येन=हेतुना खलु=निश्चयेन, मे=मम, हृदयम्

=मनः, खलम् =नीचं दुष्टं वा, हि=अवधारणार्थकमिदमव्ययपदम् ।

टिप्पणी-अजातपक्षतया-न जातपक्षतया=अजातपक्षतया, जात-जन् +क्त । स्थिरता-स्थिर+तरप् । पततः-पत्+शतृ ष० ए० व० । पक्षपाल्या-करवट के सहारें से, पार्श्वप्रदेश के द्वारा (पक्ष-पार्श्व, करवट, पालीप्रदेश-स्थान) । 'पालिः करालितायां स्यात् प्रदेशे पंक्तिचिह्नयोः' इत्यमरः । वृत्तयः-व्यापार, व्यवहार, मनोवृत्ति, वृ+क्तिन् । उपरते-उप+रम्+क्त, स० ए० व० । सुगृहीतनाम्नि--जिनका नाम सम्मान के साथ लिए जाने योग्य है ; प्रातः स्मरणीय(स सुगृहीतनामा स्यात् यः प्रातरनुचिन्त्यते, त्रिकाण्डशेष) । सोढः-सहन किया (सह्+क्त) । दारुण- 'दृ' (भये)+उनन् । 'दारुणं भीषणं भीष्मं घोरं भीमं भयानकम्' इत्यमरः ।

अहं हि लोकान्तरगतायामम्बायां नियम्य शोकावेगमाप्रसवदिवसात् परिणतवयसापि सता तैस्तैरुपायैः संवर्धनक्लेशमतिमहान्तमपि स्नेहवशादगणयता मत् तातेन परिपालितस्तत्सर्वमेकपदे विस्मृतम् । अतिकृपणाः खल्वमी प्राणाः यदपकारिणमपि तातमद्यापि गच्छन्तं नानुगच्छन्ति । सर्वथा न कंचिन्न खलीकरोति जीविततृष्णा, यदीदृगवस्थमपि मामयमायासयति जलाभिलाषः । मन्ये चागणितपितृमरणशोकस्य निर्घृणतैव केवलमियं मम सलिलपानबुद्धिः ।

हिन्दी-अनुवाद-जन्म देने के बाद ही मां के स्वर्गवासिनी हो जाने पर पत्नी के मृत्युजन्य शोक के वेग को रोक कर, पैदा होने के दिन से ही ढलती अवस्था वाले (अर्थात् वृद्धप्राय) भी सज्जन पितृचरण द्वारा (वात्सल्य) स्नेह के कारण अत्यन्त महान् पालन-पोषण सम्बन्धी कष्ट को कुछ न समझते हुए जो मैं उन-उन अर्थात् श्रमसाध्य उपायों द्वारा पाला गया वह सब आज एक साथ ही भूल गया । सचमुच मेरे ये प्राण अत्यन्त कृपण (क्षुद्र) हैं जो उपकारपरायण भी परलोक जाते हुए पिता जी का आज अनुगमन नहीं कर रहे हैं । 'जीवन का लोभ किसे पामर नहीं बना देता है' ऐसी बात बिल्कुल

नहीं है अर्थात् अवश्य बना देता है जो कि इस प्रकार की (दयनीय) अवस्था वाले भी मुझको जल पीने की इच्छा कष्ट दे रही है। मरने को कौन कहे! मानता हूँ कि पिता जी के मृत्युशोक की परवाह न करने वाले मुझ सरीखे व्यक्ति की यह जल पीने की धारणा केवल निर्दयता ही है (और कुछ नहीं!)

संस्कृत-व्याख्या—हि=निश्चयेन, अम्बायाम्=जनन्याम् लोकान्तरम्=अन्यो लोकः लोकान्तरं तत्र गतायाम्-परलोकप्रयातायाम्, सत्याम्, शोकावेगम्=शोकस्य विषादस्य आवेगः, प्रवाहः,तम्=विषादप्रवाहम्,नियम्य=निरुध्य, तातेन=जनकेन, परिणतवयसा=परिणतं परिपक्वं वयः अवस्था यस्य तादृशेन वृद्धेन, सता अपि=भवता अपि, तैः तैः=विभिन्नैः, उपायैः=क्षुधा-पिपासाशमनात्मकैः, अतिमहान्तम् अपि=महत्तमम् अपि, संवर्धनक्लेशम्=संवर्धने पालने यः क्लेशः कष्टं तम्, स्नेहवशात्=वात्सल्यात्, अगणयता=अननुभवता, अमन्यमानेनेत्यर्थः,यत्=यत्स्वरूपम्, यत्किमपि, परिपालितः=पोषितः, अहमिति शेषः, मया=वैशम्पायनेन, तत्सर्वम्=तत्सकलं पालनादि-कम्, एकपदे=तत्काले, त्वरितमित्यर्थः विस्मृतम्=स्मृतिपथाद् अपसारितम्, खलु=निश्चयेन, अमी=इमे, प्राणाः=असवः,अतिकृपणाः=अत्यन्ततुच्छाः, यतः=यस्मात् कारणात्, उपकारिणम् अपि=परलोकं यान्तम् अपि, न अनुगच्छन्ति=नहि अनुसरन्ति, जीविततृष्णा=जीवितस्य प्राणधारणस्य तृष्णा इच्छा, कञ्चित्=कमपि प्राणिनम्, सर्वथा=समस्तप्रकारेण, न खलीकरोति=अखलं खलं करोतीति, खलीकरोति, न नीचं विदधाति, इति न=नैवम्, प्रत्येकं खलीकरोतीत्यर्थः। यत्=यतः, यस्माद् हेतोः, ईदृगवस्थम् अपि=ईदृशी अवस्था यस्य तम् अपि मृतपितृकम् अपि, माम्=वैशम्पायनम् अयम्=अनभूयमानः, जलाभिलाषः=पानीयपानेच्छा, आयासयति=प्रयत्नं कारयति क्लेशयति वा। च=तथा अहं मन्ये=अनुभवामि, यत् अगणितपि-तृमरणशोकस्य=अगणितः अननुभूतः उपेक्षितो वा पितुः जनकस्य मरणस्य मृत्योः शोकः विषादः येन तस्य, मम=वैशम्पायनस्य, इयम्=उत्पद्यमाना, सलिलपानबुद्धिः=जलाभिलाषी,केवलम्=एकमात्रम्,निर्घृणताएव=निष्क-

रुणता एव ।

टिप्पणी–नियम्य-नि+यम्+क्त्वा–ल्यप् । परिणतवयसापि=पकी हुई अवस्था वाला होकर वृद्ध होते हुए भी। परिपालितः-परि+पाल्+क्त। एकपदे–एक दम, एक पग ही, तुरन्त ही; 'तत्क्षणैकपदे तुल्ये' इति हलायुधः। विस्मृतम्-वि+स्मृ+क्त । न कंचिन्न खलीकरोति-ऐसा कोई प्राणी नहीं जिसे जीवन की अभिलाषा खल नहीं बना देती या जिससे नीच काम नहीं करा देती अर्थात् प्रत्येक प्राणी को निश्चय ही खल बना देती है। निर्घृणत्व=निर्दयता ही। यहाँ अर्थान्तरन्यास तथा हेतु अलंकार हैं।

अद्यापि दूर एव सरस्तीरम्। तथा हि-जलदेवतानूपुररवानुकारि दूरेऽद्यापि कलहंसविरुतम्, अस्फुटानि श्रूयन्ते सारसविरुतानि, अयं च विप्रकर्षादाशामुखविसर्पणविरलः संचरति नलिनीषण्डपरिमलः। दिवसस्य चेयमतिकष्टा दशा वर्तते। तथा हि-रविरम्बरतलमध्यवर्ती स्फुरन्तमातपमनवरतमनलधूलिनिकरमिव विकिरति करैः, अधिकामुपजनयति तृषमातपसंतप्तपांसुपटलदुर्गमा भूः, अतिप्रबलपिपासावसन्नानि गन्तुमल्पमपि मे नालमङ्गकानि, अप्रभुरस्म्यात्मनः, सीदति मे हृदयम्, अन्धकारतामुपयाति चक्षुः, अपि नाम खलो विधिरनिच्छतोऽपि मे मरणमद्यैवोपपादयेत् ।

हिन्दी-अनुवाद–सरोवर अब भी दूर ही है क्योंकि जलदेवता के पायलों की झनकार का अनुकरण करने वाली कलहंसों की यह (मधुर) ध्वनि अब भी दूर है। सारस पक्षियों के कलरव स्पष्टतः नहीं सुनाई पड़ रहे हैं और यह कमलनियों के समूह से उत्पन्न सौरभ दूर होने के कारण दिशाओं में परिव्याप्त अतएव विरल (न्यून) रूप में इधर-उधर फैल रहा है।

दिन की (भी) यही अत्यन्त क्लेशमयी दशा है। क्योंकि आकाशमंडल के बीचोबीच विद्यमान सूर्य प्रज्वलित धूप को अग्निस्फुलिङ्गों के समूह की भाँति किरणों से निरन्तर बिखेर रहा है (तथा) अत्यधिक प्यास उत्पन्न कर रहा

है। (प्रचण्ड) घाम से भरपूर तपी हुई धूलियों के समूह से भूमि चलने योग्य नहीं रह गई है। अत्यन्त प्रबल प्यास के कारण अवसन्न (निर्जीवप्राय) मेरे कोमल अंग तनिक भी आगे बढ़ने में समर्थ नहीं हैं। (अब) मैं अपना प्रभु नहीं रहा (अर्थात् अपनी ही देह पर मेरा नियन्त्रण नहीं है) मेरा हृदय बैठ रहा है। आंख में अंधेरा छा रहा है। कितना अच्छा होता। (यदि) दुष्ट विधाता न चाहते हुये भी मेरी मृत्यु आज ही उत्पन्न कर देता ! !

संस्कृत-व्याख्या–अद्य अपि=साम्प्रतमपि, सरस्तीरम्=सरसः सरोवरस्य तीरं तटम्, दूरे एव=समीपे एव, तथाहि=उक्तवचनसमर्थनाय इदमव्ययपदम्, जलदेवतानूपुररवानुकारि=जलदेवतानां उदकाधिष्ठातृदेवीनां नूपुराणां मञ्जीराणां रवं ध्वनिम् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलम्, कलहंस-विरुतम्=कलहंसानां कादम्बानां विरुतं कूजितम्, अद्यापि=अधुना अपि, दूरे =समीपे सारसरसितानां=सारसानां लक्ष्मणानां रसितानि कूजितानि, अस्फु-टानि=अस्पष्टानि, श्रूयन्ते=आकर्ण्यन्ते, अयं च=एष च, नलिनीषण्डप-रिमल:=नलिनीनां कमलिनीनां षण्डः समूहः तस्य परिमलः सौरभः, विप्र-कर्षात्=दूरात्, आशामुखविसर्पणविरल:=आशानां दिशां मुखेषु लपनेषु विसर्पणेन प्रसरणेन विरलः स्वल्पः सन्, संचरति=इतः प्रसरति, दिवसस्य च =दिनस्य च, इयम्=अनुभूयमाना, दशा=अवस्था, अतिकष्टा=अत्यन्तक्ले-शकारिणी, वर्तते=विद्यते, तथाहि=उक्तवचनसमर्थनायेदम्, अम्बरतलमध्य-वर्ती=अम्बरतलस्य आकाशतलस्य मध्ये वर्तते इति तच्छीलः मध्यगामी, मध्या-ह्नकालिक इत्यर्थः, रविः=दिनकरः, करैः=किरणैः, अनवरतम्=सततम्, अनलधूलिनिकरम् इव=अनलस्य वैश्वानरस्य धूलयः कणिकाः तासां निकरः समूहः तम् इव, स्फुरन्तम्=देदीप्यमानम् आतपम्=तेजः, विकिरति= विक्षिपति, आतपसंतप्तपांसुपटलदुर्गमा=आतपेन सूर्यतेजसा संतप्तम् उष्णीकृतं यत् पांसूनां धूलिनां पटलं समूहः तेन दुर्गमा दुश्चरा, दुःखेन गन्तुं योग्या इत्यर्थः, भूः=धरा, अधिकाम्=अधिकतराम्, तृषम्=पिपासाम्, उपजनयति=उत्पा-दयति, अतिप्रबलपिपासावसन्नानि=अतिप्रबला अधिकबलवती या पिपासा तृषा तया अवसन्नानि, शिथिलानि, मे=मम वैशम्पायनस्य, अङ्गानि=लघूनि

अङ्गानि अङ्गकानि क्षुद्रावयवा:,अल्पम् अपि=किञ्चिद् अपि,गन्तुम्=चलितुम्, न अलम्=न समर्थानि,आत्मन:=स्वस्यस्वशरीरस्य इत्यर्थ:,अप्रभु:=अस्वामी अस्मि=भवामि, न मे स्वदेहेऽप्यधिकारो वर्तत इत्याशय:, मे=मम, हृदयम्=चेत:, सीदति=सखेदं भवति । चक्षु:=नयनम्, अन्धकारताम्=अन्धं करोतीति अन्धकार: तस्य भाव: तत्ता तां तिमिरताम्, उपयाति=प्राप्नोति । अपि नाम=किमिदं सम्भवम्, खल:=क्रूर:, विधि:=विश्वसृट्, अनिच्छतोऽपि=अनभिलषतोऽपि, मे=मम, मरणम्=मृत्युम्, अद्यैव=अस्मिन्नेव दिने, उपपादयेत्=विदध्यात् ।

टिप्पणी-जलदेवता-जलस्य देवता, देव+तल्=देवता । अस्फुटानि-अस्पष्ट, न स्फुटानि-अस्फुटानि । उपजनयति-उप+जन्+णिच्+तिप् । पांसुपटल-धूलि का समूह । अपि नाम-क्या यह सम्भव है, क्या ही अच्छा हो । यहां अपि शब्द प्रश्नवाचक तथा नाम सम्भावना अर्थ में है । जैसा कि कहा गया है-'अपि: सम्भावनाप्रश्नशङ्कागर्हासमुच्चये । तथा भुक्तपदार्थे च कामाचार-क्रियासु च ॥' इति विश्व: । 'नाम कामे (कोपे) अभ्युपगमे विस्मये स्मरणेऽपि च । सम्भाव्यकुत्साप्राकाश्यविकल्पेपि दृश्यते ॥' इति मेदिनी ।

एव चिन्तयत्येव मयि तस्मात् सरसो नातिदूरवर्तिनि तपोवने जावालिर्नाम महातप: मुनि: प्रतिवसति स्म । तत्तनयश्च हारीतनामा मुनिकुमारक: सनत्कुमार इव सर्वविद्यावदातचेता: सवयोभिरपरैस्तपोधनकुमारकैरनुगम्यमानस्तेनैव पथा द्वितीय इव भगवान् विभावसुरतितेजस्वितया दुर्निरीक्ष्यमूर्ति:, उद्यतो दिवसकरमण्डलादिवोत्कीर्ण:, तडिद्भिरिव रचितावयव:, तप्तकनकद्रवेणेव बहिरुपलिप्तमूर्ति आपिशङ्गावदातया देहप्रभया स्फुरन्त्या सबालातपमिव दिवसं सदावानलमिव वनमुपदर्शयन्,उत्तप्तलोहिनीनामनेकतीर्थाभिषेकपूतानामसंस्था-

वलम्बिनां जटानां निकरेणोपेतः, स्तम्भितशिखाकलापः खाण्डववन-दिधक्षया कृतकपटवटुवेष इव भगवान् पावकः,……

हिन्दी-अनुवाद–मेरे इस प्रकार विचार मग्न रहने पर ही उस [पम्पा] सरोवर से बहुत दूर नहीं [अपितु निकटवर्ती] तपोवन में जाबालि नाम वाले (एक) महातपस्वी मुनि रहते थे। उनका पुत्र 'हारीत' नामक मुनिकुमार स्नान करने की इच्छा से, उसी मार्ग से (जहाँ मैं था) उसी पद्मसर की ओर आया जो कि (ब्रह्मा के पुत्र) सनत्कुमार की भाँति समस्त विद्याओं (के अध्ययन) से प्रकाशित (विशुद्ध) अन्तःकरण वाला था, जो समान अवस्था वाले अन्यान्य तपस्वियों के कुमारों द्वारा अनुगमन किया जा रहा था, जो अत्यन्त तेजस्विता के कारण कठिनतापूर्वक देख सकने योग्य स्वरूप वाले द्वितीय भगवान् सूर्य के (अथवा अग्नि) की भाँति (ब्रह्मचर्यादिजनित) उत्कृष्ट तेजोमयता के कारण कठिनाईपूर्वक देखने योग्य शरीरवाला था, जो उदीयमान सूर्यमण्डल से उचेल लिया (उत्कीर्ण) गया प्रतीत होता था, जो विद्युत्समूह से विरचित अङ्ग-प्रत्यङ्गों वाला प्रतीत होता था, जो पिघले हुए सुनहरे घोल द्वारा बाहर से पुती हुई (कोई) मूर्ति प्रतीत होता था, जो चम-चमाती हुई श्वेत-पीतवर्णवाली (अपनी) निर्मल देहप्रभा से दिन को प्रभात-कालीन धूप से युक्त तथा वन को दावानल से संवलित करता हुआ प्रतीत होता था, जो धधकते हुए के समान लालरंग वाली अनेक तीर्थों के जल (स्नान) से पवित्रित तथा स्कन्धप्रदेश पर लटकती हुई जटाओं के समूह से युक्त था, जो ज्वालपुञ्ज को भीतर समेटकर खाण्डववन को भस्मसात् करने की इच्छा से कृत्रिम ब्रह्मचारी की वेशभूषा धारण करने वाले भगवान् अग्निदेव के समान बँधे हुए चूडापाश वाला था।

संस्कृत-व्याख्या–**मयि**=वैशम्पायने, **एवम्**=पूर्वोक्तप्रकारेण, **चिन्तयति एव**=विचारयति एव, **तस्मात्**=पूर्वोक्तात्, **सरसः**=पद्मसरोवरात्, **नातिदूर-वर्तिनि**=समीपस्थायिनि, **तपोवने**=धर्मारण्ये, **जाबालिर्नाम**=जाबालिनामकः, **महातपाः**=महत् तपः यस्य सः उग्रतपाः, **मुनिः**=मननशीलो महात्मा, **प्रति-वसति स्मः**=निवसति स्म, **तत्तनयः**=तत्सुतः, **हारीतनामा**=हारीतसंज्ञकः, **मुनिकुमारकैः**=तपस्विबालकैः **समवयोभिः**=समानं वयः आयुः येषां तैः सम-

वयस्कैः, **अपरैः**=इतरैः, **तपोधनकुमारकैः**=तपस्विबालकैः, **अनुगम्यमानः**=अनुस्रियमाणः, **तेनैव**=मद्गतेनैव, **पथा**=मार्गेण, सिस्नासुः तदेव कमलसरः उपागमत् इति दूरतमेन सम्बन्धः। अतः परं प्रथमान्तानि पदानि हारीतस्य विशेषणानि ज्ञेयानि। **सनत्कुमार इव**=ब्रह्मपुत्र इव, **सर्वविद्यावदातचेताः**=सर्वाभिः समस्ताभिः विद्याभिः कलाभिः अवदातं निर्मलं चेतः मनः यस्य सः, **अतितेजस्वितया**=अतिदीप्तिमत्तया, **दुर्निरीक्ष्यमूर्तिः**=दुःखेन निरीक्षितुं योग्या दुर्निरीक्ष्या दुर्लक्ष्या मूर्तिः वपुः यस्य तादृशः, **द्वितीयः**=अपरः, **भगवान्**=ऐश्वर्यवान् तेजस्वी इत्यर्थः, **विभावसुः**=वह्निः, **इव**=उत्प्रेक्षाव्यञ्जकोऽयम्, **उद्यतः**=उदयं विदधतः, **दिवसकरमण्डलात्**=दिवसं करोतीति दिवसकरः सूर्यः तस्य मण्डलात् सूर्यबिम्बात्, **उत्कीर्ण इव**=टङ्केन उल्लिखित इव, सूर्यबिम्बम् उल्लिख्य विरचित इत्यर्थः, **तडिद्भिः**=सौदामिनीभिः, **विरचितावयव इव**=विरचिताः निर्मिताः अवयवाः अङ्गानि यस्य तादृश इव, **तप्तकनकद्रवेण**=तप्तम् उष्णीकृतं यत् कनकं स्वर्णं तस्य द्रवः रसः तेन, **बहिरुपलिप्तमूर्तिः इव**=बहिःबाह्यभागे उपलिप्ता लिम्पिता मूर्तिः वर्ष्म यस्य तादृश इव, **आपिशङ्गावदातया**=आ ईषत् पिशङ्गा पीतवर्णा चासौ अवदाता स्वच्छा तया, **स्फुरन्त्या**=देदीप्यमानया, **देहप्रभया**=देहस्य शरीरस्य प्रभा छविः तया शरीरकान्त्या, **सबालातपम्**=बालः प्रभातकालिकः आतपः तेजः बालातपः तेन सह विद्यमानं प्रातःकालिकप्रकाशसहितम्, **दिवसम् इव**=वासरम् इव, **सदावानलम्**=दवस्य अयं दावः स चासौ अनलः दावानलः तेन सह विद्यमानं दावाग्निसहितम्, **वनम् इव**=विपिनम् इव, **उपदर्शयन्**=प्रकटयन्, **उत्तप्तलोहलोहिनीनाम्**=उत्तप्तम् उष्णीकृतं लोहम् अश्मसारः तद्वत् लोहिनीनां रक्तवर्णानाम्, **अनेकतीर्थाभिषेकपूतानाम्**=अनेकानि विविधानि यानि तीर्थानि तरणोपायभूतानि गङ्गादीनि तेषु अभिषेकः स्नानं तेन पूतानाम् पवित्राणाम्, **अंसस्थलावलम्बिनीनाम्**=अंसस्थलयोः भुजशिरःस्थाने अवलम्बन्ते वेल्लन्ति इति तच्छीलाः तासाम्, स्कन्धावलम्बिनीनाम्, **जटानाम्**=सटानाम्, **निकरेण**=समूहेन, **उपेतः**=युक्तः, **स्तम्भितशिखाकलापः**=स्तम्भितः बद्धः निश्चलीकृतो वा शिखानां चूडानां कलापः समूहः येन तादृशः बद्धचूडासमूहः, अग्निपक्षे निश्चलीकृतज्वालासमूहः, **खाण्डववनविवक्षया**=खाण्डव

च तद् वनं खाण्डववनं तन्नामकं काननं तस्य दिधक्षया, **कृतकपटवटुवेष:**=कृतः विहितः कपटेन व्याजेन वटोः ब्रह्मचारिणः वेषः स्वरूपरचना आकल्पो वा येन सः तादृशः, **भगवान्**=ऐश्वर्यवान्, **पावक इव**=वह्निरिव ।

टिप्पणी–चिन्तयति–चिति+णिच्+शतृ; स० ए० व० । **महातपाः**—महत् तपः यस्य सः=महातपाः । **सनत्कुमार इव···चेताः**–ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार के ही समान सब विद्याओं के अध्ययन के कारण जिसका मन निर्मल हो गया था । 'सनत्-सदा कुमारः' इस व्युत्पत्ति के आधार पर सनत्कुमार चिरकुमार कोटि में गिने जाते हैं—"यथोत्पन्नस्तथैवाहं कुमार इति विद्धि माम् । तस्मात् सनत्कुमारेति नामैतन्मे प्रतिष्ठितम् ॥" **अनुगम्यमानः**—अनु+गम्+यक्+शानच् । **तेजस्वितया**—तेजस्+विनि+तल्+टाप्; तृ० ए० व० । **उत्कीर्ण इव**—टाँकी से छीलकर बनाया गया । 'सुवर्णात् कटकम्' प्रयोग की तरह यहाँ दिवसकरमण्डलात्' में पञ्चमी विभक्ति है । सूर्य को गढ़कर ही मानों इस तेजस्वी मुनिकुमार को रचा गया हो; उत्+कृ+क्त । **उपलिप्त**–उप+लिप्+क्त । **स्फुरन्त्या**–स्फुर्+शतृ+ङीप्; तृ० ए० व० । **उपदर्शयन्**–उप+दृश्+णिच्+शतृ, प्र० ए० व० । **खाण्डववन···पावकः**—खाण्डव वन को जलाने की इच्छा से ब्रह्मचारी का कपट वेष बनाकर मानो भगवान् अग्निदेव ही आ गये हों । महाभारत के अनुसार श्वेतिक नामक राजा ने बारह वर्ष तक लगातार यज्ञ करके अग्नि को इतना तृप्त किया कि उसे मन्दाग्नि हो गयी । उसे दूर करने के लिए ब्रह्मा जी की आज्ञा से खाण्डव वन का दाह करने की इच्छा से अग्निदेव ब्रह्मचारी का वेष बनाकर अर्जुन के पास आये थे और अर्जुन ने श्रीकृष्ण की सहायता से अग्निदेव को पूर्ण रूप से परितृप्त किया था । '**कृतकपट···पावकः**' में उपमा अलङ्कार है ।

तपोवनदेवतानूपुरानुकारिणा धर्मशासनकटकेनेव स्फाटिकेनाक्षवलयेन दक्षिणश्रवणावलम्बिना विराजमानः, सकलविषयोपभोगनिवृत्त्यर्थमुपपादितेन ललाटपट्टके त्रिसत्येनेव भस्मत्रिपुण्ड्रकेणालंकृतः, गगनगमनोन्मुखबलाकानुकारिणा स्वर्गमिव दर्शयता सततमु-

दग्रीवेण स्फटिकमणिकमण्डलुनाध्यासितवामकरतलः, स्कन्धदेशावलम्बिना कृष्णाजिनेन नीलपाण्डुभासा तपस्तृष्णानिपीतेनान्तर्निष्पतता धूमपटलेनेव परीतमूर्तिः, अभिनवबिससूत्रनिर्मितेमेव परिलघुतया पवनलोलेन निर्मांसविरलपार्श्वकपञ्जरमिव गणयता वामांसावलम्बिना यज्ञोपवीतेनोद्भासमानः, देवतार्चनार्थमागृहीतवनलताकुसुमपरिपूर्णपर्णपुटसनाथशिखरेणाषाढदण्डेन व्यापृतसव्येतरपाणिः, विषाणशिखरोत्खातामुद्वहता स्नानमृदमुपजातपरिचयेन नीवारमुष्टिसंवर्धितेन कुशकुसुमलताग्रास्यमानलोलदृष्टिना तपोवनमृगेणानुगम्यमानः,……

हिन्दी-अनुवाद–जो तपोवन देवता की पैंजनी (पायल) का अनुकरण करने वाली–धर्मादेशों का समूह प्रतीत होने वाली (अथवा धर्ममय शासन कराने में नियुक्त सेना की भाँति) तथा दाहिने कान में लटकती हुई स्फटिकमणिनिर्मित जपमाला से शोभायमान था, जो समस्त सांसारिक भोगों से छुटकारा पाने के लिए (नाना प्रयत्नों से) प्राप्त किए गए ललाटस्थली पर (मन, वाणी एवं कार्य सम्बन्धी) तीन सत्यों की भाँति प्रतीत होने वाले–भस्मनिर्मित त्रिपुण्ड्र से अलंकृत था जो नभोमण्डल में विहार करने के लिए ऊर्ध्वमुखी बकपंक्ति का अनुकरण करने वाले—निरन्तर ऊपर उठी ग्रीवा वाले (अतएव) मानो स्वर्गलोक के मार्ग का सङ्केत करते हुए स्फटिकमणिनिर्मित कमण्डलु से सुशोभित बाएँ हाथ वाला था, जो स्कन्धप्रदेश पर लटकते हुए-नीली एवं पीली प्रभा से युक्त काले मृगचर्म से (इस प्रकार) परिवेष्टित शरीरवाला था जो मानो तप के लोभ से (पहले) पिया गया और (अब) भीतर से निकलता हुआ धूमपुञ्ज हो, जो नवीन कमलनाल के तन्तुओं से बना हुआ प्रतीत होने वाले और भारहीन होने के कारण वायुवेग से चञ्चल होकर (अर्थात् देह पर इधर-उधर झूलता हुआ) मानो (हारीत की) मांसविहीन एवं छितराई हुई पसलियों को गिनने वाले, कन्धे पर लटकते हुए यज्ञोपवीत से देदीप्यमान था,

जो देवार्चन के निमित्त चुने गये वन की लताओं के पुष्पों से परिपूर्ण पत्रपुट (दोने) से संयुक्त शिखर वाले पलाशदण्ड से भरे हुए दाहिने हाथ वाला था, जो सींगों के अग्रभाग से उखाड़ी गई स्नानोपयोगी मिट्टी को (सींगों में ही) लपेटे हुए, परिचय उत्पन्न हो जाने के कारण जङ्गली धान की मुट्ठियों (को खिलाने) से पाले-पोसे गए तथा कुशों-लताओं एवं फूलों से दुःखती हुई चञ्चल दृष्टियों वाले तपोवनमृग से अनुगमन किया जा रहा था।

संस्कृत-व्याख्या–तपवोनदेवतानूपुरानुकारिणा = तपवनदेवीचरणकटक--सदृशेन, **धर्मशासनकटकेन इव**=धर्मशासनं राजभिः विप्रेभ्यः दत्तं ताम्रपत्रं तस्य कटकं ताम्रकुण्डलं तेन इव, **दक्षिणश्रवणावलम्बिना**=दक्षिणे सव्येतरे श्रवणे श्रोत्रे अवलम्बते वेल्लति इति तच्छीलः तेन, **स्फाटिकेन**=स्फटिकमणि-निर्मितेन, **अक्षवलयेन**=अक्षमालया, **विराजमानः**=शोभमानः, **सकलविषयोप-भोगनिवृत्त्यर्थम्**=सकलाः समस्ताः ये विषयाः इन्द्रियार्थाः तेषाम उपभोगः सेवनं तस्मात् निवृत्यर्थं विरक्त्यर्थम्, **उपपादितेन**=विहितेन, **त्रिसत्येन इव**=त्रयाणां सत्यानां समाहारः त्रिसत्यं तेन मानसिकवाचिककायिकसत्यत्रयेण इव, **ललाटपट्टके**=भालफलके, **भस्मत्रिपुण्ड्रकेण**=भस्मनः विभूतेः त्रिपुण्ड्रकं तिलक-विशेषः तिर्यग्रेखात्रयात्मकः तेन, **अलंकृतः**=सुशोभितः **गगनगमनोन्मुखबलाका-नुसारिणा**=गगनगमनाय आकाशोड्डयनाय उन्मुखी ऊर्ध्वानना या बलाका बकाङ्गना ताम् अनुसरति अनुकरोति इति तच्छीलः तेन तादृशेन, **स्वर्गमार्गम् इव**=सुरलोकपथम् इव, **दर्शयता**=निर्दिशता, **सततम्**=निरन्तरम् **उदग्रीवेण**=उन्नतकन्धरेण, **स्फटिकमणिकमण्डलुना**=स्फाटिककुण्ड्या, **अध्यासितवाम-करतलः**=अध्यासितम् अवलम्बितं वामं सव्यं करतलं हस्ततलं यस्य सः, **स्कन्धदेशावलम्बिना**=स्कन्धदेशम् असंस्थलम् अवलम्वते आश्रयते इति तच्छीलं तेन, **नीलपाण्डुभासा**=नीला श्यामा पाण्डुः पीता च भाः कान्तिः यस्य तेन तादृशेन, **कृष्णाजिनेन**=कृष्णमृगचर्मणा, **तपस्तृष्णानिपीतेन**=तपसः तप-स्यायाः तृष्णा आकाङ्क्षा तया हेतुभूतया निपीतेन निगीर्णेन, **पश्चाच्च अन्त-र्निष्पतता**=अन्तः अभ्यन्तरात् निष्पतता बहिर्निर्गच्छता, **धूमपटलेन इव**=धूम-समुदायेन इव, **परीतमूर्तिः**=परीता व्याप्ता मूर्तिः विग्रहः यस्य तादृशः, **अभिनव-**

बिससूत्रनिर्मितेन इव=अभिनवानि प्रत्यग्राणि यानि बिससूत्राणि मृणालतन्तवः तैः निर्मितेन इव कृतेन इव, **परिलघुतया**=भारशून्यतया, **पवनलोलेन**=पवनेन वातेन लोलः चञ्चलः तेन, अतएव **निर्मांसविरलपार्श्वकपञ्जरम्**=निर्मांसं पिशितशून्यं विरलम् असंकीर्णं पार्श्वकपञ्जरं पार्श्वास्थिनिकरम्, **गणयता इव**= गणनां कुर्वता इव, **वामांसावलम्बिना**=वामं सव्यं अंसं स्कन्धम् अवलम्बते आश्रयते इति तच्छीलं तेन, **यज्ञोपवीतेन**=यज्ञसूत्रेण, **उद्भासमानः**=देदीप्यमानः, **देवतार्चनार्थम्**=देवपूजनार्थम्, **आगृहीतवनलताकुसुमपरिपूर्णपर्णपुटसनाथशिखरेण**=आगृहीतानि आत्तानि यानि वनलतानां काननवल्लीनां कुसुमानि प्रसूनानि तैः परिपूर्णेन भृतेन पर्णपुटेन पत्रसंपुटकेन सनाथं युक्तं शिखरम् अग्र-भागः यस्य स तेन तादृशेन, **आषाढदण्डेन**=पालाशलगुडेन, **व्यापृतसव्येतरपाणिः**=व्यापृतः संयुक्तः सव्याद् इतरः सव्येतरः दक्षिणः पाणिः हस्तः यस्य स तादृशः, **विषाणशिखरोत्खाताम्**=विषाणस्य शृङ्गस्य शिखरेण अग्रेण उत्खाताम् उत्खनिताम्, **स्नानमृदम्**=स्नानार्थं स्नानात्पूर्वं मर्दनार्थे या मृत् मृत्तिका ताम्, **उद्वहता**=धारयता, **उपजातपरिचयेन**=उपजातः समुत्पन्नः परिचयः संस्तवः यस्य तेन उपजातपरिचितेन, अत एव **नीवारमुष्टिसंवर्धितेन** =नीवाराणां मुनिधान्यविशेषाणां मुष्टिभिः मुष्टिपरिमिताभिः मात्राभिः संवर्धितेन वृद्धि प्रापितेन, **कुशकुसुमलतायास्यमानलोलदृष्टिना**=कुशाः दर्भाः, कुसुमानि पुष्पाणि, लताः व्रततयः तैः आकर्षणहेतुभूतैः आयास्यमाना खेदं प्राप्यमाणा लोला चञ्चलाः दृष्टिः दर्शनं यस्य तेन तादृशेन, **तपोवनमृगेण**=मुन्याश्रमहरिणेन, **अनुगम्यमानः**=अनुव्रज्यमानः ।

टिप्पणी-धर्मशासनकटकेन इव—ताम्रपत्रों में विद्यमान कटक (कड़े) के समान । राजाओं के द्वारा ब्राह्मणों को जो भूमि दान आदि के प्रमाणरूप में ताम्रपत्र दिये जाते थे उन पर धार्मिक उपदेश भी रहा करते थे, अतः उन्हें धर्मशासन कहा जाता था । ताम्रपत्रों के ऊपरी भाग में एक ताँबे का मोटा कटक (कड़ा) डाला जाता था । जिस पर राजमुद्रा अङ्कित रहती थी, उसे धर्मशासन कटक कहा जाता था । हारीत के कान पर लटकती हुई माला उस कड़े के समान ही घेरे वाली थी । **विराजमान**–वि + राज् + शानच् । **त्रिसत्ये**

इव—हारीत के मस्तक पर लगी हुई भस्म का त्रिपुण्ड्र उस त्रिसत्य के समान था जो विषयों के उपभोग से मन को हटाने के लिए उसने 'मैं विषयों में अनुरक्त नहीं होऊँगा' इस सत्य को तीन बार शपथ के रूप में स्वीकार किया था। अथवा 'त्रिसत्या वै देवाः' इस वैदिक कल्पना के आधार पर मनसा, वाचा, कर्मणा विषयनिवृत्ति के लिए किया गया त्रिविध संकल्प ही 'त्रिसत्य' कहलाता है। **अलंकृत**—अलं + कृ + क्त । **दर्शयता**—दृश् + णिच् + शतृः तृ० ए० व० । **परीत**—परि + इण् + क्त । **उद्भासमान**—उत् + भास् + शानच् । **आषाढदण्ड**—ढाक का दण्ड । 'पलाशो दण्ड आषाढः' इत्यमरः । **'धूमपटलेनेव'** में जात्युत्प्रेक्षा है । **अनुगम्यमान**—अनु + गम् + यक् + शानच् ।

विटप इव कोमलवल्कलावृतशरीर, गिरिरिव समेखल, राहुरिवासकृदास्वादितसोम, पद्मनिकर इव दिवसकरमरीचिप, नदीतटतरुरिव सततजलक्षालनविमलजटः, करिकलभ इव विकचकुमुददलशकलासितदशनः, द्रौणिरिव कृपानुगतः, नक्षत्रराशिरिव चित्रमृगकृत्तिकाश्लेषोपशोभितः, घर्मकालदिवस इव क्षपितदोषः, जलधरसमय इव प्रशमितरजःप्रसरः, वरुण इव कृतोदवासः, हरिरिवापनीतनरकभयः, प्रदोषारम्भ इव संध्यापिङ्गलतारकः, प्रभातकाल इव बालातपकपिलः, रविरथ इव दृढनियमिताक्षचक्रः, सुराजेव निगूढमन्त्रसाधनक्षपितविग्रहः, जलनिधिरिव करालशंखमण्डलावर्तनाभिगतः, भगीरथ इव दृष्टगङ्गावतारः, भ्रमर इवासकृदनुभूतपुष्करवनवासः, वनचरोऽपि कृतमहालयप्रवेश, असंयतोऽपि मोक्षार्थी, सामप्रयोगपरोऽपि सततावलम्बितदण्डः, सुप्तोऽपि प्रबुद्धः, संनिहितनेत्रद्वयोऽपि परित्यक्तवामलोचनस्तदेव कमलसरः सिस्नासुरुपागमत् ।

हिन्दी-अनुवाद—जो कोमल छालों (तरुत्वक्) से ढँकी शरीर वाले तने (युक्त वृक्ष) की भांति कोमल वल्कल (वस्त्रविशेष) से आवृत शरीर वाला

था, जो मेखलाओं (पत्तों अथवा प्रत्यन्त शिखरों) से युक्त पर्वत की भाँति (मौञ्जी) मेखला से युक्त था, जो अनेक बार चन्द्रमा को संग्रस्त करने वाले राहु की भाँति अनेक बार सोमरस का आस्वादन कर चुका था (अथवा अनेक बार ज्योतिष्टोम याग कर चुका था), (विकासार्थ) सूर्य की किरणों का पान करने वाले कमलसमूह की भाँति (ऊर्ध्वमुख होकर) सूर्य की रश्मियों का पान करने वाला था, जो निरन्तर लहरों से धोए जाने के कारण निर्मल मूल-भाग वाले नदी तटवर्ती वृक्ष की भाँति सदैव जल से धोने के कारण स्वच्छ जटाओं वाला था जो खिले हुए कुमुदपुष्प की पंखुड़ियों के टुकडों की भाँति शुभ्र दातों वाले हस्तिशावक की भाँति विकसित कुमुदपुष्प के दलखण्डों की भाँति शुभ्र दाँतों वाला था, जो (अपने मामा) कृपाचार्य से अनुगत द्रोणपुत्र अश्वत्थामा की भाँति अनुग्रहयुक्त था, जो चित्रा-मृगशिरा-कृत्तिका तथा आश्लेषा समन्वित नक्षत्रमण्डल की भाँति चितकबरे मृगचर्म को लपेटने (ओढने) से सुशोभित था, जो रात्रि को क्षीण (अर्थात् छोटी) बना देने वाले ग्रीष्मकालीन दिन की भाँति (रागद्वेषादि) दोषों को नष्ट कर चुका था, जो धूलिसञ्चार का प्रशमन कर देने वाली पावस ऋतु की भाँति (कामादि) रजोगुण-व्यापार को शान्त कर चुका था, जो जल में निवास करने वाले (तदधिष्ठातृ) वरुणदेव की भाँति (तपश्चर्या के लिए) जल में निवास कर चुका था अथवा 'उपवास' (व्रत-विशेष) सम्पन्न कर चुका था, जो नरकासुर के भय को दूर कर देने वाले भगवान् विष्णु की भाँति (समाचरित पुण्यों के कारण) नरलोक का भय दूर कर चुका था, जो सान्ध्यकालीन पिङ्गलवर्ण नक्षत्रों से युक्त प्रदोषारम्भ (गोधूलिवेला का प्रारम्भ) की भाँति सन्ध्या सदृश पिङ्गलवर्ण नेत्रकनीनिका (पुतली) वाला था, जो उदीयमान सूर्य की धूप के कारण पियराए प्रभातकाल की भाँति नूतन सूर्यप्रभा के समान कपिलवर्ण था, जो सुदृढरूप में कीलित (लगाए गए) धुरी एवं चक्के से युक्त सूर्य के रथ की भाँति सुदृढरूप से नियन्त्रित इन्द्रिय समूह वाला था, जो अत्यन्त गोपनीय मंत्रणाओं एवं साधनों (गजाश्वादि सैन्यों) से युद्धों को शान्त कर देने वाले प्रतापी नरेश की भाँति अत्यन्त गोपनीय मन्त्रसाधना (देवाराधनक्रिया) के (अभ्यास के) कारण कुशलता को प्राप्त

हुये शरीर वाला था, जो अगाध प्रदेशों (=गर्तों में विद्यमान 'कराल शंखमंडलों' (अर्थात् कराल=विशाल तथा टेढ़ी मेढ़ी आकृति वाले १६ लकीरों वाले शंखों का समूह) तथा आवर्तों (=जल के भँवरों) से युक्त समुद्र की भाँति विशाल अथवा उच्चावच शंखों के मण्डलावर्त (अर्थात् क्रमशः नीचे उतरी हुई वृत्ताकार भ्रमि रेखा) के समान 'गर्त' (नाभिच्छिद्र) वाला था, जो भगवती गंगा का अवतरण प्रत्यक्षीकृत करने वाले (महाराज) भगीरथ की भाँति गंगा के स्नान को देख चुका था, जो कमलवन में निवास करने का अनेकशः अनुभव किये हुए भ्रमर की भांति जल अर्थात् संवलित वन में रहने का बारम्बार अनुभव कर चुका था (अथवा 'पुष्कर' तीर्थ तथा वन मे रहने का अनेकशः अनुभव कर चुका था), जो वन में सञ्चरण करने वाला होकर भी 'महालयों' अर्थात् विशाल अट्टालिकाओं में प्रवेश कर चुका था, जो 'असंयत' अर्थात् उच्छृङ्खल अथवा असमाहित होकर भी मोक्ष का अभिलाषी था जो, 'साम' अर्थात् मधुर वचनों के प्रयोग में तत्पर होता हुआ भी निरन्तर डंडे का सहारा लिये था (अथवा सामनीति=मैत्रीनोति के प्रयोग का पक्षधर होकर भी सदैव दण्डनीति का आश्रय लेता था), जो सोता हुआ भी जगा हुआ (जाग्रद-वस्था वाला) था तथा जो नेत्रद्वय के विद्यमान रहते हुए भी वामनेत्र सुन्दरियों) का परित्याग कर चुका था ।

संस्कृत-व्याख्या-विटपः इव=तरुशाखा इव, **कोमलवल्कलावृतशरीरः**= कोमलेन मृदुलेन, वल्कलेन पादपत्वचा आवृतम् आच्छादितं शरीरं वपुः यस्य स तादृशः, **गिरिः इव**=पर्वत इव, **समेखलः**=मेखला मौञ्जी तया सह विद्य-मानः, पर्वंताक्षे मेखला शैलनितम्बः मध्यमभागः इत्यर्थः तया सह वर्तमानः, **राहुः इव**=सैंहिकेय इव, **असकृद्**=बहुबारम्, **आस्वादितसोमः**=आस्वादितः पीतः सोमः सोमरसः यज्ञेषु येन सः, पक्षे आस्वादितः ग्रस्तः सोमः हिमांशुः येने-त्यर्थः, **पद्मनिकरः इव**=कमलसमूहः इव, **दिवसकरमरीचिपः**=दिवसकरः भास्करःतस्य मरीचीन् किरणान् पिबति पञ्चाग्निसाधनात्मके यज्ञे इति भावः पक्षे स्वविकासाय दिवसकरमरीचीन् पिबति स्पृशति, कमलानां सूर्यकिरणस्पर्शेन विकासप्रसिद्धेः । **नदीतटतरुः इव**=नद्याः सरितः तटे तीरे तरुः पादपः स इव,

सततजलक्षालन–विमलजटः = सततं निरन्तरं जलक्षालनेन-स्नानकाले सलिल-धावनेन विमलाः निर्मलाः जटाः सटाः यस्य सः पक्षे सततं निरन्तरं जलक्षालनेन स्रोतः सलिलप्रक्षालनेन विमला जटा मूलप्रदेशः यस्य इत्यर्थः, **करिकलभः इव** = हस्तिशावकः इव, **विकचकुमुददलशकलसितदशनः** = विकचानि विकसितानि यानि कुमुददलानि कैरवपत्राणि तेषां शकलानि खण्डानि तद्वत् सिताः श्वेताः दशनाः दन्ताः यस्य सः, पक्षे सितौ शुभ्रौ दशनौ दन्तौ यस्यः स शेषं प्राग्वत्, उभयत्रापि साम्यात् । **द्रौणिः इव** = द्रोणसुतः अश्वत्थामा इव । **कृपानुगतः** = कृपा परदुःखनाशेच्छा तया अनुगतः संयुक्तः पक्षे कृपेण कृपाचार्येण स्वमातुलेन अनुगतःसंयुक्तः, **नक्षत्रराशिः इव** = नक्षत्राणाम् अश्विनीप्रभृतीनां राशिः समूहः स इव, **चित्रमृगकृत्तिकाश्लेषोपशोभितः** = चित्रमृगः कृष्णसारःतस्य कृत्तिका चर्म तस्याः आश्लेषेण आसङ्गेन उपशोभितः विराजितः, पक्षे चित्रनामकं नक्षत्रं मृगं मृगशिराः कृत्तिकाः एतदाख्यं तृतीयं नक्षत्रं श्लेषा आश्लेषा वा एतदाख्यं नवमं नक्षत्र तैः उपशोभितः सुशोभितः,**घर्मकालदिवसः इव** = घर्मकालः ग्रीष्मर्तुः तस्य दिवसः वासरः स इव, **क्षयितदोषः** = क्षयः संजातो येषां ते क्षयिताःक्षीणाः दोषाः कामक्रोधादयः यस्य सः, पक्षे क्षयिता क्षीणतां प्राप्ता दोषा निशा यस्य स तादृशः, **जलधरसमयः इव** = जलधराः जलदाः तेषां समयः प्रावृट्काल स इव, **प्रशमितरजः प्रसरः** = प्रशमितःशान्तिं प्रापितः रजसः रजोगुणस्य प्रसरः व्यापारः येन सः, पक्षे प्रशमितः रजसां रेणूनां प्रसरः विस्तारः यत्र तादृशः, **वरुणः इव** = प्रचेता इव, **कृतोदवासः** = कृतः विहितः उदके जले वासः निवासः उदवासः जलनिवाराः येन सः व्रताचरणादत्र जलवासः पक्षे जलाधिपतित्वात्, **हरिः इव** = विष्णु इव, **अपनीतनरकभयः** = अपनीतं दूरीकृतं नरकस्य निरयस्य भयं साध्वसं येन सः, पक्षे अपनीतं दूरीकृतं नरकस्य तदाख्यस्य असुरस्य भयं येन सः, नरका-सुरवधादित्यर्थः, **प्रदोषारम्भःइव** = प्रदोषस्य रजनीमुखस्य आरम्भः प्रारम्भ स इव, **सन्ध्यापिङ्गलतारकः** = संध्यावत् दिवसरजन्योः सन्धिकालवत् पिङ्गले पीत-वर्णे तारके कनीनिके यस्य सः,पक्षे संध्यया सन्ध्यावर्णेन पिङ्गला पीताः तारका नक्षत्राणि यत्र सः, **प्रभातकालः इव** = प्रभातं प्रत्यूषः तस्य कालः समयः स इव, **बालातपकपिलः** = बालातपःसूर्यस्य नवीन प्रकाशःतद्वत् कपिलःपीतरक्तवर्णःपक्षे

बालातपेन सूर्यप्रकाशेन कपिलः, **रविरथः इव**=रवेः सूर्यस्य रथः स्यन्दनः स इव, **दृढनियमिताक्षचक्रः**=दृढं कठोरं यथा स्यात् नियमितं निगृहीतम् अक्षाणाम् इन्द्रियाणां चक्रं समूहः येन सः पक्षे दृढं कठिनं यथा स्यात्तथा नियमिते निबद्धे अक्षश्चक्रे यस्य सः, अक्षं मध्यभागः चक्रं रथाङ्गम्, **सुराजा इव**=सुनृपः इव, **निगूढमन्त्रसाधनक्षपितविग्रहः**=निगूढं अतिगुप्तं यत् मन्त्र-साधनं स्वेष्टदेव-मन्त्रसिद्धिः तेन क्षपितः क्षयं प्रापितः विग्रहः शरीरं मन्त्रेण येन सः, व्रताद्या-चरणादिति भावः, पक्षे निगूढेन सुगुप्तेन मन्त्रणया साधनेन सैन्येन च क्षपितः क्षयं प्रापितः विग्रहः युद्धं, युद्ध—सम्भावनेत्यर्थः, येन सः । **जलनिधि इव**= सागरः इव, **करालशंखमण्डलावर्तनाभिगर्तः**=करालः विशालः यः शंखः कम्बुः तस्य मण्डलावर्तः मण्डलाकारभ्रमिरेखा तद्वत् नाभिगर्तः नाभिविविरं यस्य सः, पक्षे करालशंखः विशालशंखः मण्डलावर्तः मण्डलाकारो जलभ्रमः च नाभिगर्त इव, नाभिच्छिद्रम् इव यस्मिन् सः,**भगीरथ इव**=दिलीपपुत्रःसूर्यवंश्यो नृपः इव **दृष्टगङ्गावतारः**=दृष्टः विलोकितःगङ्गायाः भागीरथ्याःअवतारःअव-तरणभूमिः येन सः, पक्षे दृष्टः गङ्गायाः अवतारः स्वर्गाद् अवरोहणं येन सः, **भ्रमरः इव**=मधुपः इवः, **असकृत**=बहुशः, **अनुभूतपुष्करवनवासः**=अनुभूतः तपस्यार्थम् अनुभवविषयीकृतः पुष्करस्य एतन्नामकतीर्थस्य वने जले वासःस्थितिः येन स तादृशः अथवा पुष्करे तीर्थे वने विपिने च वासः येन सः, **वनचरोपि**= वने कानने चरित भ्राम्यति इति वनचरः वासी सन् अपि, **कृतमहालयप्रवेशः** =कृतः विहितः महालये महाँश्चासौ आलयः महालयःतस्मिन् प्रासादे प्रवेशः अन्तर्वासः येन सःइति विरोधः,तत्परिहाराय कृतः विहितः महालये परमात्मनि मोक्षे वा प्रवेशः गतिः येनेत्यर्थः । **असंयतोऽपि**=अबद्धोऽपि,**मोक्षार्थी**=बन्धन-मुक्तिकामः, अत्र विरोधः तत्परिहारस्तु मोक्षार्थी—परमपुरुषार्थरूपमुक्तिकामः इत्यर्थकरणात्, **समाप्रयोगपरोऽपि**=साम सान्त्वनं प्रथमोपायः तस्य प्रयोगे अनुष्ठाने परः परायणोऽपि,**सततावलम्बितदण्डः**=सततं निरन्तरम् अवलम्बितः आश्रितः दण्डः नियमनं तुरीयोपायः येन सः, अत्र विरोधः तत्परिहारस्तु साम तृतीयवेदः तत्प्रयोगपरः सततम् अवलम्बितः आश्रितः दण्डः पालाशदंडः येन तादृशः इत्यर्थकरणात्, **सुप्तोऽपि**=निद्रितोऽपि, **प्रबुद्धः**=बुद्धः, अत्र विरोध-

परिहाराय सुप्तः सांसारिकविषयेषु प्रबुद्धः परमात्मविषयकज्ञाने इत्यर्थः । अथवा सुप्तः सुशोभनाः सप्ताः जटाः यस्य तादृशः सुजटोऽसौ प्रबुद्धः ज्ञानीत्यर्थः, **संनिहितनेत्रद्वयोऽपि** = सनिहितं सम्यक् स्थापितं नेत्रद्वयं चक्षुयुगलं येन सः तादृशः सन्नपि, **परित्यक्तवामलोचनः** = परित्यक्तं दूरीकृतं वामलोचनं सव्यनयनं येन सः अत्र विरोधः, तत्परिहारस्तु परित्यक्ताः दूरीकृताः वामलोचना सुन्दर्यः येन सः इत्यर्थकरणात् । एवं गुणविशिष्टो **हारितनामा मुनिकुमारकः सिस्नासुः** = स्नातुमिच्छुः, **पम्पाभिधानं** = पम्पासंज्ञकं, **कमलसरः** = पङ्कजमयसरोवरम्, **उपागमत्** = प्राप्तवान् ।

टिप्पणी—**आवृत**—आ + वृ + क्त । **मेखला**—मूँज की बनी हुई मेखला, पर्वतनितम्ब । **जटा**—तपस्वियों के केश, वृक्षों की जड़ । **रजः**—रजोगुण, धूलि । **संध्यापिङ्गलतारकः**—सन्ध्या के समान पीले वर्ण की पुतलियों वाला, सन्ध्या के कारण पीले नक्षत्रों वाला । सामुद्रिकशास्त्र के अनुसार—'क्षुद्रोऽपि चक्रवर्ती स्यात् पीततारकचक्षुषि' । पीली पुतलियों वाला महापुरुष समझा जाता है । **विग्रह**—शरीर, युद्ध । **करालशंखवर्तः**—विशाल शंख के मण्डलाकार घुमाव की भांति नाभिवाला, नाभि के सदृश विशाल शंख और मडलाकार जलावर्त वाला । **पुष्करवनवासः**—पुष्कर तीर्थ के जल में निवास, पुष्कर तीर्थ में और वन में निवास, पुष्कर (जल) युक्त वन में निवास; कमलवन में निवास यहाँ । 'विटप इव' से 'भ्रमर इव' तक पूर्णोमालङ्कार है । 'वनचर...लोचनः' में विरोधाभास है ।

प्रायेणाकारणमित्राण्यतिकरुणार्द्राणि च सदा खलु भवन्ति सतां चेतांसि । यतः स मां तदवस्थमालोक्य समुपजातकरुणः समीपवर्तिनमृषिकुमारकमन्यतममब्रवीत्—'अयं कथमपि शुकशिशुरसंजातपक्षपुट एवं तरुशिखरादस्मात् परिच्युतः । श्येनमुखपरिभ्रष्टेन वानेन भवितव्यम् । तथाहि—अतिदवीयस्तया प्रपातस्याल्पशेषजीवितोऽयमामीलितलोचनो मुहुर्मुहुर्मुखेन पतति, मुहुर्मुहुरत्युल्बणं श्वसिति मुहुर्मुहुश्चञ्चुपुटं विवृणोति, न शक्नोति शिरोधरां धारयितुम् ।

तदेहि । यावदेवायमसुभिर्न विमुच्यते तावदेव गृहाणेमम्, अवतारय सलिलसमीपम्, इत्यभिधाय तेन मां सरस्तीरमनाययत् ।

हिन्दी-अनुवाद—प्राय: महापुरुषों के चित्त सर्वदा नि:स्वार्थभाव से हितैषी तथा अतिशय करुणा (परदु:खप्रहाणेच्छा) से आर्द्र होते है। क्योंकि वह (मुनिकुमार हारीत) मुझे उस अवस्था वाला अर्थात कष्टदशापन्न देखकर, करुणाविष्ट होकर निकटवर्ती (बहुतों में से) एक ऋपिकुमार से बोला—"यह सुग्गे का बच्चा पंखे न उगे होने के कारण ही इस वृक्ष की चोटी से यथाकथञ्चित् (नीचे) गिर पड़ा है अथवा बाजपक्षी के मुख से इसे छूटा हुआ होना चाहिए! देखो न, गिरने की अत्यधिक दूरी (ऊँचाई) होने के कारण अल्पमात्र अवशिष्ट जीवन वाला यह (पक्षी) आँखे बन्द किए बार-बार मुँह के बल गिर रहा है, बार-बार अत्यन्त विकट साँसे ले रहा है, बार-बार चञ्चुपुट (चोंच) खोल रहा है तथा ग्रीवाभाग को धारण करने में समर्थ नहीं हो पा रहा है। इसलिए आओ, जब तक कि यह प्राणों से विमुक्त न हो जाय उसके पर्व ही "इसको उठा लो और पानी के पास उतारो।" इस प्रकार कह कर (ऋषिकुमार हारीत ने) उस ऋषिपुत्र द्वारा मुझे सरोवर के तट पर पहुँचाया।

संस्कृत व्याख्या—**खलु**=निश्चयेन, **सताम्**=सत्पुरुपाणाम्, **चेतांसि**= हृदयानि, **प्रायेण**=बाहुल्येन, **अकारणमित्राणि**=अकारणेन हेतुं विना मित्राणि स्नेहकारीणि, **सदा**=सर्वदा, च=समुच्चयार्थकमिदमव्ययपदम्, **अतिकरुणार्द्राणि** =अतिकरुणा अतिशयेन परदु:खविनाशेच्छा तया आर्द्राणि सरसानि, कोमलानीत्यर्थ:, **भवन्ति**=वर्तन्ते, **यत:**=यस्मात् कारणात् **स:**=मुनिकुमार: हारीत:, **माम्**=वैशम्पायनम्, **तदवस्थं**=सा दयनीया अवस्था दशा यस्य तादृशम्, **आलोक्य**=विलोक्य, **समुपजातकरुण:**=समुपजाता समुत्पन्ना करुणा दया यस्य तादृश: सन् **समीपवर्तिनम्**=निकटस्थम् **अन्यतमम्**=एकतमम्, **ऋषिकुमारकम्**=तपस्विबालकम् **अब्रवीत्**=जगाद, **अयम्**=पुरो दृश्यमान:, **शुकशिशु:**=कीरडिम्भ:, **असंजातपक्षपुट: इव**=असंजातम् अनुत्पन्नं पक्षपुटं पतत्रसंपुटं यस्य तादृश:इव, **कथमपि**=केनापि हेतुना, **अस्मात्**=पुरो दृश्यमानात्,

तरुशिखरात् = वृक्षप्रदेशात्, **परिच्युतः** = निपतितः, **वा** = अथवा, **अनेन** = शुक-शावकेन, **श्येनमुखपरिभ्रष्टेन** = श्येनः शशादनः तस्य मुखात् चञ्च्वाः परि-भ्रष्टेन परिच्युतेन, **भवितव्यम्** = भाव्यम्, **तथाहि** = पूर्वोक्तमेव समर्थ्यते **प्रपातस्य** = परिपतनस्य, **अतिदवीयस्तया** = अतिदूरप्रदेशभावितया, **अल्पशेष-जीवितः** = अल्पं किंचित् शेषम् अविशिष्टं जीवितं जीवनं प्राणशक्तिः यस्य स तादृशः, **अयम्** = शुकशावकः, **अमीलितलोचनः** = अमीलिते मुद्रिते लोचने नेत्रे यस्य सः तादृशः सन्, **मुहुर्मुहुः** = भूयोभूयः **मुखेन** = लपनेन, **पतति** = लुठति, **मुहुर्मुहुः अत्युल्बणम्** = अत्युत्कटम्, **श्वसिति** = प्राणिति, **मुहुर्मुहुः चञ्चुपुटम्** = मुखसंपुटम् (चञ्चुः त्रोटी), **विवृणोति** = व्याददाति, **शिरोधराम्** = ग्रीवाम्, **धारयितुम्** = निधातुम्, **न शक्नोति** = न पारयते, **तत्** = तस्मात्, **एहि** = आयाहि, **यावदेव** = यावत्कालपर्यन्तमेव, **अयम्** = शुकशावकः, **असुभिः** = प्राणैः, **न विमुच्यते** = न परित्यज्यते, **तावदेव** = तावत्कालपर्यन्तमेवं, तस्मा-त्कालात् प्रागेवेत्यर्थः, **इमम्** = शुकशिशुम्, **प्रहाण** = उत्थापय, **सलिलसमीपम्** = जलान्तिकम्, **अवतारय** = प्रापय, **इति** = इत्थम्, **अभिधाय** = कथयित्वा, **तेन** = तपस्विकुमारेण, **माम्** = वैशम्पायनम्, **सरस्तीरम्** = पम्पासरोवरतटम् **अनाययत्** = प्रापयत् ।

टिप्पणी—अतिदवीयस्तया—अतिशयेन दूर इति दवीयान्; दूर + ईयसुन्, दूर के स्थान पर दव आदेश—दवीयस् + तल् + टाप् = दवीयस्ता तया दवीय-स्तया । **परिच्युतः**—परि + च्यु + क्त । **मुखेन पतति**—मुख के बल गिरता है । प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्' से तृतीया विभक्ति । **गृहाण**—ग्रह् धातु लोट् प्र० पु० ए० व० ।

उपसृत्य च जलसमीपमेकदेशनिहितदण्डकमण्डलुरादाय स्वयं मामामुक्तप्रयत्नमुत्तानितमुखमङ्गुल्याकतिचित्सलिलबिन्दूनपाययत् । अम्भ क्षोदकृतसेकञ्चोपजातनवीनप्राणमुपतटप्ररूढस्य नवनलिनीप-लाशस्य जलशिशिरायां छायायां निधाय यथासमुचितमकरोत् स्नानविधिम् । अभिषेकावसाने चानेकप्राणायामपूतो जपन् पवि-

त्राण्यघमर्षणानि प्रत्यग्रभग्नैरुन्मुखो रक्तारविन्दैर्नलिनीपत्रपुटेन भगवते सवित्रे दत्त्वार्घ्यमुदतिष्ठत् । आगृहीतधौतधवलवल्कलश्च सज्योत्स्न इवं संध्यातपः करतलनिर्धूननविशदसटः प्रत्यग्रस्नानार्द्र-जटेन सकलेन तेन मुनिकुमारकदम्बकेनानुगम्यमानो मां गृहीत्वा तपोवनाभिमुखं शनैः शनैरगच्छत् ।

हिन्दी अनुवाद—जल के पास पहुंच कर दण्ड और कमण्डलु को एक ओर रखकर (अन्नपानादि शरीरानुकूल) प्रयत्नों से विहीन अर्थात् निश्चेष्ट हुए तथा उत्तानित (ऊपर उठे हुए) मुखवाले मुझको स्वयं संभाल कर अँगुली से जल की कुछ बूंदों को पिलाया । पानी के छीटों से अभिषेक (सिञ्चन) किये हुये, तथा उत्पन्न हुई नूतन प्राणशक्तियों वाले मुझको तट के समीप उगी हुई नवीन कमलिनी के पत्ते की जल के कारण शीतल हुई छांव में रखकर यथोचित रूप से स्नानक्रिया सम्पादित की तथा स्नानकार्य समाप्त हो जाने पर अनेक प्राणायामों से पवित्र होने पर भी अघमर्षण (जलदेवता स्तवनरूप) मंत्रों को जपता हुआ, ऊर्ध्वमुख होकर कमलिनी के पत्ते से बने दोने द्वारा तत्काल चुने गये लाल कमलपुष्पों से भगवान सूर्य को अर्घ (पूजा) प्रस्तुत कर उठ खड़ा हुआ । (तदनन्तर) धुले हुये धवल वल्कल-वसनों को धारण किये हुये (अतएव) चन्द्रिकाचर्चित सान्ध्यकालीन सूर्य के प्रकाश की भांति, हथेलियों से झटकने के कारण निर्मल जटाओं वाला तथा तत्काल स्नान करने के कारण गीली जटाओं वाले उस समग्र तापसशिशुसमूह द्वारा अनुसरण किया जाता हुआ, मुझे (साथ) लेकर धीरे-धीरे तपोवन की ओर चल पड़ा ।

संस्कृत-व्याख्या—जलसमीपम् = सलिलान्तिकम्, **उपसृत्य च** = प्राप्य, **एकदेशनिहितदण्डकमण्डलुः** = एकदेशे एकस्मिन् प्रदेशे निहितौ स्थापितौ दण्ड-कमण्डलू लगुडकुण्डिके येन सः तादृशः, **माम्** = वैशम्पायनम्, **स्वयम्** = आत्मना, **आदाय** = गृहीत्वा, **आमुक्तप्रयत्नम्** = आमुक्तः परित्यक्तः प्रयत्नः प्रयासः येन तादृशम्, **उन्नामितमुखम्** = उन्नामितम् ऊर्ध्वीकृतं मुखम् लपनं यस्य तम्, **अङ्गुल्या** = कराग्रेण, **कतिचित्** = कियन्तः, **सलिलबिन्दून्** = सलिलस्य जलस्य

बिन्दवः सलिलबिन्दवः तान् जलकणान्, **अपाययत्**=पानमकारयत् । **अम्भः-क्षोदकृतसेकम्**=अम्भसः सलिलस्य क्षोदैः कणैः कृतः विहितः सेकः सेचनं यस्य तं तादृशम्, **अतएव च उपजातनवीनप्राणम्**=उपजाताः उत्पन्नाः नवीनाः नवाः. प्राणाः जीवनशक्तिः यस्य तं तादृशम्, **उपतटप्ररूढस्य**=तटस्य समीपम् उपतटं तीरसमीपं प्ररूढस्य प्रादुर्भूतस्य, **नवनलिनीपलाशस्य**=नवः नवीनः यो नलिन्या कमलिन्याः पलाशः पत्रं तस्य, **जलशिशिरायाम्**=जलेन उदकेन शिशिरा शीतला तस्याम्, **छायायाम्**=अनातपे, **निधाय**=स्थापयित्वा, **यथासमुचितम्**=समुचितं अनतिक्रम्य यथायोग्यं, **स्नानविधिम्**=मज्जनविधानम्, **अकरोत्**=कृतवान् । **च**=क्रियासमुच्चयार्थमिदम्, **अभिषेकावसाने**=अभिषेकः स्नानं अस्य अवसाने अन्ते, **अनेकप्राणायामपूतः**=अनेके बहवः ये प्राणायामः पूरककुम्भ-करेचकाः तैः पूतः मेध्यः सन्, **पवित्राणि**=पूतानि, **अघमर्षणानि**=पापक्षयका-रीणि मन्त्राणि 'ऋतं च सत्यं चेत्यादीनिः'। **जपन्**=शनैः पठन्, **उन्मुखः**=**पूर्वा-**भिमुखः, **प्रत्यग्रभग्नैः**=प्रत्यग्रं नवीनं अग्नैः अवचितैः, **रक्तारविन्दैः**=अरुण-कमलैः सह इति शेषः, **नलिनीपत्रपुटेन**=नलिनी कमलिनी तस्या पत्रपुटं **पर्ण-**पुटकं तेन साधनभूतेन, **भगवते**=ऐश्वर्यशालिनि, **सवित्रे**=सूर्याय, **अर्घ्यम्**=अर्घः पूजा तस्मै हितं जलम्, **दत्वा**=समर्प्य, **उदतिष्ठत्**=उत्थितोऽभूत् । **आगृहीतधौतवल्कलः**=आगृहीतं परिहितं धौतं क्षालितं धवलं स्वच्छम् वल्कलं वृक्षत्वक् येन सः तथोक्तः, **अतएव च सज्योत्स्नः**=ज्योत्स्ना चन्द्रिका तया सह वर्तमानः, **सन्ध्यातपः**=सन्ध्याकालिकसूर्यप्रकाशः स इव, **करतलनिर्धूनन-विशदसटः**=करतलाभ्यां पाणितलाभ्यां यत् निर्धूननम् आस्फालनं तेन विशदाः स्वच्छाः सटाः जटाः यस्य स तादृशः, **प्रत्यग्रस्नानार्द्रजटेन**=प्रत्यग्रं तत्कालं यत् स्नानं अभिषेकः तेन, आर्द्राः क्लिन्नाः जटाः सटाः यस्य स तेन, मुनिकुमार-कदम्बकविशेषणमिदम्, **सकलेन**=सम्पूर्णेन, **तेन**=पूर्वोक्तेन, **मुनिकुमारकद-म्बकेन**=मुनीनां ऋषीणां कुमारः पुत्रः तेषां कदम्बकं तेन तपस्विबालकसमूहेन, **अनुगम्यमानः**=अनुव्रज्यमानः, **माम्**=वैशम्पायनम्, **गृहीत्वा**=आदाय, **शनैः शनैः**=मन्दं मन्दम्, **तपोवनाभिमुखम्**=निजाश्रमसम्मुखम्, **अगच्छत्**=अव्रजत् ।

टिप्पणी–उपसृत्य–उप+सृ+क्त्वा–ल्यप् । **आदाय**–आ+दा+क्त्वा–ल्यप् । **क्षोद**–जलकण, **सेक**–सींचना । **प्राणायामपूत**–कई प्राणायामों से पवित्र होकर बाह्यशुद्धि के लिए जलमृत्तिका तथा अन्तःशुद्धि के लिए प्राणायाम का विधान धर्मशास्त्रों में विहित है । **अधमर्षणानि**–पाप शान्ति के लिये जपा जाने वाला अधमर्षण सूक्त जो संध्याकर्म का प्रधान अङ्ग है । **निर्धूनन**–फटकारना, झटका देकर स्वच्छ करना । **सटाः**=जटाएँ । **कदम्बक**–समूह । **गृहीत्वा**–ग्रह्+क्त्वा ।

अनतिदूरमिव गत्वा दिशि दिशि सदा सन्निहितकुसुमफलैस्ताल-तिलकतमालहिन्तालबकुलबहुलैः, एलालताकुलितनारिकेलकलापैः, आलोललोध्रलवलीलवङ्गपल्लवैः,उल्लसच्चूतरेणुपटलैः, अलिकुलझंकारमुखरसहकारैः, उन्मदकोकिलकुलकलालापकोलाहलिभिः, उत्फुल्लकेतकीरजःपुञ्जपिञ्जरैः, पूगीलतादोलाधिरूढवनदेवतैः, तारकावर्षमिवाधर्मविनाशपिशुनं कुसुमनिकरमनिलचलितमनवरतमतिधवलमुत्सृजद्भिः, संसक्तपादपैः काननैरुपगूढम्, अचकितप्रचलितकृष्णसारशतशबलाभिः, उत्फुल्लकमलिनीलोहिनीभिः, मारीचमायामृगावलूनरूढवीरुद्लाभिः दाशरथिचापकोटिक्षतकन्दगर्तविषमितलाभिर्दण्डकारण्यस्थलीभिरुपशोभितप्रान्तम्....'

हिन्दी-अनुवाद–थोड़ी ही दूर (आगे) बढ़कर मैंने अत्यन्त रमणीय तथा द्वितीय ब्रह्मलोक के समान (महर्षि जाबालि के) आश्रम को देखा–जो कि प्रत्येक दिशा में सदैव विद्यमान फलों और फूलों से युक्त–ताल, तिलक, तमाल हिन्ताल एवं मौलसिरी वृक्षों के कारण बहुल (सघन)–इलायची की लताओं से परिव्याप्त नारियल के वृक्षसमूह वाले–चंचल लोध्र (दुपहरिया फूल),लवली तथा लवङ्ग के पल्लवों वाले–उड़ते हुए आम्रवृक्ष के परागपुञ्ज से युक्त-मधुकरमण्डली की 'भनभनाहट' से शब्दायमान सहकारवृक्षों (सुरभित आमों) वाले मतवाले कोकिलों की टोली के मधुर शब्दों के कोलाहल से युक्त-पुष्पित मालतीलता की पुष्पवल्लरियों के परागपुञ्ज से पीतरक्त वर्ण वाले–पूगीलता

(सुपारी की लता) रूपी हिंडोले पर आरूढ़ हुई वनदेवियों वाले–अधर्म के विनाश की सूचना देने वाले 'तारकावर्ष' (उल्कापात) की भाँति वायु द्वारा प्रेङ्खोलित अत्यन्त धवल पुष्पसमूह को प्रतिपल गिराने वाले तथा परस्पर सटे हुए वृक्षों वाले वनों से संकुल था, जो असंत्रस्त भाव से सञ्चरण करने वाले सैकड़ों 'कृष्णसार' (काले) मृगों के कारण नाना रंगों वाली–खिली हुई स्थलकमलिनियों (गुलाबों) के कारण लोहितवर्ण वाली–(रावण के मामा) मारीच रूपी मायामृग द्वारा खाये गये (तदनन्तर) गपछाए हुए लतापल्लवों वाली दशरथ पुत्र श्रीराम के धनुष की नोंक से उखाड़े गए कन्दमूलों के गड्ढों से उच्चावच धरातल वाली दण्डकारण्य की स्थलभूमियों से सुशोभित पिछले भाग (पृष्ठभूमि) वाला था।

संस्कृत-व्याख्या–अनतिदूरम् इव=किंचिद्द्वीयांसं मार्गं, **गत्वा**=व्रजित्वा, **दिशि दिशि**=प्रतिदिशम्, **सदासन्निहितकुसुमफलैः**=सदा सर्वदा संनिहितानि अवस्थितानि कुसुमानि प्रसूनानि रसोद्भावानि सस्यानि च येषु तैः तादृशैः, **तालतिलकतमाल-हिन्ताल-बकुल-बहुलैः**=तालाः तिलकाः तमालाः तापिच्छाः हिन्तालाः बकुलाश्च केसराश्च एतदाख्याः वृक्षाः बहुलाः अधिकाः येषु तैः तादृशैः, **एलालताकुलितनारिकेलकलापैः**=एलालताभिः चन्द्रबालावल्लीभिः आकुलितः व्याप्तः नारिकेलकलापः लाङ्गलीतरुसमूहः येषु तैः तादृशैः, **आलोल-लोध्रलवलीलवङ्गपल्लवैः**=आ समन्तात् लोलाः वायुना चञ्चलाः लोध्राणां गालावानां लवलीनां लवङ्गानां च पल्लवाः किसलयानि येषु तेषु तादृशेषु, **उल्लसच्चूतरेणुपटलैः**=उल्लसन्ति पवनवेगेन स्फुरन्ति चूतानाम् आम्रमञ्जरीणां रेणुपटलानि परागसमूहाः येषु तैः तादृशैः, **अलिकुलझङ्कारमुखरसहकारैः**=अलिकुलानां मधुकरदलानां झङ्कारेण गुञ्जितेन मुखराः वाचालः सहकाराः रसालाः येषु तैः तादृशैः **उन्मदकोकिलकुलकलापकोलाहलिभिः**=उन्मदानि मदमत्तानि यानि कोकिलानां पिकानां कुलानि समूहाः तेषां ये कलालापाः अव्यक्तमधुरकूजितानि तैः कोलाहलिभिः मुखरैः, **उत्फुल्लकेतकीरजःपुंजपिंजरैः**=उत्फुल्लाः प्रस्फुटिताः याः केतक्यः मालत्यः तासां रजःपुञ्जेन परागपटलेन, **पिंजरैः**=पीतवर्णैः, **पूगीलतादोलाधिरूढवनदेवतैः**=पूगीलताः क्रमुक-

वल्लयः एव दोलाः अधिरोहिण्यः ताः अधिरूढाः आश्रिताः वनदेवताः विपिनाधिष्ठातृदेव्यः येषु तैः तादृशैः, **अधर्मविनाशपिशुनम्**=अधर्मः पापं तस्य विनाशः ध्वंसः तस्य पिशुनम् सूचकम्, **अनिलचलितम्**=अनिलेन वायुना चलितम् आन्दोलितम्, **अतिधवलम्**=अत्यन्तशुभ्रम्, **कुसुमनिकरम्**=पुष्पसमूहम्, **तारकावर्षम् इव**=उल्कापातम्, इव, **अनवरतम्**=सततम्, **उत्सृजद्भिः**,=परित्यजद्भिः, **संसक्तपादपैः**=संश्लिष्टवृक्षैः, **काननैः**=विपिनैः, **उपगूढम्**=आश्लिष्टम्, **अचकितप्रचलितकृष्णसारशतशबलाभिः**=अचकिताः अभीताः प्रचलिताः सञ्चरन्ताः; ये कृष्णसाराः एतदाख्याः चित्रमृगाः तेषां शतं समूहः तेन शबलाभि विचित्राभिः, **उत्फुल्लकमलिनीलोहिनीभिः**=उत्फुल्लाःप्रस्फुटिताः याः कमलिन्यः स्थलपद्मिन्यः ताभिः हेतुभूताभिः लोहिनीभिः रक्तवर्णाभिः, **मारीचमायामृगावलूनरूढवीरुद्दलाभिः**=मारीचः एतन्नामासुरः स एव मायामृगः कपटहरिणः तेन अवलूनानि-छिन्नानि पश्चात् रूढानि समुपजातानि वीरुधां लतानां दलानि पत्राणि यासु ताभिः तादृशीभिः, **दाशरथिचापकोटिक्षतकन्दगर्तविषमिततलाभिः**=दाशरथी रामलक्ष्मणौ तयोः चापकोट्या कार्मुकाग्रेण क्षतानि उत्खातानि यानि कन्दानि वृक्षमूलानि तेषां गर्तैः भूविवरैः विषमितम् उच्चावचं तलं भूतलं यासां ताभिः तादृशीभिः, **दण्डकारण्यस्थलीभिः**=दण्डकारण्यस्य दण्डसंज्ञकवनस्य स्थलीभिः भूमिभिः, **उपशोभितप्रान्तम्**=उपशोभितः शोभां लम्भितः प्रान्तः पश्चात् प्रदेशः यस्य सः तं तादृशम् ।

टिप्पणी–आलोल–चञ्चल, वायु के चलने से काँपते हुए । **मुखर**=गुञ्जित; मुखं मुखव्यापारं कथनं राति–मुख+रा+क=मुखर । **उत्सृजद्भिः**-उत्+सृज्+शतृ तृ०ए०व० । उप+गुह्+क्त=उपगूढम् । **अचकित**-निर्भीक शत–समूह, शत व सहस्र शब्द निश्चित संख्या का बोध तो कराते ही हैं साथ ही ये बहुत्व के द्योतक हैं । यहाँ शत शब्द बहुत्व के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है । **मारीचमायामृगावलून**–ताड़का राक्षसी के पुत्र व सुबाहु के भाई मारीच ने रावण के कहने पर कपट का वेश धारण कर जिन लताओं के पत्तों को तोड़ा था; अव+लू+क्त=अवलून । '**पूगीलता**.........' में **अतिशयोक्ति** अलङ्कार है । '**तारकावर्षमिव**' में **पूर्णोपमालङ्कार** है ।

····आगृहीतसमित्कुशकुसुमसमृद्भिः अध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः सर्वतः प्रविशद्भिर्मुनिभिरशून्योपकण्ठम्, उत्कण्ठितशिखण्डिमण्डलश्रूयमाणजलकलशपूरध्वानम्, अनवरताज्याहुतिप्रीतैश्चित्रभानुभिः, सशरीरमेव मुनिजनममरलोकंनिनीषुभिरुद्धूयमानधूमलेखाच्छलेनाबध्यमानस्वर्गगमनसोपानसेतुमिवोपलक्ष्यमाणम्, आसन्नवर्तिनीभिः तपोवनसंपर्कादिवापगतकालुष्याभिः तरङ्गपरम्परासंक्रान्तरविबिम्बपङ्क्तिभिस्तापसदर्शनागतसप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिरिव, अतिविकचकुमुदवनमृषिजनमुपासितुमवतीर्णं ग्रहगणमिव निशासूद्वहन्तीभिर्दीर्घिकाभिः परिवृतम्, अनिलावनमितशिखराभिः प्रणम्यमानमिव वनलताभिः, अनवरतमुक्तकुसुमैरभ्यर्च्यमानमिव पादपैः, आबद्धपल्लवाञ्जलिभिरुपास्यमानमिव विटपैः,·····।

हिन्दी-अनुवाद—जो समिधाओं (यज्ञोपयोगी इन्धनों) कुशों, पुष्पों, एव मृत्तिकाओं को लिए हुये—वेदपरायण के कारण वाचाल शिष्यों से अनुगत तथा चारों ओर से प्रवेश करते हुए मुनियों द्वारा अशून्य (अर्थात् भरेपूरे) उपकण्ठ (पड़ोस या सामीप्य) वाला था, जो (मेघध्वनि की आशङ्कावश) उत्कण्ठित मयूरमण्डल द्वारा सुनी जाती हुई जलकलश भरने की (भुक् भुक् भुक्) ध्वनि वाला था, जो निरन्तर प्रदान की गई घृताहुतियों से सन्तुष्ट (अतएव) मुनिजनों को सशरीर देवलोक ले जाने के अभिलाषी यज्ञाग्नियों द्वारा लहराती हुई ऊर्ध्वगामिनी धूम पंक्तियों के बहाने मानो स्वर्गपथ पर पहुँचने के लिए निर्मित किए गए सोपानसेतुओं (सीढ़ियों की शृंखलाओं) से युक्त प्रतीत होता था, जो—समीपवर्तिनी—तपस्विजनों के (स्नानार्थ) सम्पर्कवश मालिन्यविहीन प्रतीत होने वाली—तरङ्गवीथियों में प्रतिबिम्बित सूर्य की परछाइयों के समूहों वाली अतएव तापसजनों के दर्शनार्थ आये हुए सप्तर्षि-समूह से विलोड्यमान प्रतीत होती हुई तथा रात्रिवेलाओं में ऋषिजनों की समर्चना के लिए (पृथ्वी पर) उतरे हुए नक्षत्रमण्डल की भांति पूर्णतः प्रफुल्लित कुमुदवन को धारण करती

हुई दीर्घिकाओं (बावलियों) से घिरा हुआ था, जो वायु द्वारा अवनमित किए गये शिखरों वाली वनलताओं से प्रणाम किया जाता हुआ प्रतीत होता था, जो प्रतिपल फूल झरने वाले वृक्षों द्वारा समर्पित किया जाता हुआ प्रतीत होता था, जो पल्लव रूपी प्रणामाञ्जलि बाँधे हुये वृक्षों द्वारा उपासना किया आ प्रतीत होता था ।

संस्कृत-व्याख्या–आगृहीतसमित्कुशकुसुममृद्भिः=आगृहीता सम्यगात्ताः समिधः काष्ठानि कुशाः दर्भाः कुसुमानि मृत् मृत्तिका च यैः तैः तादृशैः, **अध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः**=अध्ययनेन वेदादिपाठेन मुखराः वाचलाः ये शिष्याः अन्तेवासिनः तैः अनुगताः तैः तथाभूतैः, **सर्वतः**=सर्वाभ्यः दिग्भ्यः, **प्रविशद्भिः**=प्रवेशं कुर्वद्भिः, **मुनिभिः**=तपस्विभिः, **अशून्योपकंठम्**=अशून्यः परिपूर्णः उत्कण्ठः निकटदेशो यस्य तम् तादृशम्: **उत्कंठितशिखण्डिमंडलश्रूयमाणजलकलशपूरणध्वानम्**=उत्कण्ठितैः उद्ग्रीवैः शिखण्डिनां मयूराणां मण्डलैः कदम्बकैः श्रूयमाणः आकर्ण्यमाणः जलेन सलिलेन कलशपूर्णस्य घटपूर्णस्य ध्वानः शब्दः यस्मिन् तं तादृशम्, **अनवरताज्याहुतिप्रीतैः**=अनवरतं सततं या आज्याहुतिः घृतहोमः तेन प्रीतैः प्रसन्नैः, **चित्रभानुभिः**=अग्निभिः गार्हपत्याहवनीय दक्षिणनामकैः, **मुनिजनम्**=ऋषिगणम्, **सशरीरमेव**=सदेहम् एवः **अमरलोकम्**=देवलोकम्, **निनीषुभिः**=नेतुमिच्छुभिः, **उद्धूयमानमलेखाच्छलेन**=उद्धूयमाना उत्कम्पमाना या धूमलेखा वह्निकेतनश्रेणी, अविच्छन्ना धूमपङ्क्तिः तस्याः छलेन कपटेन, **आबध्यमानस्वर्गमार्गगमनसोपानसेतुम् इव**=आबध्यमानः विरच्यमानः यः स्वर्गमार्गे अमरलोकपथे गमनाय सोपानसेतुः आरोहणालिः तम् इव, **उपलक्ष्यमाणम्**=दृश्यमानम् अतः परं तृतीयान्तानि पदानि दीर्घिकाविशेषणानि खलु ज्ञेयानि । **आसन्नवर्तिनीभिः**=आसन्नं समीपं वर्तन्ते इति तच्छीलाः ताभिः समीपस्थायिनीभिः: **तपोवनसम्पर्काद् इव**=धर्मारण्यसंसर्गाद्इव :**अपगतकालुष्याभिः**=अपगतं दूरीभूतं कालुष्यंमालिन्यं यासां ताभिः: **तरङ्गपरम्परासंक्रान्तरविबिम्बपङ्क्तिभिः**=तरङ्गाणां कल्लोलानां परम्परासु पङ्क्तिषु संक्रान्ता प्रतिफलिताः रवेः दिनकरस्य बिम्बपङ्क्तयः बिम्बराजयः यासु ताभिः तादृशीभिः, अतएव **तापसदर्शनागतसप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिः इव**=तापसानां 'जाबाल्या-

····आगृहीतसमित्कुशकुसुमसमृद्भिः अध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः सर्वतः प्रविशद्भिर्मुनिभिरशून्योपकण्ठम्, उत्कण्ठितशिखण्डिमण्डलश्रूयमाणजलकलशपूरध्वानम्, अनवरताज्याहुतिप्रीतैश्चित्रभानुभिः, सशरीरमेव मुनिजनममरलोकंनिनीषुभिरुद्धूयमानधूमलेखाच्छलेनाबध्यमानस्वर्गगमनसोपानसेतुमिवोपलक्ष्यमाणम्, आसन्नवर्तिनीभिः तपोवनसंपर्कादिवापगतकालुष्याभिः तरङ्गपरम्परासंक्रान्तरविबिम्बपङ्क्तिभिस्तापसदर्शनागतसप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिरिव, अतिविकचकुमुदवनमृषिजनमुपासितुमवतीर्णं ग्रहगणमिव निशासूद्वहन्तीभिर्दीर्घिकाभिः परिवृतम्, अनिलावनमितशिखराभिः प्रणम्यमानमिव वनलताभिः, अनवरतमुक्तकुसुमैरभ्यर्च्यमानमिव पादपैः, आबद्धपल्लवाञ्जलिभिरुपास्यमानमिव विटपैः,·····।

हिन्दी-अनुवाद—जो समिधाओं (यज्ञोपयोगी इन्धनों) कुशों, पुष्पों, एव मृत्तिकाओं को लिए हुये—वेदपरायण के कारण वाचाल शिष्यों से अनुगत तथा चारों ओर से प्रवेश करते हुए मुनियों द्वारा अशून्य (अर्थात् भरेपूरे) उपकण्ठ (पड़ोस या सामीप्य) वाला था, जो (मेघध्वनि की आशङ्कावश) उत्कण्ठित मयूरमण्डल द्वारा सुनी जाती हुई जलकलश भरने की (भुक् भुक् भुक्) ध्वनि वाला था, जो निरन्तर प्रदान की गई घृताहुतियों से सन्तुष्ट (अतएव) मुनिजनों को सशरीर देवलोक ले जाने के अभिलाषी यज्ञाग्नियों द्वारा लहराती हुई ऊर्ध्वगामिनी धूम पंक्तियों के बहाने मानो स्वर्गपथ पर पहुँचने के लिए निर्मित किए गए सोपानसेतुओं (सीढ़ियों की शृंखलाओं) से युक्त प्रतीत होता था, जो—समीपवर्तिनी—तपस्विजनों के (स्नानार्थ) सम्पर्कवश मालिन्यविहीन प्रतीत होने वाली—तरङ्गवीथियों में प्रतिबिम्बित सूर्य की परछाइयों के समूहों वाली अतएव तापसजनों के दर्शनार्थ आये हुए सप्तर्षि-समूह से विलोड्यमान प्रतीत होती हुई तथा रात्रिवेलाओं में ऋषिजनों की समर्चना के लिए (पृथ्वी पर) उतरे हुए नक्षत्रमण्डल की भांति पूर्णतः प्रफुल्लित कुमुदवन को धारण करती

हुई दीर्घिकाओं (बावलियों) से घिरा हुआ था, जो वायु द्वारा अवनमित किए गये शिखरों वाली वनलताओं से प्रणाम किया जाता हुआ प्रतीत होता था, जो प्रतिपल फूल झरने वाले वृक्षों द्वारा समर्पित किया जाता हुआ प्रतीत होता था, जो पल्लव रूपी प्रणामाञ्जलि बाँधे हुये वृक्षों द्वारा उपासना किया आ प्रतीत होता था ।

संस्कृत-व्याख्या–आगृहीतसमित्कुशकुसुममृद्भिः=आगृहीता सम्यगाताः समिधः काष्ठानि कुशाः दर्भाः कुसुमानि मृत् मृत्तिका च यैः तैः तादृशैः, **अध्ययनमुखरशिष्यानुगतैः**=अध्ययनेन वेदादिपाठेन मुखराः वाचलाः ये शिष्याः अन्तेवासिनः तैः अनुगताः तैः तथाभूतैः, **सर्वतः**=सर्वाभ्यः दिग्भ्यः, **प्रविशद्भिः**=प्रवेशं कुर्वद्भिः, **मुनिभिः**=तपस्विभिः, **अशून्योपकंठम्**=अशून्यः परिपूर्णः उत्कण्ठः निकटदेशो यस्य तम् तादृशम्; **उत्कंठितशिखंण्डिमंडलश्रूयमाणजलकलशपूरणध्वानम्** =उत्कण्ठितैः उद्ग्रीवैः शिखण्डिनां मयूराणां मण्डलैः कदम्बकैः श्रूयमाणः आकर्ण्यमाणः जलेन सलिलेन कलशपूर्णस्य घटपूर्णस्य ध्वानः शब्दः यस्मिन् तं तादृशम्, **अनवरताज्याहुतिप्रीतैः**=अनवरतं सततं या आज्याहुतिः घृतहोमः तेन प्रीतैः प्रसन्नैः, **चित्रभानुभिः**=अग्निभिः गार्हपत्याहवनीय दक्षिणनामकैः, **मुनिजनम्**=ऋषिगणम्, **सशरीरमेव**=सदेहम् एवः **अमरलोकम्**=देवलोकम्, **निनीषुभिः**=नेतुमिच्छुभिः, **उद्धूयमानमलेखाच्छलेन**=उद्धूयमाना उत्कम्पमाना या धूमलेखा वह्निकेतनश्रेणी, अविच्छन्ना धूमपङ्क्तिः तस्याः छलेन कपटेन, **आबध्यमानस्वर्गमार्गगमनसोपानसेतुम् इव**=आबध्यमानः विरच्यमानः यः स्वर्गमार्गे अमरलोकपथे गमनाय सोपानसेतुः आरोहणालिः तम् इव, **उपलक्ष्यमाणम्**=दृश्यमानम् अतः परं तृतीयान्तानि पदानि दीर्घिकाविशेषणानि खलु ज्ञेयानि । **आसन्नवर्तिनीभिः**=आसन्नं समीपं वर्तन्ते इति तच्छीलाः ताभिः समीपस्थायिनीभिः: **तपोवनसम्पर्काद् इव**=धर्मारण्यसंसर्गाद्इव :**अपगतकालुष्याभिः**=अपगतं दूरीभूतं कालुष्यंमालिन्यं यासां ताभिः: **तरङ्गपरम्परासंक्रान्तरविबिम्बपङ्क्तिभिः**=तरङ्गाणां कल्लोलानां परम्परासु पङ्क्तिषु संक्रान्ता प्रतिफलिताः रवेः दिनकरस्य बिम्बपङ्क्तयः बिम्बराजयः यासु ताभिः तादृशीभिः, अतएव **तापसदर्शनागतसप्तर्षिमालाविगाह्यमानाभिः इव**=तापसानां जाबाल्या-

दितपस्विनां दर्शनाय साक्षात्काराय आगता प्राप्ता या सप्तर्षिमाला मारीच्यादि-चित्रशिखण्डिपङ्क्तिः तया विगाह्यमानाभिः विलोड्यमानाभिः इव, **निशासु**—क्षपासु, **अतिविकचकुमुदवनम्**—अतिविकचं बहुविकसितं यद् कुमुदवनं कैरवकाननं तत्, **ऋषिजनम्**—तपस्विगणम्, **उपासितुम्**—सेवितुम् **अवतीर्णम्**—उपगतम्, **ग्रहगणम् इव**—भौमादिमण्डलम् इव, **उद्वहन्तीभिः**—धारयन्तीभिः **दीर्घिकाभिः**—वापीभिः, **परिवृतम्**—परिवेष्टितम्, **अनिलावनमितशिखराभिः**—अनिलेन पवनेन अवनमितानि नम्रीकृतानि शिखराणि अग्रभागाः यासां ताभिः, **वनलताभिः**—विपिनवल्लरीभिः **प्रणम्यमानमिव**—नमस्क्रियमाणम् इव, **अनवरतमुक्तकुसुमैः**—अनवरतं निरन्तरं मुक्तानि त्यक्तानि कुसुमानि प्रसूनानि यैः तैः तादृशैः, **पादपैः**—वृक्षैः, **अर्च्यमानमिव**—पूज्यमानम् इव, **आबद्धपल्लवाञ्जलिभिः**—आबद्धाः निर्मिताः पल्लवाः किसलयानि एव अञ्जलयः यैः तैः तादृशैः **विटपैः**—स्कन्धैः, **उपास्यमानम् इव**—सेव्यमानमिव ।

टिप्पणी—**आगृहीत**—आ + ग्रह् + क्त । **शिष्य**—शास् + क्यप् । **उपकण्ठ**—पास का प्रदेश । **श्रूयमाण**—श्रु + यक् + शानच् । **चित्रभानुः**—अग्नि । (चित्राःकर्बुराः भानवः शिखाः यस्य सः चित्रभानुः) । **निनीषुभिः**—नी + सन् + उ; तृ० ब० व० । **ग्रहगण**—ग्रहसमूह, 'अर्कानयो ग्रहाः'; इत्यमरः । ज्योतिर्विज्ञान के आधार पर सूर्यचन्द्र आदि ग्रह हैं, किन्तु वर्तमान भूगोलवेत्ता सूर्य को केन्द्र मानकर उसके चारों ओर घूमने वाले मङ्गल आदि को ग्रह तथा ग्रहों का चक्कर लगाने वाले चन्द्र को उपग्रह मानते हैं । यहाँ बाण की मान्यता पुरातन ही है । यहाँ ग्रहगण से तात्पर्य सामान्यतः नक्षत्रमण्डल से ही है । '**तपोधनसम्पर्कादिव**' में हेतूत्प्रेक्षालङ्कार है । '**विगाह्यमानाभिः**'—में क्रियोत्प्रेक्षा, 'ग्रहगणमिव' में जात्युत्प्रेक्षा, प्रणम्यमानमिव, अर्च्यमानमिव तथा उपास्यमानमिव में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है ।

...उटजाजिरप्रकीर्णशुष्यच्छ्यामाकम्, उपसंगृहीतामलकलवलीकर्कन्धूकदलीलकुचचूतपनसतालीफलम्, अध्ययनमुखरवटुजनम्, अनवरतश्रवणगृहीतवषट्कारवाचालशुककुलम्, अनेकसारिकोद्घुष्यमाण-

सुब्रह्मण्यम, अरण्यकुक्कुटोपभुज्यमानवैश्वदेवबलिपिण्डम्, आसन्नवापीकलहंसपोतभुज्यमाननीवारवलिम्, एणीजिह्वापल्लवोपलिह्यमानमुनिबालकम्, अग्निकार्यार्धदग्धसिमसिमायमानसमित्कुशकुसुमम् उपलभग्ननारिकेलरसस्निग्धशिलातलम्, अचिरक्षुण्णवल्कलरसपाटलभूतलम्, रक्तचन्दनोपलिप्तादित्यमण्डलकनिहितकरवीरकुसुमम्, इतस्ततो विक्षिप्तभस्मलेखालङ्कृतमुनिजनभोजनभूमिभागम्……।

हिन्दी-अनुवाद—जो पर्णशालाओं के प्राङ्गणों में फैलाए गये सूखते हुए श्यामाकधान्यों (साँवा) से युक्त था, जो एकत्र किये गये (बघारे गये) आम्रलक (आँवला) लवली, कर्कन्धू (बदरीफल या बेर), केला, लकुच, आम, कटहल तथा तालफलों से युक्त था, जो वेदपाठ के कारण वाचाल बटुजनों (ब्रह्मचारियों) से संकुल था, जो निरन्तर श्रवणमात्र से शिक्षित 'वषट्कार' के कारण वाचालभूत शुकसमूह वाला था, जो असंख्य सारिकाओं द्वारा उच्चस्वर से पढ़े जाते हुए वेदमन्त्रों वाला था, जो बनैले कुक्कुटों (बनमुर्गों) द्वारा खाये जाते हुये देवयज्ञों के बलिपिण्डों (भक्ष्यसामग्री) वाला था, जो निकटवर्तिनी बावड़ी के कलहंस-शिशुओं द्वारा भक्षित की जाती हुई नीवार (वन्यधान्य) की बलि वाला था, जो हरिणियों के रसना (जीभ) रूपी पल्लवों से चाटे जाते हुये मुनिबालकों वाला था, जो अग्निकार्यों (यज्ञों) में अधजले अतएव, 'सिमसिम' शब्द उत्पन्न करने वाले कुशों, समिधाओं तथा पुष्पों वाला था, जो पत्थरों पर द्वैधीकृत (तोड़े गये) नारिकेल फल के रस से चिकने शिलातल वाला था, जो तत्काल (वृक्षों से) निकाले गये वल्कलों के रस से श्वेतरक्त भूतलवाला था, जो लाल चन्दन से लिप्त करके (भूतल पर आलिखित) सूर्यमण्डल पर चढ़ाये गये करवीर पुष्पों वाला था, जो इधर-उधर खींची गयी भस्मरेखाओं से अलंकृत मुनिजनों के रसोईं घर वाला था।

संस्कृत-व्याख्या—उटजाजिरप्रकीर्णशुष्यच्छ्यामाकम्—उटजानां पर्णशालानाम् अजिरेषु प्राङ्गणेषु प्रसारिताः अतएव शुष्कतां शोषं प्राप्नुवन्तः श्यामाकाः धान्यविशेषाः यस्मिन् स तादृशम्, **उपसंगृहीतामलकलवलीकर्कन्धूकदली-लकुचचू**

तपनसतालीफलम्=उपसंगृहीतानि एकत्रीकृतानि आमलकं धात्री लवली लता-विशेषः कर्कन्धूः बदरी कदली रम्भा लकुचः डहुः चूतः आम्रः पनसं कण्टकी-ताली तृणराजः एतानि फलानि यत्र स तं तादृशं तम्, **अध्ययनमुखरबटुजनम्**=अध्ययनेन वेदादिपाठेन मुखराः शब्दायमानाः बटुजना ब्रह्मचारिवर्गाः यत्र स तं तादृशम्, **अनवरतश्रवणगृहीतवषट्कारवाचालशुककुलम्**=अनवरतं सततं श्रवणेन आकर्णनेन गृहीतः शिक्षितः यः वषट्कारः देवेभ्यो हविर्दाने उच्चारितः शब्दः 'इन्द्राय वषट्' इत्यादिरूपः तेन वाचालानि शब्दायमानानि शुककुलानि कीरसमूहाः यत्र स तादृशम्: **अनेकसारिकोद्घुष्यमाणसुब्रह्मण्यम्**=अनेकाभिः बह्वीभिः सारिकाभिः पीतपदाभिः उद्घुष्यमाणम् उच्चैः अभ्यस्यमानं सुब्रह्मण्यं वेदः यत्र स तं तादृशम्, **अरण्यकुक्कुटोपभुज्यमानवैश्वदेवबलिपिण्डम्**=अरण्य-कुक्कुटैः काननताम्रचूडैः उपभुज्यमानाः भक्ष्यमाणाः वैश्वदेवस्य देवयज्ञस्य बलिपिण्डाः इन्तकाराः यत्र तम्, **आसन्नवापीकलहंसपोतभुज्यमाननीवारबलिम्**=आसन्ना समीपस्था या वापी दीर्घिका तस्याः ये कलहंसपोताः कादम्बशावकाः तैः भुज्यमानाः भक्ष्यमाणाः नीवारबलयः मुन्यन्नोपहाराः यत्र स तं तादृशम्, **एणीजिह्वापल्लवोपलिह्यमानमुनिबालकम्**=एणीभिः हरिणीभिः कर्तृभूताभिः जिह्वाः रसनाः एव पल्लवाः किसलयानि तैः करणभूतैः उपलिह्यमानाः आस्वा-द्यमानाः मुनिबालकाः ऋषिशिशवः यत्र स तं तादृशम्, **अग्निकार्यार्धदग्ध-सिमसिमायमानसमित्कुशकुसुमम्**=अग्निकार्येषु यज्ञेषु अर्धदग्धानि अर्ध-भस्मितानि अतएव सिमसिमायमानानि 'सिम् सिम्' इति शब्दं कुर्वाणानि समिधः काष्ठानि कुशाः दर्भाः कुसुमानि प्रसूनानि च यत्र तं तादृशम् **उपलभग्ननारिकेलरसस्निग्धशिलातलम्**=उपलः प्रस्तरैः भग्नानि त्रुटितानि यानि नारिकेलानि श्रीफलानि तेषां रसैः द्रवैः स्निग्धानि चिक्कणानि शिलातलानि प्रस्तराः यत्र स तं तादृशम्: **अचिरक्षुण्णवल्कलरसपाटल-भूतलम्**=अचिरं तत्कालं क्षुण्णानि उत्पाटितानि यानि वल्कलानि वृक्ष-त्वच. तेषां, रसैः निर्यासैः पाटलं श्वेतरक्तं भूतलं पृथ्वीतलं यत्र स तं तादृशम्, **रक्तचन्दनोपलिप्तादित्यमण्डलकनिहितकरवीरकुसुमम्**=रक्त-चन्दनेन पत्राङ्गेन उपलिप्तम् आलिखितं यद् आदित्यमण्डलम् एव आदित्य-

मण्डलकं सूर्यबिम्बं तस्मिन् निहितानि स्थापितानि करवीरकुसुमानि हयमारप्रसूनानि यत्र स तं तादृशम्, इतस्ततः=परितः, विक्षिप्तभस्मलेखालङ्कृतमुनिजनभोजनभूमिभागम्=विक्षिप्ताभिः प्रसृताभिः भस्मलेखाभिः भूतिपङ्क्तिभिः अलङ्कृताः भूषिताः मुनिजनानां ऋषिगणानां भोजनभूमिभागा भक्षणस्थलदेशाः यत्र स तं तादृशम् ।

टिप्पणी–उजट=पर्णशालायें । अजिर=प्राङ्गण । श्यामाक=मुनिधान्य विशेषः । लकुच=बड़हर का फल । ब्रह्मण्यं–ब्रह्मणे हितं ब्रह्मण्यं शोभनं च तद् ब्रह्मण्यं, सुब्रह्मण्यम् ब्रह्मन्+यत् । ब्रह्मज्ञान के लिए हितकारी वेद, वैदिक वाङ्मय, ब्रह्मसम्बन्धी पवित्र चर्चा । उपभुज्यमान–उप+भुज्+यक्+शानच् । वैश्वदेव–देवयज्ञ, पञ्चमहायज्ञों में देवयज्ञ प्रधान यज्ञ है, इसमें देवताओं के निमित्त हवन किया जाता है । सभी देवताओं के कारण इनका नाम वैश्वदेव है । पाँच महायज्ञ इस प्रकार हैं–१. देवयज्ञ-होम २. ऋषियज्ञ-वेदपाठ ३. पितृयज्ञ तर्पण-श्राद्ध ४. मनुष्ययज्ञ-अतिथिसेवा ५. भूतयज्ञ-बलि । एणी–हिरनी । क्षुण्ण–उपाडा गया, उखाड़ा गया, उत्पाटित । भोजन–भुज्+ल्युट् ।

…परिचितशाखामृगकराकृष्टयष्टिनिष्कास्यमानप्रवेश्यमानजरदन्धतापसम, इभकलभार्धोपभुक्तपतितैः सरस्वतीभुजलताविगलितैः शङ्खवलयैरिव मृणालशकलैः कल्माषितम्, ऋषिजनार्थमेणकैर्विषाणशिखरोत्खन्यमानविविधकन्दमूलम्, अम्बुपूर्णपुष्करपुटैर्वनकरिभिरापूर्यमाणविटपालवालकम्, ऋषिकुमारकाकृष्यमाणवनवराहदंष्ट्रान्तराललग्नशालूकम्, उपजातपरिचयैः कलापिभिः पक्षपुटपवनसंधुक्ष्यमाणमुनिहोमहुताशनम्, आरब्धामृतचरुचारुगन्धम्, अर्धपक्वपुरोडाशपरिमलामोदितम्, अविच्छिन्नाज्यधाराहुतिहुतभुग्हुङ्कारमखरितम्…।

हिन्दी-अनुवाद–जो परिचित वानरों के हाथों द्वारा आकृष्ट (ले जाई गई) छड़ियों के सहारे बाहर ले जाये जाते हुए तथा भीतर प्रवेश कराए जाते

हुए वृक्ष तन्वे तपस्विजनों वाला था, जो हस्तिशावकों द्वारा अर्धचर्वित (दशा में) नीचे गिरे हुए अतएव देवी सरस्वती की बाहुलताओं से परिभ्रष्ट शंख-निर्मित करकङ्कण प्रतीत होने वाले कमलनाल के टुकड़ों से चित्रित था, जो ऋषिजनों के (भक्षण) निमित्त वनहरिणों द्वारा (अपने) शृङ्गाग्रभागों से उखाड़े जाते हुए नाना प्रकार के कन्दमूलों वाला था, जो जल से भरे हुए 'पुष्करपुटों' (शुण्डाओं) वाले वनगजों द्वारा भरे जाते हुए वृक्षों के थालों वाला था, जो मुनिविशृ.ों द्वारा खींचे जाते हुए वनशूकरों की दाढ़ों में फँसे हुए शालूकों (कमल की जड़ों) वाला था, जो परिचय उत्पन्न हो जाने वाले (अर्थात् चिरपरिचित) मयूरों द्वारा (अपने) दोनों पंखों को हवा से धौंकी जाती हुई मुनियों की यज्ञाग्नि वाला था, जो तैयार किये गये 'अमृतचरु' (अमृत=घी या दूध में पकाया गया चावल ही अमृतचरु है) की मनोहर गन्धवाला था, जो अधपके पुरोडाश की पवित्र परिमल आमोदित (सुगन्धित अथवा हर्षजननशील) था, जो अटूट घृतधारा के हवन से (उत्पन्न) अग्नि-हुङ्कारों से शब्दायमान था।

संस्कृत-व्याख्या—**परिचितशाखामृगकराकृष्टयष्टिनिष्कास्यमानप्रवेश्यमानजरदन्धतापसम्**=परिचितैः पूर्वत एव समुत्पन्नपरिचयैः शाखामृगैः कपिभिः करेण आकृष्टा यष्टिः कराकृष्टयष्टिः तया हस्तालम्बितदण्डेन निष्कास्यमानाः निःसार्यमाणाः प्रवेश्यमाना अन्तः नीयमानाः जरन्तः वृद्धाः ते च अन्धाः नेत्र-हीनाः तापसाः तपस्विनः यस्मिन् स तं तादृशम्, **इभकलभार्धोपभुक्तपतितैः**=इभानां गजानां कलभाः शावकाः तै अर्धोपभुक्तैः अर्धचर्वितैः पश्चाच्च पतितैः च्युतैः, **सरस्वतीभुजलताविगलितैः**=सरस्वत्याः भारत्याः, भुजो एव लते भुज-लते बाहुवल्लयौ ताभ्यां विगलितैः स्रस्तैः, **शङ्खवलयैः इव**=कम्बुकटकैः इव, **मृणालशकलैः**=बिसखण्डैः, **कल्माषितम्**=कर्बुरितम्, **ऋषिजनार्थम्**=तप-स्विगणभक्षणार्थम्, **एणकैः**=हरिणैः कर्तृभिः, **विषाणशिखरोत्खन्यमानविविध-कन्दमूलम्**=विषाणशिखरैः शृङ्गाग्रैः करणभूतैः उत्खन्यमानानि उत्पाद्य-मानानि विविधानि अनेकविधानि कन्दाः शालूकादीनि मूलानि मूलकप्रभृतीनि यत्र स तं तादृशम्, **अम्बुपूर्णपुष्करपुटैः**=अम्बुभिः सलिलैः पूर्णानि संभृतानि

पुष्करपुटानि शुण्डाग्राणि येषां तैः तादृशैः, वनकरिभिः=विपिनगजैः, **आपूर्यमाणविटपालवालकम्**=आपूर्यमाणानि भ्रियमाणानि विटपानां स्कन्धानाम्, आलवालकानि आवापस्थानानि तत्र स तं तादृशम्, **ऋषिकुमारकाकृष्यमाणवनवराहदंष्ट्रान्तराललग्नशालूकम्**=ऋषिकुमारकैःतपस्विबालकैः आकृष्यमाणानि निःसार्यमाणानि वनवराहाणां काननसूकराणां दंष्ट्रान्तराले दशनमध्ये लग्नानि संसक्तानि शालूकानि नलिनकन्दाः यत्र स तं तादृशम्, उपजातपरिचयैः= उपजातः उत्पन्नः परिचयः संस्तवः आत्मीयता येषां तैः तादृशैः, कलापिभिः= मयूरैः, **पक्षपुटपवनसंधुक्ष्यमाणमुनिहोमहुताशनम्**=पक्षपुटानां छदपुटानां पवनेन वातेन संधुक्ष्यमाणाः प्रज्वाल्यमानाः मुनीनाम् ऋषीणां होमहुताशनाः यज्ञाग्नयः यत्र स तं तादृशम्, **आरब्धामृतचरुचारुगन्धम्**=आरब्धः प्रवर्तितः अमृतचरोः सघृतयवौदनस्य चारुः मनोहरः गन्ध आमोदः यत्र स तं तादृशम्, **अर्धपक्वपुरोडाशपरिमलामोदितम्**=अर्धपक्वस्य अर्धविक्लित्तिमापन्नस्य पुरोडाशस्य हवनीयद्रव्यस्य परिमलेन गन्धेन आमोदितं सुरभितम्, **अविच्छिन्नाज्यधाराहुतिहुतभुग्हुङ्कारमुखरितम्**=अविच्छिन्ना अत्रुटिता या आज्यधारा घृतपातः तस्याः आहुतिः होमः तया यः हुतभुजः अग्नेः हुङ्कारः 'हुम्' ध्वनिः तेन मुखरितं वाचालितम् ।

टिप्पणी–शाखामृग–बन्दर । कल्माषित–रंगबिरंगा, चितकबरा; कल्माषः संजातोऽस्येति कल्माषितम् कल्माष—कई रंग जो अलग-अलग दिखाई दे रहे हों; कल्माष+इतच्=कल्माषित । **उत्खन्यमान**–उत्+खन+यक्=शानच् । **पुष्करपुट**—हाथी की सूंड का अग्रभाग 'शुण्डाग्रं त्वस्य पुष्करम्', इत्यमरः । **शालूक**–कमलिनी की जड़ को कहते हैं । **अमृतचरु**–होमद्रव्य; जिसे घी, जौ चावल आदि से पकाया जाता है, 'हव्यपाके चरुः पुमान्' इत्यमरः (देवता लोग अग्नि हव्यवाहन) के द्वारा इस चरु का भोजन करते हैं यही उनके लिए अमृत है, अतः चरु को ही अमृतचरु कहते हैं । **पुरोडाश**–हवि, हवनीय द्रव्य; 'पुरोडाशो हवि–भेदे' विश्वकोष । हुतभुक्–अग्नि (हुतं भुङ्क्ते इति हुतभुक्) **शङ्खवलयैरिव** में जात्युत्प्रेक्षालङ्कार है ।

···उपचर्यमाणातिथिवर्गम्, पूज्यमानपितृदेवतम्, अर्च्यमानहरि-

हरपितामहम्, उद्दिश्यमानश्राद्धकल्पम्, व्याख्यायमानयज्ञविद्यम्, आलोच्यमानधर्मशास्त्रम्, वाच्यमानविविधपुस्तकम्, विचार्यमाण-सकलशास्त्रार्थम्, आरभ्यमाणमर्णशालम्, उपलिप्यमानाजिरम्, उपमृज्यमानोटजाभ्यन्तरम्, आबध्यमानध्यानम्, साध्यमानमन्त्रम्, अभ्यस्यमानयोगम्, उपह्रियमाणवनदेवताबलिम्, निर्वर्त्यमान-मौञ्जमेखलम्, प्रक्षाल्यमानवल्कलम्, उपसंगृह्यमाणसमिधम्, उपसंस्क्रियमाणकृष्णाजिनम्, गृह्यमाणगवेधुकम्, शोष्यमाणपुष्कर-बीजम्, ग्रथ्यमानाक्षमालम्, गृह्यमाणत्रिपुण्ड्रकम्, न्यस्यमानवेत्र-दण्डम्, सत्क्रियमाणपरिव्राजकम्, आपूर्यमाणकमण्डलुम्...।

हिन्दी-अनुवाद–जो सत्कार किये जाते हुए अतिथिगणों वाला था, जो पूजित किये जाते हुए पितृगणों एवं देवताओं वाला था, जो अर्चना किये जाते हुए विष्णु-महेश एवं ब्रह्मा वाला था, जो पढ़ाये जाते हुए (महर्षि गोभिल आदि द्वारा प्रणीत) श्राद्धकल्प वाला था, जो व्याख्या की जाती हुई यज्ञविद्या वाला था, जो आलोचित किये जाते हुए धर्मशास्त्रों वाला था, जो पढ़ी जाती हुई अनेक प्रकार की पुस्तकों वाला था, जो युक्तियों के साथ स्थापित किये जाते हुए समस्त शास्त्रार्थों वाला था, जो नये बनाये जाते हुए पर्णकुटीरों वाला था, जो (गोमयादि से) लीपे जाते हुए आँगनों वाला था, जो झाड़ू लगाये जाते हुए पर्णशालाओं के भीतरी भागों वाला था, जो बाँधे जाते हुए (लगाये जाते हुए) ध्यानों (प्रत्ययैकतानता) वाला था, जो (होमादि द्वारा) सिद्ध किये जाते हुए मंत्रों वाला था, जो अभ्यास किये जाते हुए (चित्तवृत्तिनिरोधात्मक) योगों वाला था, जो वनदेवियों के लिए भेंट चढ़ाये जाते हुए बलिपदार्थों वाला था, जो बँटी जाती हुई मौञ्जी मेखलाओं वाला था, जो धोये (पछारे) जाते हुए वल्कल वस्त्रों वाला था, जो एकत्र किये जाते हुए यज्ञ के इन्धनों वाला था, जो शुद्ध किये जाते हुए काले मृगचर्मों वाला था, जो ग्रहण किये जाते हुए 'गवेधुका' (धान्यविशेष) वाला था, जो सुखाये जाते हुए कमलगट्टों वाला था, जो गूँथी जाती हुई जपमालाओं वाला था, जो धारण किये जाते

हुए त्रिपुण्ड्रकों वाला था, जो रखे जाते हुए वेत्रदण्डों वाला था, जहाँ परिव्राजकों का सत्कार किया जा रहा था, जो जल से भरे जाते हुए कमण्डलुओं वाला था।

संस्कृत-व्याख्या–**उपचर्यमाणातिथिवर्गम्**=उपचर्यमाणःसत्कारं प्राप्यमाणः अतिथिवर्गः अभ्यागतसमूहः यत्र तं तादृशम्, **पूज्यमानपितृदैवतम्**=पूज्यमानानि अर्च्यमानानि पितरः पितृपितामहादयः दैवतानि देवा च यत्र तम् अथवा पूज्यमानानि पितृदैवतानि पितरःयत्र तं तादृशम्,**अर्च्यमानहरिहरपितामहम्**=अर्च्यमानाः पूज्यमानाः हरिः विष्णु हरः महेश्वरः पितामहः प्रजापतिश्च एते यत्र तं तादृशम्, **उद्दिश्यमानश्राद्धकल्पम्**=उद्दिश्यमानःउपदिश्यमानः श्राद्धकल्पः आश्वलायनादिरचितः श्राद्धविधिः यत्र तं तादृशम्, **व्याख्यायमानयज्ञविद्यम्**=व्याख्यायमाना स्पष्टीक्रियमाणा यज्ञविज्ञानं यत्र तं तादृशम्,**आलोच्यमानधर्मशास्त्रम्**=आलोच्यमानानि धर्मशास्त्राणि मन्वादिप्रणीतधर्मशास्त्राणि यत्र तं तादृशम, **वाच्यमानविविधपुस्तकम्**=वाच्यमानानि पठ्यमानानि विविधानि अनेकप्रकाराणि पुस्तकानि शास्त्राणि यत्र तं तादृशम्, **विचार्यमाणशकलशास्त्रार्थम्**=विचार्यमाणाः युक्त्या स्थाप्यमानाः सकलानां सम्पूर्णानां शास्त्राणां शासनग्रन्थानाम् अर्थाः आशयाः यत्र तम्, **आरभ्यमाणपर्णशालम्**=आरभ्यमाणाः विरच्यमानाः पर्णशालाः उटजाः यत्र तं तादृशम्, **उपलिप्यमानाजिरम्**=उपलिप्यमानानि संस्क्रियमाणानि अजिराणि प्राङ्गणानि यत्र तं तादृशम्, **उपमृज्यमानोटजाभ्यन्तरम्**=उपमृज्यमानानि शोध्यमानानि उटजानां पर्णशालानाम् अभ्यन्तराणि अन्तरालानि यत्र तं तादृशम्, **आबध्यमानध्यानम्**=आबध्यमानं विधीयमानं ध्यानं चिन्तनं यत्र तं तादृशम्, **साध्यमानमन्त्रम्**=साध्यमानाः वशीक्रियमाणाः मन्त्राः देवाधिष्ठातृकाः वर्णसमाम्नायाः यत्र तं तादृशम्, **अभ्यस्यमानयोगम्**=अभ्यस्यमानः पुनः पुनः क्रियमाणः योगः चित्तवृत्तिनिरोधः यत्र तं तादृशम्, **उपह्रियमाणवनदेवताबलिम्**=उपह्रियमाणाः समर्प्यमाणाः वनदेवताभ्यः अरण्याधिष्ठातृदेवीभ्यः बलय उपहाराः यत्र तं तादृशम्, **निर्वर्त्यमानमौञ्जमेखलम्**=निर्वर्त्यमानाः निर्मीयमाणाः मौञ्जयः मुञ्जमय्यः मेखलाः कटिबन्धनानि यत्र तं तादृशम्, **प्रक्षाल्यमानवल्कलम्**=प्रक्षाल्यमानानि जलेन निर्मलीक्रियमाणानि वल्कलानि वृक्षत्वचः यत्र तं तादृशम्, **उपसंगृह्यमाणसमिधम्**=उपसंगृह्यमाणाः उपादीयमानाः समिधः काष्ठानि यत्र तं तादृशम्,

उपसंस्क्रियमाणकृष्णाजिनम्=उपसंस्क्रियमाणानि विशुद्धीक्रियमाणानि कृष्णा-जिनानि कृष्णमृगचर्माणि यत्र तं तादृशम्, **गृह्यमाणगवेधुकम्**=गृह्यमाणाः आदीयमाना गवेधुकाः कन्दाः धान्यविशेषाः वा यत्र तं तादृशम्, **शोष्यमाण-पुष्करबीजम्**=शोष्यमाणानि शुष्कतां नीयमानानि पुष्करबीजानि कमलफलानि-यत्र तं तादृशम्, **ग्रथ्यमानाक्षमालम्**=ग्रथ्यमानाः ग्रन्थि प्राप्यमाणः अक्षमालाः अक्षस्रजः यत्र तं तादृशम्, **गृह्यमाणत्रिपुण्ड्रकम्**=गृह्यमाणानि ध्रियमाणानि त्रिपुण्ड्रकाणि तिर्यग्रेखात्रयात्मकाः तिलकविशेषाः यत्र तं तादृशम्, **न्यस्यमान-वेत्रदण्डम्**=न्यस्यमानाः स्थाप्यमानाः वेत्रदण्डाः वेतसलगुडाः यत्र तं तादृशम्, **सत्क्रियमाणपरिव्राजकम्**=सत्क्रियमाणाः परिव्राजकाः संन्यासिनः यत्र तं तादृशम्, **आपूर्यमाणकमण्डलुम्**=आपूर्यमाणाः भ्रियमाणाः कमण्डलवः जलपा-त्राणि यत्र तं तादृशम् ।

टिप्पणी–उपचर्यमाण–उप+चर्+यक्+शानच् । **अतिथि–अभ्यागत** 'आघुणस्त्वतिथिर्द्वयोः' इति त्रिकाण्डशेषः, जिसके आने की कोई तिथि निश्चित न हो (अनिश्चिता तिथिर्यस्य) अथवा वह महात्मा जो सदा घूमता रहता हो (अतति सदा गच्छति इति अतिथिः–अत्+इथिन्) और होम (वैश्वदेव) के समय गृहस्थ के घर उपस्थित हो (दूराच्चोपगतं श्रान्तं वैश्वदेव उपस्थितम् । अतिथिं तं विजानीयान्नातिथिः पूर्वमागतः ।। (व्यास) अथवा जिस महात्मा ने तिथिपर्व आदि सबका त्याग कर दिया हो, सर्वथा निर्लेप (तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे त्यक्ता येन महात्मना । सोऽतिथिः सर्वभूतानां शेषानभ्यागतान् विदुः ।। यम) **पूज्यमान**–पूज्+यक्+शानच् । **पितृदैवत**–पितर । **अर्च्यमान**–अर्च्+यक्+शानच् । **उपदिश्यमान**–उप+दिश्+यक्+शानच् । **श्राद्धकल्प**–श्राद्ध का विवेचन करने वाले आश्वलायन आपस्तम्ब आदि ऋषियों से प्रोक्त ग्रन्थ जिन्हें वेदाङ्ग की श्रेणी में गिना जाता है । कल्प वेद के हाथ हैं (हस्तौ कल्पोऽथ उच्यते) । **आलोच्यमान**–आ+लोच्+यक्+शानच् । **धर्मशास्त्र**–वे स्मृतिग्रन्थ जिनमें मानवजीवन की सर्वाङ्गीण मीमांसा करते हुए उनके लिए नीतिनिर्देश किया गया है । (श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयः धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः) **पठ्यमान**–पठ्+यक्+शानच् । **उपलिप्यमान**–उप+लिप्+यक्+शानच् । **पुष्करबीज**–

कमलगट्टे । परिव्राजक—संन्यासी, (परित्यज्य सर्वं गृहकलत्रादिकं व्रजति वनायेति परिव्राजकः) । आपूर्यमाण—आ+पूर्+यक्+शानच् ।

....अदृष्टपूर्वं कलिकालस्य, अपरिचितमनृतस्य, अश्रुतपूर्वमनङ्गस्य, अब्जयोनिमिव त्रिभुवनवन्दितम्, असुरारिमिव प्रकटितवराहनरसिंह-रूपम्, सांख्यमिव कपिलाधिष्ठितम्, मथुरोपवनमिव बलालीढदर्पितधेनुकम् उदयनमिवानन्दितवत्सकुलम्, किंपुरुषाधिराज्यमिव मुनिजनगृहीतकलशाभिषिच्यमानद्रुमम्, निदाघसमयावसानमिव प्रत्यासन्नजलप्रपातम् जलधरसमयमिव वनगहनमध्यसुखसुप्तहरिम्, हनुमन्तमिव शिलाशकलप्रहारसंचूर्णिताक्षास्थिनिचयम्, खाण्डवविनाशोद्यतार्जुनमिव प्रारब्धाग्निकार्यम्, सुरभिविलेपनधरमपि सतताविर्भूतहव्यधूमगन्धम्, मातङ्गकुलाध्यासितमपि पवित्रम्, उल्लसितधूमकेतुशतमपि प्रशान्तोपद्रवम्, परिपूर्णद्विजपतिमण्डलसनाथमपि सदा संनिहितगरुमहनान्धकारम्, अतिरमणीयमपरमिव ब्रह्मलोकमाश्रममपश्यम् ।

हिन्दी-अनुवाद—जो कलियुग द्वारा पहले (कभी) नहीं देखा गया था, जो असत्य से अपरिचित था, जो कामदेव द्वारा पहले (कभी) नहीं सुना गया था (अर्थात् कामप्रभावशून्य था), जो त्रिलोकी द्वारा वन्दना करने योग्य कमलयोनि ब्रह्मा की भाँति त्रिभुवन श्रेष्ठ था, जो (हिरण्याक्ष के वधार्थ) वराह एवं (हिरण्यकशिपु के वधार्थ) नृसिंहरूप प्रकट करने वाला असुरारि 'विष्णु' की भाँति वराह-मनुष्य-सिंह एवं मृगों को प्रकट करने वाला था, जो महर्षि कपिल द्वारा अधिष्ठित (प्रतिपादित अथवा आश्रित) सांख्य-दर्शन की भाँति 'कपिलाओं' अर्थात् गायों द्वारा समाश्रित था, जो 'बलावलीढ' अर्थात् बलवान् (अथवा बल=बलराम द्वारा अवलीढ=अभिभूत) तथा दर्प-युक्त धेनुकासुर से युक्त मथुरा के निकवर्ती वन की भाँति बलशालिनी एवं मतवाली गायों (अथवा हथिनियों) वाला था, जो (पाण्डुवंश में समुत्पन्न महाराज) वत्स के कुल को आनन्दित करने वाले (महाराज) उदयन की भाँति बछड़ों अथवा (मानव) शिशुओं को आनन्दित करने वाला था, जो मुनिजनों

द्वारा (राज्याभिषेक करने के लिए) ग्रहण किये गए कलशों से स्नान कराये जाते हुए 'द्रुम' नामक राजा से युक्त किन्नर-साम्राज्य की भाँति मुनिजनों द्वारा ग्रहण किये गए कलशों से सींचे जाते हुए वृक्षों वाला था, जो समीपवर्तिनी जलवृष्टि वाले ग्रीष्मावसान की भाँति निकटवर्ती जल प्रपातों (झरनों) वाला था, जो 'वन' अर्थात् क्षीरसागरीय जलराशि के 'गहन-मध्य' अर्थात् गम्भीर (गहरे) अभ्यन्तर प्रदेश में सुख की नींद सोये हुए हरि (विष्णु) से युक्त वर्षाकाल की भाँति वनों की गुफाओं के भीतर सुखपूर्वक सोये हुए सिंहों वाला था, जो शिलाखण्डों के आघात से (रावणपुत्र) अक्ष अथवा अक्षयकुमार के अस्थिपिञ्जर को चूर-चूर कर देने वाले (पवनसुत) हनुमान की भाँति पत्थर के टुकड़ों की मार से चूर-चूर कर दिये गए अक्षफलों (बहेड़ा) के अस्थिपिञ्जरों (अर्थात् गुठलियों) वाला था, जो 'अग्निकार्य' अर्थात् दहनव्यापार प्रारम्भ कर देने वाले—खाण्डववन के विनाशार्थ प्रस्तुत (मध्यमपाण्डव) अर्जुन की भाँति प्रारम्भ कर दिये गये अग्निकार्य (देवसन्तर्पणक्रिया) वाला था जो[1] सुरभित विलेपन अङ्गराज से युक्त होकर भी निरन्तर प्रकट होने वाले हविर्धूम की गन्ध वाला था, जो मातङ्गों अर्थात् चाण्डालों के समुदाय से समाश्रित होकर भी पवित्र था, जो समुदित हुए सैकड़ों धूमकेतुओं पुच्छलतारों से युक्त होकर भी उपद्रवविहीन था, और जो परिपूर्ण' 'द्विजपतिमण्डल' (पार्वण चन्द्रबिम्ब) से अलंकृत होने पर भी सदैव आसन्नवर्ती सघन वृक्षों के

---

१. इस वाक्य से अनुच्छेदान्त तक विरोधालंकार का प्रयोग है। परिहारपक्ष इस प्रकार होगा—जो सुरभि (गाय) के विलेपन (गोबर का लेप) से युक्त धरा (पृथ्वी) वाला होकर भी निरन्तर उत्पन्न हविर्धूम की गन्ध से परिपूर्ण था, जो 'मातङ्गकुलों अर्थात् मन्दोन्मत्त गजयूथों से समाश्रित होकर भी पवित्र था, जो उठती हुई सैकड़ों 'धूमकेतुओं' (यज्ञाग्नियों) से युक्त होकर भी उपप्लवहीन था तथा जो पूर्णज्ञानी द्विजपतियों (ब्राह्मणों) के मण्डल (समुदाय) से सनाथ होता हुआ भी सदैव सघन वृक्षों के कारण गहरे अन्धकार वाला था।

कारण अन्धकाराच्छादित था।

संस्कृत-व्याख्या—**कलिकालस्य**=कलियुगस्य, **अदृष्टपूर्वम्**=अनवलोकितपूर्वम्, **अनृतस्य**=असत्यस्य, अपरिचितम्, **अनङ्गस्य**=कामस्य, **अश्रुतपूर्वम्**=अनाकर्णितपूर्वम्, **अब्जयोनिम् इव**=अप्सु जातम् अब्जं कमलं तद् योनिः उत्पत्तिस्थान यस्य: स अब्जयोनिः तं पितामहम् इव, **त्रिभुवनवन्दितम्**=त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनं त्रिलोकी तेन वन्दितं पूजितम्, **असुरारिम् इव**=असुराणां दैत्यानाम् अरिः रिपुः विष्णुः तम् इव, **प्रकटितवराहनरसिंहरूपम्**=प्रकटितानि प्रकाशितानि वराहाः शूकराः नरसिंहाः पुंस्त्वविशिष्टमृगेन्द्राः रूपाणि मृगाश्च येन तम्, पक्षे प्रकटिते प्रदर्शिते वराहस्य सूकरस्य नरसिंहस्य हिरण्यकशिपुविदारकस्य पुरुषकेसरिणः रूपम् आकृतिः येन तं तादृशम्, **सांख्यम् इव**=सांख्यदर्शनम् इव, **कपिलाधिष्ठितम्**=कपिलाभिः कनकवर्णाभिः गोभिः अधिष्ठितम् पक्षे कपिलेन तदाख्येन मुनिना अधिष्ठितम् आश्रितम्, **मथुरोपवनम् इव**=मथुरायाः एतदाख्यायाः नगर्याः उपवनम् द्वादशवनमध्यमं विपिनं तद् इव, **बलावलीढदर्पितधेनुकम्**=बलेन शक्त्या अवलीढाः संश्लिष्टाः अतएव दर्पिताः गर्विताः धेनुकाः करेण्वः यत्र तम् पक्षे बलेन बलरामेण अवलीढः हतः दर्पितः अभिमानी धेनुकः धेनुकासुरः यत्र तं तादृशम्, **उदयनम् इव**=एतदाख्यं वत्सराजं कौशाम्बीनरेशम् इव, **आनन्दितवत्सकुलम्**=आनन्दितानि हर्षितानि वत्सकुलानि गोवत्ससमूहाः येन तम् पक्षे आनन्दितं हर्षितं वत्सकुलं वत्सदेशीयजनः येन तं तादृशम्, **किंपुरुषाधिराज्यम् इव**=किन्नरराज्यम् इव, **मुनिजनगृहीतकलशाभिषिच्यमानद्रुमम्**=मुनिजनैः ऋषिजनैः गृहीताः धृताः यैः कलशाः घटाः तैः अभिषिच्यमानाः संतर्प्यमाणाः द्रुमाः पादपाः यत्र तम्, पक्षे मुनिजनगृहीतकलशैः अभिषिच्यमानः द्रुमः एतन्नामकः अधिपतिः यत्र तं तादृशम्, **निदाघसमयावसानम् इव**=निदाघसमयः ग्रीष्मकालः तस्य अवसानः समाप्तिः तम् इव, **प्रत्यासन्नजलप्रपातम्**=प्रत्यासन्नः समीपस्थः जलप्रपातः निर्झरः यस्य तम् पक्षे प्रत्यासन्नः समीपवर्ती जलप्रपातः जलवर्षणं यस्य तं तादृशम्, **जलधरसमयम् इव**=जलधराणां जलदानां समयः कालः वर्षर्तुः तम् इव, **वनगहनमध्यसुखसुप्तहरिम्**=वने विपिने यद् गहनं गुहा तस्य मध्ये अन्तः सुखं सुखपूर्वकं

सुप्ता शयिताः हरयः सिंहा यत्र तम् पक्षे वनस्य जलस्य यद् गहनं गम्भीरं मध्यं मध्यभागः तत्र सुखं सुप्तः हरिः विष्णुः यत्र तम्, **हनुमन्तम् इव**=मारुतिम् इव, **शिलाशकलप्रहारसंचूर्णिताक्षास्थिनिचयम्** = शिलाशकलस्य प्रस्तरखण्डस्य प्रहारेण आघातेन संचूर्णितः पिष्टः तैलनिष्कासनाय अक्षाणां विभीतकफलानां अस्थिनिचयः बीजसमूहः यत्र तं तादृशम् पक्षे शिलाशकलस्यप्रहारेण संचूर्णितः भञ्जितः अक्षस्य एतदाख्यस्य रावणपुत्रस्य अस्थिनिचयः अस्थिसमूहः येन तं तादृशम्, **खाण्डवविनाशोद्यतार्जुनम् इव**=खाण्डवस्य एतन्नाम्नः वनस्य विनाशे भस्मीकरणे उद्यतः तत्परः यः अर्जुनः कनिष्ठपाण्डवः तम् इव, **प्रारब्धाग्निकार्यम्** = प्रारब्धम् उपक्रान्तम् अग्निकार्यं होमः नवाङ्कुरणाय कुशमुञ्जादिदाहो वा यत्र तम्, पक्षे प्रारब्धम् अग्निकार्यम् अग्नितृप्तिः दाहविघ्ननिवारणे येन तम्, अतः परं विरोधाभासोऽलङ्कारः–**सुरभिविलेपनधरम् अपि**=सुरभिः घ्राणतर्पणं विलेपनम् अङ्गरागं धरति धारयति इति तादृशः तम् अपि, **सततानिर्भूतहव्यधूमगन्धम्**=सततं निरन्तरम् आविर्भूत, हव्यस्य हवनीयद्रव्यस्य धूमगन्धः अग्निकेतनगंधः यस्मिन् तम् सौरभधारणेनाऽपि धूमगन्धप्रकटने विरोधः तत्परिहाराय-सुरभेः गोविलेपनं गोमयं धरतीति अर्थः करणीयः, **मातंगकुलाध्यासितम् अपि**=मातङ्गकुलेन चाण्डालसमूहेन अध्यासितम् आश्रितम् अपि, **पवित्रम्**=पावनम्, चाण्डालाध्यासे पवित्रतायां विरोधः तत्परिहारस्तु, **मातंगकुलेन**=गजसमूहेन, इत्यर्थंकरणेन ज्ञेयः। **उल्लसितधूमकेतुशतम् अपि**=उल्लसितम् उदितं धूमकेतूनाम् उत्पातग्रहाणां शतं समूहः यत्रेति तादृशम् अपि, **प्रशान्तोपद्रवम्**=प्रकर्षेण पूर्णतया शान्तः समाप्तः उपद्रवः उत्पातः यत्र तम्, अत्र धूमकेतूल्लासेऽपि उपद्रवशान्तौ विरोधः तत्परिहाराय उल्लसितं धूमकेतूनां यज्ञाग्नीनां शतं यत्रेत्यर्थः, **परिपूर्णद्विजपतिमण्डलसनाथम् अपि**=परिपूर्णेन षोडशकलेन द्विजपतिमण्डलेन हिमांशुबिम्बेन सनाथं युक्तम् अपि, **सदासंनिहिततरुगहनान्धकारम्**=सदा सर्वदा संनिहितः तरुगहनेषु वृक्षगह्वरेषु अंधकारः तमः यत्र त तादृशम्, अत्र पूर्णचन्द्रनाथेऽपि अन्धकारसत्तायां विरोधः तत्परिहारस्तु परिपूर्णेन ज्ञानसम्पन्नेन द्विजपतिमण्डलेन ब्राह्मणसमूहेन सनाथमिति अनेन प्रकारेण कार्यः, **अतिरमणीयम्**=अत्यन्तमनोहरम्, **अपरम्**=द्वितीयम्, **ब्रह्मलोकम् इव**=

सुरलोकमिव, आश्रमम् = तपोभूमिम्, अपश्यम् = अद्राक्षम् ।

टिप्पणी—**अब्जयोनि**-ब्रह्मा, भगवान् विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्माजी की उत्पत्ति मानी जाती है । **बलावलीढदर्पितधेनुकम्**—मथुरा के उपवन में बलराम जी ने अभिमानी धेनुकासुर को मारा था, यहाँ आश्रम में गर्वीली धेनुकायें (हथिनियाँ) रहा करती थीं । धेनुकासुर गधे का रूप बनाकर तालवन में रहा करता था, यह अत्यन्त भयंकर दैत्य था । **अवलीढ**-अव+लिह्+क्त । **वनगहनलब्धं**—वन की गुफा के भीतर, जल की गहराई में । भगवान् विष्णु क्षीरसागर के मध्य में आषाढ़ शुक्ल एकादशी से लेकर कार्तिक शुक्ल एकादशी तक शयन करते हैं । वैदिक भाषा में समुद्र का अर्थ है आकाश और विष्णुरूप आदित्य वर्षाकाल में स्वप्न की अवस्था में रहते हैं । विष्णु की पालिकाशक्ति इस समय आवृत्त रहती है । इसीलिए इस बीच में हमारा स्वास्थ्य मन्दाग्नि आदि रोगों से आक्रान्त रहता है । विष्णु के जागरण पर शीतकाल में स्वास्थ्य की वृद्धि होने लगती है । **अभिषिच्यमान**-अभि+षिच्+यक्+शानच् । **अक्ष**—बहेड़ा, रावण का पुत्र जिसे लङ्कादहन के समय हनुमान जी ने मारा था । **अस्थिनिचय**—बहेड़ों की गुठलियों का समूह, हड्डियों का समूह । **अग्निकार्य**—होम या नये अङ्कुरण के लिए कुशा, मूँज आदि के ऊपरी भाग को काट लेने पर आग लगाना, जैसा किसान लोग आज भी ईख के खेतों में किया करते हैं, अग्नि की तृप्ति अर्थात् वनदाह में इन्द्र की ओर से आने वाली बाधा को दूर करना और खाण्डववन का पूरी तरह से दाह होना । **मातंग**—हाथी, चाण्डाल । कश्यप के पुत्र क्रोध की मातङ्ग नामक कन्या से इस जाति का जन्म हुआ है अतः इसे मातङ्ग कहा जाता है । मातङ्ग ऋषि के शाप से एक यक्ष को यह योनि प्राप्त हुई थी अतएव इसे मातङ्गज या मातङ्ग कहते हैं । 'अब्जयोनिमिव' इत्यादि में पूर्णोपमा अलङ्कार है । 'वनगहन' में पुनरुक्तवदाभास अलङ्कार है । 'सुरभि···से लेकर गहनान्धकारम्' तक विरोधाभास अलङ्कार है ।

यत्र च मलिनता हविर्धूमेषु न चरितेषु, मुखरागः शुकेषु न कोपेषु, तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु, चञ्चलता कदलीदलेषु न मनःसु

चक्षूरागः कोकिलेषु न परकलत्रेषु, कण्ठग्रहः कमण्डलुषु न सुरतेषु, मेखलाबन्धो व्रतेषु नेर्ष्याकलहेषु, स्तनस्पर्शो होमधेनुषु न कामिनीषु, पक्षपातः कृकवाकुषु न विद्याविवादेषु, भ्रान्तिरनलप्रदक्षिणासु न शास्त्रेषु, वसुसंकीर्तनं दिव्यकथासु न तृष्णासु, गणना रुद्राक्षवलयेषु न शरीरेषु, मुनिबालनाशः क्रतुदीक्षया न मृत्युना, रामानुरागो रामायणेन न यौवनेन, मुखभङ्गविकारो जरया न धनाभिमानेन। यत्र च महाभारते शकुनिवधः पुराणे वायुप्रलपितम्, वयः परिणामेन द्विजपतनम्, उपवनचन्दनेषु जाड्यम्, अग्नीनां भूतिमत्त्वम्, एणकानां गीतश्रवणव्यसनम्, शिखण्डिनां नृत्यपक्षपातः, भुजङ्गमानां भोगः, कपीनां श्रीफलाभिलाषः मूलानामधोगतिः ।

हिन्दी-अनुवाद—(और) जिस आश्रम में मलिनता (कालिमा) होमाग्नि के धुएँ में थी (किन्तु लोगों के) आचरण में मलिनता (कौलीन्य अथवा कलङ्क) नहीं थी। मुख की अरुणाई (रक्तचञ्चुत्व) शुकपक्षियों में थी (किन्तु लोगों के) क्रोधों में मुँह का लाल हो जाना नहीं था। तीक्ष्णता (चर्मास्थिभेदनसमर्थशक्ति-विशेष) कुशों के अग्रभागों में थी (किन्तु लोगों के स्वभावों में तीक्ष्णता (क्रूरता) नहीं थी। चञ्चलता (तरलता) केले के पत्तों में थी (किन्तु लोगों के) चित्त में चञ्चलता (वृत्ति-विशेष) नहीं थी। चक्षूराग (नेत्रों की लाली) कोकिलों में था (किन्तु लोगों का) चक्षूराग (आसक्ति या अभिलाष) पराई स्त्रियों में नहीं था। कण्ठग्रह (अर्थात् मुँहकड़े की पकड़) कमण्डलुओं में था (किन्तु लोगों की) गलबाँही सम्भोग-व्यापारों में नहीं थी। मेखलाबन्धन (मौञ्जीमेखला का धारण) व्रतों में था (किन्तु लोगों के) ईर्ष्याजनित कलहों में 'मेखलाबन्धन' (जञ्जीर से बाँधा जाना) नहीं था। स्तनस्पर्श (दुग्धदोहनार्थ थन का छुआ जाना) होमधेनुओं में था किन्तु ललनाओं में (लोगों द्वारा) कुचमर्दन नहीं था। पक्षपात (पंखों का गिरना युद्धरत) कुक्कुट पक्षियों में था (किन्तु लोगों का) पक्षपात (सोपाधिकस्वीकृति या मुँहदेखी) शास्त्रीय विवादों में नहीं था। भ्रान्ति (परिवृत्ति या फेरी लगाना) यज्ञाग्नि की प्रदक्षि-

णालों में थो (किन्तु लोगों की) भ्रान्ति (मिथ्याज्ञान) शास्त्रों में नहीं था। वसुसङ्कीर्तन (अर्थात् धर-ध्रुव-सोमादि आठ देवगणों का उल्लेख) देव सम्बद्ध कथाओं में था (किन्तु) लालच के सन्दर्भ में धन की चर्चा नहीं थी। गणना (संख्या या गिनती) रुद्राक्षवलयों में थी (किन्तु लोगों की) गणना (आदर-भाव या स्पृहा नश्वर) शरीरों में नहीं थी। मुनियों के बालों (केशों) का नाश (कर्तन) यज्ञदीक्षा के कारण था, मृत्यु के कारण मुनियों के बालों (शिशुओं) का नाश (मृत्यु) नहीं था। राम के प्रति (आराध्यत्वेन) अनुराग रामायण (ग्रन्थ-विशेष के अध्ययन) के कारण था, यौवन के कारण रामाओं (सुन्दरियों) के प्रति अनुराग (आसक्ति) नहीं था। मुख पर झुर्रियों का विकार बुढ़ौती के कारण था धन के दुरभिमानवश मुँह पर ऐंठन का रुआब नहीं था।

जिस (जाबालि-आश्रम) में महाभारत में (दुर्योधन के मामा गन्धार नरेश) शकुनि का वध मिलता था (किन्तु आश्रम में शकुनियों अर्थात् पक्षियों का वध नहीं होता था), पुराणग्रन्थों में वायुदेव के कथन मिलते थे (किन्तु आश्रम में वायुविकार के कारण अनर्गल प्रलाप नहीं होता था), 'वयः परिणाम' अर्थात् वृद्धावस्था के कारण 'द्विजपतन' अर्थात् दाँतों का गिरना था (किन्तु आश्रम में द्विजों ब्राह्मणों का चारित्रिक-पतन नहीं होता था), उपवन के चन्दनों में जड़ता (शीतलता) थी (किन्तु आश्रमवासीमुनियों में जड़ता अर्थात् मूर्खता नहीं थी), अग्नियों में भूतिमत्व अर्थात् भस्मयुक्तता थी (किन्तु आश्रमवासी मुनियों में ऐश्वर्यशीलता नहीं थी), हरिणों में गीत सुनने की आसक्ति मिलती थी (किन्तु आश्रमवासियों में संगीत सुनने का अभिलाषातिरेक नहीं था), मयूरों का नृत्यवेला में—पक्षपात (पंखों का पतन) होता था (किन्तु आश्रम-वासी मुनियों में नाचगान के प्रति स्वारस्य नहीं था), भुजंगमों अर्थात् सर्पों का ही भोग (कुण्डली अथवा फण) होता था (किन्तु मुनियों का स्त्र्यादिजनित सुखोपभोग नहीं था), वानरों की श्रीफल (बेल) में इच्छा होती थी। (किन्तु मुनियों की लक्ष्मी रूपोफल अर्थात् भौतिकसुख में अभिलाषा नहीं थी), 'मूलों' अर्थात् पेड़ की जड़ों का ही अधोगमन होता था (किन्तु आश्रमवासी मुनियों

का नरकपात नहीं होता था) ।

संस्कृत-व्याख्या—च=अपि च, यत्र=यस्मिन् आश्रमे, मलिनता=मालिन्यम्, हविर्धूमेषु=हविषः धूमेषु हव्यसम्बन्धिधूमकेतनेषु, चरितेषु=आचरणेषु व्यवहारेषु वा न, विशुद्धाचरणत्वादिति भावः । मुखरागः=मुखस्य लपनस्य रागः रक्तिमा, शुकेषु=कीरेषु, कोपेषु=क्रोधेषु न, क्रोधानुदयादिति भावः । तीक्ष्णता=प्रखरता, कुशाग्रेषु=दर्भशिखरेषु, स्वभावेषु=प्रकृतिषु, न, क्रूरतायाः अभावादित्याशयः । चञ्चलता=चपलता, कदलीदलेषु=रम्भापत्रेषु, मनःसु=मानसेषु न, अधीरतायाः अभावात्, चक्षुरागः=चक्षुषोः नयनयोः रागः आरुण्यम्, कोकिलेषु=पिकेषु, परकलत्रेषु=अन्यस्त्रीषु, रागः अनुरोधः आसक्तिः, वा न, तपस्विनामासक्तिविरहात्, कण्ठग्रहः=गलधारणम्, कमण्डलुषु=कुण्डिकासु, सुरतेषु=सम्भोगेषु कण्ठाश्लेषः न, मुनीनां तत्राप्रवृत्तेः । मेखलाबन्धः=मौञ्जीबन्धनम्, व्रतेषु=उपनयनादिदीक्षासु, ईर्ष्याकलहेषु=ईर्ष्या पराभ्युदयाक्षमा तया हेतुभूतया ये कलहाः विग्रहाः तेषु मेखलाबन्धः खड्गबन्धो वा न ईर्ष्याभावात्, स्तनस्पर्शः=कुचसंपर्कः, होमधेनुषु होमाय धेनवः गावः तासु, कामिनीषु=सुन्दरीषु कुचमर्दनं न, विषयानुदयात् । पक्षपातः=पत्रपतनम्, कुक्कवाकुषु=कुक्कुटेषु, विद्याविवादेषु=विद्यार्थं ज्ञानार्थं ये विवादाः गोष्ठ्यः तेषु पक्षपातः निर्णायकस्य अनुचितपक्षस्वीकारः न, निर्णायकानां निष्पक्षत्वात्, भ्रान्तिः=भ्रमणम्, अनलप्रदक्षिणासु=वह्निपरिक्रमासु, शास्त्रेषु=वेदादिषु भ्रान्तिः भ्रमः न, यथार्थज्ञानात् । वसुसंकीर्तनम्=वसूनां देवविशेषाणां संकीर्तनम् चर्चा, दिव्यकथासु=स्वर्गीयाख्यानेषु, तृष्णासु=आकाङ्क्षासु, वसुनः धनस्य संकीर्तनं चर्चा न, ऋषीणां वितृष्णत्वात्, गणना=संख्या, रुद्राक्षवलयेषु=रुद्राक्षमालासु, शरीरेषु=नश्वरदेहेषु गणना आदरः न, तपस्विनां विदेहत्वात्, मुनिबालनाशः=मुनीनां तपस्विनां बालानां कचानां नाशः मुण्डनम्, क्रतुदीक्षया=यज्ञव्रतेन, मृत्युना=मरणेन, बालानां शिशूनां नाशः न, तपोमाहात्म्येनाकालमृत्योरभावात् । रामानुरागः=रामे रामचन्द्रे अनुरागः प्रेम, रामायणेन=वाल्मीकिरचितेन ग्रन्थेन, यौवनेन=तारुण्येन रामासु रमणीषु अनुरागः आसक्तिः न । मुखभङ्गविकारः=मुखस्य लपनस्य भङ्गेन

त्वचादिशैथिल्येन विकारः विकृतिः, **जरया**=वृद्धावस्थया, **धनाभिमानेन**=धनस्य अर्थस्य अभिमानेन गर्वेण मुखस्य भङ्गेन भ्रकुट्यादिभङ्ग्या विकृतिः न, वित्तगर्वयोः उभयोः अभावादिति भावः,च=अपि च,यत्र=आश्रमपदे,**महाभारते**=व्यासप्रणीते ग्रन्थविशेषे, **शकुनिवधः**=शकुनेः दुर्योधनमातुलस्य वधः मरणम्, शकुनिवधकथा महाभारतग्रन्थे, शकुनीनां पक्षिणां वधः आश्रमे न, **पुराणे**=वायुपुराणे, **वायुप्रलपितम्**=वायोः वायुदेवस्य प्रलपितं जल्पितम् आश्रमे वायुना वायुरोगेण प्रलपितं प्रलापो न, **वयः परिणामेन**=वयसः आयुषः परिपाकः परिपक्वता तेन वार्धक्येन इत्यर्थः, **द्विजपतनम्**=द्विजानां पतनं विगलनम् आश्रमे द्विजानां ब्राह्मणानां पतनं चरित्रभ्रष्टता न,**उपवनचन्दनेषु**=उपवनानां विपिनानां चन्दनेषु गन्धसारेषु, **जाड्यम्**=शीतलता, मुनिषु जाड्यं जडता अविवेको वा न। **भूतिमत्त्वम्**=भस्मवत्ता,**अग्नीनां**=वह्नीनाम् मुनीनाम् भूतिमत्त्वं धनसम्पत्ति, मत्ता न, **एणकानाम्**=हरिणानाम्, **गीतश्रवणव्यसनम्**= गीतस्य गानस्य श्रवणे आकर्णने व्यसनम् आसक्तिः, मुनीनां गीतश्रवणव्यसनं न। **शिखण्डिनाम्**=मयूराणाम्, **नृत्यपक्षपातः**=नृत्ये नर्तनसमये पक्षाणां कलापानां पातः पतनम् मुनीनां नृत्यं प्रति उत्कटाभिलाषो न, **भुजङ्गमानाम्**=सर्पाणाम्, भोगः शरीरं, फणा वा, मुनीनां विषयसेवननं न। **कपीनाम्**=मरकटानाम्, **श्रीफलाभिलाषः**=श्रीफलेषु बिल्वफलेषु अभिलाषः इच्छा, मुनीनां लक्ष्मीरूपे फलेऽभिलाषो न। **मूलानाम्**=वृक्षादिकन्दानाम्, **अधोगतिः**=भूतलाधोदेशगमनम्, न तु मुनीनाम् अधोगतिः।

टिप्पणी–मलिनता–कालिमा, कलङ्क। मलिन+तल्+टाप्। **मेखला**–आश्रम में ब्रह्मचर्यव्रत में मूंज आदि की बनी हुई पगड़ी पहनी जाती थी, ईर्ष्या के कारण कलह छिड़ने पर एक दूसरे को मारने के लिए तलवार की मूंठ कमर में नहीं लटकाई जाती थी, या जंजीर से एक दूसरे को नहीं बाँधा जाता था। **कृकवाकु**–मुर्गा 'कृकवाकुस्ताम्रचूडः कुक्कुटश्चरणायुधः' इत्यमरः। **वसु**-देवविशेष, धनसम्पत्ति। **क्रतुदीक्षा**–यज्ञ करने से पूर्व आवश्यक योग्यता प्राप्त करने के लिए जो आवश्यक कर्मसंपादन होता है उसे यज्ञदीक्षा कहते हैं। आश्रम में मुनि लोगों का मुण्डन इसी दीक्षा के कारण होता था, मृत्यु के द्वारा शिशुओं

का विनाश नहीं होता था। पुराण–व्यास रचित वायु पुराण। पुराण अठारह हैं, इनमें वायुपुराण और विष्णुपुराण को आज के इतिहासकार भी बहुत सम्मान देते हैं। द्विज–दाँत, ब्राह्मण। 'दन्तविप्राण्डजा द्विजाः' इत्यमरः। भूति =राख, सम्पत्ति या ऐश्वर्य। भोग–सर्प का शरीर या फण, विषय का उपभोग। 'भोगः सुखे स्त्र्यादिभृतावहेश्च फणकाययोः' तथा 'अहेः शरीरं भोगः स्यात्' इति कोषः। अधोगतिः–नीचे जाना, अधःपतन। 'महाभारते से अधोगतिः' तक परिसंख्या अलङ्कार है।

तस्य चैवंविधस्य मध्यभागमलंकुर्वाणस्य, अलक्तकालोहितपल्लवस्य, मुनिजनालम्बितकृष्णाजिनजलकरकसनाथशाखस्य, तापसकुमारिकाभिरालवालदत्तपीतपिष्टपञ्चाङ्गुलस्य, हरिणशिशुभिः पीयमानालवालसलिलस्य, मुनिकुमारकाबद्धकुशचीरदाम्नो हरितगोमयोपलेपनविविक्ततलस्य, तत्क्षणकृतकुसुमोपहाररमणीयस्य, नातिमहतः परिमण्डलतया विस्तीर्णविकाशस्य रक्ताशोकतरोरवश्छायायामुपविष्टम्, उग्रतपोभिर्भुवनमिव सागरैः, कनकगिरिमिव कुलपर्वतैः, क्रतुमिव वैतानवह्निभिः, कल्पन्तदिवसमिव रविभिः, कालमिव कल्पैः, समन्तान्महर्षिभिः परिवृतम्····· ।

हिन्दी-अनुवाद–पूर्वोक्त रीति से वर्णित उस (आश्रम) के मध्यभाग वाले वर्तुलाकार प्रदेश को अलंकृत करने वाले, अलक्तक (महावर) की भाँति रक्तवर्णी पल्लवों वाले, मुनिजनों द्वारा लटकाए गए काले मृगचर्मों तथा जलकरकों (कमण्डलुओं) से संवलित शाखाओं वाले, तापसकुमारियों द्वारा मूलभागों पर लगाये गये हरिद्राचूर्ण के अनेक हस्तबिम्बों वाले, मृगशावकों द्वारा पिये जाते हुए थाल्हे के जल वाले, मुनिकुमारों द्वारा बाँधे गये कुशनिर्मित चीर (वस्त्र) की रस्सियों वाले, गीले गोबर के उपलेपन से पवित्र अधस्तल वाले, तत्काल चढ़ाए गए पुष्पोपहार के कारण रमणीय तथा अत्यन्त विशाल न होने पर (भी) चारों ओर से मण्डलाकार होने के कारण विस्तृत अभ्यन्तर प्रदेश (नीचे की जगह) वाले रक्ताशोक वृक्ष की अधोवर्तिनी छाया में बैठे हुए भगवान् जाबालि

को (मैंने) देखा—जो कि सागरों से (परिवृत) लोक के समान कुलपर्वतों अर्थात् प्रत्यन्त भूधरों से (परिवृत) कनकगिरि-सुमेरु के समान वैतान (दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य तथा आहवनीय) अग्नियों से (परिवृत) यज्ञ के समान, द्वादश आदित्यों से (परिवृत) प्रलयकालीन दिन के समान तथा कल्पों अथवा कालखण्डों से (परिवृत) अखण्डकालावधि के समान चारों ओर से अत्यन्त तीक्ष्ण तपश्चर्या वाले महर्षियों से घिरे हुए थे।

संस्कृत-व्याख्या—**एवंविधस्य**=पूर्वोक्तप्रकारस्य, **तस्य**=आश्रमस्य, **मध्यभागम्**=मध्यप्रदेशम्, **अलंकुर्वाणस्य**=शोभमानस्य, **अलक्तकालोहितपल्लवस्य**=अलक्तकवत् लाक्षावत् आलोहिताः ईषद्रक्ताः पल्लवाः किसलयानि यस्य तस्य, **मुनिजनालम्बितकृष्णाजिनजलकरकसनाथशाखस्य**=मुनिजनैः तपस्विलोकैः आलम्बितानि स्थापितानि यानि कृष्णाजिनानि कृष्णमृगचर्माणि जलकरकाः सलिलकमण्डलवः च तैः सनाथाः समुपेताः शाखाः स्कन्धाः यस्य तस्य, **तापसकुमारिकाभिः**=तपस्विकन्याभिः, **आलवालदत्तपीतपिष्टपञ्चांगुलस्य**=आलवाले आवापे दत्तानि अङ्कितानि पीतपिष्टस्य हरिद्रारूपपटवासचूर्णस्य पञ्चाङ्गुलानि हस्तबिम्बानि यस्य तस्य, **हरिणशिशुभिः**=मृगपोतैः, **पीयमानालवालसलिलस्य**=पीयमानं धीयमानं आलवालस्य आवापस्य सलिलं जलं यस्य तस्य, **मुनिकुमारकाबद्धकुशचीरदाम्नः**=मुनिकुमारकैः तपस्विबालकैः आबद्धं परिवेष्टितं कुशचीराणां दर्भच्छन्नपत्राणां दाम रज्जुः यस्मिन् तस्य, **हरितगोमयोपलेपनविविक्ततलस्य**=हरितगोमयेन नवीनगोपुरीषेण यत् उपलेपनं शोधनं तेन विविक्तं पूतं तलम् अधोभागः यस्य तस्य, **तत्क्षणकृतकुसुमोपहाररमणीयस्य**=तत्क्षणं तत्कालं कृतः यः कुसुमोपहारः पुष्पविसर्जनं रमणीयस्य सुन्दरस्य, **नातिमहतः**=नातिविशालस्य, तथापि **परिमण्डलतया**=परिगतं मण्डलं परिधिः यस्य सः तस्य भावः तत्ता तया गोलाकारतया, **विस्तीर्णावकाशाय**=विस्तीर्णः अतिविस्तृतः अवकाशः अभ्यन्तरप्रदेशः यस्य तस्य, **रक्ताशोकतरोः**=अरुणाशोकवृक्षस्य, **अधश्छायायाम्**=अधस्तनेऽनातपे, **उपविष्टम्**=आसीनम्, **सागरैः**=समुद्रैः, **भुवनम् इव**=जगत् इव, **कुलपर्वतैः**=कुलाचलैः, **कनकगिरिम् इव**=मेरुपर्वतम् इव, **वैतानिकवह्निभिः**=याज्ञिकाग्निभिः, **क्रतुम् इव**=यज्ञम् इव, **रविभिः**=सूर्यैः, **कल्पान्तदिवसम् इव**

=प्रलयदिनम् इव, कल्पैः=चतुर्दशमन्वन्तरात्मकैः सहस्रयुगैः, कालम् इव= समयम् इव, उग्रतपोभिः=उग्रं तीव्रं तपःतपस्या येषां तैः तादृशैः,महर्षिभिः= तपस्विभिः, समन्तात्=परितः, परिवृतम्=परिवेष्टितम् ।

टिप्पणी–अलङ्कुर्वाणस्य–अलं+कृ+शानच्, ष० ए० व० । अलक्तक– लाक्षारस, लाख । जलकरक–कमण्डलु, करवा । 'करकस्तु पुमान् पक्षिविशेषे दाडिमेऽपि च । द्वयोर्मेघोपलेन स्त्रीकरङ्के च कमण्डलौ' 'इति मेदिनी । पीतपिष्ट- पञ्चांगुल–पीली पीसी हुई हल्दी की लेप बनाकर उसके थापे वृक्ष के थालहे पर लगा दिये गये थे । पानी के दोष से बचने के लिये, दैवी प्रकोप की शान्ति के लिये आज भी कुमारिकाएँ हल्दी के या गोबर के थापों को घरों में लगाती हैं । पीयमान—पा+यक्+शानच् । विविक्त—शुद्ध, पवित्र । कुलपर्वतैः–सातकुला- चल महेन्द्र, मलय, सह्य, शक्तिमान्, ऋक्षवान्, विन्ध्य एवं पारियात्रिक । कल्पान्त–प्रलय, 'संवर्तः प्रलयः कल्पः क्षयः कल्पान्त इत्यपि' इत्यमरः । परिवृतम्–परि+वृ+क्त । यहाँ मालोपमा अलंकार है ।

···उग्रशापभीतयेव कम्पितदेहया प्रणयिन्येव विहितकेशग्रहया क्रुद्धयेव कृतभ्रूभङ्गया मत्तयेवाकुलितगमनया प्रसाधितयेव प्रकटित- तिलकया जरया गृहीतव्रतयेव भस्मधवलया धवलीकृतविग्रहम्, आ- यामिनीभिः पलितपाण्डुराभिस्तपसा विजित्य मुनिजनमखिलं धर्म- पताकाभिरिवोच्छ्रिताभिरमरलोकमारोढुं पुण्यरज्जुभिरिवोपसंगृही- ताभिरतिदूरप्रवृद्धस्य पुण्यतरोः कुसुममञ्जरीभिरिवोद्गताभिर्जटा- भिरुपशोभितम्, उपरचितभस्मत्रिपुण्ड्रकेण तिर्यक्प्रवृत्तत्रिपथगास्रोत- स्त्रयेण हिमगिरिशिलातलेनेव ललाटफलकेनोपेतम्,····

हिन्दी-अनुवाद–जो कि मानो (महर्षि जाबालि के) दारुण शाप से डरी हुई अतएव देह कँपानेवाली, मानो (महर्षि जाबालि की) प्रणयिनी होने के कारण (रतिकलहवश) केश पकड़ने वाली अर्थात् महर्षि के केशों को श्वेत बना देनेवाली, मानो क्रोधाविष्ट होने के कारण टेढ़ी चितवन वाली अर्थात्

महर्षि की भौंहों को विकृत कर देने वाली, मानो उन्मादिनी होने के कारण लड़खड़ा कर चलनेवाली अर्थात् महर्षि को स्खलद्गति बना देनेवाली मानो सजी-धजी दुलहिन होने के कारण (अपना) तिलक अर्थात् बिंदिया दिखाने वाली अर्थात् महर्षि की देह में काले तिलों को उत्पन्न कर देने वाली तथा मानो व्रतधारिणी होने के कारण भस्म मलने से धवल बनी हुई अर्थात् भस्म के समान धवल वृद्धावस्था से शुभ्रीकृत शरीर वाले थे। जो (महर्षि जाबालि) विस्तार युक्त, वार्द्धक्यजनित शुक्लता के कारण पाण्डुर (श्वेत) वर्णवाली, समस्त मुनिजनों को (अपनी) तपोराशियों से जीतकर (सौभाग्यप्रदर्शनार्थं) ऊपर फहराई गई धर्मपताकाओं-सी प्रतीत होने वाली स्वर्गारोहण के निमित्त बटोरी गयी पुण्यरज्जुओं सी प्रतीत होने वाली तथा बहुत दूर तक बढ़े हुए तपश्चरण रूपी वृक्ष की—प्रादुर्भूत हुई—पुष्पवल्लरियों सी प्रतीत होने वाली जटाओं से शोभायमान थे। जो कि तिरछे (परस्पर पृथक्) होकर बहने वाले त्रिपथ गङ्गा के (ऊपर नीचे तथा समानान्तर (स्थित) तीन स्रोतों से युक्त हिमगिरि का शिलातल प्रतीत होने वाले भस्मनिर्मित त्रिरेखामय तिलक वाले भाल प्रदेश से संयुक्त थे।

संस्कृत-व्याख्या—**उग्रशापभीतया इव**=उग्रेण कठिनेन शापेन अभिसम्पातेन भीता त्रस्ता तया, नायिकया इति शेषः, इव, **कम्पितदेहया**=कम्पितः चलितः देहः शरीरं यया तया, नायिकापक्षे कम्पितः देहः यस्याः सा तया, **प्रणयिन्या इव** =प्रेमवत्या इव, **विहितकेशग्रहया**=विहितः केशानां कचानां ग्रहः धवैत्यापादानेन ग्रहणं यया तया नायिकापक्षे विहितः केशग्रहः रतिकाले कचग्रहणं यया तया, **क्रुद्धया**=कुपितया इव, **कृतभ्रूभङ्गया**=कृतः भ्रुवोः भ्रूलतयोः भङ्गः शैथिल्यं यया तया, नायिकापक्षे-कृतः भ्रूभङ्गः भ्रुकुटीकौटिल्यं यया तया, **मत्तया इव**= उन्मादिन्या इव **आकुलितगमनया**=आकुलितम् उच्चावचीकृतं गमनं गतिः यया तया नायिकापक्षे आकुलितं मदपानेन स्खलितं गमनं यस्याः सा तया, **प्रसाधितया इव**=अलङ्कृतया इव, **प्रकटितिलकया**=प्रकटिताः प्रकाशिताः तिलकाः श्यामवर्णचिह्नानि यया तया, नायिकापक्षे प्रकटितं प्रदर्शितं तिलकं भालबिन्दुः यया तया इव, **गृहीतव्रतया इव**=गृहीतं धृतं व्रतं नियमः यया तया इव, भस्म-

धवलया=भस्म भूतिः तद्वत् धवलतया श्वेतया नायिकापक्षे भस्मना अङ्गलिप्तेन भसितेन धवलया धूसरया, जरया=वृद्धावस्थया, धवलीकृतविग्रहम्=अधवलः धवलः कृत इति धवलीकृतः शुभ्रीकृतः विग्रहः देहः यस्य ·म्, आयामिनीभिः=दीर्घाभिः, पलितपाण्डुराभि=पलितं जरया शौक्ल्यं तेन पाण्डुराभिः श्वेताभिः, अखिलम्=समस्तम्, मुनिजनम्=तपस्विगणम्, तपसा=तपश्चर्यया, विजित्य=जित्वा, उच्छ्रिताभिः=ऊर्ध्वीकृताभिः, धर्मपताकाभिःइव=पुण्यकेतुभिः इव, अमरलोकम्=स्वर्गलोकम्, आरोढुम्=आरोहणं कर्तुम्, उपसंगृहीताभिः=अङ्गीकृताभिः, पुण्यरज्जुभिः इव=पवित्रप्रग्रहैः इव, अतिदूरप्रवृद्धस्य=अत्यधिकम् एधितस्य, पुण्यतरोः=पुण्यम् सुकृतम् एव तरुः वृक्षः तस्य धर्मवृक्षस्य, उद्गताभिः=प्रादुर्भूताभिः,कुसुममञ्जरीभिः इव=पुष्पवल्लरीभिःइव, जटाभिः=सटाभिः, उपशोभितम्=विभूषितम्, उपरचितभस्मत्रिपुण्ड्रकेण=उपरचितं विहितं भस्मनः भूतेः त्रिपुण्ड्रकं तिर्यग्रेखातिलकं यत्र तेन, अतएवात्रोत्प्रेक्षते-तिर्यक्प्रवृत्तत्रिपथगास्रोतस्त्रयेण=तिर्यक् कुटिलं प्रवृत्तं प्रचलितं त्रिपगायाः गङ्गायाः स्रोतस्त्रयं त्रिप्रवाहः यत्र तादृशेन, हिमगिरिशिलातलेन इव=हिमगिरेः हिमाचलस्य शिलातलं पाषाणपटलं तेन इव, ललाटफलकेन=भालपट्टेन, उपेतम्=संयुक्तम् ।

टिप्पणी-उग्रशाप-क्रोध में कहा गया कठोर वचन । तिलक-वृद्धावस्था में पड़ने वाले शरीर के काले मस्से, मस्तक की बन्दी । पलित-बुढ़ापे के कारण शरीर के बालों में आने वाली सफेदी 'पलितं जरया शौक्ल्यम्' इत्यमरः । विजित्य-वि+जि+क्त्वा—ल्यप् । आरोढुं-आ+रुह्+तुमुन् । उच्छ्रिता-ऊपर को उठाई गयी, फहराई गयी पताका । त्रिपथगा=तीन मार्गों से चलने वाली गङ्गा, आकाशगङ्गा व पातालगङ्गा रूप में गङ्गा के बहने के तीन मार्ग हैं । प्रस्तुत प्रकरण में हिमालय पर ही उनके तीन वक्र स्रोतों के बहने की उत्प्रेक्षा की गई है जो ललाट का उपमान है । यहाँ पूर्णोपमा, उत्प्रेक्षा एवं रूपक अलंकार हैं ।

…अधोमुखचन्द्रकलाकाराभ्यामवलम्बितबलिशिथिलाभ्यां भ्रूल-

ताभ्यामवष्टभ्यमानदृष्टिम्, अनवरतमन्त्राभ्यासविवृताधरपुटतया निष्पतद्भिरतिशुचिभिः सत्यप्ररोहैरिव स्वच्छेन्द्रियवृत्तिभिरिव विद्यागुणैरिव करुणारसप्रवाहैरिव दशनमयूखैर्धवलितपुरोभागम्, उद्वमदमलाङ्गाप्रवाहमिव जह्नुम्, अनवरतसोमोद्गारसुगन्धिनि श्वासावकृष्टैर्मूर्तिमद्भिः शापाक्षरैरिव सदा मुखभागसंहितैः परिस्फुरद्भिरलिभिरविरहितम्, अतिकृशतया निम्नतरगण्डगर्तम्, उन्नततरहनुघोणम् आकरालतारकम्, अवशीर्यमाणविरलनयनपक्ष्ममालम्, उद्गतदीर्घरोमरुद्धश्रवणविवरम्, आनाभिलम्बितकूर्चकलापमाननमादधानम्,...... ।

हिन्दी-अनुवाद–जो अधोमुखी चन्द्रकलाओं के आकार के समान आकार वाली तथा (वार्द्धक्य के कारण) आश्रित त्रिवलियों (झुर्रियों) के कारण शिथिलीभूत भ्रूलताओं से अवरुद्ध दृष्टि वाले थे, जो निरन्तर मन्त्राक्षरों का अभ्यास (पौनः पुन्येन उच्चारण) करने से खुले हुए दोनों होठ वाले होने के कारण बाहर निकलते हुए अत्यन्त परिपूत सत्याङ्कुरों के समान निर्मल इन्द्रिय प्रवृत्तियों के समान (दयादाक्षिण्यादि) विद्या गुणों के समान तथा करुणारस की धाराओं के समान दन्तकिरणों के शुभ्रीकृत सम्मुखभाग वाले अतएव निर्मल गंगाधारा का उद्वमन करने वाले (महाराज) जह्नु के समान थे, जो निरन्तर (यज्ञों में पिये गये) सोमरस के उद्गारों (डकारों) से सुगन्धित निःश्वासों से आकर्षित किये गये, मूर्तिमान् शाप के अक्षरों के समान (अर्थात् कृष्णवर्ण) तथा सर्वदा मुखाग्रभाग से सटकर सञ्चरण करनेवाले मधुकरों से संवलित-अत्यन्त दुबले पतले होने के कारण बहुत गहरे गाल के गड्ढों वाले अत्यन्त ऊँची दाढ़ी तथा नासिका वाले-कुछ टेढ़ी अथवा (भयावह) नेत्रकनीनिकाओं वाले (वार्द्धक्यवश) झड़ती हुई तथा विरलीभूत नेत्रों की बरौनियों के समूहों वाले उगे हुए लम्बे रोओं (बालों) से ढके हुए कर्णविवरों वाले तथा नाभिपर्यन्त लटकते हुए दाढ़ियों के समूह वाले मुखमण्डल को धारण कर रहे थे ।

संस्कृत-व्याख्या–**अधोमुखचन्द्रकलाकाराभ्याम्**=अधोमुखी निम्नाश्रिता या चन्द्रकला सुधांशुलेखा तस्याः आकारः इव आकारः स्वरूपं ययोः ताभ्याम्, **अवलम्बितवलिशिथिलाभ्याम्**=अवलम्बिता आश्रिता या बलिः शिथिलचर्मरेखा तया शिथिलाभ्याम् अधःश्लथाभ्याम्, **भ्रूलताभ्याम्**=कोमलभ्रूभ्याम्, **अवष्टभ्यमानदृष्टिम्**=अवष्टभ्यमाना अवलम्ब्यमाना दृष्टिः दर्शनसामर्थ्यं यस्य तं तादृशम्, **अनवरतमन्त्राभ्यासविवृताधरपुटतया**=अनवरतं सततं यः मन्त्राभ्यासः मन्त्रजपः तेन विवृतं व्यात्तम् अधरपुटम् ओष्ठसंपुटं यस्य तस्य भावः तत्ता तया, **निष्पतद्भिः**=निर्गच्छद्भिः, **अतिशुचिभिः**=अत्यन्तस्वच्छैः, **सत्यप्ररोहैः इव**=सत्यस्य तथ्यस्य प्ररोहाः अंकुराः तैः इव, **स्वच्छेन्द्रियवृत्तिभिः इव**=स्वच्छाः या इंद्रियवृत्तयः इन्द्रियव्यापाराः ताभिः इव, **विद्यागुणैः इव**=विद्यानाम् आन्वीक्षिक्यादीनां गुणैः विनयादिभिः इव, **करुणारसप्रवाहैः इव**=करुणा एव रसः निर्यासः तस्य प्रवाहैः इव स्रोतोभिः इव, **दशनमयूखैः**=दशनानां दन्तानां मयूखैः रश्मिभिः, **धवलितपुरोभागम्**=धवलितः श्वेतीकृतः पुरोभागः अग्रप्रदेशः येन तं तादृशम्, अतएव **उद्वमदमलगंगाप्रवाहम्**=उद्वमन् उद्गच्छन् अमलः स्वच्छः गङ्गाप्रवाहः भागीरथीस्रोतः यस्मात् तं तादृशम्, **जह्नुम् इव**=एतदाख्यं मुनिम् इव,**अनवरतसोमोद्गारसुगन्धिनिश्वासावकृष्टैः**=अनवरतं सततं यः सोमोद्गारः सोमपानेन प्रकटितः वायुजनितशब्दः तेन सुगन्धिः सौरभः यः निश्वासः वायुनिर्गमः तेन अवकृष्टैः आकृष्टैः, **मूर्तिमद्भिः**=शरीरधारिभिः, **शापाक्षरैः इव**=शापवर्णैः इव, **सदा**=निरन्तरम्, **मुखभागसंनिहितैः**=मुखभागे लपनप्रदेशे संनिहितैः पार्श्वस्थैः, **सद्भिः**, **स्फुरद्भिः**=सञ्चरद्भिः, **अलिभिः**=मधुकरैः, **अविरहितम्**=सश्लिष्टम्, **अतिकृशतया**=अत्यन्तक्षीणतया, **निम्नतरगण्डगर्तम्**=निम्नतरौ गम्भीरतरौ गण्डयोः कपोलयोः गर्तौ अवटीभूतौ यत्र तत् तादृशम्, **उन्नततरहनुघोणम्**=उन्नततरे उच्चतरे हनुः चिबुकं घोणा नासिका च यत्र तत् तादृशम्, **आकरालतारकम्**=आ ईषत् कराले वक्रे तारके कनीनिके यत्र तत् तादृशम्, **अवशीर्यमाणविरलनयनपक्ष्ममालम्**=अवशीर्यमाणे क्षीयमाणे अतएव विरले असान्द्रे नयनयोः नेत्रयोः पक्ष्ममाले लोमराजी यत्र तत् तादृशम्,

उद्गतदीर्घरोमरुद्धश्रवणविवरम्=उद्गतानि उत्पन्नानि यानि दीर्घरोमाणि विस्तृतलोमानि तैः रुद्धे आवृते श्रवणयोः कर्णयोः विवरे छिद्रे यत्र तत् तादृशम्, आनाभिलम्बितकूर्चकलापम्=आनाभेः नाभिपर्यन्तं लम्बितः वेल्लितः कूर्चकलापः श्मश्रुसमूहः यत्र तत् तादृशम्, आननम्=मुखम्, आदधानम्=धारयन्तम् ।

टिप्पणी–वलि–शिथिलचर्म, 'वलिर्दैत्यप्रभेदे च करचामरदण्डयोः, । उपहारे पुमान् स्त्री तु जरया श्लथचर्मणि' ।। इति मेदिनी । अधरपुट–ओष्ठपुट, दोनों होठ । सत्यप्ररोहः—सत्य के अंकुर । सत्य को श्वेत मानकर दन्त-किरणों के लिए सत्य के अंकुरों की उत्प्रेक्षा की गई है । इसी प्रकार स्वच्छ इन्द्रिय-वृत्तियों और करुण रस के प्रवाह को श्वेत मानकर उनकी उत्प्रेक्षा की गई है । उद्वमद्···जह्नुम्–मुख से निकलती हुई सफेद किरणों को गङ्गा मानकर जाबालि की जह्नु ऋषि से उपमा दी गई है । भगीरथ की प्रार्थना पर शिव की जटाओं में आती हुई गंगा जब जह्नु ऋषि की कुटिया को बहाने लगीं जह्नु ने उसका पान कर लिया । पुनः भगीरथ के अनुनय विनय पर जह्नु ने गंगा को बाहर निकाला, उस समय की उपमा यहाँ जाबालि के लिए दी गई है । आदधानम्–आ+धा+शानच् । शापाक्षरैरिव–यहाँ गुणोत्प्रेक्षालङ्कार है । इसके अतिरिक्त लुप्तोपमा, काव्यलिङ्ग, उपमा आदि अलङ्कार हैं ।

—अतिचपलानामिन्द्रियाश्वानामन्तःसंयमनरज्जुभिरिवाततताभिः कण्ठनाडीभिर्निरन्तरावनद्धकन्धरम्, समुन्नतविरलास्थिपञ्जरम्, अंसावलम्बितधवलयज्ञोपवीतम्, अनिलवशजनिततनुतरङ्गभङ्गमुत्प्लवमानमृणालमिव मन्दाकिनीप्रवाहमकलुषमङ्गमुद्वहन्तम्, अमलस्फटिकसकलघटितमक्षवलयमत्युज्ज्वलस्थूलमुक्ताफलग्रथितं सरस्वतीहारमिव चलदंगुलिविवरगतमावर्तयन्तम्, अनवरतभ्रमितताराकाचक्रमपरमिव ध्रुवम्···,

हिन्दी-अनुवाद—जो कि अत्यन्त चञ्चल इन्द्रिय रूपी अश्वों को भीतर ही भीतर संयमित करने के लिए लगामों की भाँति फैली हुई गले की नसों से निरन्तर जकड़े हुए ग्रीवा प्रदेश वाले उभरे तथा छितराए हुए अस्थिपञ्जरों वाले-कन्धे पर लटकते हुये धवल यज्ञोपवीत (जनेऊ) वाले अतएव हवा के प्रभाव से उत्पन्न सूक्ष्म एवं टटली लहरों वाले तथा तैरते हुये नूतन श्वेत-कमल युक्त मन्दाकिनी के जलप्रवाह की भाँति निष्कलङ्क शरीर को धारण कर रहे थे। जो कि अत्यन्त धवल तथा बृहदाकार मोतियों के मनकों से गूँथे गये देवी सरस्वती के हार के समान स्वच्छ स्फटिक शिलाखण्डों से निर्मित तथा (जपविधि में) घूमती हुई उंगलियों के मध्यवर्ती विवरस्थान में विद्यमान जपमाला को फेरते हुए अतएव निरन्तर परिक्रमा करने वाले नक्षत्रमण्डल से युक्त द्वितीय ध्रुव (नक्षत्रविशेष) सरीखे थे।

संस्कृत-व्याख्या—अतिचपलानाम्=अतीवचञ्चलानाम्, इन्द्रियाश्वानाम्=इन्द्रियाणि एव अश्वा: घोटका: तेषाम्, अन्त:संयमनरज्जुभि: इव=अन्त: मध्ये संयमनाय बन्धनाय रज्जुभि: इव, आतताभि:=विस्तृताभि:, कण्ठनाडीभि:=गलशिराभि:, निरन्तरावनद्धकन्धरम्=निरन्तरं सान्द्रं यथा स्यात् तथा अवनद्धा बद्धा कन्धरा ग्रीवा यस्मिन् तत्, समुन्नतविरलास्थिपञ्जरम्=समुन्नतम् ऊर्ध्वंगतं विरलम् अनिबिडम् अस्थिपञ्जरं कङ्कालं यस्य तत्, अंसावलम्बितधवलयज्ञोपवीतम्=अंसे वामस्कन्धे अवलम्बितं लम्बमानं धवलं शुभ्रं यज्ञोपवीतं यज्ञसूत्रं यस्मिन् तत् तादृशम्, अतएव अनिलवशजनिततनुतरङ्गभङ्गम्=अनिलवशेन वायुप्रभावेण जनिता: तनव: लघव: तरङ्गभङ्गा: कल्लोलखण्डा: यत्र तत् तादृशम्, उत्प्लवमानमृणालम्=उत्प्लवमानं संतरत् मृणालं कमलनालं यत्र तत् तादृशम्, मन्दाकिनीप्रवाहम् इव=गङ्गास्रोत: इव, अकलुषम्=निर्मलम् निष्पापम्, अङ्गम्=शरीरम्, उद्वहन्तम्=धारयन्तम्, अत्युज्ज्वलस्थूलमुक्ताफलग्रथितम्=अत्युज्ज्वलानि अतिनिर्मलानि स्थूलानि पृथुलानि यानिमुक्ताफलानि मौक्तिकानि तै: ग्रथितं गुम्फितम्, सरस्वतीहारम् इव=सरस्वत्या: भारत्या: हार: मुक्तावली तम् इव, चलदङ्गुलिविवरगतम्=चलन्तीनां स्पन्द-

मानानाम् अङ्गुलीनां करावयवानां विवरगतं छिद्रस्थितम्, **अमलस्फटिकशकलघटितम्**=अमलानि स्वच्छानि यानि स्फटिकशकलानि स्फटिकखण्डानि तैः घटितं रचितम्, **अक्षवलयम्**=अक्षमालाम्, **आवर्तयन्तम्**=भ्रामयन्तम्, अतएव **अनवरतभ्रमिततारकाचक्रम्**=अनवरत सततं भ्रमितं पर्यटितं तारकाचक्रं नक्षत्र मण्डलं येन तम्, **अपरम्**=द्वितीयम्, **ध्रुवम् इव**=उत्तानपादजम् इव ।

टिप्पणी–अवरुद्ध–कसकर बँधी हुई । **उत्प्लवमानमृणालम्**–तैरता हुआ कमलनाल । उभरते हुये अस्थिपञ्जर पड़े हुए यज्ञोपवीत के लिये वायुवंश उत्पन्न तरङ्गों वाले गङ्गाप्रवाह पर तैरते मृणाल की उपमा जहां दृश्यसाम्य की कुशलता को प्रस्तुत करती है, वहीं शरीर व यज्ञोपवीत की पावनता व स्वच्छता का भी स्पष्ट संकेत देती है । **शकल**–टुकड़ा, माला के दाने बनाने के लिये किये गये स्फटिकमणि के छोटे-छोटे टुकड़े । **अनवरत···ध्रुवम्**–उत्तर दिशा में विद्यमान ध्रुव प्रवहपवन के द्वारा सारे नक्षत्र मण्डल को घुमाता है। कहा भी गया है–'भयकृद्ध्रुवयोर्बद्ध माक्षिप्तप्रवहानिलैः । पर्येत्यजस्रं तन्नद्धा ग्रहकक्षा यथाक्रमम् ।' **"अमल ध्रुवम्"** में उपमा, काव्यलिङ्ग तथा द्रव्योत्प्रेक्षा की संसृष्टि है ।

···उन्नमता शिराजालकेन जरत्कल्पतरुमिव परिणतलतासंचयेन निरन्तरनिचितम्, अमलेन चन्द्रांशुभिरिवामृतफेनैरिव गुणसन्तान तन्तुभिरिव निर्मितेन मानससरोजलक्षालनशुचिना दुकूलवल्कलेन द्वितीयेनेव जराजालकेन संछादितम्, आसन्नवर्तिना मन्दाकिनीसलिलपूर्णेन त्रिदण्डोपविष्टेन स्फाटिककमण्डलुना विकचपुण्डरीकराशिमिव राजहंसेनोपशोभमानम्, स्थैर्येणाचलानां गाम्भीर्येण सागराणां तेजसा सवितुः प्रशमेन तुषाररश्मेर्निर्मलतयाम्बरतलस्य संविभागमिव कुर्वाणम्,···

हिन्दी-अनुवाद–जो परिपक्व लताजाल से निरन्तर जकड़े हुए प्राचीन कल्पद्रुम की भाँति ऊपर की ओर उभरी हुयी धमनियों के समूह से निरन्तर

लपूर्णेन=गंगाजलसंभृतेन, **त्रिदण्डोपविष्टेन**=त्रयो दण्डाः सन्ति अस्येति त्रिदण्डः–त्रिपादिका तत्र उपविष्टेन स्थितेन, **स्फाटिककमण्डलुना**=स्फटिकस्य अयं स्फाटिकः स चासौ कमण्डलुः तेन–स्फटिकमणिमयकुण्डया उपशोभमानम्, **स्थैर्येण**=स्थिरतया, **अचलानाम्**=गिरीणाम्, **गाम्भीर्येण**=गम्भीरतया, **सागराणाम्**=समुद्राणाम्, **तेजसा**=प्रतापेन, **सवितुः**=दिनकरस्य, **प्रशमेन**=शान्त्या, **तुषाररश्मेः**=तुषारः हिमं तद्वत् रश्मयः किरणाः यस्य तस्य हिमांशोः, **निर्मलतया**=स्वच्छतया, **अम्बरतलस्य**=गगनतलस्य, **संविभागम्**=सविभाजनं, **कुर्वाणाम्**=विदधानम् ।

टिप्पणी–निचित–अभिव्याप्त । **दुकूलवल्कल**–रेशमी वस्त्र के समान महीन छाल का वस्त्र । **जराजालक**–बुढ़ापे का समूह । **त्रिदण्ड**–तीन डण्डों को ऊपर से बांधकर खड़ी की गयी तिपाही जिस पर कमण्डलु रखा था । **उपशोभमानम्**–उप+शुभ्+शानच् । **संविभागमिव**–मानों वितरण-सा,दान-सा । 'पुण्डरीकराशिमिव, में उपमालङ्कार है । 'कुर्वाणमिव में क्रियोत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

वैनतेयमिव स्वप्रभावोपात्तद्विजाधिपत्यम्, कमलासनमिवाश्रम-गुरुम्,जरच्चन्दनतरुमिव भुजङ्गनिर्मोकधवलजटाकुलम्, प्रशस्तवा-रणपतिमिव प्रलम्बकर्णवालम्,बृहस्पतिमिवाजन्मसंवर्धितकचम्,दिव-समिवोद्यदर्कबिम्बभास्वरमुखम्, शरत्कालमिव क्षीणवर्षम्, शान्तनु-मिव प्रियसत्यव्रतम्, अम्बिकाकरतलमिव रुद्राक्षग्रहणनिपुणम्,शिशि-रसमयसूर्यमिव कृतोत्तरासङ्गम्, वडवानलमिव संततपयोभक्षम्, शून्यनगरमिव दीनानाथविपन्नशरणम्, पशुपतिमिव भस्मपाण्डुरोमा-श्लिष्टशरीरं भगवन्तं जाबालिमपश्यम् ।

हिन्दी अनुवाद–जो अपने प्रभाव (पराक्रम) से समस्त 'द्विजों' अर्थात् पक्षियों का स्वामित्व प्राप्त करने वाले विनतानन्दन गरुड की भाँति अपने (तपः) प्रभाव से समस्त ब्राह्मणों का प्रभुत्व प्राप्त कर चुके थे । जो ब्रह्मचर्य गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ एवं संन्यास वर्णाश्रमों के प्रवर्तक कमलासन- ब्रह्मा की

भाँति आश्रम (तपोवन) के गुरु थे । जो सर्पकञ्चुकों के कारण धवलभूत मूल-भागों से परिव्याप्त पुराने चन्दनतरु की भाँति सर्पकञ्चुकी जैसी श्वेत जटाओं से संकुल थे । जो अत्यधिक लम्बे कानों तथा (पूँछ के) बालों वाले सर्वलक्ष-णोपेत गजराज की भाँति लम्बे कर्णकेशों वाले थे । जो जन्मकाल से ही (अपने पुत्र) कुमार कच का संवर्धन अर्थात् पालन-पोषण करने वाले, देवगुरु बृहस्पति की भाँति जन्मकाल से ही केश बढ़ाये हुये थे । जो उदीयमान सूर्यमण्डल के कारण देदीप्यमान मुखभाग (अर्थात् प्रभातवेला) वाले दिन की भाँति उदीय-मान रविबिम्ब के समान कान्तिमान् मुखवाले थे । जो स्वल्प जलवृष्टि वाले शरत्काल की भाँति बीते हुए वर्षों वाले अर्थात् अत्यन्त वृद्ध थे । जो वल्लभ-भूत (मनपसन्द) सत्यव्रत-भीष्म वाले (उनके पिता महाराज) शान्तुनु की भाँति सत्यरूपी व्रत के पक्षधर थे । जो (रतिवेला में अपरिहार्य चन्द्रकला के कारण) भगवान् शंकर के नेत्र उपहित कर देने में चतुर देवी पार्वती के करतल की भाँति रुद्राक्षमाला ग्रहण करने (फेरने) में प्रवीण थे । जो उत्तर दिशा का 'आसङ्ग' (आश्रय) लेने वाले अर्थात् उत्तरायणभूत शीतकालीन सूर्य की भाँति उत्तरीय वस्त्र धारण किये थे । जो निरन्तर (सागर) जल का भक्षण करने वाले वाडवाग्नि की भाँति निरन्तर दुग्धाहारी थे । जो दीन (शोभाहीन) अनाथ स्वामिहीन एवं विपन्न (विपत्तिग्रस्त) शरणों (घरों) वाले सूनसान उजड़े नगर की भाँति दुःखियों, अनाथों एवं (व्याधि आदि से) विपत्तिग्रस्तों के परित्राण हेतु थे । जो भस्म (मलने) के कारण धवलभूत तथा देवी पार्वती द्वारा आलिङ्गित शरीर वाले पशुपति भगवान् शंकर की भांति भस्म जैसे श्वेत रोम समूह से संकुल शरीर वाले थे ।

संस्कृत-व्याख्या—वैनतेयम् इव—गरुडम् इव, **स्वप्रभावोपात्तद्विजाधिपत्यम्**= स्वस्य आत्मनः प्रभावेण उपात्तं अर्जितं द्विजानां ब्रह्मणानाम् आधिपत्यं स्वमित्वं येन स तं तादृशम्, वैनतेयपक्षे स्वप्रभावेण उपात्तं द्विजानां पक्षिणाम् आधिपत्यं येन स तादृशम्, **कमलासनं**=कमलम् आसनं यस्य सः ब्रह्मा तम् इव, **आश्र-मगुरुम्**=आश्रमस्य तपोभूमेः गुरुम् आचार्यम्, कमलासनपक्षे आश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां गुरुः नियामकम्, **जरच्चन्दनतरुम् इव**=जरन् पुरातनः यः चन्द-

नतरुः मलयजपादपः तम् इव, **भुजङ्गनिर्मोकधवलजटाकुलम्**=भुजङ्गानां सर्पाणां निर्मोकाः कञ्चुकाः तद्वत् धवलाभिः श्वेताभिः जटाभिः सटाभिः आकुलं व्याप्तम्, चन्दनतरुपक्षे भुजङ्गनिर्मोकैः धवलाः श्वेताः जटाः वृक्षमूलानि ताभिः आकुलं अभिव्याप्तम्, **प्रशस्तवारणपतिं इव**=प्रशस्तः प्रख्यातः यः वारणपतिः गजेन्द्रः तम् इव, **प्रलम्बकर्णबालं**=प्रलम्बाः, दीर्घाः कर्णौ श्रोत्रे बालाः पुच्छकेशाश्च यस्य तम्, **बृहस्पतिम् इव**=सुरगुरुम् इव, **आजन्मसंवर्धितकचम्**= आजन्मनः जीवनधारणादारभ्य संवर्धिताः क्षौराभावात् वृद्धिं प्रापिताः कचाः बालाः येन स तम्, बृहस्पतिपक्षे, **आजन्मतः**=संवर्धिताः पोषितः कचः एतदाख्यः स्वपुत्रः येन तम्, **दिवसम् इव**=दिनम् इव, **उद्यदर्कबिम्बभास्वरमुखम्**= उद्यत् उद्गच्छत् यत् अर्कबिम्बं रविमण्डलं तद्वत् भास्वरं तेजस्वि मुखं लपनं यस्य तम् तादृशम्, दिवसपक्षे उद्यता उद्गच्छता अर्कबिम्बेन भास्वरं प्रभाशीलं मुखम् आद्यभागो यस्य स तं तादृशम्, **शरत्कालम् इव**=शरत्समयम् इव, **क्षीणवर्षम्**=क्षीणानि वर्षाणि वयसः हायनानि यस्य स तम्, **शान्तनुम् इव**= भीष्मपितरम् इव, **प्रियसत्यव्रतम्**=प्रियं प्रीतिदायकं सत्यस्य सत्याचरणस्य व्रतं नियमः यस्य तम्, शान्तनुपक्षे प्रियः प्रेमास्पद सत्यव्रतः एतन्नामा स्वपुत्रः भीष्म इत्याशयः, यस्य तम्, **अम्बिकाकरतलम् इव**=अम्बिका पार्वती तस्याः करतलम् इव पाणितलम् इव, **रुद्राक्षग्रहणनिपुणम्**=रुद्राक्षस्य रुद्राक्षबीजस्य, ग्रहणे उपादाने निपुणं चतुरम्, अम्बिकाकरतलपक्षे रुद्रस्य अक्षीणि रुद्राक्षाः शिवनेत्रत्रयं तस्य ग्रहणे क्रीडायां विधाने कुशलम्, **शिशिरसमयसूर्यम् इव**=शिशिरसमयस्य शिशिरकालस्य सूर्यम् इव दिनकरम् इव, **कृतोत्तरासङ्गम्**=कृतः उत्तरासङ्गः उत्तरीयवसन स्कन्धभागे येन तम्, सूर्यपक्षे कृतः विहितः उत्तरस्याः दिशः कौबेराशायाः आसङ्गः संसर्गं येन तम्, **वडवानल इव**=वडवा अश्वा तदाकारः अग्निः वडवाग्निः समुद्रानलः तम् इव, **संततपयोभक्षं**=सततं पयः क्षीरं भक्षः भोजनं यस्य तम्, वडवानलपक्षे संततं पयः समुद्रजलं भक्षः यस्य तम्, **शून्यनगरं इव**=विजनं पुरम् इव, **दीनानाथविपन्नशरणम्**=दीनानां दुर्गतानाम् अनाथानां अस्वामिकानां विपन्नानां विपत्तिग्रस्तानां शरणं रक्षकम् शून्यनगरपक्षे दीनानि शोभारहितानि अनाथानि स्वामिशून्यानि विपन्नानि

नष्टानि शरणानि गृहाणि यत्र तत् तादृशम्, **पशुपतिम् इव**=शिवम् इव, **भस्मपाण्डुरोमाश्लिष्टशरीरम्**=भस्मना भूतिलेपनेन पाण्डूनि श्वेतवर्णानि यानि रोमाणि लोमानि तैः आश्लिष्टं संसक्तं शरीरं वपुः यस्य तं तादृशम्, पशुपतिपक्षे भस्मना पाण्डुरं श्वेतम् उमया पार्वत्या आश्लिष्टं सम्पृक्तं च शरीरं यस्य तं तादृशम्, **भगवन्तम् जाबालिम्**=एतदाख्यं मुनिराजम्, **अपश्यम्**=अद्राक्षम् ।

टिप्पणी—वैनतेय–विनता+ढक्=वैनतेय । **आधिपत्यम्**=अधिपति+ष्यञ् । 'गरुत्मान् गरुडस्तार्क्ष्यो, वैनतेयः खगेश्वरः' इत्यमरः । **शान्तनु···प्रियसत्यव्रतं**=चन्द्रवंशी राजा प्रतीप के पुत्र शान्तनु अपने पुत्र सत्यव्रत से अत्यन्त प्रेम करते थे । निषाद द्वारा अपनी पुत्री सत्यवती के विवाह के लिए उसके गर्भ से उत्पन्न पुत्र को ही राजगद्दी देने का प्रस्ताव रखने पर इन्होंने सुतस्नेह के कारण ही उसे ठुकरा दिया था और बाद मे भीष्म द्वारा सत्यवती अर्पित किये जाने पर इन्होने पुत्र प्रेम प्रदर्शित करते हुये भीष्म को स्वच्छन्द मृत्यु का वरदान दिया था । जाबालि भी सत्य के व्रत से प्रेम करने वाले हैं । **उत्तरासङ्ग**—उत्तरीय वस्त्र जिसे शरीर के ऊपरी भाग पर धारण किया जाता है । 'उत्तरस्मिन् देहभागे आसज्यते इति उत्तराङ्गः' उत्तर दिशा से ससर्ग, शिशिर ऋतु में मकर की संक्रान्ति आने पर सूर्य उत्तरायण में पहुँच जाते है । **वडवानल**–पौराणिक मान्यता के अनुसार समुद्रस्थित वडवा (घोड़ी) के मुख की अग्नि को वडवाग्नि या वडवानल कहा जाता है । अश्विनी नामक अप्सरा ने वडवा का रूप धारण करके सूर्य के द्वारा गर्भ को धारण किया था । **शरण**–रक्षक, 'शरणं गृहरक्षित्रोः' इत्यमरः । 'वैनतेयमिव' से 'पशुपतिमिव' तक···पूर्णोपमालङ्कार है । **जरच्चन्दन···कुलम्'** यहां लुप्तोपमा तथा पूर्णोपमा का सङ्कर है ।

अवलोक्य चाहमचिन्तयम्—अहो प्रभावस्तपसाम् । इयमस्य शान्तापि मूर्तिरुत्तप्तकनकावदाता परिस्फुरन्ती सौदामिनीव चक्षुषः प्रतिहन्ति तेजांसि, सततमुदासीनापि महाप्रभावतया भयमिवोपज-

नयति प्रथमोपगतस्य । शुष्कनलकाशकुसुमनिपतितानलचटुलवृत्ति नित्यमसहिष्णु तपस्विनां तनुतपसामपि तेजः प्रकृत्या दुःसहं भवति, किमुत सकलभुवनतलवन्दितचरणानामनवरतपः क्षपितमलानां करतलामलकवदखिलं जगदालोकयतां दिव्येन चक्षुषा भगवतामे-वंविधानामघक्षयकारिणां । पुण्यानि हि नामग्रहणान्यपि महामुनी-नाम्, किं पुनर्दर्शनानि ।

हिन्दी-अनुवाद—(महर्षि जाबालि को) देखकर मैंने सोचा—तपश्चर्या का महात्म्य आश्चर्य का विषय है ! (तभी तो) दहकते सोने की भाँति निर्मल इन (महर्षि जाबालि) की मूर्ति (शरीर) शान्त होती हुई भी, दमकती हुई विजली की भाँति आँखों की ज्योति को चकाचौंध किये दे रही है, निरन्तर उदासीन होती हुई भी महाप्रतापशालिनी होने के कारण नवागन्तुक के लिए भय-सा उत्पन्न कर देती है । स्वल्प तपश्चर्यावाले भी तपोधनियों का सूखे हुए नरकुल एवं कास के फूलों पर गिरे हुये अग्नि की चञ्चलवृत्ति (अर्थात् तत्काल प्रसरणशील होना) के समान चञ्चलवृत्ति वाला—तपस्तेज स्वभावतः निरन्तर असहनशील होता है तब फिर इस प्रकार के महात्माओं का क्या कहना जो कि समस्त भूमण्डल द्वारा समर्चित किये गए चरणों वाले है, जो निरन्तर तपश्चर्या रूप जल से धुले हुये पापों वाले हैं, जो दिव्य दृष्टि से कमल सरीखी हथेली पर रखे हुए आमलक फल (आँवले)की भाँति समस्त संसार को देखने वाले है और जो पापों का विनाश करने वाले हैं । क्योंकि महामुनियों का (तो) नामोच्चारण मात्र भी पुण्यजनक होता है फिर (उनके प्रत्यक्ष) दर्शन का क्या कहना ?

संस्कृत-व्याख्या—**अवलोक्य**=प्रेक्ष्य च, **अहम्**=वैशम्पायनः **अचिन्तयम्**=व्यचारयम्, **अहो**=महदाश्चर्यम्, **तपसाम्**=तपश्चर्याणाम्, **प्रभावः**=माहात्म्यम्, **अस्य**=मुनेः, **इयं**=पुरो दृश्यमाना, **शान्ता अपि**=शान्तिसम्पन्ना अपि, **मूर्तिः**=स्वरूपम्, **उत्तप्तकनकावदाता**=उत् प्राबल्येन तप्तम् उष्णीकृतं यत् कनकं काञ्चनं तद्वत् अवदाता निर्मला सती, **परिस्फुरन्ती**=संचरन्ता, **सौदामिनी इव**=तडित् इव, **चक्षुषः**=दृष्टेः, **तेजांसि**=ज्योतींषि, **प्रतिहन्ति**=प्रतिरुणद्धि, **सततं**=अजस्रम्, **उदासीना अपि**=निरपेक्षा अपि, **महाप्रभावतया**

= महनीयप्रभावशालितया, = **प्रथमोपगतस्य** = प्रथमम् उपगत: तस्य प्रथमवारं आगतस्य, **भयं इव** = साध्वसम् इव, **उपजनयति** = उत्पादयति, **यदा तनु-तपसाम्** = तनु स्वल्पं तप: तपश्चरणं येषां तेषां तपस्विनाम् तापसानाम् अपि, **तेजः** = प्रताप:, **शुष्कनलकाशकुसुमनिपतितानलचटुलवृत्ति** = शुष्केषु विरसेषु नलेषु नडाख्यतृणेषु काशकुसुमेषु काशपुष्पेषु च निपतित: य: अनल: वह्नि: तद्वत् चटुला चपला वृत्ति: व्यापारो यस्य तादृशम्, **प्रकृत्या** = स्वभावेन, **नित्यं** = सततम्, **असहिष्णु** = असहनशीलम्, **किमुत** = किं पुन:, **सकलभुवन-तलवन्दितचरणानाम्** = सकलेन समस्तेन भुवनतलेन जगता वन्दितौ पूजितौ चरणौ पादौ येषां तेषाम्, **अनवरततपःक्षपितमलानां** = अनवरतं सततं यत् तप: तपस्या तेन क्षपितं नाशितं मलं दुष्कृतं यै: तेषाम्, **दिव्येन** = अलौकिकेन, **चक्षुषा** = दृष्ट्या, **अखिलम्** = समस्तम्, **जगत्** = भुवनतलम्, **करतलामलवत्** = करतले पाणितले य: अमलक: धात्रीफलं तद्वत्, **आलोकयतां** = पश्यताम्, **एवंविधानां** = ईदृशानाम्, **अघक्षयकारिणां** = अघानां पापानां क्षयं विनाशं कुर्वन्तीति तच्छीला:, तेषां तादृशाम्, **भगवताम्** = ऐश्वर्यादिमताम्, **हि** = निश्चयेन, **महामुनीनां** = महर्षीणाम्, **नामग्रहणानि अपि** = अभिधानोच्चारणानि अपि, **पुण्यानि** = सुकृतजनकानि, **किं पुनः** = किं वक्तव्यम्, **दर्शनानि** = तेषां साक्षात्कारा:।

टिप्पणी—अवलोक्य—अव + लोक् + क्त्वा—ल्यप् । **अचिन्तयम्**—चिन्त् धातु लङ् उ० पु० ए० व० । **सौदामिनी**—बिजली, सुदामा मेघ से उत्पन्न होने वाली । 'सुदामा तु पुमान् वारिधरपर्वतभेदयो:' । "तडित्सौदामिनी विद्युच्चञ्चला चपला अपि" इत्यमर: । **दिव्येन**—अलौकिक; दिव + यत् = दिव्य तृ०ए० व० । 'उत्तप्तकनकावदाता' में लुप्तोपमा तथा 'उपजनयतीव' में क्रियोत्प्रेक्षा है ।

धन्यमिदमाश्रमपदमयमधिपतिर्यत्र । अथवा भुवनतलमेव धन्यमखिलमनेनाधिष्ठितमवनितलकमलयोनिना । पुण्यभाजः खल्वमी मुनयो यदहर्निशमेनमपरमिव नलिनासनमपगतान्यव्यापारा मुखावलोकननिश्चलदृष्टयः पुण्याः कथाः श्रृण्वन्तः समुपासते । सरस्वत्यपि धन्या यास्य तु सततमतिप्रसन्ने करुणाजलनिस्यन्दिन्यगाधगाम्भीर्ये रुचिरद्विजपरिवारा मुखकमलसम्पर्कसुखमनुभवन्ती निवसति राज-

हंसीव मानसे चतुर्मुखकमलवासिभिश्चतुर्वेदैः सुचिरादिव द्वितीय-मिदमासादितं । स्थानम् एनमासाद्य शरत्कालमिव कलिकालजलधर-समयकलुषिताः प्रसादमुपगताः पुनरपि जगति सरित इव सर्वविद्याः ।

हिन्दी-अनुवाद—धन्य है यह आश्रमस्थान जिसमें ये (महर्षि जाबालि) अधिपति हैं । अथवा पृथ्वीतल के कमलयोनि-ब्रह्मा इन (महर्षि जाबालि) से सम्पूर्ण भूमण्डल ही धन्य है । निश्चय ही पुण्यभागी है ये मुनिगण जो कि इतरेतर कार्यों को छोड़कर, इन (महर्षि जाबालि) के मुखावलोकन के कारण अपलक चितवन वाले होकर पवित्र कथाएँ सुनते हुए द्वितीय ब्रह्मा प्रतीत होने वाले इन (जाबालि) की सेवा करते हैं । सरस्वती भी धन्य है जो कि मनोहर (शिष्यभूत) द्विजों-ब्राह्मणों से परिवृत होकर तथा (महर्षि जाबालि के) मुखरूपी कमल के साहचर्य—सुख का अनुभव करती हुई—निरन्तर अतिशय प्रसादगुणसम्पन्न, करुणारूपी जल का निस्यन्दन (टपकाव) करने वाले तथा अथाह गम्भीरता वाले मानस (मन) में उसी प्रकार निवास करती हैं जैसे मनोहर 'द्विज' अर्थात् पक्षियों के परिवार वाली तथा (भक्षणार्थ) मुख में रखे गये कमल के सम्पर्क सुख का अनुभव करती हुई राजहंसिनी—अत्यन्त निर्मल, करुणासदृश जल को प्रवाहित करने वाले तथा अतलस्पर्शी गहराई वाले मानसरोवर में निवास करती है ।

चतुर्मुख ब्रह्मा के मुख कमलों में निवास करने वाले चारों वेदों ने मानों बहुत दिन बाद (रहने योग्य महर्षि जाबालि के मुखरूपी) इस द्वितीय स्थान को प्राप्त कर लिया है । संसार कलिकाल सदृश वर्षा ऋतु के कारण मलिनता को प्राप्त तथा शरत्काल को प्राप्त कर पुनः (जल की) निर्मलता से युक्त नदियों की भांति पावसऋतु सरीखे कलियुग के सम्पर्क से कलुषित समस्त (१४ हों) विद्याएँ इन (महर्षि जाबालि) को प्राप्त कर निर्दोष बन गई ।

संस्कृत-व्याख्या—**इदम्** = प्रत्यक्षम्, **आश्रमपदम्** = ऋषिजनस्थानम्, **धन्यम्** = कृतकृत्यम्, **यत्र** = यस्मिन् आश्रमे, **अयम्** = एष जाबालिः, **अधिपतिः** = अध्यक्षः, **अथवा** = यद्वा, **अवनितलकमलयोनिना** = अवनितलस्य भूतलस्य कमलयोनिः ब्रह्मा तेन तत्सदृशेन इत्यर्थ, **अनेन** = महामुनिना, **अधिष्ठितम्** = आश्रितम्, **अखिलम्** = समस्तम्, **भुवनतलम् एव** = धरातलम् एव, **धन्यम्** =

कृतकृत्यम्, **खलु** = निश्चयेन, **अमी** = आश्रमनिवासिनः, **मुनयः** = ऋषयः, **पुण्यभाजः** = पुण्यं भजन्ते इति पुण्यभाजः सुकृतवन्तः, **यत्** = यस्मात् कारणात्, **अपगतान्यव्यापाराः** = अपगताः दूरीभूताः अन्ये एतत्सेवातिरिक्ताः व्यापाराः कर्माणि येषां ते तादृशः, **मुखावलोकन-निश्चलदृष्टयः** = मुखस्य लपनस्य अवलोकने दर्शने निश्चला निर्निमेषा दृष्टिः नेत्रवृत्तिः येषां ते तादृशः मुनयः, **पुण्याः** = सुकृतभाजः, **कथाः** = कथानकानि, **शृण्वन्तः** = आकर्णयन्तः, **अपरम्** = द्वितीयम् **नालिनासनम् इव** = कमलासनम् ब्रह्माणम् इव, **अहर्निशम्** = रात्रिन्दिवम्, **समुपासते** = सेवन्ते, **तु** = पुनरर्थे, **सरस्वती अपि** = भारती अपि, **धन्या** = श्लाघनीया, **या अस्य** = महर्षेः, **अतिप्रसन्ने** = अत्यन्तप्रसादगुणयुक्ते, पक्षे अतिस्वच्छे, **करुणाजलनिस्यन्दिनि** = करुणा परदुःखनाशेच्छा सा एव जलं सलिलं तत् निस्यन्दय-तीति स्रावयतीति तच्छीलं तस्मिन्, पक्षे करुणा इव जलं करुणाजलं तस्य निस्यन्दिनि, **अगाधगाम्भीर्ये** = अगाधम् इयत्ताशून्यं गाम्भीर्यं दुःखगाहस्वभावत्वं यस्य तादृशे, पक्षे अगाधम् अतलस्पर्शं गम्भीर्यं गम्भीरता यस्य तादृशे, **मानसे** = चित्ते,पक्षे मानसरोवरे, **राजहंसी इव** = लोहितचञ्चुचरणा सितवर्णा मराली इव, **रुचिरद्विजपरिवारा** = रुचिराः तेजस्विनः द्विजाः शिष्यभूताः ब्राह्मणाः एव परिवारः परिजनः यस्या पक्षे रुचिराः सुन्दराः द्विजाः पक्षिणः एव परिवारः यस्या सा तादृशी, **मुखकमलसम्पर्कसुखम्** = मुखं वदनं कमलं नलिनं इव मुखकमलं तस्य सम्पर्कः संस्पर्शः तस्य सुखम्, पक्षे मुखे यत् कमलं तस्य संपर्कसुखम्, **अनुभवन्ती** = आस्वादमाना, **सततम्** = सर्वदा, **निवसति** = वासं कुरुते **चतुर्मुखकमलवासिभिः** = चत्वारि चतुः संख्यकानि मुखानि वदनानि, यस्य सः चतुर्मुखः प्रजापतिः तस्य मुखकमलेषु वसन्ति वासं कुर्वन्तीति तच्छीलाः तैः, **चतुर्वेदैः** = चत्वारश्च ते वेदाः चतुर्वेदाः तैः = ऋग्यजुः सामाथर्वसंज्ञकैः, **सुचिरात्** = चिरकालात्, **इव** = उत्प्रेक्षाव्यञ्जकमिदम्, **इदम्** = एतत् मुनिमुखरूपम् **द्वितीयम्** = अपरम्, **स्थानम्** = निवासस्थलम्, **आसादितम्** = प्राप्तम्, **एनम्** = महामुनिजाबालिम्, **आसाद्य** = लब्ध्वा, **कलिकालजलधरसमयकलुषिताः** = कलिकालः कलियुगःजलधरसमयः इव वर्षासमयः इव तेन कलुपिताः दूषिताः,सरित्पक्षे कलिकालः इव जलधरसमयः तेन कलुषिताः मलिनीकृताः, **सर्वविद्याः** = चतुर्दशविद्याः, **शरत्कालम्** = शरदृतुम, **आसाद्य** = लब्ध्वा, **सरितः इव** = नद्यः इव,

जगति=लोके, **पुनरपि**=भूयोऽपि, **प्रसादम्**=विशदताम्, पक्षे नैर्मल्यम्, **उपगताः**=प्राप्ताः ।

टिप्पणी–नलिनासन–कमल है आसन जिसका ऐसे ब्रम्हा जी । **सरस्वती**–वाणी, वाणी की अधिष्ठात्री देवी । मुनि के मानस में मुख कमल के सम्पर्क सुख का अनुभव करते हुए सरस्वती का निवास बतलाने से यहां सरस्वती का वाणी रूप ही इष्ट है । इस अर्थ के अनुरूप 'रुचिरद्विजपरिवारा' पद का यह अर्थ भी हो सकता है कि चमकीली दन्तपङ्क्ति उस वाणी का परिवार है । **द्विज**=ब्राह्मण, दन्त, पक्षी । 'दन्तविप्राण्डजा द्विजाः' इत्यमरः । **सर्वविद्याः**=चौदह विद्याएँ, समस्त विद्यायें (अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तारः । धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश ।।) कोई लोग चौदह विद्याओं में चार बढ़ाकर अष्टादश विद्यायें बतलाते है–"आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चेति ते त्रयः । अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव तु ।।" '**अवनितलकमलयोनिना**' में निरङ्ग केवल रूपक है । '**नलिनासनमिव**' में द्रव्योत्प्रेक्षा, 'हंसीव' मे **पूर्णोपमालङ्कार** तथा '**सुचिरादिव**' में गुणोत्प्रेक्षा है ।

नियतमिह सर्वात्मना कृतावस्थितिना भगवता परिभूतकलिकालविलसितेन धर्मेण न स्मर्यते कृतयुगस्य । धरणितलमनेनाधिष्ठितमालोक्य न वहति नूनमिदानीं सप्तर्षिमण्डलनिवासाभिमानमम्बरतलम् । अहो ! महासत्त्वेयं जरा यास्य प्रलयरविरश्मिनिकरदुर्निरीक्ष्ये रजनिकरकिरणपाण्डुशिरोरुहे जटाभारे फेनपुञ्जधवला गङ्गेव पशुपतेः क्षीराहुतिरिव शिखाकलापे विभावसोर्निपतन्ती न भीता । बहलाज्यधूमपटलमलिनीकृताश्रमस्य भगवतः प्रभावाद् भीतमिव रविकिरणजालमपि दूरतः परिहरति तपोवनम् । एते च पवनलोलपुञ्जीकृतशिखाकलापा रचिताञ्जलय इवात्र मन्त्रपूतानि हवींषि गृह्णन्त्येतत्प्रीत्याशुशुक्षणयः । तरलितदुकूलवल्कलोऽयं चाश्रमलताकुसुमसुरभिपरिमलो मन्दमन्दसंचारी सशङ्क इवास्य समीपमुपसर्पति गन्धवाहः ।

हिन्दी-अनुवाद—निश्चित ही इस आश्रम में सर्वतोभावेन आश्रम बनाये हुए तथा कलिकाल की समस्त (हीन) चेष्टाओं को न्यग्भूत (तिरस्कृत) कर देने वाले भगवान् धर्मदेव सत्ययुग का स्मरण नहीं करते हैं। भूतल को इन (महर्षि जाबालि) से अलंकृत देखकर निश्चय ही अब गगनमण्डल(अपने क्षेत्र में) सप्तर्षि मण्डल के निवास करने के कारण उत्पन्न अभिमान (सुभगम्मन्यता) का वहन नहीं करता है। आश्चर्य ! (इनकी) यह वृद्धावस्था बड़े जीवट की है जो कि युगान्तकालीन सूर्य के किरणसमूह की भाँति देखा न जा सकने योग्य तथा चन्द्रकिरणों के समान धवलवर्ण जटापुञ्ज पर गिरती हुई (उसी प्रकार) संत्रस्त नहीं हुई जैसे फेनराशि के कारण शुभ्रवर्णा गङ्गा भगवान् शङ्कर के जटाकलाप पर तथा दुग्धाहुति अग्निदेवता के शिखाकलाप पर गिरती हुई भयभीत नहीं होती। प्रचुर घृत (की आहुतियों) के धूमसमूह से आश्रम को श्यामवर्ण बना देने वाले भगवान् (जाबालि) के माहात्म्य से मानो संत्रस्त हुए सूर्य किरणों का समूह भी दूर से ही तपोवन को छोड़ देता है। पवन के कारण चञ्चल अतएव ज्वालपुञ्ज को समेटे हुई ये (आहवनीय, दाक्षिणात्य तथा गार्हपत्य) यज्ञाग्नियाँ इन (महर्षि जाबालि) के प्रति प्रीति होने के कारण मानो हाथ जोड़कर मन्त्रशोधित हव्यों को ग्रहण कर रही हैं। दुकूलवल्कलों को झकझोर देने वाला, आश्रमलताओं के पुष्पों के सौरभ से सुवासित तथा धीरे-धीरे सञ्चरण करता हुआ यह पवन मानों सशङ्क होकर महर्षि जाबालि के समीप प्रस्तुत हो रहा है।

संस्कृत-व्याख्या—**नियतम्** = सुनिश्चितम्, **इह** = अस्मिन आश्रमे, **सर्वात्मना** = सर्वविधिना, **कृतावस्थितिना** = कृता विहिता अवस्थितिः निवासः येन तेन, **परिभूतकलिकालविलसितेन** = परिभूतानि तिरस्कृतानि कलिकालस्य कलियुगस्य विलसितानि चेष्टितानि येन तेन, **भगवता** = माहात्म्यवता, **धर्मेण** = धर्मराजेण, **कृत-युगस्य** = सत्ययुगस्य, **न स्मर्यते** = न चिन्त्यते, **नूनम्** = नियतम्, **अम्बर-तलम्** = आकाशतलम्, **अनेन** = जाबालिना, **अधिष्ठितम्** = आश्रितम्, **धरणि-तलम्** = भूतलम्, **आलोक्य** = विलोक्य, **इदानीम्** = अधुना, **सप्तर्षिमण्डलनिवा-साभि-मानम्** = सप्त च ते ऋषयः सप्तर्षयः तेषां यत् मण्डलं मरीच्यादिसमूहः

तस्य यो निवास: अधिष्ठानं तेन यो अभिमान: दर्प: तम्, **न वहति**=न धारयति । **अहो**=आश्चर्यम्, **इयम्**=पुरोदृश्यमाना, **जरा**=वृद्धावस्था, **महासत्त्वा** =महत् सत्त्वं यस्या: सा: अत्यन्तसाहसवती, **या अस्य**=मुने:, **प्रलयरविरश्मिनिकरदुर्निरीक्ष्ये**=प्रलयस्य कल्पान्तस्य ये रविरश्मय: दिनकरकिरणा: तेषां यो निकर: समूह: तद्वत् दुर्निरीक्ष्ये दु:खेन विलोकयितुं शक्ये दुर्दर्शे इत्यर्थ:, **रजनिकरकिरणपाण्डुशिरोरुहे**=रजनीं करोति इति रजनिकर: चन्द्रमा:, रजनिकरस्य ये किरणा: मयूखा: तद्वत् पाण्डव: श्वेता: शिरोरुह: कचा: यस्मिन् तस्मिन्, **जटाभारे**=सटासमूहे, **पशुपते:**=शिवस्य जटाभारे, **फेनपुञ्जधवला**=फेनपुञ्जेन डिण्डीरसमूहेन धवला उज्ज्वला, **गंगा इव**=भागीरथी इव, **विभावसो:**=अग्ने:, **शिखाकलापे**=ज्वालासमूहे, **क्षीराहुति: इव**=क्षीरस्य दुग्धस्य आहुति: प्रक्षेप: इव, **निपतन्ती**=पदं निदधाना, **न भीता**=न त्रस्ता, **रविकिरणजालम्** रवे: सूर्यस्य किरणानां रश्मीनां जालं समूह: अपि, **बहलाज्यधूमपटलमलिनीकृताश्रमस्य**=बहलानां निविडानाम् आज्यधूमानां हविर्धूमानां पटलेन मण्डलेन मलिनीकृत: अमलिन: मलिन: कृत इति श्यामीकृत: आश्रम: तपोभूमि: येन तस्य, **भगवत:**=महात्मन: जावाले:, **प्रभावात्**=प्रतापात्, **भीतम् इव**=त्रस्तम् इव, **तपोवनम्**=धर्मारण्यम् **दूरत: इव**=दूराद् एव, **परिहरति**=परित्यजति, **अत्र**=आश्रमे, **एते**=वेदीषु दृश्यमाना:, **पवनलोलपुञ्जीकृतशिखाकलापा:**=पवनेन समीरेण लोल: चञ्चला: पुञ्जीकृत: राशीकृतश्च शिखाकलाप: ज्वालासमूह: येषां ते, अतएव च **रचिताञ्जलय: इव**=रचिता: बद्धा: अञ्जलय: निकुब्जपाणियोगा: यै: ते इव, **आशुशुक्षणय:**=वह्नय:, **एतत्प्रीत्या**=एतस्य मुने: प्रीत्या प्रेम्णा, **मन्त्रपूतानि**=मन्त्रै:ऋग्भि: पूतानि पवित्राणि, **हवींषि**=हव्यानि, **गृह्णन्ति**=स्वीकुर्वन्ति **तरलितदुकूलवल्कल:**=तरलितानि प्रकम्पितानि दुकूलवत् क्षौमवसनवत् वल्कलानि वृक्षत्वग्वस्त्राणि येन स:, **आश्रमलताकुसुमसुरभिपरिमल:**=आश्रमे या: लता: तपोभूमिवल्लर्य: तासां यानि कुसुमानि प्रसूनानि तेषां सुरभि: घ्राणतर्पण: परिमल: गन्ध: यस्मिन् स:, **मन्दमन्दसंचारी**=मन्दमन्दं शनै: शनै: संचरति प्रवहति इति तच्छील: स: तादृश:, **गन्धवाह:**=गन्ध वहतीति स: वायु:, **सशङ्क इव**=शङ्कया सह

विद्यमान इव, भीत इव, **अस्य**=मुनेः, **समीपम्**=अन्तिकम्, **उपसर्पति**=उपगच्छति ।

टिप्पणी–अवस्थितिना–अव+स्था+क्तिन्; तृ० ए० व० । **कृतयुग**—सत्ययुग । **विभावसु**–अग्नि, विभा अर्थात् तेज ही है वसु धन जिसका । **बहल**—अत्यन्त घना, घुटा हुआ । **आज्य–घृत**, हवि 'घृतमाज्यं हविः सर्पिः', इत्यमरः **आशुशुक्षणयः**—अग्नियाँ, आहवनीय, गार्हपत्य, दक्षिण अग्नि । आ समन्तात् शोषितुम् इच्छति—आ+शुष्+सन्+अनि, अभ्यास को द्वित्व 'शिखावाना–शुशुक्षणिः' इत्यमरः । 'फेनपुञ्ज में लुप्तोपमा' 'गङ्गेव' तथा 'आहुतिरिव' में उपमा, 'भीतमिव', 'रचिताञ्जलयः इव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है । सशङ्क इव में गुणोत्प्रेक्षा है ।

प्रायो महाभूतानामपि दुरभिभवानि भवन्ति तेजांसि । सर्वतेजस्विनामयं चाग्रणीः । द्विसूर्यमिवाभाति जगदनेनाधिष्ठितं महात्मना । निष्कम्पेव क्षितिरेतदवष्टम्भात् । एष प्रवाहः करुणारसस्य, संतरणसेतुः संसारसिन्धोः, आधारः क्षमाम्भसाम्, परशुस्तृष्णालतागहनस्य, सागरः सन्तोषामृतरसस्य, उपदेष्टा सिद्धिमार्गस्य, अस्तगिरिरसद्ग्रहस्य,मूलमुपशमतरोः, नाभिः प्रज्ञाचक्रस्य, स्थितिवंशो धर्मध्वजस्य, तीर्थं सर्वविद्यावताराणाम्, बडवानलो लोभार्णवस्य, निकषोपलः शास्त्ररत्नानाम् दावानलो रागपल्लवस्य, महामन्त्रः क्रोधभुजङ्गस्य, दिवसकरो मोहान्धकारस्य, अर्गलाबन्धो नरकद्वाराणाम्, कुलभवन्माचाराणाम्, आयतनं मङ्गलानाम् अभूमिर्मदविकाराणाम्, दर्शकः सत्पथानाम्, उत्पत्तिः साधुतायाः, नेमिरुत्साहचक्रस्य, आश्रयः सत्त्वस्य, प्रतिपक्षः कलिकालस्य, कोशस्तपसः, सखा सत्यस्य, क्षेत्रमार्जवस्य, प्रभवः पुण्यसंचयस्य, अदत्तावकाशो मत्सरस्य, अरातिर्विपत्तेः, अस्थानं परिभूतेः, अननुकूलोऽभिमानस्य, असंमतो दैन्यस्य, अनायत्तो रोषस्य, अनभिमुखः सुखानाम् ।

हिन्दी-अनुवाद—प्रायः (पृथ्वी आदि) महाभूतों अथवा महाप्राणियों के भी तेज अतिक्रमण करने योग्य नहीं होते है और ये (महर्षि जाबालि तो) समस्त तेजस्वियों में अग्रणी (प्रधान, अगुवा) हैं। इन महापुरुष से समलङ्कृत यह भूतल दो सूर्यों से संवलित प्रतीत होता है, इनके अवलम्बन से पृथ्वी मानो सुस्थिर है। ये कारुण्यरस के प्रवाह हैं, संसार रूपी सागर का सन्तरण करने के लिये सेतुबन्ध (पुल) सदृश हैं, क्षमारूपी जलराशि के आधार है, तृष्णारूपी लतावन के (विनाशार्थ) कुठार हैं, सन्तोष रूपी अमृत द्रव के सागर हैं, मोक्ष-पथ के उपदेशक हैं, अनिष्टकारी ग्रह के अस्ताचल (विलयबिन्दु) हैं, शान्तितरु के मूल हैं, प्रतिभाचक्र के केन्द्र बिन्दु हैं, सुकृतपताका के धारक वंशदण्ड है, समस्त विद्याओं में उतरने (प्रवेश करने) के लिए 'तीर्थ' अर्थात् घाट हैं, लोभ-रूपी समुद्र की (शोषक) वाडवाग्नि हैं, शास्त्ररूपी रत्नों के (परीक्षणार्थ) निकषभूत पाषाणखण्ड हैं, वासनारूपी नई कोपल के दावानल है, क्रोधरूपी भुजङ्ग के (वशीभूत कर लेने वाले) महामन्त्र हैं, अज्ञानरूपी अन्धकार के (अपसारक) सूर्य हैं, नरकद्वारों के (अवरोधक) अर्गलबन्ध (सिटकनी या कुण्डी) है, शुभाचरणों के मूलगृह हैं, कल्याण के मन्दिर हैं, अहंकारजनित, वृत्तियों के ऊपर क्षेत्र हैं, शोभनमार्गों के उपदेष्टा हैं, सज्जनता के उद्गम बिन्दु हैं, उत्साहरूपी चक्र (पहिये) की नेमि (तीली या परिधि) हैं, सत्त्व (धैर्य) के आधार हैं, कलियुग के शत्रु है, तपश्चर्या के भण्डारागार हैं, सत्य के मित्र हैं, मृदुता अथवा सरलता के क्षेत्र (सस्योत्पत्तिस्थल) हैं, धर्मसमूह क उत्पत्तिस्थल हैं, ईर्ष्याभाव को अवकाश (बढ़ावा) न देने वाले हैं, विपत्ति के शत्रु हैं, पराभव के अपात्र हैं, अहङ्कार के अहितकर हैं, दीनता से असहमत हैं, क्रोध के वशीभूत नहीं हैं, तथा सुखों की ओर अभिमुख नहीं है।

संस्कृत-व्याख्या—**प्रायः** = बाहुल्येन, **महाभूतानाम् अपि** = महाजन्तूनामपि, **तेजांसि** = महांसि, **दुरभिभवानि** = दुःखेन कठिनतया अभिभवितुं न्यक्कर्तुं योग्यानि दुर्धर्षाणि इत्यर्थः, **भवन्ति** = वर्तन्ते, **च** = पुनरर्थे, **अयम्** = एषः महात्मा जाबालिः, **सर्वतेजस्विनाम्** = अखिलधामवताम्, **अग्रणीः** = नेता, **अनेन** = एतेन, **महात्मना** = तपस्विना, **अधिष्ठितम्** = आश्रितम्, **जगत्** = भुवनम्, **द्विसूर्यम्**

इव = द्वौ उभौ सूर्यो दिनकरौ यत्र तादृशम् इव, **आभाति** = प्रतीयते, **एतदवष्टम्भाद् इव** = एतस्य मुने: अवष्टम्भ: आश्रय: तस्मादिव, **क्षितिः** = धरा, **निष्कम्पा** = निर्गता कम्पात् निष्कम्पा-निश्चला, **एषः** = अयं मुनि:, **करुणरसस्य** = दयासलिलस्य, **प्रवाहः** = स्रोत:, **संसारसिन्धोः** = संसार जगत् एव सिन्धु समुद्र: तस्य, **सन्तरणसेतुः** = संतरणाय पारगमनायसेतु: उत्तरणम्, **क्षमाम्भसाम्** = क्षमा सहनशीलता एव अम्भांसि सलिलानि तेषाम्, **आधारः** = आशय:, **तृष्णालतागहनस्य** = तृष्णा विषयलिप्सा लता: वल्लय: तासां गहनस्य विपिनस्य, **कर्तनाय परशुः** = कुठार:, **सन्तोषामृतरसस्य** = संतोष: तृप्ति: स एव, **अमृतरसः** = पीयूषरस: तस्य, **सागरः** = समुद्र:, **सिद्धिमार्गस्य** = सिद्धि: अणिमादिसिद्धि तस्या: मार्ग: पन्था तस्य, **उपदेष्टा** = उपदेशक:, **असद्ग्रहस्य** = स सत् असत् दुष्टता तदेव ग्रह: शनैश्चरप्रभृति: तस्य अथवा असद्ग्रह: दुराग्रह: स एव असद्ग्रह: अशुभग्रह: शनिसदृश: तस्य, **अस्तगिरिः** = अस्ताचल:, **उपशमतरोः** = उपशम: शान्ति: स एव तरु: पादप: तस्य , **मूलम्** = हेतु:, **प्रज्ञाचक्रस्य** = प्रज्ञा प्रज्ञनम् एव चक्रं रथाङ्गम्, **नाभिः** = मध्यपिण्डिका, **धर्मध्वजस्य** = धर्म: सुकृतं स एव ध्वज: पताका तस्य, **स्थितिवंशः** = स्थितये अवस्थानाय वंश: वेणुदण्ड: इत्यर्थ:, **सर्वविद्यावताराणाम्** = सर्वा: सकला: या विद्या: ज्ञानशास्त्राणि तासु ये अवतारा: प्रवेशा: तेषाम्, **तीर्थम्** = घट्ट:, **लोभार्णवस्य** = लोभ: लोलुपता एव अर्णव: सागर: तस्य, **वडवानलः** = समुद्राग्नि:, **शास्त्ररत्नानाम्** = शास्त्राणि वेदादिग्रन्था: तानि एव रत्नानि मणय: तेषाम्, **निकषोपलः** = उत्कर्षपरीक्षकप्रस्तर:, **रागपल्लवस्य** = राग: विषयाभिलाष: स एव पल्लवं किसलयं तस्य, **दावानलः** = दवस्य वनस्य अयं दाव: वनसम्बन्धी स च अनल:वह्नि:, **क्रोधभुजंगमस्य** = क्रोध: कोप: स एव भुजङ्गम: सर्प: तस्य, **महामन्त्रः** = महाँश्चासौ मन्त्र:–वशीकरणमन्त्र:, **मोहान्धकारस्य** = मोह: अविवेक: स एव अन्धकार: तिमिर: तस्य, **दिवसकरः** = रवि:, **नरकद्वाराणाम्** = निरयकपाटानाम्, **अर्गलाबन्धः** = कपाटप्रतिबन्धक:, ,**आचाराणाम्** = सदाचाराणाम्, **कुलभवनम्** = मूलगृहम् **मङ्गलानाम्** = कल्याणानाम्, **आयनम्** = आवासस्थलम्, **मदविकाराणाम्** = मद:–अहंकार: तस्य ये विकारा: व्यापारा: तेषां दर्पवृत्तीनाम्,

अभूमिः=अप्रशस्ता भूमिः अभूमिः अविषयः, **सत्पथानाम्**=सन्तः शोभनाः पन्थानः मार्गाः सत्पथाः तेषाम्, **दर्शकः**=निर्देशकः, **साधुतायाः**=साध्नोति परकार्यमिति साधुः तस्य भावः तत्ता तस्याः सज्जनतायाः, **उत्पत्तिः**=प्रसवस्थली, **उत्साहचक्रस्य**=उत्साहः उद्योगः स एव चक्रं रथाङ्गं तस्य, **नेमिः**=प्रान्तभागः, **सत्त्वस्य**=आत्मबलस्य, **आश्रयः**=आधारः, **कलिकालस्य**=कलियुगस्य, **प्रतिपक्षः**=विरोधी, **तपसः**=तपश्चर्यायाः, **कोशः**=निधिः, **सत्यस्य**=तथ्यस्य, **सखा**=सुहृत्, **आर्जवस्य**=सरलतायाः, **क्षेत्रम्**=आवासभूमिः **पुण्यसंचयस्य**=पुण्यानि सुकृतानि तेषां सञ्चयः पुञ्जः तस्य, **प्रभवः**=उत्पत्तिस्थानम् **मत्सरस्य**=ईर्ष्यायाः, **अदत्तावकाशः**=न दत्तः अवकाशः येन सः, **विपत्तेः**=आपदः, **अरातिः**=अरि, **परिभूते**=अनादरस्य, **अस्थानम्**=अपदम् **अभिमानस्य**=अहंकारस्य, **अननुकूलः**=न अनुकूलः प्रतिकूलः, **दैन्यस्य**=दीनतायाः, **असंमतः**=न सम्मतः, **रोषस्य**=क्रोधस्य, **अनायत्तः**=न आयत्तः अनायत्तः अनधीनः, **सुखानाम्**=ऐहलौकिकतृष्णानाम्, **अनभिमुखः**=अनभीप्सुकः ।

टिप्पणी–तेजस्विनाम्–तेजस् + विन् = तेजस्विन् ; ष० ब० व० । **अवष्टम्भ**–सहारा, आधार । **गहन**–वन 'गहनं काननं वनम्' इत्यमरः । **अवतार**–उतरना, प्रवेश करना । **अभूमिः**–अप्रशस्त भूमि, ऊसर, जहाँ कोई बीज नहीं जमता मुनि के अन्दर भी विकार नहीं उत्पन्न होते । **आर्जव**–ऋजुता, सरलता । **अराति**–शत्रु । न राति ददाति सुखं यः स अरातिः न–रा+क्तिन् । **अनायत्त**–अपराधीन, क्रोध जिन्हें वश में नहीं कर सका था । 'अधीनो निघ्न आयत्तोऽस्वच्छन्दो गृह्यकोऽप्यसौ' इत्यमरः । यहाँ **करुणारसस्य**–से लेकर **मोहान्धकारस्य**' तक सर्वत्र परम्परित रूपकालंकार है । **नेमिरुत्साह–चक्रस्य** में परम्परित रूपक है ।

अस्य भगवतः प्रभावादेवोपशान्तवैरमपगतमत्सरं तपोवनम् । अहो ! प्रभावो महात्मनाम् अत्र हि शाश्वतिकमपहाय विरोधमुपशान्तात्मानस्तिर्यञ्चोऽपि तपोवनवसतिसुखमनुभवन्ति । तथाहि एष विकचोत्पलवनरचनानुकारिणमुत्पतच्चारुचन्द्रकशतं हरिणलोचन-

द्युतिशबलमभिनवशाद्वलमिव विशति शिखिनः कलापमातपाहतो निः-
शङ्कमहिः। अयमुत्सृज्य मातरमजातकेसरैः केसरिशिशुभिः सहोपजात-
परिचयः शरत्क्षीरधारं पिबति कुरङ्गशावकः सिंहीस्तनम् एष मृणा-
लकलापाशङ्किभिः शशिकरधवलं सटाभारमामीलितलोचनो बहु
मन्यते द्विरदकलभैराकृष्यमाणं मृगपतिः।

हिन्दी अनुवाद—इन भगवान् (जाबालि) के प्रभाव से ही तपोवन प्रशान्त वैरभाववाला तथा विलीन ईर्ष्याभाव वाला (हो गया) है। महात्माओं का प्रभाव भी क्या है, (अर्थात् आश्चर्य का विषय है) क्योंकि इस तपोवन में पशु-पक्षी भी सनातन (जन्मजात) वैरभाव को छोड़ कर, प्रशान्त अन्तरात्मा वाले बन कर, तपोवन में रहने के सुख का अनुभव करते हैं। उदाहरणार्थ-विकसित नीलकमल की दलसृष्टि का अनुकरण करने वाले, ऊपर उठे हुए सैकड़ों मनोहर चन्द्रकों (चन्द्राकार चिह्नों) वाले अतएव हरिणों की नेत्रकान्ति के समान चितकबरे तथा कोमल घासों का कछार प्रतीत होने वाले मयूर के पिच्छभार में (प्रचण्ड) सूर्यताप से पीड़ित हुआ यह सर्प निर्विशङ्क भाव से प्रवेश कर रहा है। अनुत्पन्न स्कन्धकेसरों वाले सिंहशावकों के साथ परिचित हुआ यह हरिण का छौना (अपनी) माँ को छोड़कर, स्रवित होती हुई दुग्धधारा वाले सिंहनी के स्तन को पी रहा है। मृणालपुञ्ज के भ्रमवश गजशावकों द्वारा खींचे जाते हुए चन्द्रिकाधवल केसरसमूह को झँपकी हुई आँखों वाला यह वनकेसरी बहुत (सुखद) मान रहा है।

संस्कृत-व्याख्या—**अस्य भगवतः**=ऐश्वर्यशालिनः जाबालेः, **प्रभावात् एव**= माहात्म्यात् एव, **तपोवनम्**=आश्रमपदम्, **उपशान्तवैरम्**=उपशान्तानि निष्टानि वैराणि विरोधाः यत्र तत् तादृशम्, **अपगतमत्सरम्**=अपगतः दूरीभूतः मत्सरः अन्यशुभद्वेषः तस्मात् तत् तादृशं वर्तते इति शेषः, **अहो**=अत्याश्चर्यं, **महात्मनाम्**=महर्षीणाम्, **प्रभावः**=तेजः, **हि**=निश्चयेन, **अत्र**=आश्रमे, **शाश्वतिकम्**=शश्वत् सदा भवं शाश्वतिकं सनातनम्, **विरोधम्**=विद्वेषः, **अपहाय**=परित्यज्य, **उपशान्तात्मानः**=उपशान्ताः विरोधशून्याः आत्मनः अन्तः

करणानि येषां ते तादृशः, तिर्यञ्चोऽपि=पशुपक्ष्यादिजीवा अपि, तपोवनवसति-सुखम्=तपोवने आश्रमपदे या वसतिः निवासः तस्याः सुखम् आनन्दम्, अनु-भवन्ति=प्राप्नुवन्ति, तथा हि=पूर्वोक्तमेव समर्थ्यते, एषः=पुरो दृश्यमानः, अहिः=भुजंगः, आतपाहतः=आतपेन धर्मेण आहतः पीडितः सन्, विकचोत्पल-वनरचनानुकारिणाम्=विकचानां विकसितानाम् उत्पलानां नीलकमलानां यद् वनं काननं तस्य रचना सृष्टिः ताम् अनुकरोति सादृश्यं भजते इति तच्छीलः तम् । उत्पतच्चारुचन्द्रकशतम्=उत्पतत् उद्दीप्यमानं चारुचन्द्रकाणां सुन्दरमेचकानां शतं समूहः यत्र तं तादृशम्, अतएव हरिणलोचनद्युतिशबलम्=हरिणानां मृगाणां लोचनद्युतिभिः नयनप्रभाभिः शबलं कर्बुरितम्, अभिनवशाद्वलम् इव=नवोत्पन्नतृणसंकुलप्रदेशम् इव, शिखिनः=मयूरस्य, कलापम्=पिच्छम्, निःश-ङ्कम्=निर्भयम्, विशति=आश्रयते, सर्पमयूरयोः, अयम्=दृश्यमानः, कुरङ्ग-शावकः=मृगपोतः, मातरम्=जननीं मृगीम्, उत्सृज्य=त्यक्त्वा, अजातकेसरैः=न जाताः उत्पन्नाः केसराः जटाः येषां तैः, केसरिशिशुभिः=सिंहशावकैः, सह=सार्द्धम्, उपजातपरिचयः=उपजातः उत्पन्नः परिचयः संस्तवः यस्य स परिचितः सन्, क्षरत्क्षीरधारम्=क्षरन्ति स्रवन्ति क्षीरधाराः दुग्धप्रवाहः यस्मात् तम्, सिंहीस्तनम्=सिंह्याः केसरिण्याः स्तनं पयोधरम्, पिबति=धयति, आमीलित-लोचनः=आ ईषत् मीलिते मुद्रिते लोचने नेत्रे येन स तादृशः, एषः=पुरो दृश्यमानः, मृगपतिः=सिंहः, शशिकरधवलम्=शशिनः हिमांशोः कराः रश्मयः तद्वत् धवलं स्वच्छम्, सटाभारम्=सटानां जटानां भारः समूहः तम्, मृणालक लापाशङ्किभिः=मृणालानां कमलनालानां कलापं समूहम् आशङ्कन्ते सम्भा-वयन्ति इति तच्छीलाः तैः, द्विरदकलभैः=गजशावकैः, आकृष्यमाणम्=अवकृष्यमाणम्, बहु=अत्यन्तम्, मन्यते=समादरं करोति ।

टिप्पणी—अपहाय—अप+हा+क्त्वा—ल्यप् । शाद्वल—(शादाः हरित-तृणानि सन्ति अस्मिन् इति शाद्वलः) हरी घास से अभिव्याप्त प्रदेश । शिखिनः-शिखा+इनि; ष० ए० व० । आमीलितलोचनः—कुछ-कुछ नेत्र बन्द किये हुए । जटा समूह में मृणाल समूह के भ्रम होने से भ्रान्तिमान् अलङ्कार है । साथ ही लुप्तोपमा तथा स्वभावोक्ति है ।

इदमिह कपिकुलमपगतचापलमुपनयति मुनिकुमारकेभ्यः स्नातेभ्यः फलानि। एते च न निवारयन्ति मदान्धा अपि गण्डस्थलीभाञ्जि मदजलपाननिश्चलानि मधुकरकुलानि संजातदयाः कर्णतालैः करिणः। किं बहुना तापसाग्निहोत्रधूमलेखाभिरुत्सर्पन्तीभिरनिशमुपपादितकृष्णाजिनोत्तरासङ्गशोभाः फलमूलभृतो वल्कलिनो निश्चेतनास्तरवोऽपि सनियमा इव लक्ष्यन्तेऽस्य भगवतः किं पुनः सचेतनाः प्राणिनः।

हिन्दी-अनुवाद—इस तपोवन में चञ्चलता को छोड़कर यह वानर समूह स्नान किए हुए मुनिकुमारकों के लिए फल ला रहा है। और ये हाथी—मदोन्मत्त होते हुए भी—कपोलपाली (गलपट) पर बैठे हुए तथा मदजल पीने के कारण (अथवा) अचञ्चल भ्रमरसमूह को—दया उत्पन्न हो जाने के कारण—कान के थपेटों से भगा नहीं रहे हैं। अधिक (कहने) से क्या लाभ! ऊपर उठती हुई तापसजनों के अग्निहोत्रों की धूमपंक्तियों के कारण निरन्तर प्राप्त की गई काले मृगचर्म रूपी उत्तरीयवस्त्र की शोभावाले, फल और मूल (जड़) को धारण करने वाले वल्कल (छाल) धारण करने वाले चैतन्य विहीन वृक्ष भी इन भगवान् (जाबालि) के आश्रमस्थ व्रतधारियों की भांति दिखाई पड़ रहे हैं जो कि ऊपर उठती हुई—तापसजनों के अग्निहोत्रों की—धूमलेखाओं के कारण प्राप्त हुई, काले मृगचर्म रूपी उत्तरीयवस्त्र की शोभा वाले हैं, जो फल एवं कन्दमूल पर आश्रित हैं, जो वल्कलवसन धारण करने वाले हैं तथा 'निश्चेतन' अर्थात् अनपेक्षित सांसारिक ज्ञान से शून्य अथवा सर्वतोभावेन तपस्संलग्न हैं। तब फिर सचेतन प्राणियों का क्या कहना! (अर्थात् वे तो इस प्रकार के होते ही हैं।)

संस्कृत-व्याख्या—इह = अस्मिन् तपोवने, अपगतचापलम् = अपगतं दूरीभूतं चापलं चपलता यस्य तादृशम्, इदम् = पुरोदृश्यमानम्, कपिकुलम् = कपीनां वानराणां कुलं समूहः, स्नातेभ्यः = कृतस्नानेभ्यः, मुनिकुमारकेभ्यः = मुनीनाम् ऋषीणाम् कुमारकाः बालकाः तेभ्यः, फलानि = सस्यानि, उपनयति = आहरति, एते = इमे पुरो दृश्यमानाः, च = समुच्चयार्थकमिदम्, करिणः = गजस्य,

मदान्धाः अपि=मदोन्मत्ता अपि, **संजातदयाः**=संजाता दया कृपा येषु ते तादृशाः सन्तः, **गण्डस्थलीभाञ्जि**=करटस्थलस्थानि, **मदजलपाननिश्चलानि**=मदस्य जलं मदजलं दानवारि तस्य पानेन सेवनेन निश्चलानि स्थिराणि, **मधुकरकुलानि**=मधुकराणां भ्रमराणां कुलानि समूहान्, **कर्णतालैः**=कर्णयोः तालाः तैः श्रवणचपेटैः, **न निवारयन्ति**=न अपसारयन्ति, **बहुना**=अधिकेन, **किम्**=किं प्रयोजनम्, न कोऽपि लाभः, **अस्य**=पुरोदृश्यमानस्य, **भगवतः**=महात्मनः जाबालेः आश्रमे इति शेषः, **निश्चेतनाः**=जडाः, **तरवः अपि**=वृक्षाः अपि, **अनिशम्**=सततम्, **उत्सर्पन्तीभिः**=उद्गच्छन्तीभिः, **तापसाग्निहोत्रधूमलेखाभिः**=तापसानां तपस्विनां यानि अग्निहोत्राणि यज्ञाः तेषां धूमलेखाभिः अग्निकेतनधाराभिः, **उपपादितकृष्णाजिनोत्तरासङ्गशोभाः**=उपपादिता विहिता कृष्णाजिनस्य कृष्णसारमृगचर्मणः उत्तरासङ्गस्य उत्तरीयस्य शोभा छविः येषां ते, **सनियमाः इव**=नियमैः सह वर्तमानाः सनियमाः व्रतिनः इव, **लक्ष्यन्ते**=दृश्यन्ते, **किं पुनः**=किंभूयः, तेषां विषये ये, **सचेतनाः**=ज्ञानवन्तः, **प्राणिनः**=मानवादयः ।

टिप्पणी–कर्णतालैः–कानों के थपेड़े **उत्सर्पन्तीभिः**–ऊपर को उठती हुई धूमलेखा । उठती हुई धूमलेखा मानो । नियमधारी वृक्षों के कृष्णमृगचर्मधारण की शोभा का सम्पादन कर रही थी । उत्+सृप्+ङीप्; तृ० ब० व० । **निश्चेतनः**–निर्गतः चेतनायाः । 'सनियमा इव' में गुणोत्प्रेक्षालङ्कार है । 'कृष्णाजिनः…' इत्यादि में लुप्तोपमालंकार है ।

इत्येवं चिन्तयन्तमेव मां तस्यामेवाशोकतरोरधश्छायायामेकदेशे स्थापयित्वा हारीतः पादावुपगृह्य कृताभिवादनः पितुरनतिसमीपवर्तिनि कुशासने समुपाविशत् । आलोक्य तु मां सर्व एव मुनयः 'कुतोऽयमासादितः शुकशिशुः' इति तमासीनमपृच्छन् । असौ तु तानब्रवीत्–अयं मया स्नातुमितो गतेन कमलिनीसरस्तीरतरुनीडपतितः शुकशिशुरातपजनितक्लान्तिरुत्तप्तपांसुपटलमध्यगतो दूरनिपतनविह्वलतनुरल्पावशेषायुरासादितस्तपस्विदुरारोहतया च तस्य वनस्पतेर्न शक्यते स्वनीडमारोपयितुमिति जातदयेनानीतः ।

हिन्दी-अनुवाद—इस प्रकार बात करते हुए मुझको उसी रक्ताशोक वृक्ष की छाया में एक ओर रखकर (मुनिकुमार) हारीत पिता के चरणों में विनत होकर तथा प्रणाम निवेदित कर कुछ दूर पर विद्यमान कुशासन पर बैठ गया। मुझे तो देखकर सभी मुनियों ने 'यह सुए का बच्चा कहाँ से मिला ?' इस प्रकार बैठे हुए उस (मुनिकुमार हारीत) से पूछा। हारीत ने उनसे कहा—'पद्मसरोवर के तटवर्ती (सेमर) वृक्ष के नीड घोंसले से गिरा हुआ, गर्मी के कारण उत्पन्न थकावट वाला, भभकते धूलिसमूह में पड़ा हुआ, ऊँचाई से गिरने के कारण व्याकुल शरीर वाला तथा अत्यल्प बची-खुची आयु वाला यह सुग्गे का बच्चा स्नान करने के लिए यहाँ से गये हुए—मुझको प्राप्त हुआ। उस सेमरवृक्ष के तपस्विजनों द्वारा न चढ़े जा सकने योग्य होने के कारण चूंकि (इसका) अपने घोंसले पर चढ़ाया जाना असम्भव नहीं था इसलिए दयावश (साथ) लाया गया।

संस्कृत-व्याख्या—इत्येवम्=पूर्वोक्तविधिना, चिन्तयन्तम् एव=विचारयन्तम् एव, माम्=वैशम्पायनम्,तस्यामेव=पूर्वनिर्दिष्टायाम् एव,अशोकतरोः=अशोकपादपस्य, अधश्छायायाम्=अधस्तनेऽनातपे, एकदेशे=एकभागे, स्थापयित्वा=निधाय, हारीतः=एतदाख्यः जाबालिपुत्रः, पादौ=पितुः चरणौ, उपगृह्य=संस्पृश्य, कृताभिवादनः=कृतं विहितम् अभिवादनं प्रणामः येन सः तादृशः, पितुः=तातस्य जाबालेः, अनतिसमीपवर्तिनि=न अतिसमीपे वर्तते इति तच्छील तस्मिन् किञ्चिद्दूरस्थे, कुशासने=कुशानां दर्भाणाम् आसने विष्टरे, समुपाविशत्=उपविष्टः, तु=पुनः, माम्=वैशम्पायनम्, आलोक्य=प्रेक्ष्य, सर्वे एव=सकलाः एव, मुनयः=ऋषयः, अयम्=पुरो दृश्यमानः, शुकशिशुः=कीरपोतः, कुतः=कस्मात् स्थानात्, आसादितः=प्राप्तः, इति=एवम्, आसीनम्=उपविष्टम्, तम=हारीतम्, अपृच्छन्=पृष्टवन्तः, तु=पुनः असौ=हारीतः, तान्=मुनीन्, अब्रवीत्=जगाद, अयम्=पुरो दृश्यमानः, शुकशिशुः=कीरपोतः, अस्मात्=आश्रमात्, स्नातुम्=अवगाहितुम्, गतेन=प्रस्थितेन, मया=हारीतेन, कमलिनीसरस्तीरतरुनीडपतित=कमलिनीनां नलिनीनां सरः जलाशयः पद्मसरः तस्य तीरे तटे यः तरुः द्रुमः तस्य नीडात् कुलायात्

पतितः भ्रष्टः, आतपजनितक्लान्तिः=आतपेन सूर्यतेजसा जनिता उत्पादिता क्लान्तिः श्रमः यस्मिन् स तादृशः, उत्तप्तपांसुपटलमध्यगतः=सन्तप्तः उष्णीकृतः यः पांसुपटलः रेणुसमूहः तस्य मध्यगतः अभ्यन्तरवर्ती, दूरनिपतनविह्वलतनुः=दूरात् उच्चस्थानात् यत् निपतनं भ्रंशः तेन विह्वला विकला तनुः देहः यस्य तादृशः [illegible], अल्पावशेषायुः=अल्पं न्यूनम् अवशेषम् अवशिष्टम् आयुः वयः जीवनं यस्य स तादृशः, आसादितः=प्राप्तः, तस्य=पद्मसरस्तीरस्थितस्य तरोः=पादपस्य, तपस्विदुरारोहतया=दुःखेन आरोढुं शक्यः दुरारोहः दुरधिरोहणः तपस्विभिः ऋषिभिः दुरारोहः तपस्विदुरारोहः तस्य भावः तत्ता तया, अयं स्वनीडम्=निजकुलायम्, आरोपयितुम्=प्रापयितुं, न शक्यते=न पार्यते, इति हेतोः, जातदयेन=जाता समुत्पन्ना दया करुणा यस्मिन् तादृशेन मया, अयम्, आनीतः=अस्मानायि।

टिप्पणी–चिन्तयन्तमेव–विचार करते हुये ही। चिन्त्+शतृ; द्वि० ए० व०। अभिवादन–अपने नाम गोत्र का उच्चारण करते हुए चरणस्पर्श करने की क्रिया। अभिवादन की विशेषता–"अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः। चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्॥"–दुरारोह–जिस पर चढ़ना कठिन हो। दुर्+आ+रुह्+खल्। आनीत–आ+नी+क्त।

तद्यावदयमप्ररूढपक्षतिरक्षमोऽन्तरिक्षमुत्पतितुं तावदत्रैव कस्मिंश्चिदाश्रमतरुकोटरे मुनिकुमारकैरस्माभिश्चोपनीतेन नीवारकणनिकरेण विविधफलरसेन च संवर्ध्यमानो धारयतु जीवितम्। अनाथपरिपालनं हि धर्मोऽस्मद्विधानाम्। उद्भिन्नपक्षतिस्तु गगनतलसंचरणसमर्थो यास्यति यत्रास्मै रोचिष्यते। इहैवोपजातपरिचयः स्थास्यति इत्येवमादिकमस्मत्संबद्धमालापमाकर्ण्य किंचिदुपजातकुतूहलो भगवान् जाबालिरीषदावलितकन्धरः पुण्यजलैः प्रक्षालयन्निव मामतिप्रशान्तया दृष्टया दृष्ट्वा सुचिरमुपजातप्रत्यभिज्ञान इव पुनः पुनर्विलोक्य 'स्वस्यैवाविनयस्य फलमनेनानुभूयते' इत्यवोचत्। स हि भगवान्

कालत्रयदर्शी तपः प्रभावाद् दिव्येन चक्षुषा सर्वमेव करतलगतमिव जगदवलोकयति, वेत्ति च जन्मान्तराण्यप्यतीतानि। कथयत्यागामिनमप्यर्थम्, ईक्षणगोचरगतानां च प्राणिनामायुषः संख्यामावेदयति ।

हिन्दी-अनुवाद—अतएव जब तक पक्षमूल न उगने के कारण आकाश में उड़ने के लिए यह समर्थ नहीं होता तब तक यहीं किसी आश्रमस्थ वृक्ष के कोटर में—मुनियों के बच्चों तथा हम लोगों द्वारा लाए गये जंगली धान के कणसमूह तथा नाना प्रकार के फलों के रस से पालन-पोषण किया जाता हुआ—जीवन धारण करे। क्योंकि दीनजनों का संरक्षण हम जैसे लोगों (तपस्वियों) का धर्म है। पंख उग जाने पर, गगन मण्डल में उड़ान भरने लायक बनकर जायेगा, जहाँ इसकी रुचि होगी। अथवा परिचित हो जाने पर यहीं (तपोवन में ही) रह जायेगा। इस प्रकार के अनेक मद्विषयक कथनोपकथन सुनकर उत्पन्न हुए कुछ कुतूहल वाले भगवान् जाबालि तनिक गर्दन मोड़कर—मानों पवित्र जलराशि से मुझे धोते हुये—अत्यन्त प्रसन्न दृष्टि से बड़ी देर तक देखकर तथा उत्पन्न हुए प्रत्यभिज्ञान (पुरानी पहचान वाले व्यक्ति) की भाँति बारम्बार निहार कर बोले—'अपने ही अशिष्ट आचरण का फल यह भुगत रहा है।' क्योंकि (भूत-भविष्य-वर्तमान) त्रिकालदर्शी वह भगवान् जाबालि तपश्चर्या के प्रभाव से दिव्य दृष्टि से सम्पूर्ण भूतल को ही हथेली पर आये हुए की भाँति देखते थे तथा बीते हुए अन्यान्य जन्मों को भी जानते थे, भावी विषयों (घटनाओं) को भी कहते थे तथा दृष्टिपथ में आये हुए प्राणियों की आयु की इयत्ता बता देते थे।

संस्कृत-व्याख्या—तत् =तस्माद्धेतोः, यावत् =यावत्समयपर्यन्तम्, अयम् =शुकशावकः, अप्ररूढपक्षतिः=न प्रकर्षेण पूर्णतया रूढा उत्पन्ना पक्षतिः पक्षमूलं यस्य तादृशः, अन्तरिक्षम् =गगनम्, उत्पतितुम् =उड्डयितुम्, अक्षमः =असमर्थः,तावत् =तावत्कालपर्यन्तम्,अत्रैव = अस्मिन्नेव आश्रमे,कस्मिंश्चित् =कस्मिन्नपि एकस्मिन्, आश्रमतरुकोटरे=आश्रमस्य तपोभूमेः ये तरवः द्रुमाः तेषां कोटरे स्कन्धविवरे, मुनिकुमारकैः =ऋषिशिशुभिः, अस्माभिश्च =मया

सहितैः मुनिभिश्च, **उपनीतेन**=आनीतेन, **नीवारकणनिकरेण**=नीवारस्य मुनि-धान्यविशेषस्य कणानां तण्डुलानां निकरेण समूहेन, **विविधफलरसेन च**=विवि-धानां बहुप्रकाराणां फलानां सत्यानां रसेन द्रवेण च, **संवर्ध्यमानः**=वृद्धिं प्राप्य-माणः, **जीवितम्**=जीवनम्, **धारयतु**=दधातु, **हि**=यतः, **अस्मद्विधानाम्**=वयं मुनयः विधाः प्रकाराः येषां तेषाम् अस्मत्सदृशानां साधूनाम्, **अनाथपरिपा-लनम्**=अनाथानाम् दीनानां परिपालनं संरक्षणम्, **धर्मः**=कर्त्तव्यम्, **तु**=पुनः, **उद्भिन्नपक्षतिः**=उद्भिन्ना स्फुटिता पक्षतिः पक्षमूलं यस्य स तादृशः, **यत्र**=यस्मिन् स्थाने, गमनं व्रजनम् **अस्मै**=शुकशावकाय, **रोचिष्यते**=रुचिकरं भविष्यति, **तत्र यास्यति**=गमिष्यति, **वा**=अथवा, **उपजातपरिचयः**=उपजातः उत्पन्नः परिचयः संस्तवः यस्य सः तादृशः सन्, **इहैव**=अस्मिन् आश्रमे एव, **स्थास्यति**=निवत्स्यति इति, **एवमादिकम्**=एवम् इत्थंभूतं वृत्तम् आदौ यस्य तम्, **अस्मत्सम्बद्धम्**=मया वैशम्पायनेन संबद्धं बद्धं मद्विषयकमित्यर्थः, **आलापम्**=संलाप प्रश्नोत्तररूपम्, **आकर्ण्य**=श्रुत्वा, **किञ्चिदुपजातकुतूहलः** =किञ्चित् स्वल्पम् उपजातम् उत्पन्नं कुतूहलं कुतुकं यस्य स तादृशः, **भगवान्** ऐश्वर्यशाली, जाबालिः, **ईषदावलितकन्धरः**=ईषत् किञ्चित् आवलिता आनमिता कन्धरा ग्रीवा येन सः, **पुण्यजलैः**=पुण्यानि सुकृतानि एव जलानि सलिलानि तैः, **प्रक्षालयन् इव**=धौतीकुर्वन् इव, **माम्**=वैशम्पायनम्, **अति-प्रशान्तया**=अत्यन्तशान्तिसम्पन्नया, **दृष्टया**=चक्षुषा, **सुचिरम्**=बहुकालं यावत्, **दृष्ट्वा**=विलोक्य, **उपजातप्रत्यभिज्ञानः इव**=उपजातं प्रत्यभिज्ञानं 'सोऽयम्' इत्याकारकं ज्ञानं यस्यः स इव, **पुनःपुनः**=मुहुर्मुहुः, **विलोक्य**=दृष्ट्वा, **अनेन**=शुकशावकेन, **स्वस्य**=आत्मनः, **एव अविनयस्य**=अशिष्टाचारस्य, **फलम्**=परिणामः, **अनुभूयते**=भुज्यते, **इति**=एवम्, **अवोचत्**=जगाद, **हि**=निश्चयेन, **सः**=असौ, **भगवान्**=महात्मा जाबालिः, **कालत्रयदर्शी**=कालानाम् अतीतानागतवर्तमानानां त्रयं त्रिकं पश्यतीति तच्छीलः त्रिकालदर्शी, **तपःप्रभावात्**=तपसः तपश्चर्यायाः प्रभावः तेजः तस्मात्, **दिव्येन**=अलौकिकेन, **चक्षुषा**=दृष्ट्या, **सर्वम् एव**=सकलम् एव, न तु अंशमात्रमित्यर्थः, **जगत्**=भुवनम्, **करतलगतम् इव**=हस्ततलस्थितम् इव, **अवलोकयति**=पश्यति, **च**=

तथा, अतीतानि=गतानि, जन्मान्तराणि=अन्यत् जन्म जन्मान्तरं तानि भवान्तराणि, अपि किं पुनः वर्तमानम्, वेत्ति=जानाति, आगामिनम्=आगमिष्यन्तम् अर्थम्=विषयम् अपि, कथयति=निरूपयति, च=तथा, ईक्षणगोचरगतानाम् =ईक्षणयोः नयनयोः गोचरः विषयतां गतानां प्राप्तानाम्, प्राणिनाम्=जीवानाम्, आयुषः=जीवितव्यस्य, संख्याम्=इयत्ताम्, आवेदयति=बोधयति।

टिप्पणी–अप्ररूढ़–प्र+रुह्=क्त। ईषदावलितकन्धरः–थोड़ी गरदन मोड़कर, 'ईषत्' पद से जाबालि मुनि की गम्भीरता प्रकट हो रही है 'किञ्चिदुपजातकुतूहलः' कथन से थोड़ा कुतूहल उत्पन्न उत्पन्न होना थोड़ी गरदन मोड़कर अति प्रशान्त दृष्टि से देखना. ये सब क्रियाएँ उनकी धीरता की पोषक हैं। संवर्ध्यमानः–सम्+वृध्+यक्+शानच्। 'अस्मै रोचिष्यते'–'रुच्यर्थानां प्रीयमाणः' से चतुर्थी। प्रत्यभिज्ञान–पूर्वदृष्ट व्यक्ति का कुछ दिनों के पश्चात् पुनः साक्षात्कार होने पर 'यह वही व्यक्ति है' इस प्रकार का ज्ञान प्रत्यभिज्ञान कहलाता है। 'पुण्यजलैः' में निरङ्गकेवल रूपक है। 'प्रक्षालयन्निव' में क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार है।

ततः सर्वैव सा तापसपरिषच्छ्रुत्वा विदिततत्प्रभावा कीदृशोऽनेनाविनयः कृतः, किमर्थं वा कृतः क्व वा कृतः, जन्मान्तरे व कोऽयमासीद् इति कुतूहलिन्यभवत्। उपनाथितवती च तं भगवन्तम् आवेदय, प्रसीद भगवन्! कीदृश्याविनयस्य फलमनेनानुभूयते, कश्चायमासीज्जन्मान्तरे, विहगजातौ का कथमस्य संभवः, किमभिधानो वायम्। अपनयतु नः कुतूहलम्। आश्चर्याणां हि सर्वेषां भगवान् प्रभवः।

हिन्दी-अनुवाद—इसके बाद, उनके माहात्म्य को जानने वाली सारी की सारी वह मुनिसभा (पूर्वोक्त वक्तव्य को) सुनकर—'इसने किस प्रकार का अशिष्टाचरण किया था? अथवा किसलिये किया था? अथवा कहाँ (किस प्रदेश में) किया था! अथवा पूर्वजन्म में यह कौन था?' इस प्रकार कौतुक सम्पन्न (जिज्ञासु) हो उठी तथा बारम्बार उस भगवान् जाबालि से अभ्यर्थना करने लगी—'हे भगवन्! बताइये, प्रसन्न हो जाइये। किसी प्रकार

की उद्दण्डता का फल यह भोग रहा है ? और पूर्वजन्म में यह था कौन ? अथवा पक्षियोनि में कैसे इसका जन्म हुआ ? अथवा इसका नाम क्या है ? हम लोगों का आश्चर्य दूर कीजिए ! क्योंकि भगवान् (आप) समस्त आश्चर्यों के उद्भवस्थान हैं।

संस्कृत-व्याख्या—ततः=तदनन्तरम्, सर्वा एव=समस्तैव, सा=पूर्ववर्णिता, तापसपरिषद्=तापसानां तपस्विनां पारषद् सभा, श्रुत्वा=शुकवृत्तान्तं निशम्य, विदिततत्प्रभावा=विदितः ज्ञातः तस्य महर्षेः प्रभावः माहात्म्यं येन सा, अनेन=शुकशिशुना, कीदृशः=किंप्रकारः, अविनयः=असदाचारः, कृतः=विहितः, वा=अथवा, किमर्थम्=कस्मै हेतवे, कृतः, अथवा, क्व=कस्मिन् स्थाने, कृतः, अथवा, अयम्=एषशुकशावकः, जन्मान्तरे=अन्यत् जन्म जन्मान्तरं तस्मिन् पूर्वजन्मनि, कः आसीत्=अभवत्, इति=इत्थम्, कुतूहलिनी=कौतुकवती, अभवत्=बभूव, च=तथा, तम्=पूर्वोक्तम्, भगवन्तम्=महात्मानं जाबालिम्, उपनाथितवती=प्रार्थयामास, भगवन्=महात्मन्, प्रसीद=प्रसन्नो भव, आवेदय=कथय, अनेन=शुकशिशुना, कीदृशस्य=किंप्रकारस्य, अविनयस्य=अशिष्टतायाः, फलम्=भोगः, अनुभूयते=भुज्यते, च=तथा, अयम्=शुकशिशुः, जन्मान्तरे=अन्यत् जन्म जन्मान्तरं तस्मिन् पूर्वजन्मनि, कः आसीत् =अभवत्, वा=अथवा, अस्य=शुकशावकस्य, विहगजातौ=विहगः खगः तस्य जातौ योनौ, वंशे वा, कथम्=केन हेतुना, संभवः=उत्पत्तिः, वा=अथवा, अयम्=शुकशिशुः, किमभिधानः=किम् अभिधानं यस्य सः किंनामा, नः=अस्माकम्, कुतूहलम्=आश्चर्यम्, अपनयतु=दूरीकरोतु, हि=यतः, भगवान्=माहात्म्यवान् भवान्, सर्वेषाम्=समस्तानाम्, आश्चर्याणाम्=विस्मयानाम्, प्रभवः=हेतुः।

टिप्पणी—**परिषद्**—'समज्या परिषद् गोष्ठी सभासमितिसंसदः। आस्थानी क्लीबमास्थानं स्त्रीनपुंसकयोः सदः'। इत्यमरः। **श्रुत्वा**—श्रु+क्त्वा=श्रुत्वा। **कुतूहल**—कौतुक, जिज्ञासा, आश्चर्य। "कौतूहलं कौतुकं च कुतुकं च कुतूहलम्" इत्यमरः। **उपनाथितवती**—उप+नाथ+क्तवतु+ङीप्। **अभिधान**—"आख्या-

ह्वेऽभिधानं च नामधेयं च नाम च" इत्यमरः। भगवान् – भग + मतुप + भगवत्; प्र० ए० व।

इत्येवमुपयाचितस्तपोवनपरिषदा स महामुनिः प्रत्यवदत्—अतिमहदिदमाश्चर्यमाख्यातव्यम्। अल्पशेषमहः। प्रत्यासीदति च नः स्नानसमयः। भवतामप्यतिक्रामति देवार्चनविधिवेला। तदुत्तिष्ठन्तु भवन्तः सर्व एवाचरन्तु यथोचितं दिवसव्यापारम्। अपराह्णसमये भवतां पुनः कृतमूलफलाशनानां विस्रब्धोपविष्टानामादितः प्रभृति सर्वमावेदयिष्यामि योऽयम्, यच्चानेन कृतमपरस्मिन् जन्मनि, इह च लोके यथास्य संभूतिः, अयं च तावदपगतक्लमः क्रियतामाहारेण। नियतमयमप्यात्मनो जन्मान्तरोदन्तं स्वप्नोपलब्धमिव मयि कथयति सर्वमशेषतः स्मरिष्यति इत्यभिदधदेवोत्थाय सह मुनिभिः स्नानादिकमुचितदिवसव्यापारमकरोत्।

हिन्दी-अनुवाद—मुनिसभा द्वारा इस प्रकार अभ्यर्थित होकर उन महामुनि (जाबालि) ने कहा–"वर्णन करने योग्य यह आश्चर्य (पूर्ण वृत्तान्त) अत्यन्त विशाल है। दिन थोड़ा रह गया है। हमारे स्नान का समय हो रहा है। आप लोगों की भी देवपूजन—वेला बीतती जा रही है। इसलिए आप लोग उठें। सभी लोग यथायोग्य दैनिक-कृत्य सम्पादित कर लें दुबारा कन्दमूल एवं फलों का आहार किए हुए तथा सावधान (स्वस्थचित्त) होकर बैठे हुए आप लोगों के लिए अपराह्ण वेला में प्रारम्भ से लेकर समस्त वृत्तान्त निवेदित करूँगा। (पूर्वजन्म में) यह जो था और पूर्वजन्म में इसने जो कुछ किया तथा इस पृथ्वी तल पर जैसे इसका जन्म हुआ। तब तक इसे भी खिला-पिला कर विगतश्रम (थकावटहीन) बनाइये। निश्चय ही (अपनी रामकथा) मेरे वर्णित करने पर वह (सुआ) भी मानो स्वप्न में प्राप्त हुए (अपने) पूर्वजन्म के सम्पूर्ण वृत्तान्त को अमूलचूड स्मरण कर लेगा।" इस प्रकार कहते हुए ही उन मुनियों के साथ उठकर स्नानादि यथोचित दैनिक कार्यकलाप सम्पन्न किया।

संस्कृत-व्याख्या—**इत्येवम्**=अनेन विधिना, **तपोधनपरिषदा**=तपः एव धनं येषां ते तपोधनाः तापसाः तेषां परिषद् समज्या तया, **उपयाचितः**=प्रार्थितः, **सः**=पूर्वोक्तः, **महामुनिः**=महर्षिः जाबालिः, **प्रत्यवदत्**=प्रत्युवाच, **इदम्**=शुकशिशपरिचयात्मकम्, **अतिमहत्**=अतिविस्तृतम्, **आश्चर्यम्**=विस्मयः, **आख्यातव्यम्**=विस्तरेण वक्तव्यम्, **अहुः**=वासरः, **अल्पशेषम्**=स्वल्पावशिष्टम्, **च**=तथा, **नः**=अस्माकम्, **स्नानसमय**=अवगाहकालः, **प्रत्यासीदति**=निकटमायाति, **भवताम्**=युष्माक मुनीनाम् अपि, **देवार्चनविधिवेला**=देवस्य परमेश्वरस्य अर्चनं पूजनं तस्य विधिः विधानं तस्य वेला कालः, **अतिक्रामति**=अत्येति, **तत**=तस्मात् कारणात्, **भवन्तः**=यूयम्, **उत्तिष्ठन्तु**=उत्थानं कुर्वन्तु, **सर्वे एव**=समस्ताः एव, **यथोचितम्**=उचितम् अनतिक्रम्य यथायोग्यम्, **दिवसव्यापारम्**=दिवसस्य दिनस्य व्यापारः तं दैनिकक्रियाम्, **आचरन्तु**=कुर्वन्तु,**अपराह्णसमये**=अपराह्णश्चासौ समयः अपराह्णसमयः तस्मिन् सायंकाले, **पुनः**=भूयः, **कृतमूलफलाशनानाम्**=कृतं विहितं मूलानां कन्दानां फलानां सस्यानां च अशनं भोजनं यैः तेषाम्, **विस्रब्धोपविष्टानाम्**=विस्रब्धं विश्वस्तं यथा स्यात् तथा उपविष्टानाम् स्थितानाम्, **भवताम्**=युष्माकम्, **आदितः**=प्रारम्भतः, **प्रभृति**=आदाय, **सर्वम्**=समस्तम्, **आवेदयिष्यामि**=कथयिष्यामि । किं तदाख्यातव्यमित्याह, **अयम्**=शुकशिशुः यः आसीत्; **अनेन**=शुकशिशुना, **यत्**=कर्म, **कृतम्**=विहितम्, **अपरस्मिन्**=पूर्वस्मिन्, **जन्मनि**=जन्मान्तरे, भवे, **इह**=अस्मिन्, **लोके**=संसारे च, **अस्य**=शुकशिशोः, **यथा**=येन हेतुना, **संभूतिः**=उत्पत्तिः,**तावत्**=तत्कालपर्यन्तम्, **अयम्**=शुकशावकः, **आहारेण**=भोजनेन, **अपगतक्लमः**=अपगतः विनष्टः क्लमः श्रमः यस्य स तादृशः, **क्रियताम्**=विधीयताम्, **नियतम्**=निश्चितम्, **अयम् अपि**=शुकशावकः अपि, **मयि**=जाबालौ, **कथयति**=आवेदयति सति, **सर्वम्**=समस्तम्, **जन्मान्तरोदन्तम्**=पूर्वजन्मवृत्तम्, **स्वप्नोपलब्धम् इव**=स्वप्ने स्वापे उपलब्धं प्राप्तम् इव, **अशेषतः**=पूर्णतः, **स्मरिष्यति**=स्मरणं करिष्यति, **इति**=इत्थम्, **अभिदधत् एव**=कथयन् एव, **उत्थाय**=उत्थानं कृत्वा, **मुनिभिः**=ऋषिभिः, **सह**=सार्धम्, **स्नानादिकम्**=स्नानम् अवगाहनम्

आदौ आरम्भे यस्य तम्, उचितदिवसव्यापारम् =उचितः योग्यः स चासौ दिवसव्यापारः दैनन्दिक्रिया तम्, अकरोत्=विहितवान् ।

टिप्पणी—प्रत्यवदत्—प्रति+वद धातु लङ् लकार प्र० पु० ए० व० । आख्यातव्यम्—आङ्+चक्षिङ् (ख्या) +तव्यत्, अभिदधत्—कहते हुए । अभि +धा+शतृ । उत्थाय—उत्+स्था+क्त्वा—ल्यप् ।

अनेन च समयेन परिणतो दिवसः । स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्घविधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तमम्बरतलगतः साक्षादिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुदवहत् । ऊर्ध्वमुखैरर्कबिम्बार्पितदृष्टिभिरूष्मपैस्तपोधनैरिव परिपीयमानतेजःप्रसरो विरलातपस्तनिमानमभजत् उद्यत्सप्तर्षिसार्थस्पर्शपरिजिहीर्षयेव संहृतपादः पारावतपादपाटलरागो रविरम्बरतलादवालम्बत । आलोहितांशुजालजलशयनमध्यगतस्य मधुरिपोर्विगलन्मधुधारामिव नाभिनलिनं प्रतिमागतमपरार्णवे सूर्यमण्डलमलक्ष्यत । विहाय धरणीतलमुन्मुच्य च कमलिनीवनानि शकुनय इव दिवसावसाने तरुशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वत । आलग्नलोहितातपच्छेदा मुनिभिरालम्बितलोहितवल्कला इव तरवः क्षणमदृश्यन्त ।

हिन्दी-अनुवाद—इस समय तक दिन ढल गया । स्नान से निबटे हुए तपस्विवर्ग ने (लाल चन्दन एवं लाल फूल आदि द्वारा) पूजाविधि निष्पन्न करते हुए भूतल पर जिसे प्रदान किया था उस रक्तचन्दन के अङ्गराग को आकाशमण्डल में विराजमान सूर्य ने मानो (रक्तवर्ण होकर) साक्षात् रूप से धारण कर लिया । ऊपर की ओर मुख उठाए हुए, सूर्यमण्डल पर आँखें टिकाए हुए तथा उष्मा का पान करने वाले तपोवनों द्वारा मानों भलीभाँति पिये जाते हुए कान्तिविस्तार वाला अतएव अत्यल्प प्रकाश से युक्त (सूर्य) क्षीणता को प्राप्त हो गया । उदीयमान सप्तर्षिमण्डल के स्पर्श को मानों बचाने की इच्छा से 'चरणों' (अर्थात किरणों) को समेट कर, कपोतपक्षियों के चरणों की भाँति

श्वेतरक्त अरुणिमावाला सूर्य गगनमण्डल से (नीचे) लटक गया। कुछ-कुछ ललछौंह किरणपुञ्जवाला तथा पश्चिमी समुद्र में प्रतिबिम्बित होने वाला सूर्य-मण्डलजलशय्या पर विद्यमान 'मधुरिपु' भगवान् विष्णु के झरती हुई मकरन्द-धारा वाले नाभिकमल के समान दिखाई पड़ा। भूतल को छोड़कर तथा कमलिनियों के वनों को बिदा देकर दिनान्तवेला में वृक्षों की चोटियों तथा पर्वत-शिखरों पर 'स्थिति' अर्थात् बसेरा लेने वाले पक्षियों की भाँति सूर्यकिरणों ने (भी) दिन ढल-जाने पर धरातल को छोड़ कर एवं कमलिनियों के वनों को बिदा देकर तरुशिखरों तथा पर्वताग्रभागों पर स्थान ले लिया। सूर्य के) लोहित वर्ण वाले प्रकाशखण्डों से ईषत् सम्बद्ध आश्रम के वृक्ष क्षण भर के लिए (ऐसे) दिखाई पड़े मानो मुनियों द्वारा (शोषणार्थ) लटकाए गए लाल रंग वाले वल्कलवस्त्रों से संवलित हों।

संस्कृत व्याख्या—**अनेन**=एतेन च, **समयेन**=कालेन, **दिवसः**=वासरः, **परिणतः**=समाप्तप्रायः, **स्नानोत्थितेन**=स्नानात्, अवगाहनात्, **उत्थितेन**=निवृत्तेन **मुनिजनेन**=ऋषिवर्गेण, **अर्घविधिम्**=अर्घस्य विधिः अर्घविधिः तं, रक्तचन्दनमिश्रितजलदानात्मकं पूजाकर्म, **उपपादयता**=सम्पादयता, **यः**=रक्त-चन्दनाङ्गरागः, **क्षितितले**=भूतले, **दत्तः**=अर्पितः, **तम्**=मुनिजनप्रदत्तम्, **रक्तचन्दनाङ्गरागं**=रक्तचन्दनं रञ्जनम् एव अङ्गरागः उपलेपः तम् **अम्बरत-लगतः**=गगनस्थितः, **रविः**=दिनकरः, **साक्षादिव**=प्रत्यक्षम् इव, **उद्वहत्**=अधारयत्, **ऊर्ध्वमुखैः**=ऊर्ध्वम् उपरिष्टाद् मुखम् लपनं येषां तैः, **अर्कबिम्बवि-निहितदृष्टिभिः**=अर्कस्य दिनकरस्य बिम्बे मण्डले विनिहिता स्थापिता दृष्टिः नेत्रं यैः तैः तथाभूतैः **ऊष्मपैः**=ऊष्मणं पिबन्तीति तैः पञ्चाग्नितपोऽङ्गत्वेन वह्निपायिभिः **तपोधनैः**=तप एव धनं येषां तैस्तथोक्तैः तपस्विभिः, **परिपीय-मानतेजःप्रसरः इव**=परिपीयमानः आस्वाद्यमानः तेजसां कान्तीनां प्रसरः प्रचारः समूहो वा यस्य स तादृशः इव, **विरलातपः**=विरलः स्वल्पः स चासौ आतपः आलोकः, **तनिमानम्**=क्षीणताम्, **अभजत्**=अगच्छत्, **उद्यत्सप्तर्षिसा-र्थस्पर्शपरिजिहीर्षया इव**=उद्यतः उदयं प्राप्नुवतः सप्तर्षिसार्थस्य सप्तर्षिमण्डल-स्य यः स्पर्शः पादसंसर्गः तस्य परिजिहीर्षा परिहर्तुम् इच्छा तया इव, **संहृतपादः**

=संहृताः संकोचिताः पादाः चरणाः येन सः, **पारावतपादपाटलरागः**=पारावतः कपोतः तस्य: पादवत् चरणवत् पाटलः श्वेतरक्तःरागः कान्ति यस्य सः, **रविः**=दिनकरः, **अम्बरतलात्**=गगनतलात्, **अवालम्बत**=अवातरत्, **अपरार्णवे**=अपरः पश्चिमः अर्णवः सागरः तस्मिन् **प्रतिमागतम्**=प्रतिमां प्रतिबिम्बतां गतं प्राप्तम्, **आलोहितांशुजालम्**=आ ईषत् लोहितं रक्तवर्णम् अंशुजालं रश्मिपटलं यस्य तत्, **सूर्यमण्डलम्**=भास्करबिम्बम्, **जलाशयनमध्यगतस्य**=जले सलिले यत् शयनं शय्या मध्यगतस्य मध्यस्थितस्य, **मधुरिपोः**=मधुः एतन्नामा दैत्यः तस्य रिपुः शत्रुः विष्णुः तस्य विष्णोः, **विगलन्मधुधारम्**=विगलन्त्यः स्रवन्त्यः मधुनः परागस्य धाराः स्रोतांसि यस्मात् तत्, **नाभिनलिनम् इव**=नाभेः नलिनं कमलम् इव, **अलक्ष्यत**=अदृश्यत, **दिवसावसाने**=दिवसस्य दिनस्य अवसाने समाप्तौ, **रविकिरणाः**=रवेः सूर्यस्य किरणाः मयूखाः, **शकुनयः इव**=खगाः इवः **धरणीतलम्**=भुवनतलम्, **विहाय**=त्यक्त्वा, **कमलिनीवनानि च**=कमलिनीनां पद्मिनीनां वनानि गहनानि च, **उन्मुच्य**=मुक्त्वा, **तरुशिखरेषु**=तरूणां वृक्षाणां शिखरेषु शाखाग्रेषु, **पर्वताग्रेषु च**=पर्वतानां शिखरिणाम् अग्रेषु शिखरेषु च, **स्थितिम्**=निवासम्, **अकुर्वत**=कृतवन्तः, **आलग्नलोहितातपच्छेदाः**=आ ईषत् लग्नाः संसक्ताः लोहिताः रक्तवर्णाः आतपच्छेदाः आलोकखण्डाः येषु ते, **तरवः**=पादपाः, **क्षणम्**=किञ्चित्कालम्, **मुनिभिः**=तपस्विभिः, **आलम्बितलोहितवल्कलाः इव**=आलम्बितानि आश्रितानि लोहितानि रक्तवर्णानि वल्कलानि तरुत्वचः येषु ते तादृशा इव, **अदृश्यत**=अलक्ष्यन्त ।

टिप्पणी–**उदवहत्**—उत्+वह्, धातु लङ् प्र० पु० ए० व० । **ऊष्मपः**—वह्निपायी तपस्वी, तपस्या करने वाले महात्मा अपने चारों ओर अग्नि जलाकर तो तप करते ही हैं, पंचम अग्नि के रूप में सूर्य की ऊष्मा का भी पान करते हैं । **जलशयननाभिनलिनम्**–जल के मध्य शय्या पर शयन करने वाले मधुदैत्य-विनाशी भगवान् विष्णु की नाभि के उस कमल के समान जिससे मधुधाराएँ निकलकर बह रही हों । **नाभिनलिनमिव'** में उपमालङ्कार है ।

अस्तमुपगते च भगवति सहस्रदीधितावपरार्णवतलादुल्लसन्ती विद्रुमलतेव पाटला संध्या समदृश्यत । यस्यामाबध्यमानध्यानम्, एकदेशदुह्यमानहोमधेनुदुग्धधाराध्वनितधन्यतरातिमनोहरम्, अग्निहोत्रवेदिविकीर्यमाणहरित्कुशम, ऋषिकुमारिकाभिरितस्ततो विक्षिप्यमाणदिग्देवताबलिसिक्थमाश्रमपदमभवत् । क्वापि विहृत्य दिवसावसाने लोहिततारका तपोवनधेनुरिव कपिला परिवर्तमाना सन्ध्या तपोधनैरदृश्यत ।

हिन्दी-अनुवाद—सहस्र किरणों वाले भगवान् सूर्य के अदृश्य हो जाने पर पश्चिमी सागरतट से ऊपर उठती हुई तथा मूँगे की लता के समान पाटलवर्ण वाली सन्ध्या दिखाई पड़ी जिसमें कि आश्रमस्थान (मुनियों द्वारा) लगाए जाते हुए ध्यानकर्म वाला, एक ओर दुही जाती हुई होमधेनुओं की दुग्धधाराओं के ध्वनन से मन को आकृष्ट करने वाला, अग्निहोत्र की वेदी पर फैलाए जाते हुए हरे कुशों वाला तथा ऋषिकुमारिकाओं द्वारा दिग्देवताओं की पूजा के निमित्त चारों ओर बिखेरे जाते हुए बलि (उपहार या नैवेद्य) सम्बन्धी सिद्धान्तों वाला हो गया ।

कहीं घूम-टहल कर, सन्ध्याकाल में (घर) लौट कर आती हुई लाल पुतलियों वाली 'कपिला' तपोवन की गाय के समान—कहीं (अर्थात् पर्वतों, नदियों, वनों आदि में) पर्यटन करके, दिन ढलते ही लालरङ्ग के तारकों (नक्षत्रों) से संकुल पिङ्गलवर्ण लौटती हुई सन्ध्या को मुनिजनों ने देखा ।

संस्कृत-व्याख्या—**भगवति**=प्रभाववति, **सहस्रदीधितौ**=दिनकरे च, **अस्तम्**=अदृश्यताम्, **उपगते**=प्राप्ते सति, **अपरार्णवतलात्**=पश्चिमसमुद्रतीरात्, **उल्लसन्ती**=प्रस्फुरन्ती, **विद्रुमलता इव**=प्रवालपङ्क्तिः इव, **पाटला** श्वेतरक्ता, **संध्या**=सन्धिवेला, **समदृश्यत**=समलक्ष्यत, **यस्याम्**=संध्यायाम्, **आश्रमपदम्**=आश्रमभूमिः, **आबध्यमानध्यानम्**=आबध्यमानं विधीयमानं ध्यानम् एकतानवृत्तिः यत्र तत् तादृशम्, **एकदेशदुह्यमानहोमधेनुदुग्धधाराध्व-**

नितधन्यतरातिमनोहरम् = एकदेशे एकभागे दुह्यमानानां दोहनविषयीक्रियमाणानां होमधेनूनां यज्ञगवीनां दुग्धाराभिः पयःप्रवाहैः ध्वनितं शब्दायितम् अतएव धन्यतरं श्लाघ्यतरम् अतएव च अतिमनोहरम् अत्यधिकसुन्दरम्, **अग्निहोत्रवेदिविकीर्यमाणहरित्कुशम्** = अग्निहोत्राणां यज्ञविशेषाणां वेदिषु चतुरस्रभूमिषु विकीर्यमाणाः निक्षिप्यमाणाः हरिताः श्यामवर्णाः कुशाः दर्भाः यत्र तत् तादृशम्, **ऋषिकुमारिकाभिः** = ऋषीणां मुनीनां कुमारिकाभिः पुत्रीभिः, **इतस्ततः** = चतुर्षु दिक्षु, **विक्षिप्यमाणदिग्देवताबलिसिक्थम्** = विक्षिप्यमाणाः विकीर्यमाणाः दिग्देवताभ्यः दिक्पालेभ्यः बलिसिक्थाः उपहारान्नानि यत्र तत् तादृशम्, **अभवत्** = आसीत्, **क्वापि** = कस्मिन्नपि अज्ञातप्रदेशे, **विहृत्य** = पर्यटनं विधाय, **दिवसावसाने** = दिवसस्य दिनस्य अवसाने समाप्तौ, **परिवर्तमाना** = प्रत्यागता, **लोहिततारका** = लोहिते रक्तवर्णे तारके कनीनिके यस्याः सा, सन्ध्यापक्षे लोहिताः रक्तवर्णाः तारकाः नक्षत्राणि यस्यां सा, **कपिला** = कनकवर्णा, **तपोवनधेनुः इव** = तपोवनस्य आश्रमस्य, धेनुः गौः इव, **संध्या** = सायंसमयः, **तपोधनैः** = तापसैः, **अदृश्यत** = अलक्ष्यत ।

टिप्पणी-भगवति—भग + मतुप्; म को व; स० ए० व० । **उल्लसन्ती**—उत् + लस् + शतृ + ङीष् । **दिग्देवताबलिसिक्थ**—दिक्पालों के लिए दिया जाने वाला बलिरूप अन्न जो चावलों को पकाकर तैयार किया जाता है । इसे भक्तसिक्थ या पुलाव भी कहते हैं । पौराणिक मान्यता के अनुसार दशों दिशाओं के दश स्वामी हैं जिन्हें दिक्पाल कहा जाता है । ये पूर्वादिक्रम से १–इन्द्र, २–अग्नि, ३–यम, ४–नैर्ऋत, ५–वरुण, ६–मरुत्, ७–कुबेर, ८–शिव, ९–ब्रह्मा तथा १०–अनन्त हैं । **दुह्यमान**—दुह् + यक् + शानच् । **विक्षिप्यमाण**—वि + क्षिप् + यक् + शानच् । **विहृत्य**—वि + हृ + क्त्वा—ल्यप् । **कपिला**—भूरे रङ्ग की गाय, कपिलवर्ण वाली संध्या । **परिवर्तमान**—परि + वृत् + शानच् । '**विद्रुमलतेव**' तथा '**तपोवनधेनुरिव**' में **पूर्णोपमालङ्कार** है ।

अचिरप्रोषिते सवितरि शोकविधुरा कमलमुकुलकमण्डलुधारिणी हंससितदुकूलपरिधाना मृणालधवलयज्ञोपवीतिनी मधुकरमण्डलाक्ष-

वलयमुद्वहन्ती कमलिनी दिनपतिसमागमव्रतमिवाचरत् । अपरसागराम्भसि पतिते दिवसकरे वेगोत्थितमम्भः सीकरनिकरमिव तारागणमम्बरमधारयत् । अचिराच्च सिद्धकन्यकाविक्षिप्तसंध्यार्चनकुसुमशबलमिव तारकितं वियदराजत । क्षणेन चोन्मुखेन मुनिजनेनोर्ध्वविप्रकीर्णैः प्रणामाञ्जलिसलिलैः क्षाल्यमान इवागलदखिलः संध्यारागः ।

हिन्दी अनुवाद–(अपने पति स्वरूप) सूर्य के तत्काल प्रोषित (अस्तङ्गत) हो जाने पर बिछोह के कारण विह्वल, कमलकोरक रूपी कमण्डलु को धारण करने वाली, हंस रूपी श्वेतरेशमी वस्त्र पहने हुई, कमलतन्तु रूपी धवल यज्ञोपवीत से युक्त तथा भ्रमरसमूह रूपी रुद्राक्ष जपमाला का वहन करती हुई कमलिनी (अपने परदेशी प्रियतम) सूर्य के समागम-हेतु मानो व्रत का आचरण करने लगी। पश्चिमी सागर की जलराशि में सूर्य के गिर जाने पर, उस पतन के वेग से उछले हुए जलबिन्दु-समूह की भाँति नक्षत्रमण्डल को आकाश ने धारण कर लिया। थोड़ी ही देर में तारकखचित आकाशमण्डल मानो विद्याधर कन्याओं द्वारा बिखेरे गए सन्ध्याकालीन पूजापुष्पों के कारण चितकबरा सुशोभित हो उठा और क्षण भर में ही ऊर्ध्वमुख मुनिजनों द्वारा (ऊपर) छिड़के गए प्रणामकालीन अञ्जलि के जल से मानो धोया जाता हुआ सम्पूर्ण सन्ध्याराग गल गया।

संस्कृत-व्याख्या–**सवितरि**=भगवति भास्करे, **अचिरप्रोषिते**=अचिरं सद्यः प्रोषिते प्रवास गते, **शोकविधुरा**=शोकेन विरहदुःखेन विधुरा व्याकुला, **कमलिनी**=नलिनी, **कमलमुकुलकमण्डलुधारिणी**=कमलस्य नलिनस्य मुकुलः कोरकः एव कमण्डलुः करकः तं धारयति वहतीति सा तादृशी, **हंससितदुकूलपरिधाना**=हंसा मानसौकसः एव सितदुकूलं तत् परिधानं शाटी अधोवस्त्रं वा यस्याः सा, **मृणालधवलयज्ञोपवीतिनी**=मृणालश्वेतयज्ञसूत्रधारिणी, **मधुकरमण्डलाक्षवलयम्**=मधुकराणां भ्रमराणां मण्डलं वलय एव अक्षवलयं जपमाला तत्, **उद्वहन्ती**=धारयन्ती, **दिनपतिसमागमव्रतम् इव**=दिनपतेः सूर्यस्य

समागमाय-संमेलनाय **व्रतं** नियमः तद् इव, **आचरत्**=अपालयत्, अकरोत्, प्रोषितपतिकापक्षे कमलमुकुलवत्, हंसवत्, मृणालवत्, मधुकरमण्डलवत् इत्येवं विग्रहं कृत्वा अर्थः संगमनीयः, **दिवसकरे**=भास्करे, **अपरसागराम्भसि**= अपरः पश्चिमः सागरः समुद्रः तस्य अम्भसि जले, **पतिते**=च्युते, **अम्बरम्**= आकाशम्, **वेगोत्थितम्**=वेगेन रभसेन उत्थितम् उद्गतम्, **अम्भःसीकरनिकरम् इव**=अम्भसः सलिलस्य सीकराणां कणानां निकरः समूहः तम् इव, **तारागणम्** =नक्षत्रमण्डलम्, **अधारयत्**=दधार । **चिरात् च**=शीघ्रमेव च, **सिद्धकन्या-विक्षिप्तसंध्यार्चनकुसुमशबलं इव**=सिद्धकन्याभिः विद्याधरबालिकाभिः विक्षिप्तानि विकीर्णानि यानि संध्यार्चने सायंकालिकपूजने कुसुमानि प्रसूनानि तैः शबलम् इव कर्बुरितम् इव, **तारकितम्**=तारकाः नक्षत्राणि संजाताः अस्येति तादृशम्, **वियत्**=आकाशम्, **अराजत**=अशोभत । **क्षणेन च**=स्वल्पकालेन च, **उन्मुखेन**=उत् ऊर्ध्वं मुखं वदनं यस्य तादृशेन, **मुनिजनेन**=ऋषिवर्गेण, **ऊर्ध्वविप्रकीर्णैः**=ऊर्ध्वम् उपरिदिशि विप्रकीर्णैः विक्षिप्तैः, **प्रणामाञ्जलिसलिलैः** =प्रणामस्य नमस्कारस्य यः अञ्जलिः न्युब्जपाणिविन्यासः तस्य सलिलैः जलैः, **क्षाल्यमानः इव**=धौतःइव, **अखिलः**=समस्तः, **संध्यारागः**=संध्यायाः रागः संधिवेलालौहित्यम्, **अगलत्**=अपतत् ।

टिप्पणी–अचिरप्रोषिते सवितरि–कुछ समय के पूर्व ही भगवान् सूर्य के प्रवास चले जाने पर, यहाँ प्रोषित शब्द का प्रयोग करके कवि ने समासोक्ति अलंकार के द्वारा कमलिनी सविता सम्बन्ध के साथ प्रोषितपतिकानायिका तथा नायक सम्बन्ध की भी व्यञ्जना की है । **मृणालधवलयज्ञोपवीतिनी**– मृणाल ही कमलिनी का सफेद यज्ञोपवीत था, इससे यह ध्वनि निकलती है कि पुरातन समय में स्त्रियाँ भी यज्ञोपवीत धारण करती थीं । महर्षि यम ने लिखा है कि 'पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जीवबन्धनमिष्यते । अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा ॥' महर्षि हारीत ने भी 'द्विविधाः स्त्रियः ब्रह्मवादिन्यः सद्योवध्वश्च । तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनमग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे भिक्षाचर्या ।' कहकर ब्रह्मवादिनी स्त्रियों के यज्ञोपवीत की व्यवस्था दी है ।

उद्वहन्ती–उत्+वह्+शतृ+ङीप् । **तारकित**–तारक+इतच् । **अराजत**–राज् धातु लङ् प्र० पु० ए० व० । **'प्रक्षाल्यमान इव'** में **क्रियोत्प्रेक्षालङ्कार** है। **'अचिरादिव'** में–क्रियोत्प्रेक्षा तथा कमलिनी और सूर्य में स्त्री–पुरुष के व्यवहार के समारोप होने से **'समासोक्ति'** अलङ्कार है ।

क्षयमुपगतायां संध्यायां तद्विनाशदु:खिता कृष्णाजिनमिव विभावरी तिमिरोद्गमनमभिनवमवहत् । अपहाय मुनिहृदयानि सर्वमन्यदन्धकारता तिमिरमनयत् । क्रमेण च रविरस्तं गत इत्युदन्तमुपलभ्य जातवैराग्यो धौतदुकूलवल्कलधवलाम्बर: सतारान्त:पुरपर्यन्तस्थिततनुतिमिरतमालवृक्षलेखसप्तर्षिमण्डलाध्युषितमरुन्धतीसंचरणपूतमुपहिताषाढमालक्ष्यमाणमूलमेकान्तस्थितचारुतारकमृगममरलोकाश्रममिव गगनतलममृतदीधितिरध्यतिष्ठत् ।

हिन्दी-अनुवाद–(सखीस्वरूपा) सन्ध्या के विनष्ट हो जाने पर, उसके विनाश से दु:खी हुई रात्रि ने नवीन कृष्ण मृगचर्म के समान अभिनव अन्धकारोदय को धारण कर लिया। मुनियों के हृदयों को छोड़ कर अन्धकार ने अन्य सब कुछ आत्मसात् कर लिया अर्थात् सब अन्धकार में डूब गए । 'सूर्य अस्त हो गया' परम्परया यह समाचार पाकर–चौहद्दियों पर विद्यमान धुँधले (अर्थात् हल्के) अन्धकार के समान तमाल वनपंक्तियों वाले, वसिष्ठ प्रभृति सप्तर्षि-समूह द्वारा अध्यासित, (वसिष्ठपत्नी) देवी अरुन्धती के सञ्चरण से पवित्रित, संस्थापति किये गए पलाशदण्डों युक्त चतुर्दिक् दिखाई पड़ने वाले (भक्ष्य) कन्दमूलों से युक्त तथा एक होने में विद्यमान आकर्षक (आंख की) पुतलियों वाले मृग से अलंकृत स्वर्गलोकरूपी आश्रमस्थान में रहने वाले-वैराग्यभावना से संवलित, धुले हुए दुकूल सदृश वल्कल वस्त्रों रूपी निर्मल परिधान वाले तथा (सतार, तार=प्रणव या ओंकार) ओङ्कार युक्त (अन्त:पुर, पुर=शरीर, अन्तर्=हृदय) शरीरस्थ हृदयवाले (किसी तपस्वी की भाँति)

वैराग्य अर्थात् अरुणिमा से युक्त, धुले हुए दुकूल वल्कल रूपी निर्मल गगन-मण्डलवाला तथा नक्षत्र मण्डल से युक्त अन्तःपुर वाला अथवा (बृहस्पति की पत्नी एवं चन्द्रमा की प्रेयसी) तारा से अलङ्कृत अन्तःपुर वाला अमृत-किरण चन्द्रमा चौहद्दियों (क्षितिजों पर) विद्यमान तमाल वनपंक्तियों के समान स्वल्पमात्र अन्धकार वाले, सप्तर्षिमण्डल (नक्षत्र विशेष) से अलंकृत, अरुन्धती (नामक नक्षत्र विशेष) के सञ्चरण से पवित्र, नियराए हुए 'उत्तराषाढ' नामक नक्षत्र से युक्त, दृष्टिगोचर होते हुए मूलनक्षत्र वाले तथा एक कोने में विद्यमान मनोहर तारकों से युक्त मृगशिरा नक्षत्र वाले आकाश-मण्डल में सुशोभित हो गया।

संस्कृत-व्याख्या—**संध्यायाम्**=संधिवेलायाम्, **क्षयम्**=विनाशम्, **उपगतायाम्**=प्राप्तायाम्, **तद्विनाशदुःखिता**=तस्याः संध्यायाः विनाशेन दुःखिता शोकाकुला, **विभावरी**=रजनी, **कृष्णाजिनम् इव**=कृष्णसारमृगचर्मवत्, **अभिनवम्**=नवीनम्, **तिमिरोद्गमम्**=तिमिरस्य तमसः उद्गमः प्राकट्यं तम्, **अवहत्**=धारणमकरोत्, **तिमिरम्**=तमः, **मुनिहृदयानि**=मुनीनाम् ऋषीणां हृदयानि चेतांसि, **विहाय**=परित्यज्य, **अन्यत्**=इतरत्, **सर्वम्**=अखिलम्, **अन्धकारताम्**=तमोमयताम्, **अनयत्**=प्रापयत्। **क्रमेण च**=क्रमशः च, **रविः**=सूर्यः स्वसखा इति भावः, **अस्तम्**=लोपं विनाशं वा, **गतः**=प्राप्तः, **इति**=इत्थम्, **उदन्तम्**=वृत्तान्तम्, **उपलभ्य**=लब्ध्वा, **अमृतदीधितिः**=अमृतं सुधा दीधितिषु रश्मिषु यस्य तादृशः, सुधांशुः, **जातवैराग्यः**=जातं समुत्पन्नं वैराग्यं विरक्तिः यस्य स तादृशः, **धौतदुकूलवल्कलधवलाम्बरः**=धौतं प्रक्षालितं यत् दुकूलं क्षौमवस्त्रं तद्वत् वल्कलं वृक्षत्वक् धवलं स्वच्छम् अम्बरं आकाशम् एव यस्य सः तादृशः वस्तुस्थितौ धौतदुकूलवल्कलवत् धवलम् अम्बरं येन सः, **सतारान्तःपुरम्**=सतारं तारयति तारः ब्रह्म तेन सह विद्यमानं सतारं सप्रणवम् अन्तःपुरं पुरस्य शरीरस्य अन्तः मध्यं कुण्डलिनी नाडी यस्य स तादृशः, **पर्यन्तस्थिततनुतिमिरतमालवनलेखम्**=पर्यन्ते प्रान्तभागे स्थितं विद्यमानं यत् तनु स्वल्पं तिमिरं अन्धकारः तदिव तमालानां तापच्छानां वनलेखा काननश्रेणी यत्र तं तादृशम्,

गगनतलपक्षे पर्यन्ते स्थितं तनुतिमिरं तमालवनलेखा इव यस्य तत्, **सप्तर्षि-मण्डलाध्युषितम्**=सप्त च ते ऋषयः सप्तर्षयः वसिष्ठादिसप्ततपस्विनः तेषां मण्डलेन समूहेन अध्युषितम् आश्रितम्, गगनतलपक्षे सप्तर्षीणां चित्रशिखण्डिनां सप्ततारकाणां मण्डलेन समूहेन अध्युषितं संयुक्तम्, **अरुन्धतिसंचरणपूतम्**= अरुन्धत्याः वसिष्ठपत्न्याः संचरणेन पूतं मेध्यम्, गगनतलपक्षे अरुन्धत्याः नक्षत्र-विशेषस्य संचरणेन भ्रमणेन पूतम्, **उपहिताषाढम्**=उपहिताः संनिहिताः आषाढाः पलाशदण्डाः यत्र तं तादृशम् गगनपक्षे उपहिते संनिहिते आषाढे पूर्वा-षाढोत्तराषाढानक्षत्रे यत्र तत् तादृशम्, **आलक्ष्यमाणमूलम्**=आ समन्तात् लक्ष्य-माणानि विलोक्यकानानि मूलानि कन्दानि यत्र तं तादृशम्, गगनपक्षे आलक्ष्य-माणं दृश्यमानं मूलं मूलनक्षत्रं यत्र तत्, **एकान्तस्थितचारुतारकमृगम्**=एकान्ते एकप्रदेशे स्थिताः विद्यमानाः चारुतारकाः मनोहरकनीनिकाः मृगाः हरिणाः यत्र तं तादृशम्, एकान्ते स्थितः चारुतारकामनोहरनक्षत्रं मृगः मृगशिराः यत्र तत्, **अमरलोकाश्रमम् इव**=अमरलोकस्य स्वर्गस्य यः आश्रमः तपोवनभूमिः तम् इव: **गगनतलम्**=आकाशतलम्, **अध्यतिष्ठत्**=अधितस्थौ ।

टिप्पणी–उदन्त–वृत्तान्त, समाचार । 'वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्त उदन्तः स्यात्' इत्यमरः । **अपहाय**–अप+हा+क्त्वा—ल्यप् । **अन्धकारताम्**–अन्ध-कार+तल् । **सताराऽन्तःपुरः**–वैराग्यधारी चन्द्रमा के शरीर के मध्य कुण्डलिनी नाड़ी में तारक (प्रणव) का निवास स्थान था । अथवा चन्द्रमा का हृदय तारा शक्ति से युक्त था । यह तारा महाशक्ति या महाविद्या के १० रूपों में से एक है । ये दश शक्तियाँ इस प्रकार हैं—काली, तारा, षोडशी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातङ्गी तथा कमला । चन्द्रमा के पक्ष में—ताराओं सहित अन्तःपुर वाला । **सप्तर्षिमण्डल**–सात ऋषियों का समूह, आकाश में उत्तर की ओर दिखाई देने वाला सात नक्षत्रों का समूह । **आलक्ष्यमाण**—आ+लक्ष्+यक्+शानच् । यहाँ **श्लेषानुप्राणित उपमा है ।**

चन्द्राभरणभूतस्तारकाकपालशकलालंकृतादम्बरतलात् त्र्यम्बको-

त्तमाङ्गादिव गङ्गा सागरानापूरयन्ती हंसधवला धरण्यामपतज्ज्योत्स्ना । हिमकरसरसि विकचपुण्डरीकसितचन्द्रिकाजलपानलोभादवतीर्णो निश्चलमूर्तिरमृतपङ्कलग्न इवादृश्यत हरिणः । तिमिरजलधरसमयापगमानन्तरमभिनवसितसिन्दुवारकुसुमपाण्डुरैरर्णवागतैरगाह्यन्त हंसैरिव कुमुदसरांसि चन्द्रपादैः । विगलितसकलोदयरागं रजनिकरबिम्बमम्बरावगाहधौतसिन्दूरमैरावतकुम्भस्थलमिव तत्क्षणमलक्ष्यत ।

हिन्दी अनुवाद–चन्द्रमा रूपी अलंकरण को धारण करने वाले तथा तारकों के समान (शुभ्र) नरकपाल खण्डों से अलंकृत भगवान् त्र्यम्बक (शङ्कर) के ललाटस्थल से भूतल पर गिरने वाली तथा समुद्र को पूर्ण करती हुई, (तटवर्ती) हंसों के कारण धवलीभूत गङ्गा की भाँति–(उदीयमान) चन्द्रमा रूपी आभरण से युक्त तथा 'कपालशकल' (खपड़े के टुकड़े) प्रतीत होने वाले तारकों से खचित आकाशमण्डल से–समुद्र को समन्ततः भरने वाली तथा हंसों के समान धवल-चाँदनी पृथ्वीतल पर बिखर गई । खिले हुए श्वेत कमलों के समान श्वेत चन्द्रमा रूपी सरोवर में चन्द्रिका रूपी जल पीने के लोभवश उतरा हुआ (चन्द्रमा का लाञ्छनभूत) हरिण मानो अमृतपङ्क में फँसा हुआ अतएव स्पन्दनविहीन आकृति वाला दिखाई पड़ने लगा । अन्धकार सदृश पावस ऋतु की समाप्ति के बाद नूतन श्वेत सिन्धुवार पुष्प के समान धवलर्ण वाले, अर्णव अर्थात् जलाशयों में उतरे हुए, तथा कुमुद संकुल सरोवरों में अवगाहन करने वाले राजहंसों की भाँति–वर्षाऋतु सरीखी अन्धकारराशि के विलीन हो जाने के बाद, अभिनव श्वेत सिन्धुवार पुष्प के समान शुभ्रवर्ण वाली तथा 'अर्णव' अर्थात् समुद्र पर छहराई हुई चन्द्रकिरणें कुमुद–सरोवरों को व्याप्त करने लगीं । गली हुई–उदयकालीन सारी अरुणाई वाला चन्द्रबिम्ब, उस समय आकाश गंगा में

अवगाहन के कारण धुले हुए सिन्दूर वाले [इन्द्रवाहन] ऐरावत गजराज के कुम्भस्थल की भाँति दीखने लगा।

संस्कृत-व्याख्या–**चन्द्राभरणभृतः**=चन्द्रः सुधांशुः एव आभरणम् आभूषणं तद् बिभर्ति धारयति इति तस्मात्, **तारकाकपालशकलालंकृतात्**=तारकाः नक्षत्राणि कपालशकलानि इव मनुष्यमस्तकास्थिखण्डानि इव तैः अलंकृतात् विभूषितात् उत्तमाङ्गपक्षे तारकाः इव कपालशकलानि तैः अलंकृतात्, **अम्बरतलात्**=आकाशतलात्, **त्र्यम्बकोत्तमाङ्गात्**=त्रीणि त्रिसंख्यामितानि अम्बकानि नेत्राणि यस्य सः शिवः तस्य उत्तमाङ्गात् शिरसः, **सागरान्**=समुद्रान्, **आपूरयन्ती**=आप्लावयन्ती गङ्गापक्षे आप्लावयिष्यन्ती, अवतीर्य समुद्रपूरणादिविभावः, **हंसधवला**=हंसवत् श्वेतगरुद्वत् धवला शुभ्रा गङ्गापक्षे हंसैः श्वेतगरुद्भिः धवला श्वेतगरुद्भिः धवला श्वेता, **ज्योत्स्ना**=कौमुदी, **गङ्गा इव**=भागीरथी इव, **धरण्याम्**=धरायाम्, **अपतत्**=पपात, उपागच्छत्। **विकचपुण्डरीकसिते**=विकचानि यानि पुण्डरीकाणि श्वेतकमलानि तद्वत् सिते श्वेतवर्णे सरः जलाशयः तस्मिन्, **चन्द्रिकाजलपानलोभात्**=चन्द्रिका ज्योत्स्ना एव जलं सलिलं तस्य पानाय लोभः लोलुपता तस्मात्, **अवतीर्णः**=प्रविष्टः, **हरिणः**=मृगः, **अमृतपङ्कलग्न इव**=अमृतस्य सुधायाः पङ्के कर्दमे लग्नः इव, **निश्चलमूर्तिः**=निश्चला सुस्थिरा मूर्तिः तनुः यस्य स तादृशः, **अदृश्यत**=अवालोक्यत। **तिमिरजलधरसमयापगमानन्तरम्**=तिमिरम् तमः जलधरसमयः जलदकालः इव तस्य अपगमः दूरीभावः तस्माद् अनन्तरम् अव्यवहितोत्तरम्, हंसपक्षे तिमिरम् इव जलधरसमयः तस्य अपगमानन्तरम्, **अभिनवसितसिन्धुवारकुसुमपाण्डुरैः**=अभिनवानि नूतनानि सितानि श्वेतानि यानि सिन्दुवारकुसुमानि निर्गुण्डीपुष्पाणि तद्वत् पाण्डुरैः शुभ्रैः, **अर्णवागतैः**=अर्णवात् अन्तरिक्षात् हंसपक्षे समुद्रात् आगतैः आयातैः, **चन्द्रपादैः**=चन्द्रस्य सुधांशोः पादैः मयूखैः, **हंसैः इव**=श्वेतगरुद्भिः इव, **कुमुदसरांसि**=कुमुदानां कैरवाणां सरांसि जलाशयाः, **अगाह्यन्त**=आलोड्यन्त। **विगलितसकलोदयरागम्**=विगलितः विलयं प्राप्तः सकलः समस्तः उदयरागः उदयकालिकलौहित्यं यस्य तत्, **रजनिकरबिम्बम्**=रजनिकरः चन्द्रः

तस्य बिम्बं मण्डलम्, **तत्क्षणम्**=तत्काले, **अम्बरापगावगाहधौतसिन्दूरम्**=अम्बरस्य गगनस्य आपगा सरित् आकाशगङ्गा यस्याम् अवगाहेन स्नानेन धौतं प्रक्षालितं सिन्दूरं नागजं यस्य तत् तादृशम्, **ऐरावतकुम्भस्थलम् इव**=ऐरावतस्य इन्द्रगजस्य कुम्भस्थलम् इव मूर्धास्थलम् इव, **अलक्ष्यत**=अदृश्यत ।

टिप्पणी-**तारकाकपालशकलालंकृतः**—कपाल के खण्डों जैसे नक्षत्रों से सुशोभित आकाश । **उत्तमाङ्ग**-सिर । हरिण—चन्द्रमा के मध्य में चमकने वाला काला धब्बा, जिसके कारण चन्द्रमा हरिणाङ्क कहा जाता है । हरिण का पर्याय मृग भी मृगाङ्क आदि नामों में प्रचलित है । वस्तुतः (हरति सर्वान् वर्णान् इति हरिणः=श्यामः हरितो वा वर्णः) हरे रंग या श्यामरंग के लिए इस शब्द का प्रयोग करके (हरिणः अङ्के यस्य) जिसके बीच में धब्बा हो उसे हरिणांक कहते हैं । **अम्बरापगा**-आकाश-गङ्गा (आपगा-नदी) । **'गङ्गा इव'** में **पूर्णोपमा**, **'अमृतपङ्कलग्न इव'** में **क्रियोत्प्रेक्षा** तथा **'हंसैरिव'** में **उपमा** है । **'कुम्भस्थलमिव'** में उपमा अलङ्कार है ।

शनैः शनैश्च दूरोदिते भगवति हिमस्रुति सुधाधूलिपटलेनेव धवलीकृते चन्द्रातपेन जगति, अवश्यायजलबिन्दुमन्दगतिषु विघटमानकुमुदवनकषायपरिमलेषु समुपोढनिद्राभरालसतारकैरन्योन्यग्रथितपक्षपुटैरारब्धरोमन्थमन्थरमुखैः सुखासीनैराश्रममृगैरभिनन्दितागमनेषु प्रवहत्सु निशामुखसमीरणेषु अर्धयाममात्रावखण्डितायां विभावर्यां हारीतः कृताहारं मामादाय सर्वैस्तैर्महामुनिभिरुपसृत्य चन्द्रातपोद्भासिनी तपोवनैकदेशे वेत्रासनोपविष्टमनतिदूरवर्तिना जालपादनाम्ना शिष्येण दर्भपवित्रपवित्रपाणिना मन्दमन्दमुपवीज्यमानं पितरमवोचत्—तात ! सकलेयमाश्चर्यश्रवणकुतूहलाकलितहृदया समुपस्थिता तापसपरिषदाबद्धमण्डला प्रतीक्षते । व्यपनीतश्रमश्च कृतोऽयं पतत्रिपोतः । तदावेद्यतां यदनेन कृतम्, अपरस्मिन् जन्मनि

कोऽयमभूद् भविष्यति च' इति। एवमुक्तः स महामुनिरग्रतः स्थितं मामवलोक्य तांश्च सवनिकाग्रान् श्रवणपरान् मुनीन् बुद्ध्वा शनैः शनैरब्रवीत्—श्रूयतां यदि कुतूहलम् ।'

हिन्दी-अनुवाद—धीरे-धीरे भगवान् हिमांशु (चन्द्रमा) के ऊँचे चढ़ जाने पर, चूने की धूलिराशि प्रतीत होने वाली चाँदनी द्वारा संसार के धवल बना दिया जाने पर, तुषार-जलबिन्दुओं के कारण मन्थर गति वाले—विकसित होते हुए कुमुदवनों की कसैली महक वाले, भरपूर बढ़ी हुई निद्रा के भारवश अलसाई हुई पुतलियों से युक्त, परस्पर उलझी हुई बरौनियों से युक्त, प्रारम्भ की गई जुगाली के कारण अलसाए मुहों से युक्त तथा सुखपूर्वक बैठे हुए आश्रम-मृगों द्वारा अभिनन्दन किये गये आगमनवाले प्रदोषकालीन समीरणों (हवाओं) के प्रवाहित होने पर, आधा पहर रात बीत जाने पर (मुनिकुमार) हारीत भोजन से निबटे हुए मुझ को लेकर, उन समस्त मुनियों के साथ पास पहुँच कर, चन्द्रिकार्चित तपोवन के एक खण्ड में वेत्रासन पर आनन्द बैठे हुए समीप ही विद्यमान कुशों के समान पवित्र मृगचर्म-निर्मित तालवृन्त (पंखा) से अलंकृत हाथवले 'जालपाद' नामक शिष्य द्वारा धीरे-धीरे हवा किये जाते हुए (अपने) पितृचरण (महर्षि जाबालि) से बोला—पिता जी ! (शुकविषयक) आश्चर्यजनक (वृत्तान्त) सुनने के लिए उत्कण्ठा से परिपूर्ण हृदयवाली यह सम्पूर्ण तापस-सभा समुपस्थित हो गई है तथा मण्डल बांधकर (आपकी) प्रतीक्षा कर रही है । इस शुकशावक की थकावट भी (भोजनादि) से अच्छी तरह मिटा दी गई है । इसलिए (अब आप कृपा करके) बतायें कि इसने पूर्वजन्म में क्या किया था ? अथवा (पहले) यह कौन था ? अथवा (भविष्य) में यह कौन होगा ?

इस प्रकार पूछे जाने पर वे महामुनि (जाबालि) सम्मुख विद्यमान मुझे देखकर और उन समस्त मुनियों को (भी) एकाग्रचित्त तथा श्रवणाभिमुख समझ कर धीरे-धीरे कह उठे—(अच्छा तो) सुनिये यदि (सुनने के लिए)

उत्कण्ठा है तो ।

संस्कृत-व्याख्या-**शनैः-शनैः**=मन्दं मन्दम्, **भगवति**=ऐश्वर्यशालिनि, **हिममूर्ति**=चन्द्रमसि, **दूरोदिते**=दूरम् उच्चम् उदिते आरूढे सति, **सुधाधूलिपटलेन इव**=सुधायाः भवनविलेपनद्रव्यस्य धूलयः पांसवः तासां पटलेन समूहेन इव, **चन्द्रातपेन**=चन्द्रस्य हिमांशोः आतपेन प्रभया, **जगति**=संसारे, **धवलीकृते**=शुभ्रीकृते, **अवश्यायजलबिन्दुमन्दगतिषु**=अवश्यायः तुषारः तस्य ये जलबिन्दवः सलिलकणानि तैः मन्दा धीरा गतिः सचारः येषां तेषु, **विघटमानकुमुदवनकषायपरिमलेषु**=विघटमानानां विकसतां कुमुदवनानां कैरवकाननानां कषायः कषायगुणविशिष्टः परिमलः गन्धः येषु तेषु, **समुपोढनिद्राभरालसतारकैः**=समुपोढः सम्यक् धारितः यः निद्रायाः भरः तन्द्राभारः तेन अलसे मन्थरे तारके कनीनिके येषां तैः, **अन्योन्यग्रथितपक्ष्मपुटैः**=अन्योन्यं परस्परं ग्रथिते गुम्फिते पक्ष्मपुटे लोमसंपुटे यैः तैः, **आरब्धरोमन्थमन्थरमुखैः**=आरब्धः उपक्रान्तः यः रोमन्थः चर्वितचर्वणम् तेन मन्थरं सालसं मुखं लपनं येषां तैः, **सुखासीनैः**=सुखं सानन्दम् आसीनैः उपविष्टैः, **आश्रममृगैः**=तपोभूमिहरिणैः, **अभिनन्दितागमनेषु**=अभिनन्दितं श्लाघितम् आगमनम् उपस्थानं येषां तेषु, **निशामुखसमीरणेषु**=निशायाः क्षपायाः मुखं निशामुखं प्रदोषः तस्य समीरणेषु पवनेषु, **प्रह्वत्सु**=संचरत्सु, **विभावर्याम्**=रजन्याम्, **अर्धयाममात्रावखण्डितायाम्**=अर्धयामस्य अर्धयामः केवलः अर्धयामः अर्धयाममात्रः तेन अर्धप्रहरमात्रेण अवखण्डितायां न्यूनत्वं प्राप्तायां सत्याम्, **हारीतः**=जाबालिपुत्रः, **कृताहारम्**=कृतः आहारः, फलादिभक्षणं येन तादृशम्, **माम्**=वैशम्पायनम्, **आदाय**=गृहीत्वा, **तैः**=पूर्वोक्तैः, **सर्वैः**=समस्तैः, **महामुनिभिः**=महर्षिभिः, **उपसृत्य**=उपगम्य, **चन्द्रातपोद्भासिनी**=चन्द्रस्य हिमांशोः आतपेन प्रभया उद्भासते दीप्यते इति तच्छीलः तस्मिन्, **तपोवनैकदेशे**=तपोवनस्य धर्मारण्यस्य एकदेशे एकभागे आश्रमे इत्यर्थः, **वेत्रासनोपविष्टम्**=वेत्रस्य वेतसस्य आसने विष्टरे उपविष्टम् अवस्थितम्, **अनतिदूरवर्तिना**=समीपस्थेन, **जालपादनाम्ना**=जालपादः नाम यस्य तेन जालपादाभिधानेन, **शिष्येण**=अन्तेवासिना, **दर्भपवित्रपवित्रपाणिना**=दर्भ कुशः

तद्वत् पवित्रं पावनं ववित्रं मृगचर्मव्यजनं पाणौ हस्ते यस्य तेन तादृशेन सता, **मन्दमन्दम्**=शनैः शनैः, **उपवीज्यमानम्**=व्यजनविषयीक्रियमाणम्, **पितरम्**=तातं जाबालिम्, **अवोचत्**=अवादीत्, **तात**=पितः, **इयम्**=पुरो दृश्यमाना, **आश्चर्यश्रवणकुतूहलाकलितहृदया**=आश्चर्यस्य विस्मयस्य श्रवणाय आकर्णनाय यत् कुतूहलम् कौतुकं तेन आकलितं व्याप्तं हृदयं चित्तं यस्याः सा तादृशी, **समुपस्थिता**=समागता, **आबद्धमण्डला**=आबद्धं रचितं मण्डलं परिधिः यया सा, **सकला**=समस्ता, **तापसपरिषद्**=तपस्विसभा, **प्रतीक्षते**=प्रतिपालयते, **च**=तथा, **अयम्**=पुरो दृश्यमानः, **पतत्रिपोतः**=शुकशिशुः, **व्यपनीतश्रमः**=व्यपनीतः दूरीकृतः श्रमः क्लान्तिः यस्य स तादृशः, **कृतः**=विहितः, **तत्**=तस्मात् कारणात्, **आवेद्यताम्**=बोध्यताम्, **अनेन**=शूकशावकेन, **यत्**=यत्किमपि, **कृतम्**=विहितम्, **अपरस्मिन्**=अस्मद् जन्मनः अन्यस्मिन्, **पूर्वस्मिन्**, **जन्मनि**=भवे, **अयम्**=शुकशिशुः, **कः** **अभूत्**=किं नामासीत् । भाविनि **जन्मनि** च कः **भविष्यति**=कस्यां जातौ उत्पत्स्यते । इति, **तु**=पुनः, **एवम्**=इत्थम्, **उक्तः**=पृष्टः सन्, **सः**=पूर्वोक्तः, **महामुनिः**=तपस्वी जाबालिः, **अग्रतः**=पुरतः, **स्थितम्**=विद्यमानम्, **माम्**=वैशम्पायनम्, **अवलोक्य**=दृष्ट्वा, **च** तथा, **तान्**=पूर्वोक्तान्, **सर्वान्**=समस्तान्, **मुनीन्**=तपस्विनः, **एकाग्रान्**=एकतानान्, **श्रवणपरान्**=श्रवणोत्सुकान्, **बुद्ध्वा**=अवगम्य, **शनैः-शनैः**=मन्दं मन्दम्, **अब्रवीत्**=अगादीत्, **यदि**=चेत्, **कुतूहलम्**=आश्चर्यम्, **तर्हि** **श्रूयताम्**=निशम्यताम् ।

टिप्पणी–**उदित**–उत्+इ+क्त । **हिमव्रत**–चन्द्रमा । **सुधाधूलि**–भवनों को पोतने के काम में आने वाली कलई । **अवश्याय**–ओस, 'अवश्यायस्तु नीहारस्तुषारस्तुहिनं हिमम्' इत्यमरः । **समुपोढ**–सम्+उप+वह्+क्त । **रोमन्थ**–जुगाली, खाये हुए चारे को पुनः निकालकर थोड़ा-थोड़ा करके चबाते रहना । **निशामुख**–प्रदोषकाल । 'प्रदोषो रजनीमुखम्,' अमरकोश । **धवित्र**–मृगचर्म से बना हुआ पंखा 'धवित्रं व्यजनं तद् यद् रचितं मृगचर्मणा' अमरकोश । **पतत्रिपोत**–पक्षी का बच्चा । **उपसृत्य**–उप+सृ+क्त्वा—ल्यप् । **आदाय**–आङ्+दा+

क्त्वा–ल्यप् । **विघटमान**—वि=घट्+शानच् । **समीरण**–वायु, 'समीरमारुत-मरुज्जगत्प्राणसमीरणाः' इत्यमरः । **विभावरी**–"अथ शर्वरी ।। निशा निशीथनी रात्रिस्त्रियामा क्षणदा क्षपा । विभावरीतमस्विन्यौ रजनी यामिनी तमी ।।" इत्यमरः । **स्थितम्**–स्था+क्त । **अवलोक्य**–अव+लोक्+क्त्वा–ल्यप् । कौतूहलम्=कौतूहल, "कौतूहलं कौतुकं च कुतुकं च कुतूहलम्" इत्यमरः ।

पदव्याकरणोपेता गभीरार्थप्रकाशिका ।
आचन्द्रतारकं चन्द्रेदस्माकं कापि चन्द्रिका ।।

।। कादम्बरी-कथामुख समाप्त ।।